राम काव्य की पृष्ठभूमि में लालदास कृत

अवध विलास

का

आलोचनात्मक अध्ययन

(बुन्देलखण्ड विश्व विद्यालय की पी–एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध)

निर्देशक
डॉ० वेदप्रकाश द्विवेदी
हिन्दी विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, अतर्रा (बांदा)

t 1109

प्रस्तुतकर्ता
महेन्द्र प्रसाद अवस्थी
प्रधानाचार्य
श्याम शंकर इन्टर कालेज, रामगंज, प्रतापगढ़

डा0 वेद प्रकाश द्विवेदी,
हिन्दी विभाग,
अतर्रा पो0ग्रे0 कालेज, अतर्रा

प्रमाणपत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री महेन्द्र प्रसाद अवस्थी ने 200 दिन रहकर मेरे निर्देशन में 'रामकाव्य की पृष्ठभूमि में लालदासकृत अवधविलास का आलोचनात्मक अध्ययन' शीर्षक शोधप्रबन्ध पूर्ण किया है। यह इनकी मौलिक रचना है।

(डा0वेद प्रकाश द्विवेदी)

डॉ0 वेदप्रकाश द्विवेदी
हिन्दी विभाग
अतर्रा पोस्ट-ग्रेजुएट कालेज, अतर्रा (बाँदा)

भूमिका

अनन्त हरि की अनन्त आयाम वाली कथा को कवि साधु, मर्मज्ञ, आलोचक और साधारण पाठक कहते समझते आ रहे हैं। रामायण और महाभारत भगवान् के शब्द-वपु हैं, जिनमें क्रमशः राम और कृष्ण कथा उपनिबद्ध है। वाल्मीकि रामायण से लेकर अद्यावधि सहस्राधिक रामकाव्य लिखे गये हैं- भविष्य में भी रामकाव्यों का प्रणयन होता रहेगा। बात यह है कि रामचरित में जितनी उदात्तता, आदर्शमयता है उसका पूर्णरूपेण वर्णन अभी तक नहीं हो सका है। पितृआज्ञा पालन हेतु प्राप्त साम्राज्य का परित्याग कर वनगमन, पुत्र-प्रेम एवं वचन-पालन में शरीर-त्याग तथा भ्रातृहित हेतु वीतरागी बनना किसी भी संस्कृति के श्रेष्ठ जीवन-मूल्य हो सकते हैं- इसीलिए राम काव्यकारों ने युगीन परिस्थितियों के अनुकूल रामकथा को ढालने का प्रयास किया है। अनुसंधित्सुओं को व्यक्ति-विशेष, कृति-विशेष या धारा-विशेष पर अध्ययन करने की सामग्री मिलती रही है। कथा को लेकर (रामकथा-उत्पत्ति, विकास, धारा को लेकर - रामभक्ति शाखा- डा० रामनिरंजन पाण्डेय, रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय - डा० भगवतीप्रसाद सिंह, तुलसी पूर्व राम साहित्य - डा० अमरपाल सिंह, तुलसी परवर्ती रामकाव्य परम्परा - डा० वेदप्रकाश द्विवेदी, आधुनिक रामकाव्यों का अनुशीलन-डा० परम लाल गुप्त तथा तुलसी, केशव, मैथिली शरण गुप्त इत्यादि कवियों पर अनेक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये गये हैं। संस्कृत प्राकृत एवं अपभ्रंश रामकाव्यों पर भी शोधकार्य किया गया है। लालदास कृत अवध-विलास का अध्ययन इसी दिशा में अल्पप्रयास है। इस हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को ग्यारह अध्यायों में विभक्त किया गया है।

प्रथम अध्याय रामकाव्य परम्परा से संबंधित है। वैदिक साहित्य में उपलब्ध पात्रों के नाम एवं उनके सम्बन्ध सूत्रों की चर्चा की गयी है। वाल्मीकि रामायण, महाभारत, विभिन्न पुराणों में प्राप्त रामकथा का महाकाव्य, नाटक,

वैष्णव संहितायें, साम्प्रदायिक रामायणों एवं प्राकृत अपभ्रंश साहित्य में प्राप्त रामकथा के विकास का सिंहावलोकन हुआ है।

द्वितीय अध्याय में लालदास का परिचय दिया गया है। लालदास भक्ति-रीति के संधिकाल पर अवस्थित हैं, अतः इस समय की परिस्थितियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं। अकबर, जहाँगीर एवं शाहजहाँ के राजनीतिक प्रयत्न, राज्यव्यवस्था हिन्दू-मुसलमान दलों में विभक्त समाज, स्त्रियों की दशा, वर्ण-व्यवस्था की जटिलता अशिक्षा, अंधविश्वास, विलासिता, बहुविवाह, हिन्दू एवं उससे संबंधित धर्म-सम्प्रदाय मुस्लिम धर्म बौद्ध एवं जैन धर्म की विकृति के कारण निर्मित अनेक सम्प्रदाय, धार्मिक सहिष्णुता की प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन कराया गया है। साहित्यिक परिस्थितियों के अन्तर्गत निर्गुण काव्य धारा, कृष्णभक्ति शाखा के विविध सम्प्रदाय राम भक्ति धारा में तुलसी की महत्ता रामकाव्य में उत्पन्न गतिरोध एवं तुलसी परवर्ती संधिकाल में प्राप्त राम साहित्य तथा लालदास का वैशिष्ट्य बताया गया है। लालदास के जीवन-परिचय हेतु अन्तःसाक्ष्य एवं बाह्यसाक्ष्य का आश्रय लेकर कवि के नाम, जन्मस्थान, रचनाकाल, कृतियों का उल्लेख हुआ है।

तृतीय अध्याय में अवधविलास की कथा का विश्लेषण है। अवधविलास 20 विश्राम का राकाव्य है। मुख्य कथा — आधिकारिक, प्रासंगिक कथायें, उनके स्रोत, मौलिकता तथा क्रम, अन्वय की दृष्टि से विस्तृत विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय अवधविलास में वर्णित पात्रों से संबंधित है। प्रारम्भ में अवधविलास में प्राप्त पात्रों का वर्गीकरण, कथा के आधार पर (मुख्य-गौण) लिंग के आधार पर निष्क्रिय प्रतीकों के आधार पर किया गया है। राम दशरथ, जनक वशिष्ठ, विश्वामित्र रावण, कौशल्या, कैकेयी सीता, मंथरा इत्यादि पात्रों के चरित्र का अंकन उनके आन्तरिक चिन्तन एवं बाह्य सौन्दर्य तथा क्रिया कलापों के आधार पर किया गया है।

अवधविलास में पारिवारिक संबंधों के आधार पर प्राप्त पुरुष

दास तथा नारी पात्रों में से माता, पत्नी, प्रेयसी, सखी, सपत्नी, दासियों का विश्लेषण है। अतिमानव पात्रों में से आर्य, देव, राक्षस, कोल-किरात, प्रजा का उल्लेख है तथा अन्त में पारिवारिक विश्लेषण हुआ है।

पंचम अध्याय आलोच्य काव्य में भाव एवं रस-व्यंजना से संबंधित है। अवध-विलास में प्रयुक्त संयोग एवं वियोग शृंगार, करुण, वीभत्स, रौद्र वीर भयानक, वत्सल, शान्त, भक्ति रस के उदाहरण देते हुए अंगीरस के रूप में अद्भुत रस का विवेचन किया गया है। यहीं रसाभास के स्थलों की सम्यक् परीक्षा हुई है।

षष्ठ अध्याय में प्रकृति एवं अन्य वस्तुवर्णन का उल्लेख है। रहस्यमयी सत्ता के संकेत तथा उपमान रूप में प्रकृति का वर्णन इस काव्य में बहुविध रूप से मिलता है। अन्य वस्तु वर्णन के अन्तर्गत नगर, तीर्थ, देश, नदी, युग, आयुर्वेद योग, धर्म, दर्शन, पाप-पुण्य, संगीत एवं स्त्री पुरुषों के सौन्दर्य का वर्णन हुआ है।

सप्तम अध्याय में अवधविलास की भाषा का विवेचन है। शब्द भण्डार तत्सम तद्भव, देशज, विदेशज, लोकोक्तियाँ, मुहावरे, व्याकरण की दृष्टि से आलोच्य की समीक्षा एवं इसमें प्राप्त विभिन्न शैलियों के उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं।

अष्टम अध्याय में गुण, रीति, शब्द शक्ति का विवेचन है। अवधविलास मूलतः माधुर्य एवं प्रसाद गुणमयी रचना है। इसी प्रकार वैदर्भी गौडी पांचाली, अभिधा, लक्षणा रूढ़ लक्षणा, प्रयोजनवती लक्षणा, सारोपा लक्षणा, व्यंजना के अनेक उदाहरण उपस्थित किये गये हैं।

नवम अध्याय अलंकार एवं छन्द योजना से संबंधित है। कवि ने शब्दालंकारः का विचार एवं रसानुकूल छन्दों का प्रयोग किया है।

दशम अध्याय में भक्तिभावना एवं अवतारवाद का विवेचन है। प्रारम्भ में भक्ति शब्द की व्युत्पत्ति, उसकी परिभाषाएं, अनेक भेद एवं भारतवर्ष में भक्ति का विकास तदुपरान्त रामभक्ति भावना का उद्भव एवं विकास निरूपित

मर्यादावादी भक्ति के साथ-साथ अवधविलास में प्राप्त होने वाली कान्ता भक्ति या मधुरा भक्ति का भी अनुस्यूत है। लालदास ने श्रीअवतार एवं पूर्णावतार का वर्णन, उनकी विशेषतायें एवं संक्षेप में रसिक सम्प्रदायानुसार उनके अवतार-स्वरूप की प्रतिष्ठा की है। मर्यादावादी एवं ऐश्वर्यपरक मान्यताओं का समन्वय कवि ने किया है।

ग्यारहवें अध्याय में अवधविलास युगीन सामाजिक स्थिति का आकलन संक्षेप में किया गया है।

शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने में अप्रकाशित ग्रन्थ, पत्रिकाओं, सत्संगों एवं विद्वानों के परामर्श से सहायता प्राप्त हुई है अतः लेखक उन सबका आभारी है। डा० वेदप्रकाश त्रिवेदी का निर्देशन आदि से इति तक प्राप्त हुआ है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध की विशेषतायें उनकी तथा दोष मेरे हैं। डा० भगवती प्रसाद सिंह, डा० विश्वम्भर दयालु अवस्थी, डा०लि०प्र०, पं०चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, के बहुमूल्य सुझाव मेरे बहुत काम आये हैं, अतः मैं उनका उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

श्री देवेन्द्रनाथ खरे (बांदा) का मैं अतिशय कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे उदार-भाव से अवध-विलास की प्रति दी। उनके बिना यह सारस्वत यज्ञ कदापि पूर्ण नहीं हो सकता था। श्री रमाकान्त मणि (पुस्तकालय विभाग, बी०एस०एस० डी०कालेज, कानपुर) एवं श्री हीरालाल यादव (पुस्तकालय अध्यक्ष – अतर्रा) का मैं आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे अनेक सहायक ग्रन्थ उपलब्ध कराये।

दिनांक ३१-१२-८५.

भवदीय

[signature]

(महेन्द्र प्रसाद अवस्थी)

प्रधानाचार्य

श्याम शंकर इण्टर कालेज, रामगंज

प्रतापगढ़

'रामकाव्य की पृष्ठभूमि में' लालदास' कृत अवधविलास का

आलोचनात्मक अध्ययन

विषयानुक्रमणिका

भूमिका -

पृष्ठसंख्या

प्रथम अध्याय — रामकाव्य - परम्परा -- 9

1-वैदिक साहित्य

2- संस्कृत साहित्य (1) रामायण (2) महाभारत (3) पुराण

3- प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य में रामकथा।

4- हिन्दी के रामकाव्य — लालदास से पूर्व तक

द्वितीय अध्याय — लालदास एवं उनका अवध-विलास - 35

1-लालदास का परिचय (1) जन्म (2) स्थान (3) व्यक्तित्व (4) युगीन परिस्थिति

2-लालदास का अन्य साहित्य एवं अवधविलास

तृतीय अध्याय — अवधविलास की कथावस्तु — 70

1-आधिकारिक कथा

2- प्रासंगिक कथा

3- अवधविलास की कथा के स्रोत एवं उसका स्वरूप।

4- अवध-विलास की कथा की मौलिक - उद्भावनाएँ।

5- अवध-विलास की कथा की समीक्षा—गुण एवं दोष।

चतुर्थ अध्याय — अवध-विलास के पात्रों का चरित्र-चित्रण :— 140

1-पात्रों का वर्गीकरण (पुरुष एवं स्त्रीपात्र)

2-प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण —
(1) राम (2) सीता (3) दशरथ (4) कौशल्या

3- राम के चरित्र विकास में अवधविलास का योगदान।

पंचम अध्याय — अवध-विलास में भाव एवं रसव्यंजना — पृष्ठसंख्या 202

(1) अवध-विलास का अंगीरस

(2) अवध-विलास में अन्य रस

(3) अवध-विलास में भाव-विधान

षष्ठ अध्याय — अवध-विलास में प्रकृति एवं अन्य वस्तुवर्णन — 249

(1)(क) कवि एवं प्रकृति

(ख) प्रकृति वर्णन के स्वरूप

(ग) अवधविलास में प्रकृति का स्वरूप (आलम्बन) उद्दीपन) (आलंकारिक) (उपदेश) (रहस्यात्मक) सत्ता की सांकेतिका)

(2) अवधविलास में अन्य वस्तुवर्णन —

(1) सौन्दर्य, नारी, नर, आभूषण,

(2) ग्राम, नगर, नदी, पर्वत, तीर्थसरोवर।

(3) राज, वन, द्वीप, समुद्र।

(4) संगीत, व्याकरण, ज्योतिष, मल्ल-क्रीड़ा।

सप्तम अध्याय :— अवधविलास की भाषा — 312

(1) शब्द-विधान (1) तत्सम (2) तद्भव (3) देशज (4) विदेशज

(2) व्याकरण — संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया।

(3) शब्द-शक्तियाँ — अभिधा, लक्षणा, व्यंजना।

(4) अवध-विलास की भाषागत विशेषताएँ।

(5) लोकोक्तियाँ

(6) भाषा सम्बन्धी लालदास की मान्यताएँ।

अष्टम अध्याय — अवध-विलास में रीति, गुण — 348

(1) रीतियाँ —(1) वैदर्भी (2) गौडी (3) पांचाली।

नवम अध्याय :— अवध-विलास में अलंकार एवं छन्द योजना — 367

1- अवध-विलास में अलंकार -(1) शब्द (2) अर्थ।

2- अवध-विलास में छन्द - योजना (1) दोहा (2) चौपाई (3) सोरठा (4) तोमर (5) कवित्त (6) अरिल्ल (7) भुजंगप्रयात।

दशम अध्याय :— अवध-विलास में भक्ति एवं अवतार-भावना — 384

(क) रामभक्ति भावना का स्वरूप।

(ख) अवधविलास में भक्ति का स्वरूप।

(1) दास्यभक्ति (2) शृंगारी भक्ति (3) प्रतिमापूजन (4) उपासनापद्धति

(5) साधक की दैनिक जीवन-चर्या।

(ग) रामावतार भावना एवं अवधविलास में अवतारों का स्वरूप।

एकादश अध्याय — अवध-विलास में तद्युगीन समाज की अभिव्यक्ति — 433

(1) सामाजिक परिस्थिति-वर्णव्यवस्था, संस्कार, रीति-रिवाज।

(2) धार्मिक स्थिति

(3) आर्थिक स्थिति — वस्त्राभूषण, खान-पान, व्यवसाय।

उपसंहार — 451

सहायक सामग्री

(1) संस्कृत

(2) हिन्दी

(3) अंग्रेजी

(4) अन्य — पत्र-पत्रिकाएँ

प्रथम अध्याय

रामकाव्य- परम्परा

प्रथम अध्याय

रामकाव्य - परम्परा

भारतीय चिन्तन प्रधान मनीषा ने जन-जीवन की विषम परिस्थितियों में से समाज का मार्गदर्शन कराने के लिए अन्नमय कोश से आनन्दमय कोश की कल्पना की है तथा इस उद्देश्य एवं आदर्श की प्राप्ति के लिए देश में उत्पन्न महापुरुषों की कथाओं का आश्रय लिया है। पुण्यभूमि भारतवर्ष में अनेकों महापुरुषों ने अपने उत्तमोत्तम जीवन से लोगों का मार्गदर्शन किया है। शोषण, उत्पीड़न से संत्रस्त मानवमात्र को शाश्वत सुख एवं मंगलमय आचरण की ओर उन्मुख किया है। राम ऐसे ही लोकनायक आदर्श पात्र हैं, जिनकी कथा भारतीय सांस्कृतिक विकास की कथा है। पिताज्ञा का पालन कर अकण्टक पृथ्वी का विशाल साम्राज्य का परित्याग कर वन-गमन, भाई के अधिकार की रक्षा के लिए भरत का वीतरागी बनना, किसी भी संस्कृति के श्रेष्ठ उत्तम एवं वरेण्य मानदण्ड बन सकते हैं। भारतीय संस्कृति के समष्टि रूप का दर्शन यदि हमें कहीं होता है, तो मर्यादा पुरुषोत्तम राम के ही चरित में। इस महापुरुष का चरित युगों से जातीय जीवन का प्रधान प्रेरणाकेन्द्र रहा है और यह उसकी लोकप्रियता का ही परिणाम है कि विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं तथा वृहत्तर भारत एवं पड़ोसी देशों की जन-भाषाओं में भी राम कथा को लेकर एक विशाल साहित्य का निर्माण हो गया। काल के प्रवाह के साथ कवियों की व्यक्तिगत रुचि और सांस्कृतिक आदर्शों के अनुसार रामकथा भी उत्तरोत्तर नये सांचों में ढलती और परिष्कृत होती रही है। देखते ही देखते वह स्थिति भी आ गयी जब दाशरथि राम की लोकयात्रा ने अवतारी राम की लीला का रूप धारण कर लिया।[1]

1- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह, पृ0 32

मानवता से ही दानवता का पराभव दिखाने के साथ ही श्रेष्ठ चरित्र की स्थापना हेतु वाल्मीकि ने रामायण की रचना की है, जिसमें रामकथा अपने व्यापक रूप में वर्णित है। रामायण की रचना से पूर्व रामकथा के स्वरूप उसके स्रोतों के ज्ञान के साधन अब नष्ट हो गये हैं। भारतीय परम्परा प्रत्येक ज्ञान के स्रोत वेदों को स्वीकार करती है।

वैदिक साहित्य में रामकथा के अनेक पात्रों के नाम लिखित हैं। राम के पूर्वजों में वैवस्वत मनु[1], इक्ष्वाकु[2], सुद्युम्न[3] सुदास[4], यौवनाश्व[5], सगर तथा उसके साठ हजार पुत्रों[6], रघु[7] का नाम संहिता में आया है। साथ ही दशरथ[8], जनक[9], रावण[10] एवं सरयू[11], गंगा[12] यमुना एवम् अयोध्या[13] का नाम उल्लिखित है। राम[14] और सीता[15] का उल्लेख अनेक स्थानों में हुआ है जिसमें राम कहीं राजा कहीं श्यापर्णीय ब्राह्मण मार्गवेय औपतस्विन, क्रतुजातेय तथा पुत्र अर्थ में आया है। इसी प्रकार सीता सावित्री कृषि की अधिष्ठात्री तथा लांगल पद्धति से (हराई, कूँड़) एवं यज्ञ कर्मों में खींची जाने वाली रेखाओं के अर्थ में प्रयुक्त है।

1- कृष्ण यजुर्वेद काठक संहिता 11/5/9

2- अथर्ववेद 19/39/9 शतपथ ब्राह्मण 13/5/4/5

3- कृष्णयजुर्वेद मैत्रायणी संहिता 1/2/19

4- ऋग्वेद 3/53/9 5- ऋग्वेद 10/146/9

5- अथर्व0 20/127/1 7- ऋग्वेद 5/45/9 8- ऋग्वेद 1/126/4, 2/1/11

9- तैत्तिरीय ब्राह्मण 3/10/9, 10- अथर्व0 4/6/1, 11- ऋग्वेद 10/5/64-9

12- ऋग्वेद 10/75/5 13- अथर्व0 10/2/31, 32, 33

14- ऋग्वेद 10/93/14, अथर्व0 1/31/1, शुक्लयजुर्वेद 29/59, तैत्तिरीयआरण्यक 5/8/13
ऐतरेयब्राह्मण 7/27-34, शतपथब्राह्मण 4/6/1/7, जैमिनीयउपनिषद्ब्राह्मण 3/7/3/2, 4/8/1/11

वैदिक साहित्य में समग्र रामकथा खोजने का प्रयास श्री नीलकण्ठ ने मन्त्र रामायण नामक संकलन ग्रन्थ में किया है। इसी संकलन का यत्किंचित परिवर्तन एवं परिवर्धन पं० राम कुमार दास ने वेदों में 'रामकथा' के रूप में किया है। रामकथा के सम्बन्ध में वह लिखते हैं कि वेदों में रामकथा तो एक अत्यं संक्षिप्त मात्र है साथ ही स्मरण रखना चाहिए कि वेदों में उतनी रामकथा सुस्पष्टरूप में मिल सकनी सम्भव है जितनी कि प्रति कल्प में एक ही रूप में का होती है परन्तु जो कथाएँ, सम्वाद आदि कुछ हेरफेर के साथ हुआ करते हैं, वे शायद वेद में स्पष्ट न मिलें जैसे कि दशरथ की पुत्रेष्टि यज्ञ, राम वन-गमन, बालिवध, मारीच वध, लंका दहन, रावण वध आदि तो सब कल्प में करीब-करीब एक ही तरह से होते हैं इसलिए इन कथाओं का तो संकलन स्पष्ट रूप से वेदों में है परन्तु धनुर्भंग, परशुराम सम्वाद, वनवासी वर्णन, अंगद रावण अन्य राक्षस युद्ध प्रतिकल्प में बदला करते हैं।xxxxxx इससे इनका वर्णन वेद में नहीं मिल सकता।[1]

इसके विपरीत पाश्चात्य एवं पौरस्त्य विद्वानों ने वेदों में रामकथा का अभाव माना है उनका मत यह है कि यदि वैदिक आर्यों को राम और भरत जैसे असामान्य शील और शक्ति सम्पन्न चरित्रों का ज्ञान होता तो विस्तृत वैदिक साहित्य में अवश्य किसी न किसी अंश में उनका समावेश मिलता।

आर्य जाति के आरम्भिक सांस्कृतिक जीवन स्वरूप वैदिक साहित्य में मिलता है वेदों को श्रुति कहा गया है। ये ईश्वरीय ज्ञान है जिनका दर्शन समय-समय पर अनेक ऋषियों ने किया है। इन मंत्रों का सम्पादन ज्ञान तथा कर्मकाण्ड की दृष्टि से

1- वेदों में रामकथा, राम कुमार दास, पृ० 20-21।

कृष्णद्वैपायन ने किया है। परिणाम स्वरूप एक ही स्थान पर अति प्राचीन और नवीनतम सूक्त एक साथ हैं। इसीलिए एक प्रसंग के मंत्र दूसरे प्रसंग में उल्लिखित होने के कारण तदनुरूप अर्थ देने लगे। सम्भवतः वेदों में उल्लिखित रामकथा के पात्रों का सम्बन्ध नहीं जुड़ सका है। प्रसिद्ध विद्वान् डा० कामिल बुल्के ने इसी ओर संकेत करते हुए लिखा है कि वैदिक रचनाओं में रामायण के कतिपय पात्रों के नाम अवश्य मिलते हैं लेकिन न तो इनके पारस्परिक सम्बन्ध की कोई सूचना दी गयी है और न इनके विषय में किसी तरह रामायण की कथावस्तु का किंचित् भी निर्देश किया गया है। × × × × वैदिक काल में रामायण की रचना हुई थी अथवा रामकथा सम्बन्धी गाथायें प्रसिद्ध हो चुकी थीं इसका निर्देश समस्त विस्तृत वैदिक साहित्य में कहीं भी नहीं पाया जाता। ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम रामायण के पात्रों के नामों से मिलते हैं इससे इतना ही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ये नाम प्राचीनकाल में भी प्रचलित थे।[1]

संस्कृत भाषा में राम काव्य का व्यवस्थित एवं प्रथम अवतरण वाल्मीकि से हुआ है किन्तु उसके स्रोत पूर्ववर्ती काल में अवश्य प्रचलित रहे हैं। आदि कवि वाल्मीकि के अनेक शताब्दियों पूर्व रामकथा सम्बन्धी अनेक गाथायें प्रचलित हो चुकी थी किन्तु वह साहित्य काल के गर्त में चला गया क्योंकि इतना भव्य उदात्त चरित्र की कल्पना कर विशाल काव्य का प्रणयन किसी ठोस परम्परा की पृष्ठभूमि के बिना लगभग असम्भव सा लगता है। राजकी सूतों द्वारा नाराशंसी गाथाओं की रचना करना प्रचलित ही है अतः यह असम्भव नहीं कि इक्ष्वाकु वंशीय सूतों ने रुचि के अनुसार रामकथा का प्रणयन कर उसका प्रचार किया। जिसे आदर्श रूप एवं महाकाव्यात्मक रूप देने में

1- रामकथा : उत्पत्ति और विकास, डा० कामिल बुल्के, पृ० 25-26

वाल्मीकि सफल हो गये। वाल्मीकि रामायण की रचना काल के संबंध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है इसका रचनाकाल ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर दूसरी शताब्दी ई० के बीच कहा गया है। विद्वानों ने वाल्मीकि के दो रूपों की कल्पना की है। प्रथम आदि रामायण, द्वितीय परिवर्तित एवं परिवर्धित रूप। परिवर्तित एवं परिवर्धित रामायण के तीन पाठ प्राप्त होते हैं। दाक्षिणात्य, गौड़ीय एवं पश्चिमोत्तरीय।

रामायण की कथा वैशिष्ट्य एवं उसके महत्व का मूल्यांकन इन शब्दों में किया जा सकता है : "चातुर्विंश साहस्री' इस काव्य का प्रस्फुटन वाल्मीकि के हृदय से क्रौंचमिथुन में से एक का व्याध द्वारा हनन होने पर विगलित करुणा के रूप में ब्रह्मा के वरदान स्वरूप हुआ। सप्तकाण्डों एवं अनेक सर्गों से युक्त इसमें रामजन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा का निरूपण किया गया है। इसके साथ ही राम कथा संबंधी अन्य पात्रों की प्रासंगिक कथाओं का विशद वर्णन भी है।— जैसे वामनकथन, मत्स्य और वरुण प्रसंग, विश्वामित्र के वंशज, शिव पार्वती प्रसंग, सगर अश्वमेध, गंगा आनयन, समुद्र मंथन, अहल्या प्रसंग, सीता जन्म वन्य तापस कथा, [illegible] वालि-सुग्रीव कथा:, रावण वध, उसकी विजय यात्राएँ, हनुमत कथा, नृग, निमि ययाति की कथाएँ इत्यादि। ये कथायें परस्पर संगुम्फित हैं परिणाम स्वरूप पाठक का चित्त मूल कथा से भटकता नहीं। सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि सुगठित कथानक, उदात्त एवं आदर्श पात्रों का चयन, प्राकृतिक सुषमा का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करुण रस के साथ ही अन्य रसों का सफल सन्निवेश भावोद्रेक की नैसर्गिकता, अलंकृति के लिये पूर्वाग्रह से मुक्त, भावानुरूप शाब्दी सुषमा से युक्त यह काव्य भारतीय साहित्य का उपजीव्य ग्रन्थ है। कवि के हृदय से स्वतः प्रसूत होने के कारण इसमें सरसता एवं प्रसादमयता सर्वत्र परिलक्षित होती है।[1]

1-तुलसी पूर्ववर्ती रामकाव्य-परम्परा का आलोचनात्मक अध्ययन—डा० वेद प्रकाश द्विवेदी

महाभारत :—

वाल्मीकि रामायण के बाद रामचरित का सविस्तर वर्णन महाभारत में मिलता है। रामायण और महाभारत भारतीय वाङ्मय के प्रमुख उपजीव्य ग्रन्थ हैं। यद्यपि अन्तिम रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि महाभारत के पूर्वरूप 'भारत' में भी रामकथा का उल्लेख था किन्तु वर्तमान महाभारत में राम कथा कई स्थलों में उल्लिखित है। अरण्य पर्व [1] में हनुमान भीम के संवाद के अन्तर्गत राम वनवास से लेकर सीता हरण तथा उनके अयोध्या प्रत्यागमन तक सम्पूर्ण रामकथा वर्णित है। इसीतरह द्रोणपर्व तथा शान्तिपर्व में षोडश राजोपाख्यान के अन्तर्गत रामकथा मिलती है। इसी प्रकार रामोपाख्यान में राम कथा का वर्णन विस्तार से है जिसमें कुछ परिवर्तन किया गया है। इस रामोपाख्यान के संबंध में पाश्चात्य विद्वानों ने यह धारणा बना ली है कि रामोपाख्यान वाल्मीकि रामायण का मूल आधार है। जबकि भारतीय विद्वानों ने इसका विरोध कर इसे निराधार प्रमाणित किया है। इस संबंध में डा0 अमर पालसिंह का कथन है कि यह मान्य मत है कि रामोपाख्यान का आधार वाल्मीकि रामायण ही है। अतः यह सिद्ध होता है कि वर्तमान महाभारत में रामायण की कथावस्तु अति साम्य के अनुसार चलती रही।[4]

पौराणिक साहित्य में रामकथा :—

भारतीय धर्म तथा संस्कृति के स्वरूप को यथार्थतः जानने के लिये पुराणों का अनुशीलन नितान्त आवश्यक है। वेदों का उपबृंहण करने वाले इन पुराणों ने रोचक एवं सरस आख्यानों से राम कथाश्रयों को सुरक्षित रखा है। इनमें तत्कालीन प्रचलित

1- महाभारत 3/147/28-38
2- वही, द्रोणपर्व, 7/
3- वही, शान्तिपर्व, 12/22/51-62
4- तुलसीपूर्व रामसाहित्य, पृ0 28

आख्यानों को धार्मिक लोगों के रूचि के अनुसार ढाला गया है।

विभिन्न पुराणों में राम कथा के अनेक पक्षों का उद्घाटन किया गया है। पुराणों में उल्लिखित कथा का मूल स्वर तो वाल्मीकि रामायण का ही है किन्तु उसमें कुछ नई सामग्री का समावेश कर कथानक में मौलिक परिवर्तन करके राम चरित्र के नये आयामों को उद्घाटित किया गया है। राम कथा कहीं स्तवन के रूप में, कहीं स्वतंत्र रूप से, कहीं किसी पुराण की कथा को यत्किंचित परिवर्तित रख के और कहीं किसी साम्प्रदायिक देवी देवताओं की अर्चना के महत्व को प्रतिपादित करने के लिये लिखी गयी है।

मार्कण्डेय पुराण, ब्रह्माण्ड तथा मत्स्य पुराण में अवतारों के सन्दर्भ में राम नाम आया है। हरिवंश , विष्णु, वायु, भागवत एवं कूर्म पुराण में स्वतंत्र रूप से सम्पूर्ण राम कथा उल्लिखित है। अग्निपुराण एवं नारदीय पुराण की कथा वाल्मीकि - रामायण का ही संक्षिप्त रूप मात्र है। लिंग पुराण में इक्ष्वाकु वंश वर्णन के अन्तर्गत संक्षिप्त कथा दी है। स्कन्द के विभिन्न खण्डों का महात्म्य बताने वाले स्थलों में रामकथा की अनेक बार आवृत्ति हुई है। जैसे — कार्तिक्य, वैशाखमास, अयोध्या, सेतुमाहात्म्य एवं अवन्त्य क्षेत्र माहात्म्य एवं देवखण्ड, नागरखण्ड प्रभासखण्ड इत्यादि। पद्मपुराण के पाताल खण्ड में राम कथा संबंधी बहुत सी सामग्री मिलती है। इसी तरह विष्णु धर्मोत्तर, नृसिंह, वह्नि, श्रीमद्देवी भागवत, बृहद्धर्म, सौर कालिका एवं कल्कि पुराण में राम कथा के विविध रूप दिखाई देते हैं। इन पुराणों का रचनाकाल विवादग्रस्त है किन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि समयानुसार विभिन्न सम्प्रदायों के महत्वानुसार रामकथा को ढाला गया है।[1]

1- विस्तृत विवरण रामकथा — डा० बुल्के, पृ० 153-64 में है।

अवतारवाद, पुत्रोत्पत्ति के विभिन्न कारणों की कल्पना, अयोनिजा सीता राम द्वारा शूर्पणखा का विरूपण, रजक प्रसंग, कुश लव युद्ध, विभिन्न देवी - देवताओं की उपासना, राम सीता का पूर्वानुराग एवं राम कथा सम्बन्धी अनेक पात्रों के संबंध में प्रासंगिक घटनाओं की कल्पना इनकी मौलिक विशेषतायें हैं।

<u>संस्कृत ललित साहित्य</u> :-

वाल्मीकि रामायण की आकर्षक कथावस्तु से आकृष्ट होकर परवर्ती अनेक कवियों ने रामकथा को आधार बनाकर महाकाव्यों एवं नाटकों की सृष्टि की। बाद में संस्कृत साहित्य बहुत कुछ निर्जीव   की शृंखला में बंध गया किन्तु रामकथा श्लेष काव्य, विलोम काव्य, चित्रकाव्य तथा शृंगारिक खण्डकाव्य इस बात का प्रमाण देते हैं कि रामकथा की लोकप्रियता अक्षुण्ण रही।

<u>(क) महाकाव्य</u> :-

इनके अन्तर्गत दो ढंग से कथा प्राप्त होती है —(1) सम्पूर्ण ग्रन्थ में रामचरित वर्णन (2) अन्य चरित्रों के साथ रामकथा। रामायण मंजरी (क्षेमेन्द्र) रामचरित (अभिनन्द), जानकी हरण (कुमारदास), उदारराघव (साकल्य मल्लाचार्य), रघुवीरचरित (मल्लिनाथ), श्री राम विजय (रूपनाथ उपाध्याय), राघवीय (महाकवि पणिवाद), रघुवंश (कालिदास), दशावतार चरित (क्षेमेन्द्र), नारायणीय (नारायण भट्ट)।

<u>(ख) नाटक</u> :-

राम के जीवन में अनेक नाटकीय घटनाओं का समावेश है जिससे नाटककार आकृष्ट हुए हैं। उन्होंने रुचि के अनुसार कथा में परिवर्तन किया है। इसके लिये कुछ नवीन पात्रों की भी कल्पना की गयी है। शृंगारिकता इनकी पहली विशेषता है।

प्रतिमा, अभिषेक (भास), महावीर चरित, उत्तररामचरित (भवभूति), कुन्दमाला (दिङ्नाग), अनर्घराघव (मुरारि), प्रसन्नराघव (जयदेव), बालरामायण (राजशेखर),

हनुमन्नाटक(हनुमान महानाटक(हनुमान), आश्चर्य चूड़ामणि (शक्तिभद्र), अद्भुतदर्पण (महादेव कवि), मैथिली कल्याण (कवि हस्तिमल्ल), उन्मत्त राघव(भास्कर) दूतांगद (सुभट) मृतसमोदय(छविलाल सूरी) इत्यादि प्रमुख नाटक हैं। डा० कामिल बुल्के ने रामाभ्युदय(व्यासमिश्र), जानकी परिणय(रामभद्र दीक्षित), उदारराघव छलित राम - वण रावण माया पुष्पक, स्वप्न दशानन, अभिनव राघव, रघुविलास, राघवा-भ्युदय एवं रामाभ्युदय अन्य नाटकों का उल्लेख किया है।

श्लेषकाव्य :-

राघव पाण्डवीय प्रथम (धनंजय) राघव पाण्डवीय द्वितीय(माधवभट्ट) राघव नैषधीय(हरदत्त सूरि) रामचरित (संध्याकर नंदी), राघव पाण्डव यादवीय (चिदंबर)।

विलोम काव्य :- रामकृष्ण विलोम काव्य(सूर्यक कवि) यादव राघवीय(वेंकट ध्वरि) राघव यादवीय(लेखक अज्ञात है)।

चित्रकाव्य :- रामलीलामृत(कृष्णमोहन), चित्रबन्ध रामायण(वेंकटेश)।

खण्डकाव्य :- रामाभ्युदय(अन्नदा चरण तर्क चूड़ामणि), जानकी परिणय(चक्र कवि), श्री रामचरित (कोटिलिंग राजधानी के युवराज कवि) सीता स्वयंवर(हरिकृष्ण भट्ट), उत्तर रामचरित(राम पाणिवाद)।

सन्देश काव्य :- हंसदूत(वेदान्तदेशिक), भ्रमरदूत(रुद्रन्याय पंचानन), वातदूत(कृष्णनाथ)।

ऐतिहासिक ग्रन्थ :- रघुनाथाभ्युदय (रामभद्राम्बा), पृथ्वीराज विजय(जोनराज)।

व्याकरण काव्य :- भट्टिकाव्य (महाकवि भट्टि) रावणार्जुनीयम्(भट्टभीम)

चम्पूकाव्य :- चम्पूरामायण(भोजराज) उत्तररामचरित (वेंकट)।

पद्य साहित्य के अतिरिक्त गद्य साहित्य में भी श्री रामकथा का बड़े सम्मान के साथ ग्रहण हुआ है। कथा सरित्सागर, बृहत्कथा मंजरी तथा रामकथा (वसुदेव) आदि गद्य ग्रन्थों में रामकथा का आकर्षक रस मिलता है।

संस्कृत साहित्य में प्राप्त रामकथा को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।[1] (1) ऐसे कवि जिन्होंने हृदय की सच्ची प्रेरणा पाकर साहित्य की सृष्टि की है अतः उनकी कविता सरल, सरस तथा स्वाभाविक है।(2) दूसरे वे कवि हैं जो काव्यशास्त्र के पंडित हैं तथा जिनमें काव्य का कथानक गौण शास्त्रीय अभिव्यंजना की प्रधानता है। बाह्य रस को अलंकृत करना, श्लेष योजना कर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करना, व्याकरणशास्त्र के प्रतिबन्धनों से काव्य को आक्रान्त कर देना इनका प्रधान लक्ष्य है। इनकी भाषा क्लिष्ट एवं दीर्घ समासों से युक्त है।(3) तीसरे वे कवि हैं जिनका प्रधान लक्ष्य कविता के माध्यम से लौकिक भोगविलासों का चित्रण करना है। अवतारी राम और सीता साधारण नायक नायिका मात्र हैं। जहाँ कहीं अवसर मिला है इन्होंने अपनी हृदयगत वासनाओं को व्यक्त किया है।

धार्मिक एवं साम्प्रदायिक साहित्य में रामकथा :—

अवतारवाद एवं भक्ति भावना का विकास होने पर रामकथा में अनेक परिवर्तन हुये। सीता राम कौन थे। उनके अवतार किस रूप में और कहाँ हुए उनकी भक्ति किस प्रकार की जा सकती है। इस भावना से प्रेरित होकर विभिन्न धार्मिक एवं साम्प्रदायिक साहित्य की रचना हुई। उपनिषद्, वैष्णव संहितायें, स्तवराज और भक्ति एवं साम्प्रदायिक रामायणों में राम भक्ति का माहात्म्य उनकी रास लीलायें एवं अवतार के

1- रामचन्द्रिका का विशिष्ट अध्ययन, डा0 गार्गी गुप्त, पृ0 67

स्वरूप के साथ ही साथ रामपूजा का शास्त्रीय विवेचन किया गया। योगवाशिष्ठरामायण, भुशुण्डीरामायण, ब्रह्मरामायण, गायत्री रामायण, रामायण रहस्य, वेदान्तरामायण, अद्भुत रामायण, आनंदरामायण, अध्यात्मरामायण, रामतापनीयोपनिषद, रामोत्तर तापनीयोपनिषद रामरहस्योपनिषद सीतोपनिषद, रामस्तवराज, श्री रामगीता के अतिरिक्त जैमिनीय अश्वमेध के कुशलवोपाख्यान में रावणचरित सहस्रमुख रावण चरित्र सत्योपाख्यान इस दिशा के महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों में रामकथा को भक्ति के सांचे में ढाला गया है। कुछ रामायणों की तालिका श्री रामदास गौड़ ने हिन्दुत्व नामक ग्रन्थ में दी है।[1]

बौद्ध रामकथा :—

राम के कार्यों में अलौकिकता के समावेश होने के कारण उनके बढ़ते प्रभाव से प्रभावित होकर बौद्धों ने हिन्दू देवताओं का बुद्ध भगवान से संबंध जोड़ना आरम्भ कर लिया। बौद्ध मतावलम्बी महात्मा बुद्ध को राम का अवतार मानते हैं इसीलिए पालि भाषा में लिखे अनेक जातकों में रामकथा मिलती है जिनमें रामकथा संबंधी तीन जातक प्रमुख हैं (1)दशरथ जातक(2)अनामक जातक(3)दशरथ कथानक। प्रत्येक जातक में पहले वर्तमान कथा दी जाती है इसके बाद अतीत कथा कही जाती है और अन्त में भगवान बुद्ध जातक का समाधान प्रस्तुत करते हैं।

दशरथ जातक में राम, लक्ष्मण और सीता परस्पर भाई बहन हैं सौतेले भरत की माँ के षड्यन्त्र के कारण राम बारह वर्ष के लिये हिमालय जाते हैं और दशरथ मरण

1- हिन्दुत्व, पृ0 137

एवं पूर्व निर्णयानुसार समय समाप्त होने पर अयोध्या लौटकर राम सीता से विवाह कर सोलह हजार वर्ष तक शासन करते हैं। अनामक जातक में वनवास, सीताहरण, जटायु मृत्यु, बालि-सुग्रीव युद्ध, सेतु बन्धन एवं अग्निपरीक्षा के संकेत मिलते हैं। इसी प्रकार दशरथ कथानक की कथा भी राम से संबंधित है। राम कथा से संबंधित देवधम्म जातक, जयद्दिस जातक, साम जातक वेस्सन्तर जातक, सम्बुल जातक प्रमुख हैं। अनेक विद्वानों का मत है कि दशरथ जातक की राम कथा मूल राम कथा है जिसका खण्डन डा० कामिल बुल्के ने किया है।[1]

जैन रामकथा :-

बौद्धों की अपेक्षा जैनियों में राम कथा विस्तृत रूप में प्राप्त होती है। जिस प्रकार बौद्धों ने गौतम को राम का पुनरावतार स्वीकार किया है। उसी प्रकार जैनियों ने राम (पद्म) लक्ष्मण एवं रावण को जैन धर्मानुयायी महापुरुष के रूप में वर्णित किया है। उनकी गणना त्रिषष्ठि शलाका पुरुषों में की गयी है। ये तीनों क्रमशः आठवें बलदेव, वासुदेव और प्रति वासुदेव माने जाते हैं। वासुदेव अपने बड़े भाई बलदेव के साथ प्रतिवासुदेव से युद्ध करते हैं। हत्या के पाप से वासुदेव को नरक मिलता है और अन्ततः बलदेव जैन धर्म में दीक्षित होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। जैनियों में श्वेताम्बर एवं दिगम्बर सम्प्रदायानुसार रामकथा मिलती है जो निम्नलिखित है —

(1) विमल सूरि की परम्परा :-

(क) प्राकृत —

(1) विमलसूरि कृत पउम चरियं (तीसरी-चौथी श०ई०)।

(2) शीलाचार्य कृत चउप्पन महापुरिस चरियं के अन्तर्गत राम लक्खण चरियम (नवीं श०ई०) यह रामकथा विमलसूरि की परम्परा के अनुसार होते हुए भी वाल्मीकीय कथा से प्रभावित है।

1- रामकथा, पृ० 81-96

(3) भद्रेश्वर कृत (11वीं श०ई०) के अन्तर्गत रामायणम्।

(4) भुवनतुंग सूरि कृत सीयाचरिय तथा राम लक्खण चरिय।

(ख) संस्कृत —

(1) रविषेणकृत पद्मचरित (678ई०) प्राचीनतम जैन संस्कृत ग्रन्थ।

(2) हेमचन्द्र कृत त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित (12वीं श०ई०) के अन्तर्गत जैन रामायण कलकत्ता सं० 1930

(3) हेमचन्द्रकृत योगशास्त्र की टीका के अन्तर्गत सीतारावण कथानकम्।

(4) जिनदासकृत रामायण अथवा रामदेव पुराण (15वीं श०)। एम० विंटरनित्ज, हि०इ० भाग2 पृ0 466

(5) पद्मदेव विजय गणिकृत रामचरित (16वीं श०ई०)। डे० राजेन्द्रलाल मित्रा नोटिसिस संस्कृत मैन्युस्क्रिप्ट्स भाग 10 पृ0 134 और भंडारकर रिपोर्ट 1882-83 पृ0 82

(6) सोमसेनकृत रामचरित (16वीं श०ई०) इसकी हस्तलिपि जैन सिद्धान्त भवन आरा में सुरक्षित है।

(7) आचार्य सोमप्रभकृत लघुत्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित।

(8) मेघ विजयगणिवरकृत लघुत्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्र। (17वीं श०ई०)

इन रचनाओं के अतिरिक्त जिन रत्नकोश में धर्मकीर्ति चन्द्रकीर्ति, चन्द्रसागर, श्रीचन्द्र, आदि द्वारा रचित विभिन्न पद्मपुराण अथवा रामचरित नामक ग्रन्थों का उल्लेख है। सीता चरित्र के तीन रचयिताओं के नाम मिलते हैं —ब्रह्मनेमिदत्त, शांति सूरि तथा अमर दास। अधिकांश सामग्री अप्रकाशित है।

(ग) अपभ्रंश —

(1) स्वयंभूदेव कृत पउम चरिउ अथवा रामायण पुराण (8वीं श०ई०)। भारतीय विद्या भवन बम्बई, सं० 2009

(2)रइधू अथवा रयधू पद्मपुराण अथवा बलभद्दपुराण(15वीं श0ई0)। दे0हरिवंश कोछड़ अपभ्रंश साहित्य पृ0 116 तथा राम सिंह तोमर, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य पृ0154

<u>गुणभद्र की परम्परा –</u>

(1)संस्कृत – गुणभद्रकृत उत्तरपुराण/कृष्णदास कविकृत पुण्य चंद्रोदय पुराण।
(2)प्राकृत – पुष्पदन्त कृत महापुराण।

विमलसूरि की कथा वाल्मीकि रामायण के बहुत निकट है जबकि गुणभद्र की परम्परा में लिखी गयी रामकथा उससे भिन्न है। कथाप्रवाह एवं प्राकृतिक वर्णन तथा रस की दृष्टि से विमलसूरि, प्रवरसेन स्वयंभू एवं पुष्पदन्त के काव्य अविस्मरणीय हैं।

संस्कृत प्राकृत एवं अपभ्रंश की राम कथा को उत्तराधिकार में प्राप्त कर कवियों ने हिन्दी में भी रामकथा का प्रणयन किया है। तुलसी के पूर्व अधिकांश रामसाहित्य अनु-पलब्ध एवं अप्रकाशित है जिसका विवरण तुलसी परवर्ती हिन्दी रामकाव्य परम्परा नामक शोध प्रबन्ध में विस्तृत रूप से उल्लिखित है जिसे संक्षिप्त रूप में इस प्रकार कहा जा सकता है।

तुलसी पूर्व हिन्दी रामसाहित्य प्रायः हस्तलिखित होने के कारण उपलब्ध नहीं होता है। आचार्य पीठों, राज्य भण्डारों तथा निजी संग्रहों में अथाह अप्रकाशित रामसाहित्य भरा पड़ा है। तुलसी की सुगठित, सुललित एवं धार्मिक रामकथा को देखकर सहज विश्वास ही नहीं होता कि अपभ्रंश के बाद तुलसी ही रामकथा के प्रमुख एवं प्रथम गायक हैं। रामकाव्य परम्परा की कड़ी बीच में टूटी सी प्रतीत होती है। राजनीतिक विप्लव एवं मुस्लिम आक्रमणों के कारण हिन्दू संस्कृति के केन्द्र विध्वंस होते जा रहे थे। ऐसी दशा में यहाँ उपलब्ध साहित्य की सुरक्षा सम्भव ही नहीं थी। साथ ही कुछ धार्मिक साम्प्रदायिक आग्रह एवं कुछ तुलसी की वरदायिनी प्रतिभा तथा उनके महान् व्यक्तित्व के कारण पूर्व-वर्ती कवि प्रकाश में नहीं आ पाये। जो भी उपलब्ध कवि हैं उनका काल विवाद

(1) अवतार (पृथ्वीराज रासो) चन्दबरदायी (2) रामरक्षा, रामाष्टक, रामकथा—रामानन्द[1] (2) मानस-रामायण[2] गोस्वामी विष्णुदास (4) भरतविलाप, अंगदपैज रामकथा-ईश्वरदास।[3] (5) सूरराम चरितावली (सूरसागर)—सूरदास (7) रामचरित— ब्रह्मजिनदास[4] (7) रावण-मंदोदरी संवाद — मुनि लावण्य[5] (8) सीताराम रास—गुणकीर्ति[6] (9) पद्मचरित-विनयसमुद्र[7] (10) सीता चोपइ — समय ध्वज (11) सीता प्रबन्ध — समय ध्वज (12) सीताचरित — हेमरत्नसूरि[8] (13) हनुमन्त कथा — ब्रह्मरायमल्ल[9] (14) हनुमान चरित—सुन्दर दास[10] (15) हनुमन्नाटक रामायण[11] (16) जैमिनीय अश्वमेध भाषा — पुरुषोत्तमदास[12] (17) रामावतार — मधुसूदनदास।

1- तुलसीपूर्व रामसाहित्य, डॉ० अमरपाल सिंह, पृ० 122-26

2- सभा खोज रिपोर्ट 1906-8 पृष्ठ संख्या 248

3- नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष 6 अं० 1

4- राष्ट्रभारती दिसम्बर 1963 (अ०नाहटा का लेख)

5-अनेकान्त वर्ष 5 किरण 1-2 पृ० 103

6- राष्ट्रभारती, फरवरी, 1964 (अगरचन्द नाहटा) 7-तुलसीपूर्व रामसाहित्य, पृ0234

8-तुलसीपूर्व रामसाहित्य पृ0 234

9- अनेकान्त वर्ष 4 किरण, पृ० 566

10- तुलसी पूर्व रामसाहित्य पृ0 237

11- तुलसी पूर्व रामसाहित्य पृ0 237

12- तुलसी पूर्व रामसाहित्य, पृ0 278

उक्त सूची का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि रामकथा कहीं जैन सम्प्रदाय में प्रचलित परम्परा के अनुसार कहीं भक्ति भावना के प्रचार के लिये कहीं प्राचीन ग्रन्थों (रामायण) के अनुवाद के रूप में और कहीं किसी काव्य के अन्तर्गत प्रसंगानुसार खण्डरूप में मिलती है।

पृथ्वीराज रासो के द्वितीय सर्ग में लिखित 'दसम कथा' में से रामावतार की घटना 264 से लेकर 301 छन्द तक में उल्लिखित है जिसकी कथा का आधार वाल्मीकि रामायण ही है। परशुराम द्वारा क्षत्रियों का संहार, राम जन्म, ताड़कावध, वनवास, शूर्पणखा प्रसंग, सीता हरण, हनुमान द्वारा सीता की खोज, वाटिका विध्वंस, अक्षय वध, लंका दहन, सेतु बंधन, मेघनाद, कुम्भकर्ण रावण वध के पश्चात् अयोध्या प्रत्यागमन की घटनायें वर्णित हैं। इस प्रकार की वीर रस प्रधान घटनाओं का चयन कवि की वीरगाथा कालिक मनोवृत्तियों का परिचायक है। ओज प्रधान एवं द्वित्ववर्ण प्रधान भाषा में भावों का सटीक वर्णन बन पड़ा है।

स्वामी रामानन्द ने रामकथा संबंधी कोई भी ग्रन्थ नहीं लिखा है। उनके नाम से जो भी विवादग्रस्त ग्रन्थ प्राप्त होते हैं उनमें ज्ञान, भक्तियोग का ही वर्णन है। वैष्णवों के कर्म, भगवत्पूजन, अवतार भक्ति भावना को कवि ने प्रांजल एवं प्रभावमयी भाषा में लिखा है।

आदि काव्य के हिन्दी रूपान्तर कर्ता विष्णुदास के संबंध में बहुत विवाद है। इन्होंने दोहा चौपाई शैली में 'भाषा वाल्मीकि रामायण' नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया है। रामानन्द द्वारा प्रवर्तित रामभक्ति का साहित्यिक पल्लवन ईश्वरदास की रचनाओं में हुआ है। रामकथा संबंधी इनकी तीन रचनायें मिलती हैं —

(1) भरत विलाप (2) अंगद पैज तथा (3) राम-जन्म।[1]

1- नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष 61 अंक 1 में श्री उदय शंकर शास्त्री का लेख।

भरतविलाप करुण रस प्लावित सरस एक श्रेष्ठ रचना है। राम वनगमन पुरवासियों का शोक, दशरथ मरण, भरत आगमन उनसे कौशल्या की भेंट, अन्त्येष्टि संस्कार चित्रकूट प्रस्थान, लक्ष्मण क्रोध राम भरत मिलन चित्रकूट प्रसंग के बाद पादुका लेकर भरत का अयोध्या प्रत्यागमन आदि घटनायें सन्निविष्ट हैं। दोहा चौपाई शैली में लिखी गई भरत विलाप की भाषा अयोध्या के समीप बोली जाने वाली ठेठ अवधी है। अंगीरस करुण की व्यंजना में कवि को सर्वाधिक सफलता मिली है।

इसी प्रकार जायसी ने सूफी विचारधाराओं के अनुकूल रामकथा संबंधी घटनायें 'पद्मावत' में लिखी है।

उपर्युक्त विवेचन से यह बात सामने आ गयी है कि तुलसी पूर्व रामकथा को स्पष्ट सुग्राह्य एवं व्यवस्थित रूप देने का प्रयास किसी कवि ने नहीं किया है, इस दशा में सबसे प्रथम हमारी दृष्टि सूरदास पर ही टिकती है। सूरसागर के नवम् स्कन्ध में भागवत शैली रामकथा का अनुकरण है जिसमें जय विजय शाप, राम जन्म, बाललीला, विश्वामित्र आगमन, यज्ञ रक्षा, अहल्या उद्धार, धनुर्भंग, विवाह वर्णन परशुराम भेंट, राम का राज्याभिषेक उत्सव, कैकेईवर याचन, रामवनगमन, केवट प्रसंग, दशरथमरण, भरत आगमन, चित्रकूट प्रसंग, शूर्पणखा का विरूपीकरण, सीताहरण, जटायु भेंट, सुग्रीव मिलन, बालिवध, हनुमान द्वारा जलनिधि संतरण, लंकादहन, सेतुबन्धन, लक्ष्मण शक्ति, रावण वध, सीता की अग्निपरीक्षा एवं अयोध्या प्रत्यागमन की घटनायें विन्यस्त है और अन्त में राम सीता की विलास लीलायें भी वर्णित है। मार्मिक स्थलों का चयन सभी रसों का सफल सन्निवेश , युद्धों का सजीव वर्णन, कविकर्म के साफल्य के द्योतक है।

सारांश यह है कि हिन्दी में तुलसी के पूर्व सम्पूर्ण रामकथा को प्रबन्धकाव्य के रूप में लिखने का प्रयास नहीं सा हुआ है। या तो विशिष्ट स्थलों, पात्रों को लेकर या फिर मनोनुकूल बीच बीच के अंशों का चयन कर या फिर साम्प्रदायिक आग्रह से पात्र

स्वाभाविकता सरसता, सुन्दरता एवं भावसम्प्रेषणीयता का अनुभव कर नाना पुराण निगमागम सम्मत ऐसी रामकथा लिखी है जो आज विश्व साहित्य में अपना अलग स्थान रखती है। उन्होंने रामचरित मानस' 'विनयपत्रिका' 'गीतावली' 'रामलला नहछू' 'जानकी मंगल' 'कवितावली' 'बरवै रामायण' 'रामाज्ञाप्रश्न इत्यादि रामकाव्य लिखे हैं। इन्हीं ग्रन्थों के आधार पर तुलसी की अद्भुत काव्य कला का संक्षेप में उदाहरण दिया जा रहा है जिसके कारण वे विश्वकवि वरेण्य हैं।

रामचरित मानस –

रामचरित मानस उनकी अद्भुत रचना चातुरी, नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा विलक्षण उद्भावना शक्ति, उर्वर कल्पना एवं उत्कृष्ट काव्यकला का उदाहरण है जिसके समक्ष तुलसी के अन्य ग्रन्थ विनयपत्रिका को छोड़कर ठहर नहीं सके, फिर भला बड़े से बड़े से छोटे से छोटे आगे के कवियों की क्या बिसात है?

वन्दना के बाद चार वक्ताओं एवं चार श्रोताओं के सम्वादों से कथा का प्रारम्भ होता है, जिसमें रामावतार से संबंधित कथाओं के बाद राम जन्म से लेकर विवाह तक के अंश वर्णित हैं। अयोध्याकाण्ड में राम के राज्याभिषेक से लेकर भरत के नन्दिग्राम निवास तक अरण्यकाण्ड में जयन्त प्रसंग से लेकर राम के पम्पापुर पहुँचने तक किष्किन्धा काण्ड में राम सुग्रीव मैत्री से लेकर राम के ससैन्य सिन्धु आगमन तक, लंकाकाण्ड में सेतु बन्ध से लेकर राम का अयोध्या प्रस्थान एवं उत्तरकाण्ड में राम का राज्याभिषेक और राज्यवर्णन के साथ काकभुशुण्डि संवाद के समाप्ति तक की कथाएँ उपलब्ध हैं।

विनयपत्रिका :–

कलियुग से संत्रस्त होकर कवि अपने आराध्य राम की सेवा में भेजने के लिए एक प्रार्थना पत्र लिखा है। अतः इसका प्रारम्भ तत्कालीन राजा के पास भेजे जाने वाले आवेदन पत्र के समान है, जिसमें अपना कार्य कराने के लिए राजा के बहुर्दिक रहने वाले

देवकारियों को प्रसन्न किया जाता है। इसीलिए तुलसी ने गणेश, शिव, गंगा, हनुमान सूर्य, जानकी, भरत सभी की वन्दना की है। बाद में तुलसी ने आत्म निवेदन प्रस्तुत किया है जिसमें कवि की महान सांसारिक कुभूतों एवं पश्चात्ताप का वर्णन है। अंत में पत्रिका की स्वीकृति का भी वर्णन है। इस प्रकार यह ज्ञान, भक्ति, दर्शन का व्यावहारिक ग्रन्थ है।

गीतावली :-

इसमें रामकथा के मधुर स्थलों का चयन कर उनका वर्णन किया गया है। राम के आविर्भाव से लेकर सीता निर्वासन और लवकुश के बालचरित तक के विभिन्न प्रसंग वर्णित हैं। इनमें लक्ष्मण परशुराम संवाद, लंकादहन, राम रावण युद्ध वर्णित नहीं है। प्रसंगोद्भावना की दृष्टि से विश्वामित्र के साथ गये राम लक्ष्मण के प्रति सुमित्रा की चिन्ता वनवासी राम के वियोग में कौशल्या का व्यथित होना, शुक सारिका संवाद, निषादराज की भक्ति, शबरी के प्रति राम का मातृस्नेह, अशोक वाटिका में सीता मुद्रिका संवाद लक्ष्मण मूर्छा का समाचार सुनकर सुमित्रा द्वारा शत्रुघ्न को सहायता के लिए जाने का आदेश एवं बसन्त विहार, राम की न्यायनिष्ठा, सीता निर्वासन, लवकुश जन्म की घटनायें उल्लेखनीय हैं।

रामलला नहछू –

लोकाचार वर्णन हेतु इसको लिखा गया है। आरम्भ में यह कहा गया है कि यह नहछू किस अवसर का है। माता कौशल्या सिंहासन पर बैठकर राम को गोद में लेकर नहछू करवा रही हैं। इस अवसर पर नाइन, धोबिन, दर्जिन, मालिन, बारिन, सभी के कृत्यों का उल्लेख है। हास परिहास के साथ यह कृत्य पूरा होता है।

जानकी मंगल :-

राम सीता के विवाह से संबंधित घटनायें इसमें है। इसमें राम द्वारा विश्वामित्र के यज्ञ का रक्षण, उनका जनकपुर प्रवेश स्वयंवर सभा में राजाओं की निराशा धनुर्भंग, कुलरीत्यनुसार विवाह, मार्ग में परशुराम भेंट इत्यादि की घटनायें वर्णित है।

कवितावली :-

रामकथा से संबंधित अनेक प्रसंग इसमें है। राम के बालरूप की झांकी से इसका प्रारम्भ होता है। धनुर्भंग, विवाह, परशुराम प्रसंग, रामवनगमन, केवट प्रसंग सीताहरण, हनुमान का जलनिधि संतरण, वाटिका विध्वंस, लंकादहन, अंगद का पैज कर्म वानर राक्षस युद्ध, लक्ष्मण शक्ति, रावण वध, इत्यादि की घटनायें सात काण्डों में उपनिबद्ध है।

बरवै रामायण :-

बालकाण्ड में सीता राम छवि स्वयंवर एवं विवाह, अयोध्याकाण्ड में राम-वनगमन, निषाद भेंट, अरण्यकाण्ड में शूर्पणखा प्रसंग, सीताहरण, राम का अनुताप, किष्किन्धाकाण्ड में राम सुग्रीव भेंट तथा मैत्री, सुन्दरकाण्ड में सीता राम विरह लंकाकाण्ड में राम सेना एवं उत्तरकाण्ड में ज्ञान भक्ति एवं चित्रकूट महिमा इत्यादि का वर्णन एवं रामकथा से संबंधित घटनायें है।

रामाज्ञाप्रश्न :-

यह ज्योतिष का ग्रन्थ है। इसमें सात सर्ग एवं 49 सप्तक है। इसके प्रत्येक सर्ग में रामकथा कही गयी है। अश्वमेध यज्ञ, राम की बाललीला, अहल्योद्धार, सीता-स्वयंवर, मार्ग में परशुराम भेंट, राम वनगमन, दशरथमरण, भरत प्रसंग, पंचवटी निवास, शूर्पणखा प्रसंग, सीताहरण, बालिवध, सीतान्वेषण, हनुमान का लंका प्रवेश, लंका-दहन विभीषण की शरणागति, सेतुबन्ध, रामरावणयुद्ध के साथ ज्ञान भक्ति का वर्णन है।

इसमें साहित्यिकता का अभाव है। यह ग्रन्थ वर्णन प्रधान है। कथाक्रम कई स्थानों में भंग हुआ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कथा की दृष्टि से रामचरित मानस अद्वितीय ग्रन्थ है। कोमल स्थलों के लिए गीतावली, कवितावली, बरवैरामायण प्रमुख हैं। सीता-राम का प्रथम दर्शन, रामवनगमन, दशरथमरण, भरत की ग्लानि, ग्रामवधूटियों का स्नेह लक्ष्मण शक्ति इत्यादि मानस के मार्मिक स्थल हैं। गीतावली में अनेक नवीन उद्भावनायें हैं जिनका पीछे वर्णन किया जा चुका है। कथाशिल्प, रचना वैपुण्य, कार्यावस्थाएँ, सन्धियाँ इत्यादि की दृष्टि से मानस बड़ा ही सुनियोजित ग्रन्थ है। आधिकारिक एवं प्रासंगिक घटनाओं का सम्यक् सन्तुलन अन्य ग्रन्थों में कम देखने को मिलता है।

<u>पात्रों का चरित्र-चित्रण :-</u>

तुलसी ने अपनी कारयित्री प्रतिभा से अपने रामकाव्यों में राम का ऐसा चरित्र प्रस्तुत किया है जो विश्व वन्द्य है। उनके चरित्र के द्वारा भारतीय सभ्यता औरसंस्कृति का ऐसा रूप प्रस्तुत हुआ है, जिसमें त्याग, नैतिकता, साधु प्रकृति, लोकहित एवं मानवता पर चलने वालों को उससे बल मिलता है। उनके राम बुद्धिमान, धर्मज्ञ, यशस्वी, धैर्यवान, शक्ति शील एवं सौंदर्य से समन्वित हैं जो ब्रह्म, अज, अनामय, गोतीत, अव्यय, अजेय हैं, वही भूभार उतारने, गो-द्विज, सुर संत एवं धर्म रक्षा हेतु अवतार लेकर कौशल्या की गोद में खेलता है। तुलसी ने एक तरफ राम को विष्णु का अवतार माना है तो दूसरी ओर उन्हें त्रिपुरारि शम्भु नचावन हारे भी कहा है। बाल सौंदर्य का वर्णन कवितावली एवं गीतावली में हुआ है। रावण असत्प्रवृत्तियों का प्रतीक है। वह अद्वितीय एवं मोक्ष अद्भुत वीर किन्तु प्रजापीड़क था। दर्प गर्व एवं मिथ्या पाखण्ड के कारण उसका विनाश हुआ। भरत एवं लक्ष्मण भ्रातृभक्ति के अनुपम उदाहरण

हैं। तुलसी ने भरत चरित्र का जितना सूक्ष्म चित्रांकन किया है। वह सचमुच ही चित्ताकर्षक है" भरत की अंबरीक विधि चमक जग" के उदाहरण हो सकते हैं। हनुमान दास्य भक्ति के अद्भुत उदाहरण हैं। ये अद्वितीय कर्तव्यपरायण रूप में अंकित हुए हैं। लक्ष्मण सुग्रीव, निषादराज, अंगद विभीषण सभी पुरुष पात्र सेवा भक्ति स्नेह, कर्तव्यपरायणता से समन्वित हैं। नारी पात्रों में सीता तुलसी की आराध्या है। वे आद्याशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुई हैं। सांसारिक स्त्रियों को पातिव्रत धर्म की शिक्षा देने के लिए उन्होंने अनुकरणीय लीलायें की हैं। उनका त्याग, वत्सलता, पातिव्रत स्तुत्य है। कौशल्या आदर्श पत्नी आदर्श माँ एवं आदर्श सास हैं। कैकेयी एवं मंथरा त्रियाहठ की प्रतीक हैं। शबरी, अहल्या की अवतारणा भक्ति भावना के कारण हुई है। तुलसी के पात्रों की सबसे बड़ी विशेषता है। वे उनके सद्‌पात्र असद्‌प्रवृत्तियों से सदैव संघर्ष रत रहे हैं। तुलसी के पात्रों में यह आरोप लगाया जा सकता है कि वे एक पात्र (राम की ओर केन्द्रोन्मुखी हैं। अर्थात् उनका स्वतंत्र विकास न होकर राम के गुणों के विकास पर आधारित है। सारतः यह कहा जा सकता है कि तुलसी ने राम के चरित्र को सक्षम बनाया है कि वे युग-युग तक निर्बलों के आश्रय बने रहेंगे।

<u>भाव एवं रस निरूपण</u> :—

तुलसी के राम साहित्य में सभी रसों को स्थान मिला है। गीतावली, नहछू, बरवै रामायण, जानकी मंगल में शृंगार रस, कवितावली एवं गीतावली में वात्सल्य रस, विनयपत्रिका में शान्त रस, कवितावली में वीर का अच्छा वर्णन है। रामचरित मानस में सभी रसों का अच्छा परिपाक हुआ है।

<u>(1) संयोग शृंगार</u> —

राम को रूप निहारति जानकी कंकन की नग की परछाहीं।
याते सबै सुधि भूलि गई कर टेकि रही पल टारति नाहीं। (कवितावली, 1/17)

(2) राम दीख जब सीय सीय रघुनायक। दोउ तन तकि तकि नयन सुधारत सायक।[1]

(2) वियोग श्रृंगार :-

बिरह आगि उर ऊपर अति अधिकाई।
ए अँखियाँ दोउ बैरिनि देहि बुझाई॥[2]

भूषन बसन बिलोकत सिय के।
प्रेम बिबस मन कंप पुलक तन नीरज नयन नीर भरे पिय के।[3]

(3) करुण :-

सो तनु राखि करब मैं काहा। जेहि न प्रेम पनु मोर निबाहा।
हा रघुनन्दन प्राण पिरीते। तुम बिन जियत बहुत दिन बीते।[4]

(4) वीर :-

जो हौं अनुशासन पावौं,
तो चन्द्रमहि निचोरि चैल ज्यों आनि सुधा सिर नावौं।[5]

(5) हास्य :-

पुनि पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं। देखि दसा हरगन मुसकाहीं।[6]

(6) भयानक :-

धिया तू पराहि नाह नाथ तू पराहि, बाप बाप तू पराहि पूत पूत तू पराहि रे।
तुलसी बिलोक लोग व्याकुल बिहाल कहै लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे।[7]

(7) रौद्र :-

माखे लखन कुटिल भई भौंहें। फरकत रदपट नयन रिसौंहें।[8]

1-जानकीमंगल6-252 2- बरवै 5/36 3- गीतावली, 4/1
4-मानस 2/155/8 5-गीतावली 6/8 6- मानस 1/135/1
7- कवितावली, 5/16 8- मानस, 1/252/8

(8) बीभत्स :-

सोनित सों सानि सानि गूदा खात सतुआ से,

प्रेत एक पियत बहोरि घोरि घोरि।[1]

(9) अद्भुत -

गै जननी सिसु पाइँ भयभीता। देखा बाल तहाँ पुनि सूता।

बहुरि आइ देखा सुत सोई। हृदय कंप मन धीर न होई।[2]

(10) शान्त :-

अजहुँ बूझै न आइ गयो जनम जाय।

अति दुर्लभ तनु पाइ कपट तजि भजे न राम वचन मन काय।[3]

(11) वात्सल्य :-

कबहुँ पौढ़ि पय पान करावति कबहुँ राखति लाइ हिये।

बाल केलि गावत हलरावति पुलकित प्रेम पियूष पिये।[4]

सारांश यह कि तुलसी की रसात्मक संयोजना ने उनको कवि समाज में अग्रणी बनाया है।

वस्तुवर्णन :-

तुलसी के राम साहित्य में वस्तु वर्णन का क्षेत्र बहुत व्यापक है। प्रकृति के तो वे अद्भुत चितेरे हैं। मानस में प्रकृति के सभी रसों का अच्छा वर्णन है। कामदगिरि वर्णन में झर झर करते हुए झरने, चक्रवाक- चातक, पिक, चकोर आदि का कलरव, मयूरों का नृत्य, कुसमित पुष्पों का वर्णन हुआ है।[5] इसी तरह षट्ऋतु वर्णन पम्पा सरोवर,

---

1-कवितावली, 6/50, 2- मानस 1/201/8

3- विनयपत्रिका, पद 83, 4- गीतावली, 1/7 5-मानस, 2/235-236

6-मानस, 1/1

पंचवटी का संश्लिष्ट चित्रण हुआ है। दामिनि दमक रही घन माहीं। खल की प्रीति जथा थिर नाहीं।'' जैसे शताधिक पंक्तियों में उपदेशात्मक, सुबेल पर्वत पर चन्द्र कलंक वर्णन में अलंकारकता एवं कवितावली में लंका दहन में प्रकृति की भयंकरता का चित्रण हुआ है। साथ ही नदी सरोवर कमल प्रातः सन्ध्या आश्रम, नगर पर्वत समुद्र इत्यादि वर्णन कवि की बहुज्ञता के द्योतक हैं। इनके वर्णन से भाव सम्प्रेषण में सरलता हुई है।

<u>कलापक्ष</u> :—

तुलसी ने अवधी एवं ब्रजभाषा में राम साहित्य लिखा है। दोनों ही उस युग की प्रमुख भाषायें थीं। राम चरित मानस, राम लला नहछू, बरवै रामायण, जानकीमंगल रामाज्ञाप्रश्न अवधी भाषा की एवं कवितावली, गीतावली, विनयपत्रिका ब्रजभाषा की रचनायें हैं। तुलसी ने तत्सम शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। भक्ति दर्शन वस्तु निरूपण के समय इन शब्दों का प्रयोग हुआ है। कहीं कहीं तो संस्कृत भाषा में पूरे का श्लोक लिखे गये हैं।

(1) वर्णानामर्थसंघानाम् रसानाम् छन्दसामपि।
मंगलानाम् च कर्त्तारौ वन्दे वाणी विनायकौ॥[1]

(2) कंदु कुन्देन्दु कर्पूर विग्रह रुचिर तरुण रवि कोटि तनु तेज भ्राजै।[2]

साथ ही तुलसी ने प्राकृत अपभ्रंश, देशज, विदेशज शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है। रेख खचाइ कहौं बल भाषी। भामिनि भयहु दूध की माखी। धोबी कैसो कूकुर घर को न घाट को' अनेक लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग हुआ है। उनके काव्य में तीनों गुणों के दर्शन होते हैं।

1- मानस, 1/1

2- विनयपत्रिका पद 30

माधुर्य :–

सीय सनेह सकुच बस पिय तन हेरइ।
सुर तरु रुख सुरबेलि पवन जनु फेरइ।[1]

प्रसाद :– कमल कंटकित सजनी कोमल पाइ। निसि मलीन यह प्रफुलित नित परसाइ।[2]

ओज :– जूझे कृतान्त समान कपि तनु स्त्रवत सोनित राजहीं।
मर्दहिं निसाचर कटक भट बलवन्त जिमि घन गाजहीं।
मारहिं चपेटहिं डाटि दाँत न डाटि लातन मींजहीं।
चिक्करहिं मर्कट भालु छल बल करत जेहिं खल छीजहीं॥[3]

तुलसी साहित्य में प्रायः सभी अलंकारों का प्रयोग हुआ है। उनका प्रयोग अलंकार प्रदर्शन हेतु नहीं हुआ, अपितु भावों की अभिव्यक्ति में सारस्य लाने के लिए हुआ है। डा० वचन देव कुमार ने रामचरित मानस में अलंकार योजना' नामक ग्रन्थ में प्रायः सभी अलंकारों के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। वास्तव में तुलसी की कवित कामिनी अलंकारों के बोझ से बोझिल नहीं हुई है। तुलसी ने दोहा, दोहा, चौपाई, सोरठा, तोमर, हरिगीतिका त्रिभंगी, अनुष्टुप, स्रग्धरा, मालिनी, वंशस्थ, भुजंगप्रयात, नगस्वरूपिणि, वसन्ततिलका, इन्द्रवज्रा, शार्दूलविक्रीडित, कवित्त, घनाक्षरी, बरवै, सोहर, छप्पय, सवैया, सभी छन्दों का प्रयोग किया है। भावानुकूल छन्दों के प्रयोग में तुलसी अग्रगण्य हैं।

सारांश यह है कि सुगठित कथा योजना, उदात्त चरित्र-चित्रण गंभीर रस व्यंजना, विस्तृत वस्तुवर्णन, भावानुकूल अलंकार छन्द तथा महदुद्देश्य की दृष्टि से उनका राम साहित्य अद्वितीय है। रचना नैपुण्य, कलात्मकता, भावुकता, सरसता, गम्भीरता जो तुलसी साहित्य में (विशेषतया से रामचरित मानस में) मिलती है वह अन्यत्र किसी एक कवि में सहज उपलब्ध नहीं। इसीलिये वे अब भी अग्रगण्य, वरेण्य वन्दनीय हैं। एवं उनका साहित्य के लिए सरस, ज्ञानपिपासु के लिये सरोवर एवं शोधार्थी के लिए अगाध सागर है।

द्वितीय अध्याय

लालदास एवं अवधविलास

द्वितीय अध्याय

[illegible]

साहित्य की अजस्र-धारा मानव समाज के साथ चिरकाल से प्रवाहित होती आ रही है। जीवन की प्रगतिशीलता एवं समाज के नूतन निर्माण के साथ-साथ उसकी विचारधारा में परिवर्तन आने के फलस्वरूप साहित्य की गति भी परिवर्तित होती रही है। 'प्रत्येक युग का साहित्य तत्कालीन समाज की विचारधारा और चेतना का प्रतीक है। साहित्य के अध्ययन से किसी जाति या वर्ग के मानसिक जीवन और उसके क्रमिक विकास का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है।[1] तात्पर्य यह है कि युग के साहित्य के अन्तर्गत तत्कालीन मानव समाज की प्रवृत्तियाँ प्रतिबिम्बित होती हैं और मानव समाज की प्रवृत्तियाँ उस काल की परिस्थितियों के अनुरूप होती हैं। समाज की परिस्थितियाँ युग के परिवर्तन के साथ बदलती जाती हैं। फलस्वरूप मानव प्रवृत्तियाँ भी परिवर्तित होती रहती हैं।

जो साहित्य समाज से निर्मित होता है उस समाज की तत्कालीन परिस्थितियों का सिंहावलोकन किये बिना हम वास्तविक रूप से उस युग के साहित्य का उचित मूल्यांकन नहीं कर सकते हैं। साहित्य का अध्ययन करने के लिए पहले हम तत्कालीन विभिन्न परिस्थितियों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करें। इन परिस्थितियों में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक इत्यादि प्रमुख हैं। 'वास्तव में साहित्य पर राज्य, समाज धर्म आदि का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में प्रभाव तो पड़ता ही है, परन्तु प्रधानतः साहित्य का विकास देश और समाज की बाह्य परिस्थितियों पर ही बहुत कुछ निर्भर रहता है।[2] राजनीतिक घटनाओं का प्रभाव प्रत्यक्षरूप से जनता पर पड़ता

1- साहित्यालोचन- डॉ० श्याम सुन्दरदास, पृ० 47
2- हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ०रामशंकर शुक्ल, रसाल, पृ० 12

है और उनके विचारों में परिवर्तन होता है, जो साहित्य में भी परिवर्तन ला देता है। प्रायः देखा गया है कि अशान्ति और पराधीनता के समय का साहित्य आदर्शात्मक, आध्यात्मिक और भक्तिभावनाओं से पूर्ण रहता है, तो शान्ति और विलासपूर्ण युग का साहित्य श्रृंगार और उद्दाम भावनाओं के यथार्थरूप को लेकर निर्मित होता है। सामाजिक परिस्थितियाँ भी साहित्य के विकास और परिवर्तन में पूर्ण योग देती हैं। समाज की अस्तव्यस्तता अथवा सुसंगठितता का प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर अवश्य पड़ेगा। समाज की सभी रीति रिवाजों, प्रवृत्तियों और भावनाओं का दिग्दर्शन हम उस युग के साहित्य में कर सकते हैं। धर्म की विभिन्न धाराओं और रूपों का साहित्य अपने अन्तर्गत समेट कर उस युग की धार्मिक स्थितियों से भी हमें अवगत करा देता है। धर्म की विकसित अथवा ह्रासोन्मुखी प्रवृत्तियाँ साहित्य में स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो जाती हैं, साथ ही साहित्य की तत्कालीन भावधारा पिछले युग से चली आती हुई काव्य-धारा के सामंजस्य से अपने नये स्वरूप को युग विशेष के साहित्य में आकर किस प्रकार प्रकट करती है, यह हम साहित्यिक परिस्थितियों से भली-भाँति जान सकते हैं। अतः स्पष्ट हुआ कि किसी साहित्य के भिन्न-भिन्न कालों की प्रवृत्ति में परम्पराओं का पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमें देश की तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों का भली प्रकार से अध्ययन करना होगा।[1]

लालदास का अवध विलास सं० 1700 की रचना है अतः इससे लगभग 50 वर्ष पूर्व से लेकर सं०1700 के बाद के वर्षों की परिस्थितियों का अवलोकन करना चाहिए। इस समय की परिस्थितियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इनमें एक ओर भक्ति काल अपना चरम विकास की अवस्था में रीतियुग की प्रवृत्तियों को प्रकट करने लगा था।

1- हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल और रीतिकाल: रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ, डा० विभूषण, स्न्, पृ० 32

भक्ति की प्रधानता के साथ ही साथ श्रृंगार, रीति, नायिका-भेद, नख-शिख, षडऋतु, वीर नीति अलंकार आदि प्रवृत्तियों का विवेचन भक्ति के क्रोड में हो रहा था।

<u>राजनीतिक परिस्थितियाँ :-</u>

तुगलक और लोदी वंश की समाप्ति के बाद मुगल-साम्राज्य स्थापित हुआ उसका सुदृढ़ आधार अकबर ही था। वह योग्य, दूरदर्शी और कुशल राजनीतिज्ञ था। अल्पायु में सिंहासनारूढ़ होकर उसने यह भली-भाँति समझ लिया था कि राजपूतों के बिना मुगल शासन को सुदृढ़ रूप नहीं किया जा सकता है अतः उनसे विवाह सम्बन्ध स्थापित कर उच्च पदों पर नियुक्त किया। शासन के प्रारम्भ में जो विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ा, जिसे उसने अपनी दूरदर्शिता से विजय प्राप्त की। उसने अपने बाहुबल से उत्तर भारत, उड़ीसा, पश्चिमोत्तर प्रान्त, अहमद नगर, खानदेश, गुजरात चित्तौड़, बंगाल, काबुल, काश्मीर सिन्ध बलूचिस्तान आदि को अपने साम्राज्य में मिला लिया। उसने राजनीतिक सुदृढ़ व्यवस्था स्थापित की। इस संबंध में डा० सरयू प्रसाद अग्रवाल लिखते हैं कि 'भारत में अकबर धार्मिक, सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक आद्योगिक और राष्ट्रीय क्षेत्रों में एकता की सफल योजनायें कार्यरूप में परिणत कर रहा था। पिछले मुसलमान शासकों द्वारा किये गये अनुचित कार्यों को मेटने का उसने बीड़ा उठाया था।'[1] तात्पर्य यह है कि राजनीतिक संगठन, शान्ति तथा सुव्यवस्था की दृष्टि से अकबर का शासन भावी मुगल शासकों के साम्राज्य के लिए गौरव विभास और ऐश्वर्य का प्रस्तावना काल था, जिसकी जड़ें अकबर ने अपने ही समय में दृढ़ कर दी थी।

अकबर का उत्तराधिकारी जहाँगीर बना। उसने अपने पिता की उदार-नीति का अनुसरण कर हिन्दू एवं राजपूतों को अपना मित्र बनाया। वह पिता के समान

1- अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, पृ० 9

सुयोग्य शासक नहीं बन पाया। वह विलासी, मद्यपी था, जिसके कारण शासन सूत्र नूरजहाँ के हाथ में चला गया। आसफ़ खाँ की नीतियों से प्रभावित खाँ एवं शाहजहाँ उसके विरुद्ध हो गये। जहाँगीर ने अपने पुत्र के विद्रोह को निष्ठुरता से दमन किया। उसने सन् 1620 में कांगड़ा विजित किया। उसकी मृत्यु के बाद शाहजहाँ सन् 1628 में शासक बना। इस प्रकार जहाँगीर के शासन काल में शासन काल में थोड़ी बहुत राजनीतिक उथल पुथल अवश्य हुई। उसे राजनीतिक विषमताओं का अधिक रूप में सामना नहीं करना पड़ा क्योंकि अकबर ने राज्य की गहरी जड़ें जमा दी थीं। मुस्लिम साम्राज्य के सबसे प्रबल विरोधी राजपूत मुगल साम्राज्य के सहयोगी और मित्र अकबर के युग में ही बन चुके थे। अतः जहाँगीर ने मस्ती और विलासपूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए 'खाओ पियो मौज उड़ाओ' वाला सिद्धान्त बनाया। उसका युग विलास प्रियता और शान-शौकत का युग था। वह सुरा-सुन्दरी सौन्दर्य में अनुरक्त रहता था।[1] फल यह हुआ कि मुगल दरबार में वैभव समृद्धि के साथ-साथ विलास-प्रियता और मद्यपान की प्रवृत्ति भी बढ़ी। सम्राट का विलासी जीवन राज दरबारियों और राजे-महाराजाओं के लिए अनुकरणीय था। कला और साहित्य का जहाँगीर के साम्राज्य में अच्छा प्रचार रहा। वह स्वयं कला प्रेमी, इतिहास लेखक और चित्रकार था। हिन्दी कविता भी वह बहुत पसन्द करता था।

शाहजहाँ ने मुगल साम्राज्य की सीमाओं को और भी बढ़ाकर उसके राष्ट्रीय रूप को स्थिर रखा। उसमें अपने पूर्वजों की अपेक्षा धार्मिक संकीर्णता अधिक थी। उसने खान लोदी के विद्रोह का दमन कर बुन्देल राजपूतों और जुझारसिंह को आत्म समर्पण के लिए विवश किया। समूचे दक्षिण में उसके राज्य का प्रसार हो गया। उसका शासनकाल स्वर्णयुग कहलाता है। उसका दरबार शानदार था। उसने दार्शनिकों विद्वानों

1- मुगलकालीन भारत (भाग एक) डा० आशीर्वादी लाल, पृ० 382

कारीगरों और चित्रकारों को सम्मानित किया।

तात्पर्य यह है कि अकबर , जहाँगीर एवं शाहजहाँ तीनों सम्राटों के शासनकाल में भारत राष्ट्रीय दृष्टि से सुसंगठित हुआ। साम्राज्य में शान्ति सुव्यवस्था के कारण वैभव और विलास की भावनाओं का विकास हुआ। इतना विशाल राज्य इससे पहले एक ही केन्द्र के अधीन नहीं रहा। अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ तीनों ही ने मुगल साम्राज्य का आदर्श स्थापित किया। शासन व्यवस्था, प्रान्तीय शासन, सैनिक संगठन, राज्य नियंत्रण आदि सभी दृष्टियों से उन्होंने योग्य शासक का उदाहरण उपस्थित किया। शान्ति, सुव्यवस्था एवं राजनीतिक संगठन के फलस्वरूप समाज, धर्म और साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा। सभी दृष्टि से यह काल वैभवशाली और सुखसमृद्धिपूर्ण कहा जायेगा। मुगल शासन की उदारता और कला प्रेम ने दरबार में कवियों, विद्वानों और कलाकारों को आकर्षित किया।'[1]

<u>सामाजिक परिस्थितियाँ</u> :—

ऊपर कहा जा चुका है कि आलोच्य काल में अकबर, जहाँगीर एवं शाहजहाँ का शासन रहा है जिसका काल ऐश्वर्य परक था। राजनीतिक शान्ति एवं सुव्यवस्था के कारण जागीरदार, सामन्त आदि भी विलासी हो चले थे जिसका पूर्ण प्रभाव समाज पर पड़ा। सारा समाज हिन्दू मुसलमानों के साथ ही साथ शासक एवं शासित वर्गों में विभक्त था। शासक वर्ग की अतिशय स्वेच्छाचारिता के कारण सामन्तवाद के युग में बचा सामाजिक वर्ग अनुदार, संकीर्ण, कूप मण्डूक रूढ़ि प्रिय एवं लकीर के फकीर बन रहे थे। धर्म के अनुरूप अनेक जातियों का उद्भव हो रहा था। अकबर ने हिन्दुओं पर लगे हुए अनुचित करों को हटा दिया था, जिसके कारण उनकी

1- हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल और रीतिकाल : अधिकालीन प्रवृत्तियाँ, डा० विष्णुशरण इन्दु, पृ० 39-40

आर्थिक दशा सुधर गयी थी। उन्हें अपने सामाजिक उत्सवों रीति रिवाजों आदि के मनाने की पूर्ण स्वतंत्रता दे दी गयी थी किन्तु हिन्दू सामाजिक जीवन की शिथिलता दूर न हो सकी। परस्पर कलह, भेदभाव, भोग विलास, मदिरा सेवन आदि कुगुण हिन्दू समाज के उच्च स्तर के लोगों में पूर्ववत ही रहे।[1] हिन्दू और मुसलमान समाज के दूवर्गों में परस्पर भेद की गहरी खाई थी। मुसलमान शिया-सुन्नी, ईरानी तूरानी एवं हिन्दू वर्ण-व्यवस्था के कारण विशृंखलित थे। शूद्रों का स्पर्श वर्जित था। शासक वर्ग में राजा नवाब, जागीरदार, अमीर, तथा अन्य वर्ग में नौकरी प्राप्त व्यक्ति श्रमिक, बढ़ई, लोहार, जुलाहा, कृषक थे। समस्त सामाजिक अधिकार राजा के पास थे। उनका दैनिक जीवन खान-पान करते पाशविक ऐन्द्रिय भोगों में धन पानी की तरह बहाया जाता था। हरम में रूप-बाजार का सजाना, अन्तःपुर में शताधिक अंगरक्षिकाओं की उपस्थिति, शराब का अनवरत प्रयोग, वेश्याओं पर आसक्ति इत्यादि विलासिता का परिचायक है। स्त्रियों का अपहरण, लूटखसोट, पर्दाप्रथा अन्तःपुर के षड्यंत्रों के कारण सामाजिक जीवन अस्तव्यस्त हो गया था। स्त्रियाँ चूल्हे के धर्म से मुक्त होकर रूपजीवाओं जैसा श्रृंगार कर प्रेमिका बन गयीं।

जहाँ एक तरफ विलासी वर्ग अपने भोग विलास के उपकरणों में धन पानी की तरह बहा रहे थे, वहीं दूसरी तरफ श्रमिक वर्ग खून पसीना कर अपनी आजीविका कमाता था। उनसे बेगार लिया जाता था। कृषक दुर्दशाग्रस्त थे। सम्राट सूबेदार, फौजदार, जमींदार सभी से वह त्रस्त रहता था।

हिन्दुओं के वर्णाश्रम की अव्यवस्था सती प्रथा बाल विवाह, बहुविवाह अशिक्षा, दहेज प्रथा के कारण उनका समाज ह्रासोन्मुख हो रहा था। उनका नैतिक पतन हो रहा था।

1- अकबर दरबार के हिन्दी कवि, डॉ० सरयू प्रसाद अग्रवाल पृ० 7

धार्मिक परिस्थितियाँ :—

मध्ययुग का धार्मिक जीवन तीन धाराओं से प्रभावित था।

(1) हिन्दू धर्म तथा उससे सम्बन्धित सभी सम्प्रदाय।

(2) बौद्ध एवं जैन धर्म की विकृति के परिणाम स्वरूप उत्पन्न सम्प्रदाय।

(3) सूफी सम्प्रदाय।

जब उत्तर भारत में मूर्तिपूजा वर्णाश्रम एवं यज्ञादि की जटिल एवं अर्थ साध्य व्यवस्थाओं के विरोध में आन्दोलन चल रहे थे, उस समय दक्षिण भारत में आलवार मधुर भक्ति में आकण्ठ डूब कर मधुरा भक्ति का प्रचार कर जन साधारण को प्रेम का सन्देश सुना रहे थे। समयानुसार यही भक्ति उत्तर भारत की ओर प्रवाहित हुई, जिसको वैष्णव आचार्यों ने व्यापक रूप दिया। रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य विष्णु स्वामी और निम्बार्क आचार्य ने धर्म को सरल बनाकर जन सामान्य के लिए उसका द्वार खोल दिया जिससे शूद्रों और ब्राह्मणों को भक्ति का समान अधिकार प्राप्त हुआ। रामानन्द के कारण हिन्दू मुसलमान, उच्च-निम्न, कुलीन अकुलीन ब्राह्मण शूद्र सभी धर्म के सरल रूप की ओर आकृष्ट हुए। वैष्णव धर्म में राम कृष्ण की उपासना प्रचलित हुई। आगे चलकर उपासना भेद के कारण अनेक उपसम्प्रदायों का आविर्भाव हुआ। रामानन्दी सम्प्रदाय, चैतन्य सम्प्रदाय, पुष्टिमार्ग, राधावल्लभी सम्प्रदाय, हरिदासी या सखी सम्प्रदाय प्रमुख हैं। कालक्रमानुसार इन गद्दियों के महन्त सेवा अर्चा, पूजा, भोग, प्रसाद इत्यादि को वैभवपूर्ण बनाने लगे। तपस्या, साधना, तत्वचिन्तन और पूत आचरण का अभाव इन वैष्णव धर्मों में होने लगा। डा नगेन्द्र ने लिखा है —'उनके विलास के के लिए भी इतने साधन एकत्र किये गये थे कि अवध के नवाब तक को उनसे ईर्ष्या

1- रीतिकाव्य की भूमिका, पृ0 16

हो सकती थी या कुतुबशाह भी अपने अन्तःकरण में उनका अनुसरण करना गर्व की बात समझते। यही दशा मध्व, निम्बार्क चैतन्य तथा राधावल्लभीय सम्प्रदायों की गद्दियों की थी। उनमें राधा की महत्ता के कारण शृंगार भावना और भी स्पष्ट रूप से व्यक्त हो रही थी। xxx मठ और मंदिर देवदासियों और मुरलियों के चरणों की छन-छन से गूँज रहे थे।[1] इसी प्रकार राम भक्ति की मर्यादावादी धारा ऐश्वर्यपरक होती जा रही थी। धर्म और दर्शन की उच्च भूमियाँ लुप्त हो रही थीं। उच्चकोटि का दार्शनिक या सिद्धान्तों का खण्डन-मण्डन की परम्परा क्षीण हो रही थी।

गौतम बुद्ध के निर्वाण के बाद बौद्ध धर्म हीनयान, महायान तथा कालान्तर में मंत्रयान, वज्रयान और सहजयान में परिवर्तित होकर अशिक्षित वर्ग को यंत्र, तंत्र चमत्कार से वशीभूत करने के कारण विरस हो चुका था। प्रज्ञोपाय की साधना परिवर्तित होकर कमल (स्त्रीन्द्रिय) कुलिश(पुरुषेन्द्रिय) की भोग जन्य गर्हित चेष्टाओं में बदल गयी थी। पंच मकार, युगनद्धता ही इनका जीवन दर्शन था। इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप नाथ और सन्त सम्प्रदाय के रूप में हुई जिनमें प्राण-साधना एवं सात्विक जीवन पर विशेष बल दिया गया था। कबीर पंथ, सिक्ख सम्प्रदाय, दादू-पंथ, सत-नामी सम्प्रदाय, धर्मदास सम्प्रदाय, जीवन दास सम्प्रदाय, यारी सम्प्रदाय, दरिया सम्प्रदाय, मलूक सम्प्रदाय, पलटू सम्प्रदाय शिवनारायण सम्प्रदाय प्रमुख हैं। क्रमशः इनमें भी रूढ़िप्रियता आने लगी थी। आचरण प्रधान जैन सम्प्रदाय श्वेताम्बर एवं दिगम्बर रूप में विभक्त होकर प्रतिमा-पूजन एवं बाह्याचारों पर बल देने लगा।

इस्लामी कट्टरता एवं रूढ़िवादिता के कारण सूफी मत प्रादुर्भूत हुआ जिसके चिश्ती, सुहरावर्दी, कादरी, नक्शबन्दी इनके प्रमुख सम्प्रदाय हैं जो आगे चलकर कादरी, कलन्दरी, साबिरी, निजामी, बहलिया, रज्जाकिया उपसम्प्रदाय बने।

1- रीतिकाव्य की भूमिका, पृ0 16

इसके अतिरिक्त शैव, गोरखपंथी, काली, दुर्गा, स्मार्त, इत्यादि असंख्य छोटे-छोटे उपसम्प्रदाय भी अपनी साधना का प्रचार कर रहे थे। सर्व साधारण में अशिक्षा और अज्ञान के कारण अंधविश्वास की जड़े गहरी हो गयी थीं। लोग धर्म के तत्व को न जानकर ऊपरी दिखावे एवं अंधानुकरण को सच्चा धर्म मानने लगे थे। तीर्थ, व्रत, जादू, टोना, सन्तों और पीरों पर इन्हें बहुत विश्वास था। पीरों और गुरुओं पर अथवा उनके तकियों या समाधियों पर स्त्री पुरुष मनौतियाँ मानते थे। अकबर का दीन इलाही, हिन्दू मुसलमानों में धार्मिक ऐक्य का अद्भुत प्रयास किया पंडो पुरोहितों, मुल्ला, मौलवियों की तूती बोलती थी। शास्त्रों का स्वाध्याय न करके जन सामान्य धर्म गुरु और, ब्राह्मणों या पुरोहितों के वचनों को आप्त वाक्य मानकर आचरण करते थे। धीरे धीरे धर्म शोषण का साधन बनने लगा। जन्म से मृत्यु तक के सभी संस्कार शुभकर्म, गृह-प्रवेश, संतति लाभ, तीर्थ यात्रा पुरोहितों को सन्तुष्ट कर ही सम्पन्न किये जा सकते थे। कथा कीर्तन रासलीला, रामलीला, कव्वाली इत्यादि से ईश्वर निष्ठा व्यक्त की जाती थी। तात्पर्य यह है कि पहले धर्म के व्यापक रूप का प्राधान्य था जिसमें सादगी, पवित्रता अहिंसा, अस्तेय ईश्वर पर दृढ़ निष्ठा, पारस्परिक प्रेम, संयम, इन्द्रिय दमन, सन्तोष इत्यादि सदाचारों पर बल दिया जाता था, बाद में राजनीतिक स्थिति के कारण यह धर्म गतानुगतिक हो रहा था। भोग, विलास शोषण, अत्याचार, अज्ञान, अशिक्षा और अनुदात्त जीवन दर्शन के कारण जन समुदाय को धर्म के वास्तविक अर्थ विस्मृत हो चला था। पंडा, पुजारियों मौलवी के हाथ में पड़कर रूढ़ हो गया था। बहुदेवोपासना- ब्राह्मण-महत्ता, कर्मकाण्ड के कारण धर्म परम्परित रूप में ही दिखायी देता था।[1]

1- तुलसी परवर्ती का हिन्दी रामकाव्य परम्परा का आलोचनात्मक अध्ययन, डा0 वेद प्रकाश चतुर्वेदी, पृ0 36 अप्रकाशित शोध प्रबन्ध)

साहित्यिक परिस्थिति :-

पहले कहा जा चुका है कि लालदास भक्ति एवं रीतियुग के सन्धिकाल में पड़े हैं, जिनके कारण लालदास को भक्ति साहित्य का विस्तृत क्षेत्र प्राप्त हुआ तो नवोदित रीतिकालिक साहित्यिक प्रवृत्तियों का भी परिचय मिला। युग की तत्कालीन राजनीतिक सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियों का प्रतिफलन भक्तिकाल में हुआ है। उच्च एवं शिक्षित वर्ग संस्कृत भाषा में साहित्य का निर्माण कर रहा था। व्याख्याएँ टीकाएँ, भक्ति के शास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रतिपादन एवं वाक्य-क्रियाओं में पाण्डित्य प्रदर्शन की मनोवृत्ति परिलक्षित हो रही थी। पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश के स्थान पर क्षेत्रीय भाषाओं का बाहुल्य हो चला था।

भक्तिकाल को निर्गुण एवं सगुण धाराओं में विभक्त किया गया है। निर्गुण धारा ज्ञानाश्रयी एवं प्रेमाश्रयी रूप में मिलती है। कबीर, रैदास, दादूदयाल, मलूकदास, सुन्दर ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि है जिनका उद्देश्य ज्ञान का प्रसार, ईश्वर की एकता तथा बाह्याडम्बरों का खण्डन है। इस शाखा में कबीर, धर्मदास, रैदास, गुरु नानक, दादूदयाल सुन्दरदास, मलूकदास तथा अक्षर अनन्य प्रमुख हैं।[1]

सन्त तथा सूफी मतों का प्रादुर्भाव हिन्दू-मुस्लिम एकता की प्रतिष्ठा के लिए हुआ है। हिन्दू-मुस्लिम विभेदक खाई को समाप्त करने के लिए सन्तों ने धार्मिक एकता का आश्रय लिया तो प्रेममार्गी सूफी कवियों ने सांस्कृतिक एकता को आधार बनाया। हिन्दुओं में प्रचलित लोक कथाओं को लेकर प्रेम गाथाओं की रचना की गयी है, जिनका मुख्य उद्देश्य लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति करना है। मुल्ला दाऊद कृत चन्दायन, शेख कुतबन कृत मृगावती, जायसी कृत पद्मावत मंझन कृत मधुमालती तथा उसमान कृत चित्रावली इस धारा की प्रमुख रचनाएँ हैं।

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 75-93

ईश्वर का सगुण रूप, अवतार भावना, लीला रहस्य, रूपोपासना, अद्वैतवाद का विरोध, भक्ति के क्षेत्र में उच्चावस्था का विरोध, गुरु की महत्ता इत्यादि बातों को लेकर सगुण काव्यधारा का विकास हुआ है, जिसमें कृष्णकाव्य एवं रामकाव्य धारा आते हैं।

संस्कृत, प्राकृत भाषाओं में कृष्ण काव्य की सुदीर्घ एवं परम्परा रही है। आचार्य शंकर के मायावाद के विरोध में निम्बार्क वल्लभ, चैतन्य, हितहरिवंश प्रमुख आचार्य हैं, जिन्होंने कृष्णभक्ति के अपने अपने सम्प्रदाय स्थापित किये जिनमें ऐकान्तिक प्रेम साधना पर बल दिया गया था। अष्टछाप के सूरदास, नन्ददास, कृष्णदास, परमानन्ददास, चतुर्भुजदास, कुम्भनदास, छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी तथा गदाधर भट्ट, हरिदास, हितहरिवंश, मीराबाई, रसखान इत्यादि प्रमुख कवि हैं इन्होंने अपने काव्य में शुद्ध परिमार्जित लालित्यपूर्ण ब्रजभाषा का प्रयोग कर उसके अक्षय भण्डार में अभिवृद्धि की है।

सगुण धारा की राम भक्ति शाखा का प्रवर्तन रामानुजाचार्य एवं रामानन्द ने किया है जिसका पूर्ण परिपाक तुलसीदास की कृतियों में प्राप्त होता है। तुलसी युग तक राम भक्ति में वैधी भक्ति की प्रधानता रही किन्तु परवर्ती साहित्य में उस आदर्श का परिपालन क्रमशः माधुर्य भक्ति में पर्यवसित होने लगा था। "तुलसी के बाद राम भक्तिकवियों के सम्मुख विशाल और सम्पन्न राम साहित्य था। अपने मूलरूप में ही यह कथा ऐसी आदर्श कथा थी कि उसमें कुछ अधिक परिष्कार सम्भव नहीं था। रामावतार एवं भक्ति भावना के पश्चात् अब उसमें सहसा परिवर्तन अभिनन्दनीय नहीं माना जा सकता था फिर भी कवियों अपनी मौलिक संग्राहक प्रतिभा से उसके साहित्यिक रूप को सवाँरने का प्रयास किया है।

रामचरित मानस एक ऐसा नव निर्मल विधु निकला हुआ जिसकी कान्ति कभी आजतक घटी नहीं। बात यह है कि इसमें काव्य सौन्दर्य, भक्ति तथा लोकसंग्रह

का अपूर्व समन्वय किया गया है। तुलसीदास ने इस कथानक को इस कौशल से प्रस्तुत किया है कि इसमें कथा प्रवाह, मार्मिक स्थलों की पहिचान, मर्यादित शृंगार, पात्रानुकूल भाषा तथा अभूतपूर्व चरित्र-चित्रण के समन्वय से जन-जीवन को अनुप्राणित करने में पूर्ण समर्थ है। तुलसी के पश्चात् अधिकांश राम काव्य अन्धकार के गर्त में पड़े हुए हैं। उनकी साहित्यिक समीक्षा नहीं हो सकी है। जनता के सम्मुख प्रकाश में आने की क्षमता कम ही कवियों में दीख पड़ी है। कहना नहीं होगा कि तुलसी के मानसेतर का अन्य रामकाव्य भी उतनी महत्ता नहीं पा सके तो फिर अन्य कवियों की क्या बिसात है? जब कि कृष्णकाव्य के साधारण कवि भी राम कवियों की अपेक्षा अधिक महत्व पा सके हैं। यह प्रसिद्ध ही है कि राम चरित्र में जितनी उदात्तता, आदर्शमयता, गुरुता, नैतिकता एवं लोक मंगल की भावना का समन्वय मिलता है, भारतीय साहित्य में अन्य किसी नायक में इतनी क्षमता नहीं है। यही मर्यादा और गम्भीरता उसके विकास में अवरोधक बना है। इसीलिए यह कहा जाता है कि तुलसी के बाद रामकाव्य का विकास नहीं हो पाया।

बात यह है कि काव्यमें जिस रागात्मकता की आवश्यकता होती है, तुलसी परवर्ती कवियों में उसका अभाव है। मर्यादावादी कवियों ने राम को आदर्शवादी गढ़ में बन्दी बना लिया था या फिर मधुर उपासकों ने उनको उन्मुक्त कर स्वच्छन्द विहार करने के लिए छोड़ दिया। परिणाम स्वरूप अतिशय शृंगारिकता, अश्लीलता का आवरण राम चरित्र में चढ़ गया। युगीन शृंगारिक प्रवृत्तियों के कारण जनता का मधुर रस के प्रति आग्रह, उन्मुक्त विलासिता मुक्तक प्रणाली का अतिशय आग्रह ब्रज भाषा का प्रान्तीय स्तर से ऊपर देश व्यापी प्रसार के कारण अवधी भाषा का संकीर्ण होना राम काव्य के विकास में बाधक बना है फिर भी कवियों ने प्रभूत मात्रा में रामकाव्य लिखकर यह बड़ा साहस किया है कि उनके अन्दर परिस्थितियों के विपरीत भविष्य के लिए ज्योतिर्मयी का सृजन कर अपने को बलिदान करने की भावना

का निःशेष नहीं हो पाया। भले ही उन्हें कँगूरे में बैठने का श्रेय न मिले, महल के नींव में ही रहेंगे।[1]

रीतिकाल का राम-साहित्य एवं साहित्यकार

पहले लिखा जा चुका है कि राम कथा में गोस्वामी तुलसी दास का सर्वोत्तम स्थान है। उनके बाद का साहित्य विकास की दृष्टि से अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण माना है जिसका विवरण इस प्रकार है --

काव्य	लेखक	काल
रामप्रकाश	मुनिलाल	सं0 1642
रामचन्द्रिका	केशवदास	सं0 1658
रामायण महानाटक	प्राणचन्द चौहान	सं0 1667
राम रासो	माधवदास	सं0 1675
रघुनाथ चरित	परशुराम	सं0 1677
हनुमन्नाटक	मनदास	सं0 1680
हनुमन्नाटक	हृदयराम	सं0 1680
बाल चरित्र	हृदयराम	सं0 1680
रामाश्वमेध	मकतराम	सं0 1684
अवधविलास	लालदास	सं0 1700
रामायण	चिन्तामणि	सं0 1700
भाषा रामायण	कर्पूरचन्द्र	सं0 1700

1- तुलसी परवर्ती हिन्दी रामकाव्य-परम्परा का आलोचनात्मक अध्ययन- डा0 देवप्रभा त्रिवेदी, टंकित शोधप्रबन्ध, पृ0 38-39

लालदास का परिचय :-

जब - जब मानवीय मूल्यों का, जीवन के आदर्शों का पतन होने लगता है उस समय अन्धकार से प्रकाश की ओर असत्य से सत्य की ओर अधर्म से धर्म की ओर अनैतिकता से नैतिकता की ओर, दानवता से मानवता की ओर विनाश से सृजन की ओर और अन्त में असीम से ससीम की ओर ले जाने का श्रेय यदि किसी को दिया जा सकता है तो हिन्दी साहित्य में उन भक्त कवियों को है जिन्होंने एक विश्वास और निष्ठा के साथ अपनी वाणी से अपने तप और साधना से संसार रूपी सागर के बन्धनों से मुक्त होने की प्रेरणा दी। दूसरी ओर राग द्वेष, काम-क्रोध, लोभ-मोह जैसी मायावी ज्वालाओं से मुक्त होने की प्रेरणा दी और सुख शान्ति से जीवन यापन का मार्ग बताते हुए सद्धर्म की अनुभूति करायी तथा मानवीय कर्तव्यों का ज्ञान करवाया।[1]

लालदास ऐसा ही अज्ञात कवि है जो भक्ति-रीतियुग के सन्धिकाल में पड़ा है। जबकि [illegible] निकृष्ट भाव से तद्युगीन परिस्थितियों से प्रभावित होकर जन मानस को लेकर अपनी आँखों से काम-केलि-कुंजों को टोह रहा था, उसी समय लालदास सीमित शृंगार की अभिव्यक्ति कर मानव को सदाचार, त्याग, नैतिकता का ज्ञान करा रहा था। इस प्रकार के सन्त अपना वैयक्तिक परिचय नहीं दिया करते हैं। फलतः आलोच्य कवि के संबंध में सीमित जानकारी ही प्राप्त होती है। यत्र-तत्र कवि वृत्त संग्रह एवं ऐतिहासिक आलोचनात्मक ग्रन्थों में कुछ परिचय प्राप्त होता है। अतः बहिर्साक्ष्य तथा अन्तःसाक्ष्य के आधार पर लालदास का परिचय दिया जा रहा है।

(1) शिव सिंह सरोज[2] में लाल नामधारी अनेक कवियों की चर्चा है जिनका विवरण इस प्रकार है —

1- भक्तिसाहित्य — सम्पादक प्रताप चन्द जायसवाल: भूमिका, पृ0

2- शिवसिंह सरोज, सम्पा0 डा0 किशोरी लाल गुप्त

(क)800/671। लाल कवि प्राचीन 1, सं0 1738 मेंउ0। जो छत्रसाल के आश्रित थे। इनका विष्णु विलास नायिका भेद ग्रन्थ है।

(ख)801/672/लाल कवि 2। कवीजन बनारसी, सं0 1847 में उ0। यह कवि काशी नरेश चेतसिंह के यहाँ थे। आनन्द रस इनका प्रमुख ग्रन्थ है।

(ग)802/673/लाल कवि 3, बिहारीलाल त्रिपाठी टिकमापुर वाले सं0 1885 में उ0। यह मतिराम वंशी और बड़े भारी कवि थे।

(घ)803/674/ लालकवि 4 इन्होंने चाणक्य राजनीति का उल्था(अनुवाद)दोहों में बहुत खूब किया है।

(ङ)804/690 लाल कवि 5, लल्लू लाल गुजराती वाले सं0 1892 में उ0। प्रेमसागर, सभाविलास, माध विलास इनके सुंदर ग्रन्थ हैं।

(च)805/675 लाल गिरधर बैसवारे वाले सं0 1807 में उ0, नायिका भेद से संबंधित ग्रन्थ है।

(छ)806/676 लाल मुकुन्द सं0 1774 में उ0, शृंगार के कवित्त हैं।

(ज)807/677 लालचन्द कवि। इनके कवित्त और कुण्डलियाँ बहुत कूट हैं।

(झ)808/686 लालनदास ब्राह्मण, डलमऊ वाले सं0 1652 में उ0, इनके कवित्त शान्त रस के हैं।

( )830/लालबिहारी।

इस प्रकार सरोज में उल्लिखित उपर्युक्त कवियों में 803/674 लाल कवि 4, हमारे आलोच्य कवि हैं। सरोज कार को यह भ्रम हो गया था कि इन्होंने राजनीति का कोई ग्रन्थ लिखा है। वस्तुतः रचना खण्ड में उल्लिखित कुछ दोहे अवधविलास के हैं, कुछ किसी दूसरे कवि के हैं, एक दोहा बिहारी सतसई का भी संकलित हो गया है। सरोज सर्वेक्षण कार ने इनके दोहों को देखकर लल्लू लाल नाम धारी बताए।

'यह लाल कवि प्रसिद्ध लल्लू जी लाल कवि ही प्रतीत होते हैं। लल्लू जी ने हितोपदेश का जो गद्यानुवाद राजनीति नाम से किया है, सरोजकार ने उसे भ्रम से चाणक्य राजनीति का उल्था समझ लिया है।[1]

शिव सिंह सरोज में निम्न दोहे लाल कवि(4) के उल्लिखित हैं —

(1) मंत्र मैथुन औ औषधी दान मान अपमान।
गृह संपति अरु छिद्र लख प्रगट न लाल बखान।(1/1502)

(2) नृत्य गान अरु पढ़त मैतभा कुद्ध ससुरारि।
लाल अहार व्योहार में लज्जा आठ निवारि।(2/1503)

(3) सौ स बरस विवाद करि छादस गृह विश्राम।
बरस चतुर्दश वास बन राज करत पुनि राम।(3/1504)

(4) बावन जुग की बात है लाल अनंत विस्तार।
तेरह त्रेत हुवे गए भए राम अवतार।(4/1505)

(5) जाके बुधि बल ताहि के निर्बुध के बल कौन।
ससक हन्यो निज बुद्धि सौं सिंह महाबल जौन।(1506)

(6) जो उपाय ते होत है, बल ते क्यों कहि जात।
कनक सूत ते सांप को कागई कियो निपात।(1507)

(7) करै बुराई जासु उर ताही को सनमान।
भलो भलो कहि त्यागिए खोटे ग्रह जप दान।[2] (1508)

इन दोहों में 1 से 4 तक अवधविलास के हैं। अन्तिम बिहारी सतसई का है।

1- सरोज सर्वेक्षण, डा० किशोरी लाल गुप्त, पृ० 997

2- शिवसिंह सरोज, पृ० 524

डा० किशोरी लाल गुप्त[1] को भी आलोच्य कवि के सम्बन्ध में कोई सूचना सुलभ नहीं हुई।

डा० माता प्रसाद गुप्त ने लाल कवि के सम्बन्ध में निम्न सूचना दी है— 'लालदास ने सं० 1700(सन् 1643) में अवधविलास नामक रामकथा ग्रन्थ दोहा चौपाई में लिखा है। आकार में यह रचना बड़ी है। यद्यपि साहित्यिक दृष्टिकोण से साधारण है। इन्हीं की एक दूसरी रचना भरत की बारहमासी भी है जिसकी तिथि अज्ञात है। अनुमान से उसका समय भी सं० 1700 वि०(सन् 1643) के लगभग माना जा सकता है।[2] डा० रामकुमार वर्मा लालदास को बरेली निवासी कहा है — 'ये बरेली के निवासी थे। इन्होंने अवधविलास नामक ग्रन्थ अयोध्या में लिखा जिसमें श्री सीताराम की विविध लीलाओं का वर्णन तथा ज्ञानोपदेश है। इनका आविर्भाव काल सं० 1700 वि० है। रचना साधारण है।[3]

श्री तासी इन्हें अयोध्यावासी बताते हैं —' यह कवि जिन्हें लालदास या लालचन्द भी कहते हैं, रचयिता हैं। अवधविलास के 18 सर्गों में हिन्दीकाव्य के जिसका उल्लेख मैं क्रम निर्णयों के लेख में करूँगा। 1700 सं०(सन् 1643) में लिखित यह रचना अधिक प्राचीन तिथियों की हिन्दुई रचनाओं की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित रूप में सम्पादित है जिस बोली में यह लिखी हुई है, वह महाभारत दर्पण के निकट है। वास्तव में यह केवल अवध में जहाँ लाल रहते थे और जिसके सम्बन्ध में उन्होंने अत्यन्त गर्व प्रगट किया है, राम की कथा। निस्सन्देह इस काव्य के प्रभाव के साथ मिले भावों के कारण हिन्दू लोग इस रचना को उपयोगी ज्ञान का सार समझते हैं।

1- सरोज सर्वेक्षण, पृ० 672   2- हिन्दी साहित्य, भाग2, सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृ० 329

3- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० 475

इसके अतिरिक्त जिस बोली में इसकी रचना हुई है उसमें विभिन्न विषयों का निरूपण रहने के कारण अवध विलास अत्यन्त महत्वपूर्ण हिन्दुई रचनाओं में से एक है।'xxx लालदास हिन्दी में भारत की बारहमासी – भारत के बारह महीने के रचयिता हैं, जो राम की कथा के नाम से भी कही गयी है।[1] मैं समझता हूँ कि लालदास का ग्रन्थ भरत की बारहमासी है, जिसे रोमन लिपि में भारत की बारहमासी का भ्रम लेखक को हुआ है। इसी प्रकार मिर्वांधी लेख में कहा गया है कि यह अन्तिम रचना श्री लाल कवि की लगभग दो शताब्दी पूर्व पूर्वी भाषा या पूर्वी हिन्दी के नाम की बोली में लिखी गयी अवधविलास या अवध के आनन्द शीर्षक रचना के अनुकरण पर लिखी गयी है। इसमें राम की कथा और भारतवासियों में प्रचलित विद्याओं का छोटा सा विश्वकोष है उसे एक अत्यन्त सुंदर हिन्दी रचना समझा जाता है।[2]

मिश्रबन्धु विनोद [2] में लाल नाम वाले अनेक कवियों का उल्लेख है, जिनका विवरण इस प्रकार है –

(क)251 – लालचंद – विवरण सं0 1643 में पातिव्रत्य-भाषा नामक ग्रन्थ।

(ख)252 – लालदास वल्द ऊधोदास बनिया, आगरा- ग्रन्थ(1) महाभारत इतिहास सार (1643)(2) बलि वामन की कथा रचनाकाल – 1643

(ग)205 लालदास स्वामी ग्रन्थ (1) बानी (2) मंगल (3) चेतावनी(4) स्फुटपद। रचनाकाल 1610, वैष्णव मथुरा निवासी गोस्वामी गोपीनाथ के शिष्य।

(घ)149- लालदास हलवाई(रायबरेली) ग्रन्थ (1) भागवत दशम स्कन्ध की भाषा(1587) हरिचरित्र (1585) कविताकाल 1588)

(ङ)686 लालकवि (मऊवाले) जन्मकाल 1715 ग्रन्थ –[redacted](1) छत्र प्रकाश (2) छत्रछाया, (3) छत्रकीर्ति (4) छत्रछन्द (5) छत्रसाल शतक (6) छत्रहजारा (7) छत्रदंड (8) छत्रप्रशस्ति (9) राजविनोद (10) विष्णुविलास।

1- हिन्दुई साहित्य का इतिहास, अनुवादक डा0लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ0269-70.

(च)615, लालदास (आगरा वाले) ग्रन्थ —1,- इतिहास सार समुच्चै। (2) अवधविलास (1734) (3) बारहमास (4) भरत की बारामासी रचनाकाल 1634

विवरण — अवध विलास हमने देखा है। साधारण कवित्त उसमें हैं। इसी नाम के एक वैश्य कवि आगरे में 1643 में हो गए हैं। दोनों के ग्रन्थों में समय लिखे हैं।

(छ)621/1 लालचंद — ग्रन्थ लीलावती भाषा बंध।

(ज)1127 लालकवि (बनारसी) ग्रन्थ 1- आनंद रस 2- रसमुक्तकवितकाल 1832

(झ)(1076/1) लालचंद पाण्डेय, ग्रन्थ — वाराँगना चरित्र, रचनाकाल 1827

( )(1042/1) लालचंद (सांगानेरी) ग्रन्थ —1-षट्कर्मोपदेश रत्नमाला (2) विराग चरित्र (3) विमलनाथ पुराण (4) शिखर विलास (5) आगम शतक (6) सम्यक्त्व कौमुदी रचना काल 1818

(ट)(1155/1) लालचंद जैन, ग्रन्थ श्रीपाल चौपाई, रचनाकाल 1837

(ठ)(2048) लाल, ग्रन्थ लालख्याल।

(ड)(2050) लालचंद, ग्रन्थ नाभिकुंवर जी की आरती।

(ढ)(2212) लालदास, ग्रन्थ 1- उषा कथा (2) वामन चरित्र, कविताकाल 1896

विवरण मनोहर दास के पुत्र।

इस प्रकार अवधविलास के रचयिता लालदास (च615) क्रमांक वाले हैं। मिश्रबन्धु विनोद कवि वृत्त संग्रह है, जिसमें 4500 से अधिक कवियों का विवरण है। इस विपुल सामग्री में त्रुटियों की प्रबल सम्भावना है। इस कारणवश ही कवि नाम परिवर्तन के कारण अनेक बार आ गये हैं।

लालदास का संक्षिप्त विवरण खोज रिपोर्ट[1] में इस प्रकार दिया गया है —

1- खोज रिपोर्ट, सन् 1909 — 11 पृ0 256

Laldas is said to have composed the Avadh - Vilash in 1732 Samvat, but this appears to be worng this book was noticed as No. 32 in 1901 and No, 1906 54 of 1908 and it should not have been noticed again but for this confuseon. The year is gives as 1700 S. in 1901 and 1732 S in 1908 but it appears to me that 1700 S = 1643 A. D. is correct. years of the composition of the book. The mistake appears to be due to mis reading the word 'बरिस' 'बतिस' He was a resident of Bareilly but he wrote the book in Ayodhya.

हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों के विवरण में अवधविलास के रचयिता के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि 'बरेली निवासी लालदास ने अवध विलास और भरत की बारह मासी नामक ग्रन्थ क्रमशः सन् 1643 और सन् 1633 में लिखे हैं। इनके कथनानुसार उस वर्ष अधिक मास और ग्रहण भादों एवं अगहन में पड़े थे। उस वर्ष वैशाख अधिक अवश्य था और भादों में सूर्य ग्रहण भी था किन्तु अगहन में नहीं।'[1] इसी प्रकार का विवरण खोज विवरणिका सन् 1923-25 संख्या 239 में भी उपलब्ध है।

डा० भगीरथ मिश्र ने लाल दास के विषय में निम्न बातों का उल्लेख किया है कि सर्वत्र कवि की छाप लाल है, अवधविलास लाल कवि का बनाया समझना चाहिए। इसका रचना काल सं० 1700 जिसे अयोध्या में रहकर नौ [illegible] महीने में

1- हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण सन् 1926-28 (डा० कृष्ण द्वारा अनूदित) पृ० 58

पूर्ण किया गया है। अवधी भाषा में दोहा चौपाई शैली में लिखा गया है। इसमें राम जन्म से वन गमन की कथा है। इसके अन्तर्गत कथा के बीच मंत्रों, भक्ति-पद्धतियों, अष्टयामों, योग-क्रियाओं का वर्णन है। इसमें 18 विश्राम है। इसे महाकाव्य नहीं कहा जा सकता है।

(1) कविनाम :-

कवि ने अपना वास्तविक नाम कहीं नहीं लिखा है। 'लाल' उपनाम या छाप है। यह छाप सर्वत्र अवधविलास में मिलती है। भरत की बारहमासी में कवि ने लालदास नाम का उल्लेख किया है। मैं समझता हूँ कि यह नाम रसिक सम्प्रदाय में दीक्षित होने के बाद ही कवि को प्राप्त हुआ होगा। भक्ति के क्षेत्र में पूर्व नाम का स्मरण से अहंकार की वृद्धि होती है, साथ ही साधक का सम्बन्ध ग्राम, कुल तथा भौतिक साधनों से बना रहता है, अतः सम्प्रदाय में दीक्षित भक्त का नाम संस्कार किया जाता है। 'नाम संस्कार का अभिप्राय, साधक का भगवत्सम्बन्धी नाम रखने से है। इसके द्वारा पूर्व प्राकृत देह-विषयक नाम के स्थान पर शरणागति सूचक नया नाम रखा जाता है। शरणागति के बाद साधक के नाम, ग्राम, कुल आदि सब कुछ भगवान ही रह जाते हैं। अतएव पूर्वनाम के स्मरण से उसकी स्वरूप हानि तथा अहंकार वृद्धि की आशंका रहती है। इस अनर्थ से बचने के लिए उसे प्रपत्तिसूचक नाम दिया जाता है। अन्य सम्प्रदायों में यह बहुधा दृष्टान्त होता है।[1] यहाँ यह लिखना अपर्याप्त नहीं होगा कि राम भक्ति की रसिकोपासना में 'लाल' राम को ही कहा जाता है, अतः उस कवि का साम्प्रदायिक नाम लाल, या लालदास है।

1- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, डा० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० 182

जन्म स्थान :—

अवधविलास में कवि के जन्म स्थान का उल्लेख नहीं है। भरत की बारहमासी के अनुसार वह बरेली का निवासी है। "जो

कवि बरेली के लालदास ने राम नाम उच्चरयो।"[1]

(3) जन्म समय :—

लालदास ने अपना जन्म-समय नहीं लिखा है, इसीलिए उनका जन्म-समय अनुमान पर आधारित है। कवि ने लिखा है कि सं० 1690 में भरत की बारहमासी की रचना हुई है। चित्त विकृति के कारण वह 7 वर्ष अयोध्या में रहा। निश्चित रूप से यह समय सं० 1690 के पूर्व है। शनि की महादशा 19 वर्ष की होती है, जिसमें कवि का चित्त विक्षिप्त हुआ था और तीर्थाटन करके वह इस दशा से मुक्त है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह महादशा सं० 1690 के पूर्व ही समाप्त हुई थी। घर निकलने के पूर्व कवि निश्चित ही युवावस्था के आस-पास था। अवधविलास में विभिन्न शास्त्रों के वर्णन से यह सिद्ध होता है कि उस समय तक कवि प्रौढ़ हो चुका था। यदि यह अवस्था 40 वर्ष की मान ली जाय तो लालदास का आविर्भाव काल सं० 1650 के आस-पास सिद्ध होता है।

अवधनिवास :—

कवि की मान्यता है कि तीर्थों के सेवन से भक्तों को ज्ञान प्राप्त होता है। दास्य-भाव के भक्तों को आराध्य देव का धाम तथा अन्य तीर्थों का सेवन करना चाहिए। इससे पापों का निवारण होता है। पापों से रहित होने पर भी कवि 7 वर्ष

1- खोज रिपोर्ट, (1926-28) पृ० 403

तक अयोध्यावासी बना, क्योंकि मेष राशिस्थ शनि के प्रकोप से उसका चित्त-विक्षिप्त हो गया था।

इक तब मैं अपने मन आना। तीरथ सेवत होत है ग्याना।
सात बरस रह्यो अवधहिं माहीं। जानि पाप किये कछु नाहीं।
तब मम हृदय भई इक बानी। राम धाम की कथा बखानी।
मेष राशि भयो शनि दुखदायी। तीरथ सरन रह्यो मैं जाई।
ग्रह के गुन भयो चित्त विक्षेपा। ताते ग्रन्थ इक कीन्ह संक्षेपा।[1]

साम्प्रदायिक दीक्षा :—

कृष्णभक्ति के प्रसार से बढ़ती हुई शृंगारी प्रवृत्ति मुसलमानी शासन की छत्रछाया में सङ्कुचित हो चला थी। सूफी संतों के लिखे हुए प्रेम कथानकों तथा कबीर पंथियों की साखियों और शब्दों में उनके आध्यात्मिक रूप की अभिव्यक्ति निरन्तर हो रही थी। अतः इस क्षेत्र में भी एक प्रकार से शृंगारी साधना पुनर्धर्म का रूप धारण कर चुकी थी।xxx अतएव अग्रदास ने राम रसिकों का एक साम्प्रदायिक संगठन कर उन्हें कृष्ण भक्तों के गोलोक से भी अधिक वैभवपूर्ण साकेत अथवा दिव्य अयोध्या के लीला विहारी सीताराम का ध्यान करने का उपदेश किया।[2] लालदास भी इसी सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे, इस हेतु निम्न तर्क प्रस्तुत हैं —

(1) ग्रन्थ के नामकरण में यह प्रवृत्ति दिखायी देती है।

(2) कवि स्वयं कहता है कि कृष्ण की माधुर्य परक लीलाओं के समान ही अयोध्या में सीताराम के विलास की लीलाएँ चलती है —

कृष्ण यथा व्रज माहिं सदा करत विहार प्रकास।
तैसें सीताराम को नित ही अवध विलास॥[3]

1- अवधविलास, पृ० 172,   2- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ० 99

(3)साम्प्रदायिक साधना की मान्यता के अनुसार सीताराम चित्रकूट के आगे गये नहीं, वहीं उनकी दिव्य लीलाएँ होती थीं। लालदास ने यही मान्यता अनेक स्थानों में व्यक्त की है।

(4)कवि ने अनेक साम्प्रदायिक संहिता का अवलोकन अध्ययन किया है, जो इतर व्यक्तियों को नहीं दिखाया जाता था। रूद्रयामल संहिता, अगस्त्य संहिता, वृहद्वशिष्ठ रामायण हनुमत्संहिता इत्यादि ग्रन्थ हैं, जिन्हें अधिकारी व्यक्ति देख सकता था।

(5)चतुर्दश विश्राम में सरयूतट स्थित दिव्य रत्नमण्डप एवं राम के माधुर्यपरक सौन्दर्य का ध्यान भी रसिक सम्प्रदाय में दीक्षित होने का संकेत करता है। इसी प्रकार 15 वें विश्राम में राम की किशोर मूर्ति का निर्माण, उनमें प्रेममयी आसक्ति, उनके चरण चिन्हों के ध्यान का उल्लेख कवि ने किया है।

(6)दीक्षा पद्धति के अनुरूप मुद्राङ्कन तीर्थसेवन, रसिक भक्तों ~~[illegible]~~ से सत्संगति अङ्गित नामकरण, मिश्रपुञ्ज, तिलक, इत्यादि का उल्लेख अवधविलास में हुआ है।

(7)लालदास 7 वर्ष तक अयोध्या में रहा, अतः यह स्वाभाविक ही है कि उसका सम्पर्क रसिक भक्तों से यहीं हुआ होगा, तथा दीक्षा संस्कार भी अयोध्या में ही सम्पन्न हुआ होगा।

(8)अष्टयाम या बारहमासी लिखने की पद्धति भी सम्प्रदाय में दीक्षित होने का प्रमाण माना जा सकता है।

(9)सीता राम जन्मोत्सव मनाने की परम्परा भी रसिकोपासकों द्वारा प्रवर्तित की गयी है।

<u>रचनाएँ एवं रचनाकाल :—</u>

लालदास की दो रचनाएँ उपलब्ध हैं। भरत की बारहमासी एवं अवध विलास क्रमशः सं0 1690 एवं 1700 की रचना है। भरत की बारहमासी में उनकी

दिनचर्या बारहमासी पद्धति पर लिखी गयी है, जिसका विवरण इस प्रकार है -

संख्या 262 वीं — भरत की बारहमासी, रचयिता— लालदास, कागज—देशी पत्र 2 आकार 6x4 इंच, पंक्ति प्रति पृष्ठ 24 परिमाण (अनुष्टुप 42) पूर्णरूप, प्राचीन पद्य लिपि नागरी रचनाकाल 1690 प्राप्ति स्थान — श्री राम अधार मिश्र ग्राम ग्रन्नागर डाकघर लखीमपुर जिला — खीरी।

आदि — श्री गणेशाय नमः। अथ भरत जी की बारहमासी लिख्यते।

चैत्र पिछले पाख राम नवमी को जनम लिये,
अवधपुरी सुख धाम सखिन मिलि मंगल चारि किये।
धमारि जब दसरथ ने पाई।
किये दान जन काज बाज बिन ढोरे की ब्याई।
सभा सब प्रफुल्लित ह्वै आई,
कर्म लेख ना मिटे करो कोइ लाखन चतुराई।
जागत ही कैलाश केकयी धवरि करि डारी।
सुख जीवन धिक्कार भई जब कुबरी महतारी
दुख दीने नगर को दीनो,
तीन लोक के रामराज को बनवासी कीनो।
कूर मति कैसी मन आई।
कर्म लेख नाहिं मिटे करो कोउ लाखन चतुराई।

अंत — बारह महीना मानि राम ने सुख पायो मन में।
जनक जनक पुर को पहुँचायो, भरत अयोध्या में।
खड़ाऊँ गद्दी धारि दीनी,
रामचन्द्र से कठिन तपस्या भरतहुँ कीनी
बड़ाई याही में पाई,

छन्द कर्म लेख ना मिटै करौ कोउ लाखन चतुराई।

फागुन फेर हरी सीता जब रावण कस कीनो,

रावण मारो राम राज्य जु विभीषण को दीनो,

जाति अवधपुरी आये सिव सनकादिक ब्रह्मादिक दरसन को आये।

राम कूँ गद्दी ठहराई।

कर्म लेखना मिटै करो कोई लाखन चतुराई।

नब्बे साल तीस की बरसौ अगहन महिन पर्यो,

बसि बरेली के लालदास ने राम नाम उच्चर्यो,

भरत की यह बारहमासी

गावै सुनै परमपद पावै कटै जम की फाँसी

वेद मिलि ऐसे ही गई,

कर्म लेख ना मिटै करे कोउ लाखन चतुराई।[1]

पुष्पिका — इति श्री भरत जी की बारामासी सम्पूर्ण॥ राम ॥ राम ॥ राम ॥

दूसरा ग्रन्थकाव्य अवधविलास है, जिसका प्रारम्भ सं0 1799 में वैसाख शुक्ल पूर्णमासी को किया गया। यह ग्रन्थ अयोध्या में लिखा गया है —

संवत सत्रह सय बीतिस सुनि वैसाख सुकाल।

लाल अवध मधि रच रच्यो अवध विलास रसाल॥[2]

यहाँ उल्लेख्य है कि उक्त काव्य का रचनाकाल सं0 1732 लिखा गया है, जो भ्रान्तिमय है। इस प्रकार की भ्रान्ति या प्रमाद पुस्तक की प्रतिलिपिकारों से हुई है। सन् 1901 के हस्तलिखित ग्रन्थों के खोज विवरण में इसका रचनाकाल सं0 1700 ही दिया है।

1- खोज विवरण त्रयोदश त्रैवार्षिक (1926-28) पृ0 403

2- अवधविलास, पृ0 3

डा० वेद प्रकाश द्विवेदी एवं श्री देवेन्द्र नाथ खरे प्रवक्ता डी०ए०वी० इण्टर कालेज बांदा के पास प्राप्त अवध विलास की प्रतियों में सं० 1732 ही लिखा है किन्तु पाद टिप्पणी में सं० 1700 ही लिखकर पूर्ववर्ती लिपिकार के प्रमाद को ठीक किया है। मैं समझता हूं कि यह भ्रम वर्तनी के कारण हुआ है। बात यह है कि प्राचीन काल में बारस(बारस) जैसा लिखा जाता था। रि (नि) का ति हो जाना बहुत स्वाभाविक प्रतीत होता है इस प्रकार बारस बत्तिस बन गया। इस तरह यह दोहा इस प्रकार लिखा गया होगा —

संवत सत्रह सय बारस सुदि बैसाख सुकाल।

इस काव्यको पूर्ण करने में कवि को लगभग 10 मास लगे हैं —

सुकल पच्छ की पंचमी फागुन मासहिं जान।
किये पयाने अवध ते लाल राम मन मान।।[1]

तात्पर्य यह है कि —

(1) लालदास का जन्म वि०सं० 1650 के लगभग हुआ था।

(2) लालदास या लाल उनका वास्तविक नाम नहीं है। यह नाम सम्प्रदाय में दीक्षित होने के बाद उपासना स्वरूप प्रगट करने के लिए कवि को मिला है।

(3) कवि बरेली का रहने वाला है।

(4) लालदास का चित्त मेष राशिस्थ शनि के प्रकोप के कारण विक्षिप्त हो गया था। यह दशा सं० 1690 से पूर्व की।

(5) शनि प्रकोप के फलस्वरूप कवि अयोध्या में सात वर्ष तक रहा। शनि की दशा 19 वर्ष की होती है। शेष समय तीर्थाटन में व्यतीत हुआ।

1- अवधविलास, पृ० 267

(6) लालदास ने सं० 1690 में भरत की बरह मासी रचने के दस वर्ष बाद सं० 1700 में अवधविलास की रचना की।

(7) अष्टयाम या बारहमासी लिखने की पद्धति सम्प्रदाय-दीक्षित साधक भक्तों द्वारा प्रचलित हुई है अतः यह स्वयमेव प्रगट है कि सं० 1690 तक वह इस रसिकोपासना में दीक्षित हो चुका था। यह दीक्षा सम्भवतः अयोध्या में ही हुई है क्योंकि अवध-विलास के द्वितीय विश्राम में अयोध्या का वर्णन रसिकोपासना में मान्य प्रचलित शास्त्रीय ग्रन्थों के आधार पर हुआ है, जो ग्रन्थ सम्प्रदाय दीक्षित साधकों को ही अवलोकनार्थ उपलब्ध होते हैं। साथ ही 12 विश्राम में सरयू तट पर स्थित रत्न मंडप में राम की माधुर्य युत विहार का ध्यान भी इसी बात की पुष्टि करता है।

(8) कवि को रस छन्द, अलंकार, गुण दोषों का विस्तृत ज्ञान था।

(9) भक्ति, ज्ञान, दर्शन, धर्म, नीतिशास्त्र, योग, नगर, देश, नदियाँ, रोग, सौन्दर्य, बोध शकुन-अपशकुन, राजसी वैभव, मनोरंजन के साधन के वर्णन में उसकी बहुज्ञता तथा कवि का स्वाध्याय प्रदर्शित होता है।

(10) साहित्यिक क्षेत्र में अभिव्यक्ति की सरलता को कवि ने प्राथमिकता दी है।

(11) अनेक स्थानों में कवि ने विनम्रता प्रदर्शित की है।

<u>अवधविलास की</u> कुछ <u>प्रतिलिपियाँ</u> :—

खोज विवरणों में अवध विलास की अनेक प्रतियों का विवरण प्राप्त होता है —

(1) पुस्तक का नाम — अवधविलास, लेखक— लालदास, देशी कागज, पृ० 199, नाप 10 1/2×6-3/4 इंच, प्रति पृष्ठ 22 पंक्तियाँ, 4380 श्लोक, पुरानी प्रति, नागरी लिपि प्रतिलिपि काल सं० 1930, प्राप्ति स्थान — मुंशी आपची लाल, राजकीय पुस्तकालय बलराम पुर (अवध)।[1]

प्रारम्भ — श्री गणेशाय नमः। अथ पोथी अवधविलास लालदास कृत लिख्यते।

सोरठा — कौ हरि औतार संत हेतु वपु नर धर्यो?

दूर किये भूभार असुर मार सुर सुख दयो॥

अंत — व्यास वशिष्ठ औ बालमिक सुकदेव सेस महेस।

महिमा अवध विलास की कहै लाल सुरेस॥

पुष्पिका — इति श्री अवध विलासे बुद्धि प्रकासे सब गुन रासे पाप विनासे कृत लालदासे

अंक संपूर्ण करन नाम विंशो विश्रामः ॥120॥संपूर्ण। शुभ मिति फागुन सुदि 13

(1281)साल मुकाम बलराम पुर ग्राम। छविलाल मुखवदी के।

(2)अवध-विलास- लालदास, कागज देशी पत्र 128 आकार 12x6इंच, पंक्ति(प्रति

पृष्ठ 32) परिमाण (अनुष्टुप 4352) पूर्ण रूप प्राचीन पद्य लिपि नागरी रचनाकाल

सं0 1700(1643ई0)लिपिकाल सं0 1934 प्राप्ति स्थान श्री राम दुलारे मिश्र,ग्राम

गणेशपुर,डाकघर मिश्रिख, जिला सीतापुर।

आदि श्री गणेशाय नमः॥ अथ अवध विलास कथा लिख्यते।

सो0 — कौ हरि अवतार भक्त काज जे वपु धरेउ।

दूरि कियो भू भार असुर मार सुर सुख दये॥

अंत — जन लछिमन की बात को जानत सब संसार।

याते लाल कहै नहीं असुरन के संघार॥

पुष्पिका — इति श्री अवध विलास बुद्धि प्रकासे पाप विनासे सब गुन रासे भक्त

हुलासे कृत लाल दासे राम बन चित्रकूट गमनो विंशति विश्राम। संवत 1934 मार्ग-

शीर्ष पंचम्यां चन्द्रवासरे अयोध्या नगरी मध्ये लिखितं बिहारी लाल दुबे। इति शुभम्।[1]

1- हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण,(1926-28)पृ0 402

दसमीमागिसुलच्छकहपाई हनूमानरूकादसींसैध्या अरुनसुद्रपारमनवंध्या जयोदसिसुष्यवरिकोतोर
चौदसिवृम्हशास्त्रकरिजोर पूनोहनूमानसुधिल्याए कहिवादुसबहिसुधिपाए दोहा रवनतलगिरिवर
वासकरिसियलछिमनसंगसमाज वालिमरीचहतिरावनमारहिंरामकरहिंगेराज जनलंकाकीबातकोजानतसब
संसार प्रेमलालकेहनहिंअसुरनकेसंहार केउमारिकेउतारिकैकेउविवाजिकेउरुन्त बनवासहुभर
करिचमूबैठिअवधजसरतुन्त स्वर्गधामहिंदेवताहरषतहिंकहुलास धन्यमनुष्यजेलालकारहुजनतेंअ
वधविलास व्यासवसिष्टकीवालामिकसुवदेवरोम्रामहेस महिमाअवधविलासकीकैहैलालहुरेस

डा. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, बांदा की प्रति

...द्र ग्रासजितु,ज ४३ सयपंडितमयमा कुकोडेनोस्मा नखाव तेतोष्कर्ष विलासके लानदइ नं
ड ज्ञान ४४ सं वतमत्र समयवातिम मुद्देवशाथमुकुल लालस्त्रवा श्रम विरक्तियो क्षत्र ...नार
रमाल ४५ वायाडे प्रयम ... गुरुगानपातिशरना ऊ, बुद्धि ... इरसमरस्वती सना ऊ, जो ... पावर
...हिं ... तोकं कु ज्ञानहाडडजीयमरं ब्रह्मावद श्रादिमहामाया प्रगजताहि जाना ... या
मनकमनातनमन तकुमारा श्रारमनंदनवाग्भिकाम वालकस्यर ...जान ...
...गश्रभिमानी। श्रौदिभक्तजे श्रादिगिप्यारी वेदोतादिभक्तिनिरुताती प्रग ...पारवतनभु ...
...समानवपुरूपसवगा। वेदांवारिमुक्तिहिमांड पावतभक्तिश्राननहिकाड डकुमा ... सान
...इड माकृपासाओजिकहाइ इज्ञादिक ...दवतानोते सेपरक्पाकरकुसवतत ...
नेनिगपत्ना पहातिथिपंवतत्जमकाला वारिवाके जैनतप्रानी ...माभूमरप्रे ग्रकड ... नी
चडडअस्वद्धारायुजजाना। डाम्श्विजषानिय्स्वावारवषाना ... विलासकथामजमानी वरनाताहि

श्री देवेन्द्र नाथ खरे, ... की प्रति

संवत सत्रह सै अठतीस । सुदि बैसाख सु काल ।
लाल अवधि माधि रहि रच्यौ । अवध बिलास रसाल ॥ ६५॥

चौपाई ॥ प्रथमहि गुरु गनपति सिर नाऊं । पुनि हरि हर सरस्वती मनाऊं ॥
और कृपा करा जिन्ह हेरैं । तो कछु ग्यान होइ जिय मेरैं ॥
बंदौं करुना आदि महामाया । परनाऊं ताहि जगत जिन्ह जाया ॥
सनक सनातन सनत कुमारा । और सनंदन चारि प्रकारा ॥
बालक रूप रहैं ब्रह्म ग्यानी । जीवन मुक्त निरा अभिमानी ॥
आदि भक्ति जो श्री हरि प्यारी । बंदौं ताहि भक्ति बिस्तारी ॥
परनाऊं पारखत प्रभु के संगी । हरि समान बपु रूप सु अंगी ॥
बंदौं चारि मुक्ति है सोई । पावत भक्त और नहि कोई ॥
इक सालोक्य सामीप सुहाई । सारूप्या सो जे जि कहाई ॥
इंद्रादिक है देवता जेते । मो पर कृपा करहु सब तेते ॥
होहु दयाल दसौं दिगपाला । ग्रह तिथि पंच तत्व जग काला ॥
चारि खानि के जे जत प्रानी । सिद्ध साधु सुरबर नर ग्यानी ॥
अंडज स्वेद जरायुज जाना । उद्भिज खानि ये चारि बखाना ॥
अवध बिलास कथा मन मानी । बरनौं ताहि देहु मोहि बानी ॥
नारद ब्यास बसीठ बखाना । पारासर सुकदेव समाना ॥
भारद्वाज सिद्ध बालमीक मुनि । कस्यप बिस्व [illegible] मुनि ॥
गौतम सौनक और पुलस्ति । सौभरि सुर गुरु सुक्र अगस्ति ॥
इनौं का भगुचिबन सुजाना । इन्ह सबहि [illegible] प्रनामा ॥

श्री देवेन्द्रनाथ [illegible] की प्रति

१२५

[illegible] जैसे [illegible] संगहीमु [illegible] ॥

दोहा। [illegible] बनबासभल [illegible] ॥

[illegible] इंद्रलोक कौ है काम ॥

इतिश्री अवध बिलासे बुधि प्रकासे भवगुन नासे

[illegible] हुलासे पापबिनासे [illegible] लालदासे [illegible]

बनगवन [illegible] बिस्राम ॥ १९ ॥

दोहा। [illegible] है जान।

किये पयान अवध ते [illegible] ॥ [illegible] ॥

लिपि काल [illegible]

श्री देवेन्द्र नाथ खरे [illegible] की प्रति

(3) लालदास कृत अवधविलास की एक प्रति डा० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित (प्रवक्ता हिन्दी विभाग, पं० जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय, बांदा) के पास सुरक्षित है। जिसके अन्त में पुष्पिका नहीं है। प्रतिलिपि कार एवं समय भी उसमें अंकित नहीं है।

(4) अवधविलास की दो प्रतियाँ श्री देवेन्द्र नाथ खरे, प्रवक्ता -अंग्रेजी, डी०ए०वी० इन्टर कालेज बांदा के पास हैं जिनका विवरण इस प्रकार है -

(क) लम्बाई 10×6 इंच, पृष्ठ 246, अपूर्ण, प्राचीन, नागरी लिपि, प्रति पृष्ठ 15 पंक्ति, अन्तिम पृष्ठ नहीं है।

(ख) लम्बाई 1 ×7 इंच, पृष्ठ 515, अपूर्ण, नवीन नागरी लिपि, प्रति पृष्ठ 14 पंक्ति,। इस प्रतिलिपि में 19 ही विश्राम प्राप्त होते हैं। लिपिकाल सन् 1906 है।

—

तृतीय अध्याय

अवध विलास की कथावस्तु

अवध विलास की कथावस्तु

इतिवृत्त प्रधान काव्यों में कथावस्तु को अनिवार्य तत्व स्वीकार किया गया है। कथा मेरुदण्ड है इसके कारण ही काव्य रूपी विशाल शरीर सुदृढ़ रहता है। कथावस्तु की महत्ता एवं उसके औदात्य का पता इसी बात से चल जाता है कि भारतीय काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने उसकी विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की है। प्रख्यात, उत्पाद्य तथा मिश्र एवं आधिकारिक प्रासंगिक पताका, प्रकरी कथाओं का भी उल्लेख किया गया है।

अवध विलास की कथावस्तु तत्सम्बन्धी महत्वपूर्ण घटनायें आधिकारिक एवं प्रासंगिक घटनायें उसके स्रोत मौलिक उद्भावनायें एवं गुण दोष का विवेचन इस अध्याय के अन्तर्गत किया जायेगा।

(1) मुख्य कथा :—

भूभारहरण, असुरमर्दन, एवं भक्त कार्य हेतु नराकार रूप में अव-तरित होने वाले हरि की वंदना के साथ लालकवि ने विघ्नहरण गणेश का स्मरण किया है। कृष्ण की रास लीला से प्रभावित होकर भक्त कवि ने पीयूषवर्षिणी कथा का विचार इस काव्य में किया है जिसे पढ़कर कवि, पण्डित, ज्ञानी, यति, भक्त, रसिकजन आनन्दित होंगे। वैदिक परम्परा से पुष्ट ज्ञान रत्न के अक्षय कोष से युक्त इस गुप्त कथा को अनुभव का विषय कवि ने बनाया है। ग्रन्थारम्भ के रूप में हरिहर, सरस्वती, ब्रह्मा, सनक, सनातन, सनन्दन, प्रभु पारषद देव, दिग्पाल, नारद, व्यास, वशिष्ठ, शुकदेव, भरद्वाज, वाल्मीकि, विश्वामित्र, गौतम, पुलस्त्य, गर्ग, दुर्वासा, च्यवन, ध्रुव, प्रह्लाद, अम्बरीष, भरत, जनक, विभीषण, हनुमान, अर्जुन, उद्धव, विदुर, शेष

इत्यादि ऋषि मुनि रामभक्तों की वंदना की है। रामावतार सन्त माहात्म्य पिंगल काव्य शास्त्र वर्णन प्रथम अध्याय में हुआ है।

द्वितीय विश्राम में अयोध्या एवं सरयू उत्पत्ति वर्णन है। सृष्टि विस्तार के लिए चिन्तित ब्रह्मा ने देखा कि उनके पुत्र मायारहित होकर लयलीन हो जाते हैं। अतः उन्होंने दक्षिण भुजा का मंथन कर स्वायम्भू एवं वाम भुजा से एक कन्या को प्रकट किया। दोनों की तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने सृष्टिविस्तार का आदेश दिया। शासन करने के कारण प्राप्त पापों से खिन्न होकर स्वायम्भू ने अपनी असमर्थता व्यक्त की। विष्णु ने उन्हें समझाकर वशिष्ठ को परोहित बनाकर उनके राज्य की राजधानी अयोध्या निश्चित कर दी। अयोध्या उत्पत्ति की एक अन्य कथा लालदास ने इस प्रकार बतायी है। आदि नारायण के नाभिकमल ने ब्रह्मा एवं उनके पुत्र के रूप में मरीचि, कश्यप, विवस्वान और मनु उत्पन्न हुए। मनु ने ब्रह्मा से श्रेष्ठ पुर मांगा। विष्णु के परामर्श से उन्हें अयोध्या दी गयी। उनके वंशज इक्ष्वाकु हुए। उन्होंने अयोध्या के पास एक नदी की कामना की। वशिष्ठ ध्यान योग लगाकर ब्रह्म लोक गये और इक्ष्वाकु की अभिलाषा उनसे बतायी। ब्रह्मा के कमण्डल से प्रवाहित जलधार जो मानसरोवर में लुप्त हो गयी थी मन्थन के बाद सरयू होकर पृथ्वी पर अवतरितहुई।

तृतीय विश्राम में रामावतार के कारणों पर प्रकाश डाला गया है। कश्यप अदिति ने प्रभु बनि हेतु कठिन तप किया। हरि प्रसन्न होकर उनसे वरदान मांगने को कहते हैं। उन्होंने वरदान स्वरूप हरि के समान पुत्र की अभिलाषा प्रकट की। इसके साथ ही लालकवि ने जय विजय के शाप की कथा का वर्णन किया है। सनकादि द्वारा शापित जय विजय हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु, एवं रावण, कुम्भकरण के रूप में जन्म ग्रहण करते हैं। रावण अपने बाहुबल से यक्षपति कुबेर को पराजित कर लंका को विजित करता है। नाना सुमाली एवं माल्यवान के परामर्श से वह राक्षसों का विशाल संगठन खड़ा कर लेता है और अपने दम्भ एवं शक्ति से अहमन्य बनकर देव बाहुओं पर

प्रभुत्व जमाने के लिए अत्याचार करता है।

चतुर्थ विश्राम में असुरों के अत्याचार से पीड़िता पृथ्वी गोरूप धारणकर ब्रह्मारूढ़ सहित क्षीरसागर में स्थित नारायण को करुण क्रन्दन सुनाती है। भगवान उसे प्रबोध देते हैं। पूर्वकाल में भक्तों के हितार्थ किये गये अपने कार्यों का विवरण देकर राक्षस वध का संकल्प करते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में लालकवि ने रावण उत्पत्ति, जन्म, ताल जंघ पुत्र धुर्म की कथा त्रिपुर वध जलंधर उत्पत्ति उसकी विजय गाथा एवं पत्नी वृन्दा के पातिव्रत्य भंग की घटनाओं का उल्लेख किया है।

पंचम विश्राम के प्रारम्भ में रघुवंश का वर्णन करते हुए लालकवि ने रघु दानकीर्ति का विस्तृत निरूपण किया है। वरतन्तु शिष्य कौत्स ने गुरुदक्षिणा के लिए चौदह कोटि भार स्वर्ण की याचना रघु से की और रघु ने कुबेर से स्वर्ण प्राप्तकर उन्हें सन्तुष्ट किया।

षष्ठ विश्राम में पुत्र जन्म के लिए दशरथ के प्रयासों का वर्णन है। अज पुत्र दशरथ के तीन रानियां कौशल्या, सुमित्रा एवं कैकेयी थीं। हजार वर्ष व्यतीत होने पर भी उनके कोई पुत्र नहीं हुआ। वृद्धावस्था आने के कारण वे पुत्र लाभ से निराश होने लगे। मंत्री ने पुत्रेष्टि यज्ञ का परामर्श उन्हें दिया। दशरथ सहित गंगा तट पर स्थित वशिष्ठ आश्रम आकर अपने शोक का कारण बताते हैं। पुत्रेष्टि यज्ञ के लिए विभाण्डक मुनि के पुत्र ऋष्यश्रृंग का नाम वशिष्ठ बताते हैं। दशरथ मंत्रियों को राज्य का प्रशासन सौंपकर प्रयाग प्रस्थान करते हैं और लोमपाद राजा से श्रृंगी ऋषि के आनयन का प्रयास करते हैं।

सप्तम विश्राम श्रृंगी ऋषि की कथा से सम्बन्धित है। अष्टम विश्राम में दशरथ द्वारा ऋषि के अवध आनयन की संक्षिप्त घटना वर्णित है। यहीं भारतीय दर्शनों में वर्णित तत्वों का विशद विवेचन है। पृथ्वी तत्व से मानव शरीर में अस्थि मांस, नख, त्वचा, केश, जल तत्व से वीर्य, रक्त, पित्त, श्लेष्म, स्वेद, तेज तत्व से आलस्य, कान्ति, क्षुधा, तृषा, निद्रा, वायु तत्व से धावन, चलन, संकोच

प्रकार, उदय, आकाश तत्व से कण्ठ, उदर, कटि, हृदय श्वास निर्मित है। इसी प्रकार पृथ्वी, वायु, तेज, जल, आकाश के गुणों में गन्ध, स्पर्श, रस, शब्द, का निरूपण करके वैद्य एवं वैज्ञ की विस्तृत व्याख्या की गयी है। इस प्रकार दशरथ अयोध्या, शृंगी ऋषि के साथ लौटे। नवम् विश्राम में पुत्रेष्टि यज्ञ का वर्णन है। राजा दशरथ के साथ ऋषि अयोध्या आकर उत्तम मास की शुभ तिथि को यज्ञ प्रारम्भ कराया वैदिक विधान से यज्ञ के सम्पन्न होते ही अग्नि देव कनक थाल में खीर लेकर प्रकट हुए। ऋषि ने आदर पूर्वक लेकर दशरथ को दिया और यज्ञान्त में, ब्राह्मणों को प्रभुत मात्रा में दान देकर संतुष्ट किया गया। उस पायस के दो भाग कर क्रमशः कौशल्या एवं कैकेयी को दिया गया उसी समय उस अंश में से कुछ भाग प्राप्त करने के लिए सुमित्रा भी उनके पास आ गयीं। सुमित्रा से अतिथि धर्म धर्म वर्णन सुनकर दोनों रानियों ने अपने भाग में से आधा आधा भाग सुमित्रा को सहर्ष दे दिया। इस प्रकार रज, वीर्य की भेंट के बिना ही वे रानियाँ गर्भवती हो गयीं।

दशम् विश्राम में रामजन्मोत्सव का विस्तृत वर्णन है जिस समय हरि गर्भ में आये उनका प्रभाव अयोध्या में पड़ने लगा। ब्रह्मादिक देव स्तुतियाँ करने लगे। जिसके उदर, मध्य, ब्रह्माण्ड सप्त समुद्र, नवखण्ड युक्त पृथ्वी स्थित है। वह भगवान मात्र कौशिला कौशल्या के गर्भ में निवास कर रहा है। उनकी कान्ति कौशल्या के द्युतिमान अंगों से प्रकट हो रही थी। कौशल्या के गर्भ में स्थित प्रभु के शरीर का सूक्ष्म वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है कि जीव सर्वप्रथम जल रूप में विकसित होता हुआ अन्य रस शुक्र, बिन्दु का रूप धारण करता है। मज्जा, अस्थि, नसें ये तीन वीर्य से, त्वचा, मांस, रक्त और बाल यह चार रज से निर्मित होते हैं। गर्भ परीक्षण करते हुए तुलसीदास ने बताया है कि माता के शरीर पुष्ट रहने पर कन्या एवं क्षीण शरीर से पुत्र का विधान माना गया है। इड़ा, पिंगला का विचार कर जो पण्डित रतिदान करता है वह यशस्वी पुत्र उत्पन्न करने में सफल हो सकता है। रतिदान

के बाद एक दिन तक रज वीर्य मिलन, पाँच दिवस में बुदबुद , सात दिन के बाद फेन दस दिन में पिण्ड, पन्द्रह दिन में अण्डा और एक मास में मुण्ड का विकास होता है। द्वितीय मास में भुजा जाँघ तीसरे मास में उदर हाथ पैर और चतुर्थ मास में उँगलियाँ और पंचम मास तक सभी अंग बन जाते हैं। वह गर्भस्थ जीवात्मा अपने पूर्व काल के कृत पाप पुण्यों का स्मरण करता हुआ पश्चात्ताप करता है। नवम् मास में वह गर्भ के बाहर आकर मायायुक्त हो रूदन करने लगता है। रानियों को गर्भवती समझ कर अयोध्या में हास हर्षोल्लास छाने लगा। चैत्र शुक्ल पक्ष नवमी रवि-वार पुनर्वसु अभिजित नक्षत्र कर्क लग्न में राम ने अवतार लिया। राम की जन्म-पत्रिका का विवरण देते हुए लालदास ने ज्योतिष ग्रन्थानुसार ग्रहों की उच्चस्थ अवस्था का विस्तृत वर्णन किया है। मेष का सूर्य, वृष का चन्द्र, मकर का मंगल, कन्या का बुध, कर्क का गुरू, मीन का शुक्र, तुला का शनि और मिथुन का राहु केतु उच्च बताये गये हैं। राम जन्म के अवसर पर पृथ्वी मंगलमयी, किन्नर, देव गन्धर्व, सिद्ध चारण इत्यादि मंगलिक गान करने लगे।

एकादश विश्राम पुत्र जन्म की शुभ सूचना सुनकर दशरथ के आनन्द वर्णन से होता है। एक दासी दशरथ को राम जन्म की सूचना देती है। तो दूसरी दौड़ती हुई भरत जन्म की बधाई तो तीसरी सुमित्रा से युगल बालकों के जन्म लेने की पीयूष वर्षिणी सूचना सुनाती है। चारों पुत्रों जन्म की बात सुनकर राजा समाधिस्थ हो गये। राम के चतुर्भुज रूप को देखकर विस्मित माता उन्हें बाल रूप में प्रगट होने के अनुनय करती हैं। राम ने पूर्वकालिक तपस्या और वरदान स्मरण कराकर सुंदर बालक रूप धारण कर लिया। नान्दी मुख श्राद्ध एवं जातकर्म के बाद दशरथ ने ब्राह्मणों को दान दिया और मांगने वालों को यथोचित रीति से सन्तुष्ट किया। इस प्रकार अयोध्या में राम जन्म की बधाई नगर वासियों का हर्षोल्लास छा गया। छठी पूजन के पश्चात् सामु-द्रिक शास्त्रोक्त लक्षणानुसार चारों बालकों का नामकरण किया गया। सबमें रमण करने

वाले पुत्र का नाम रामचन्द्र तथा भरण पोषण की दृष्टि से कैकेयी के पुत्र का नाम भरत एवं लक्ष्य भेद में न होने के कारण लक्ष्मण तथा शत्रु हन्ता के कारण शत्रुघ्न नाम किया गया। लाल कवि ने राम की बाललीलाओं का भी मार्मिक वर्णन किया है। पुत्र की कुशलता के लिए दशरथ ने देवालय तीर्थ स्थलों में उपवन सरोवर मन्दिर एवं यज्ञवेदियाँ बनवायीं। इस प्रकार अयोध्या में राम जन्म स्थान को पहचानने के लिए लालदास ने स्थान की माप लिखी है।

द्वादश विश्राम में राम की बाल कौतुक लीलाओं को स्थान मिला है। एक बार राम रोने लगे। मात-पिता ने उन्हें मनाने का अनेक प्रयास किया किन्तु उनका रूदन बन्द नहीं हुआ। तब राजा दशरथ ने राजा बलि की कथा एवं वामनावतार के रूप में नारायण के माहात्म्य का गान किया जिसे सुनकर राम हँसने लगे। दशरथ को राम ने अपना विराट रूप दिखाया और पूर्वकाल में दिये हुए वरदान की ओर संकेत किया। इसी समय अवधपुरी में दुर्वासा ऋषि का आगमन हुआ। अर्घ्यपाद्य के पश्चात् चारों बालकों ने उन्हें प्रणाम किया। राम के अनिन्द्य सौन्दर्य को देख वह आनन्दित हो गये। पिता दशरथ ने बालकों के भावी जीवन के विषय में पूछा। राम की हस्त रेखाओं को देखकर ऋषि ने उन्हें चक्रवर्ती पुत्र कहा। पत्नी वियोग एवं दो पुत्रों के पिता बनने का उल्लेख दुर्वासा ने किया साथ ही ग्यारह हजार वर्ष तक राम द्वारा शासन करने की भविष्यवाणी की। राम को अवतारी बताते हुए दुर्वासा ऋषि ने देवासुर संग्राम में देवों की पराजय हताश असुरों द्वारा भृगुपत्नी का आश्रय लेना विष्णु द्वारा चक्र से भृगु पत्नी की हत्या तथा असुरों का संहार करना और कुपित भृगु का उन्हें मानव योनि अवतार लेने का शाप देने की घटना का उल्लेख किया। इसके बाद लालदास ने अगस्त्य संहितानुसार परमब्रह्म राम की दिव्य आकर्षक और रसपेशल झाँकी प्रस्तुत की है। नारद, शिव, हनुमान के समक्ष अगस्त्य ऋषि ने उक्त सौन्दर्य का वर्णन किया है।

अघहारिणी सरयू के किनारे एक योजन कनक भूमि में रत्नजड़ित वेदी बनी है जिसमें दो धनुष ऊँचा मण्डप है। उसमें सोलह धनुष ऊँचे स्वर्णमणि विनिर्मित सोलह खम्भे हैं। उसके पूर्व पश्चिम दक्षिण एवं उत्तर दिशा में क्रमशः मन्दार, पारिजात सन्तानक एवं हरिचन्दन के वृक्ष हैं। तथा बीच में कल्पवृक्ष सुशोभित है। उस रत्न सिंहासन में कोमल ललित गति वाले सौन्दर्य निधान राम विराजमान हैं। भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न तथा अन्य देवता अहर्निश उनकी सेवा में संलग्न हैं। सनकादि विद्याधर गन्धर्व उनकी स्तुति करते रहते हैं।

महामुनि काकभुशुण्डि ने यह विचार किया कि राम पूर्ण ब्रह्म घटघट व्यापक अन्तर्यामी हैं या नहीं इसकी परीक्षा हेतु वह अयोध्या आते हैं। बाल राम को पकवान खाते देख काक वेश धारी मुनि ने झपटकर टुकड़ा छीन लिया। अन्तर्यामी राम ने काक को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ा दिया। काक उड़ता रहा रामके हाथ उसके पीछे दिखाई देते रहे। चकित होकर वह पुनः राम की शरण में आ गया और राम के [redacted] चरण में जाकर वह परब्रह्म राम की ऐश्वर्यपरक अनेक लीलाओं को देखता है।

इसके साथ ही लालदास सीता जन्म की विस्तृत कथा का वर्णन करता है। एक बार सभी देवता हरि लोक गये उस समय देव लोक हरिविहीन हो जाने के कारण उदास एवं पीड़ित प्रतीत होता था। विरहिणी लक्ष्मी विष्णु के अवतार लेने के कारण दुखित थी। उनका शरीर क्षीण हो गया था विष्णु वाहन गरूड़ एवं उनके पारषद् सभी विरहवियुक्त थे। ब्रह्माणी, इन्द्राणी एवं भवानी लक्ष्मी को सान्त्वना देने हेतु पधारीं। उन्होंने अयोध्या में राम रूप में जन्म लेने की बात कही और लक्ष्मी से सीता रूप में अवतार धारण करने का आग्रह भी किया।

लालदास ने सीता उत्पत्ति के अनेक कथाओं का अवधविलास में विस्तृत रूप से वर्णन किया। रत्नजा, भूमिजा, से सम्बन्धित प्रासंगिक घटनायें अवतरित हुई

है। साथ ही पुत्रेष्टि यज्ञ हेतु यज्ञभूमि की सफाई के लिए भूमि कर्षण करते समय कनक कलश प्राप्त हुआ जिससे जनक को सीता की प्राप्ति हुई। पुत्र की अभिलाषा करने वाले जनक कन्या देख निराश हो गये। तब जनक ने कन्या महात्म्य प्रकट करते हुए कहा कि कन्या धर्म की मूल है। दस कूप के समान एक बावली, दस बावली के समान एक तालाब और दस सर के समान एक कन्या का स्थान है। यहीं पर उर्मिला, श्रुतकीर्ति और माण्डवी के जन्म का उल्लेख हुआ है। शतानन्द ऋषि ने भविष्य वाणी के रूप में सीता के जीवन की प्रमुख घटनायें कहते हैं कि यह पतिव्रता स्त्री होगी। इसके स्वयंवर विवाह के समय अनेक श्रेष्ठ राजाओं का अपमान होगा। श्वसुर सेवा का सुख इसे प्राप्त नहीं होगा। विवाह के बाद पति संग वन में निवास, इसका हरण और इसके लिए भयानक संग्राम होगा। इसे पति के समक्ष अग्नि में बैठना होगा और यह गर्भिणी अवस्था में पतिपरित्याग का दुख प्राप्त करेगी। इस प्रकार सीता चारों बहनें चन्द्रकला के समान बढ़ने लगीं। बड़ी होने पर चारों कन्याओं की शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध हुआ। चारों वेद, वेदांग चौंसठ कलाओं में वे प्रवीण हो गयीं। और धीरे-धीरे वे युवावस्था की ओर अग्रसर होने लगीं। कन्याओं के युवती होने पर माता-पिता चिन्तित होकर वर की खोज करने लगे। तभी उनके यहाँ नारद आते हैं उन्होंने सीता जन्म के रहस्य का उद्घाटन किया और जनक को प्रबोध दिया कि इनके लिए नारायण ही वर रूप में आयेंगे।

त्रयोदश विश्राम के प्रारम्भ में किशोर राम के विमोहित अपरूप सौन्दर्य का निरूपण किया गया है। चारों राजकुमार सखाओं सहित गिल्ली डंडा, गेंद, चौगान पतंग खेलते हैं। यथा अवसर उनका व्रतबंध हुआ। यन्त्र मन्त्र तंत्र राजनीति साम, दान दण्ड भेद, विद्याध्ययन की ओर उन्हें प्रवृत्त कराया गया। एक दिन प्रसन्न होकर दशरथ ने भरत शत्रुघ्न को बुलाया। उन्हें ननिहाल मुल्तान देश में जाकर शिक्षा प्राप्त करने हेतु जाने का आदेश देते हैं। शुभ दिन दोनों भाइयों का प्रस्थान

करण, अश्वारोहण संचालन, पिंगल, कोकशास्त्र इत्यादि में वे प्रवीण हो गये। अब राम आदि भाई राज दरबार में बैठने लगे। उनकी वीरोचित भव्य वेशभूषा क्रिया कलापों से शत्रु भयभीत हो गये। वे अब गज एवं मल्ल विद्याओं के दाँव पेचों में निपुण थे। राज कुमारों का शर्त लगाकर सरयू सन्तरण, सरयू के किनारे बालू के दुर्ग बनाकर युद्ध संचालन का पुनभ्यास करते थे।

चतुर्दश विश्राम के प्रारम्भ एकाकी राम के चिन्तन से होता है। किसी ने दशरथ से बताया कि आज राम उदासीन हैं। किसी से बोल नहीं रहे हैं। दशरथ ने वशिष्ठ को इस स्थिति की सूचना दी। वे राम के पास आकर उनके कुशल क्षेम की चिन्ता व्यक्त की। प्रणाम के अनन्तर राम ने हृदय को मथने वाले विचारों का प्रगट करते हुए कहा। यह जीवन अल्पकालिक क्षण भंगुर है अतः नरतन पाकर मुक्त हेतु विलम्बन नहीं करना चाहिए। लाल कवि ने मुक्ति के सन्दर्भ में प्रह्लाद, सनकादि, देव दत्त, शुकदेव, ऋषभदेव, दक्षपुत्र प्रचेता, बालाखिल्य और नारद, कपिल, भरत इत्यादि से संबंधित कथाओं का उल्लेख किया है। राम शरीर की नश्वरता एवं मुक्ति की श्रेष्ठता से प्रभावित होकर तीर्थाटन करने की अभिलाषा प्रगट करते हैं क्योंकि मोक्ष का प्रथम सोपान तीर्थाटन ही है। तीर्थाटन से ही अन्तःकरण शुद्ध होता है। शुद्ध अन्तःकरण में ही ज्ञान का विकास होता है। राम की इस प्रकार की वाणी सुन कर वशिष्ठ गदगद हो गये और उन्होंने दशरथ से राम के तीर्थाटन करने की अभिलाषा प्रकट की। चिन्तित दशरथ वशिष्ठ के साथ राम के पास गये और व्यथा भरी वाणी में पुत्र सेवा से प्राप्त सुख का उलाहना दिया। अभी राम का विवाह हुआ नहीं। वृद्ध वे हुए नहीं, दिग्विजय उन्होंने की नहीं और वन जाने की बात सोचने लगे। होना तो यह चाहिए कि राजा तुम बनो और वन मैं जाऊँ। मात पिता की सेवा करके ही पुत्र तीर्थ लाभ करता है। राम ने आदरपूर्वक कहा परमार्थ के लिए कोई निर्धारित आयु एवं समय नहीं होता। राम के तीर्थाटन की सूचना सुनकर माँ कौशल्या

विह्वल हो गयीं। राम ने उन्हें अनेक प्रकार से समझाकर धैर्य बंधाया।। दशरथ की माया का अपकर्षण करके राम तीर्थाटन की अनुमति प्राप्त करते हैं। और रथ में बैठ अनेक तीर्थों में जाकर स्नान दान एवं दर्शन से अपने मन को शान्त करते हैं। अयोध्या वापस आने पर प्रजा ने उनका सहर्ष स्वागत किया। यहीं पर कवि ने अष्टांग योग यम नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा ध्यान और समाधि का विस्तृत वर्णन किया है। प्रतिमा अर्चन, षोडशोपचार, षट्कर्म, आसन, बस्ती धाती, प्राणायाम, त्राटक, अंगन्यास, स्वासप्रक्रिया, षट्चक्र विवरण मूल जालंधर इत्यादि बंधु खेचरी, भूचरी, जलचरी और अगोचरी मुद्राओं के साथ संकल्पात्मक विकल्पात्मक समाधि अपर सिद्धि नव निधियों का विस्तृत विवेचन किया है।

षोडश विश्राम में लालकवि ने दर्शनों के मूल सिद्धान्त जीव जगत ईश्वर विषयक मतभेदों का वर्णन किया है। यहीं पर सांख्ययोग सहित षट दर्शनों तत्व प्रकृति माया और ब्रह्म की दृष्टि से उनके महत्व का प्रतिपादन किया गया है। साथ ही अयोध्या निवासियों के ज्ञान वैशिष्ट्य के दिग्दर्शन के साथ ही उनके द्वारा प्रयुक्त संस्कृत भाषा की विस्तृत चर्चा की है। लालकवि ने संस्कृत के शब्दों का हिन्दी रूपान्तर की विस्तृत सूची इस अध्याय में दी है।

सप्तदश विश्राम में राम के अनुपम रूप गुण राशि शील का विस्तृत वर्णन हुआ है। ऐसे राम के अतुलित अपरिमेय गुणावलि के विषय में सुनकर सीता उन पर अनुरक्त हो गयीं और पार्वती गणेश की पूजन कर राम को पतिरूप में प्राप्त करने की कामना करने लगीं। वे कार्तिक माघ और वैसाख मास में पुराणोक्त विधि विधानों के अनुसार स्नान करने लगीं। अन्तर्यामी राम सीता की इस तपस्या से प्रभावित होकर उन्हें अपने हृदय में बसा लिया। विश्वामित्र के मन को आकृष्ट करने के लिए राम ने राक्षसों को प्रेरित किया। राक्षसों के अत्यधिक उत्पीड़न से त्रस्त विश्वामित्र अयोध्या आये। दशरथ ने उनका उचित सम्मान किया। विश्वामित्र ने कहा कि निर्बलों की शक्ति

राजा,बालकों की शक्ति स्वभाव और युवती की शक्ति त्रिया चरित्र है। साथ ही राजा की उच्छृंखलता और प्रजा के प्रति राजाकी उपेक्षा की चर्चा करते हुए उन्होंने वेनु नृप की कथा दशरथ को सुनाई। और इस प्रकार धर्म रक्षार्थ उन्होंने दशरथ से राम लक्ष्मण की माँग की। इसे सुनकर दशरथ पुत्र प्रेम के कारण व्याकुल हो गये। वे राम लक्ष्मण के प्रतिकार में राज पाट और जीवन भी देने का विकल्प प्रस्तुत करते हैं। विश्वामित्र ने वशिष्ठ को प्रेरित किया कि वे दशरथ को राम लक्ष्मण की शक्ति से परिचित करायें। वशिष्ठ राम लक्ष्मण के अवतार प्रयोजन की चर्चा कर दशरथ को प्रबोध देते हैं। इसी समय माता कौशल्या राम के वियोग जनित दुख से विलाप करने लगीं। और वह राम की कोमलता सुकुमारता को देख शत्रुओं से लड़ने में उनकी असमता को स्मरण करने लगीं। सबको समझाकर राम लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ उनके आश्रम की ओर प्रस्थान करते हैं। राम की चितवन उनकी दृढ़ता चपलगति को देख विश्वामित्र को विश्वास हो गया कि वे निश्चय ही अपने कार्य में सफल होंगे। वे सब पिशाची ताड़का के पास पहुँचे। विश्वामित्र के संकेत मात्र से राम ने क्षिप्र गति से तीक्ष्ण बाण निकाला बाण लगते ही वह पिशाची यक्षकुमारी के रूप में परिवर्तित हो गयी। राम ने उसे शाप मुक्त किया। वे गंगापार कर सिद्धा आश्रम पहुँचे। राम के आदेश से ऋषियों ने निर्भय होकर यज्ञ प्रारम्भ किया। यज्ञ विध्वंश के लिए राक्षस अस्थि चर्म, मल, रुधिर मदिरा, की वृष्टि करने लगे। महाबली मारीच एवं सुबाहु से राम का युद्ध हुआ। राम ने वायु बाण से मारीच को शतयोजन दूर फेंक दिया। तथा अग्नि बाण से सुबाहु का संहार किया। शेष दैत्यों को लक्ष्मण ने युद्ध भूमि में ही नष्ट कर दिया। सभी विप्र ऋषियों ने राम लक्ष्मण की स्तुति की। प्रातः काल राम लक्ष्मण ने विश्वामित्र से अयोध्या लौटने की अनुमति माँगी। क्योंकि उनके अयोध्या न पहुँचने पर पुरु परिवार मात पिता चिन्तित होंगे। राम के अपरिमित पौरुष से प्रभावित गदगद कण्ठ से युक्त विश्वामित्र ने जनकपुर में आयोजित एक कौतुक देखकर ही अयोध्या जाने

का आग्रह किया। मार्ग में स्थित जनशून्य शिला को देख विश्वामित्र ने शापित अहल्या के उद्धार की प्रार्थना राम से की। राम के चरण स्पर्श से ही अहल्या शापमुक्त हो गयी। मार्ग में श्रम परिहारार्थ विश्वामित्र ने शिव धनुष की कथा प्रारम्भ की।

त्रिपुरवध के पश्चात् यह धनुष राजा जनक के पास रखा गया। जनक प्रतिदिन उसकी पूजा अर्चना करते थे। एक दिन गोबर से भूमि को लीपते हुए सीता ने उस धनुष को बायें हाथ से उठा लिया। सीता के इस अलौकिक शक्ति से आश्चर्यचकित जनक ने प्रतिज्ञा की कि धनुष में प्रत्यंचा में तीर चढ़ाने वाला वीरपुरुष ही सीता पति होगा और इसीलिए जनकपुर में सीता स्वयंवर आयोजित किया गया है। इस प्रकार जनकपुर की वन्य एवं नगरीय सुषमा का अवलोकन करते हुए वे जनकपुर पहुँचे। राम की कमनीय शोभा देख जनकपुरवासी नर-नारी उन पर मुग्ध हो गये। विश्वामित्र सहित राम लक्ष्मण ने एक बाग में अपना निवास बनाया। गौरी गणेश पूजन हेतु सीता सखियों सहित पुष्पवाटिका में आयीं। लता अन्तराल से सीता ने राम का प्रथम दर्शन किया और वे राम प्रेम से अभिभूत हो गयीं। प्रेमाभिभूत सीता अपनी सुधबुध खो बैठीं। कहीं वे पुष्प के स्थान पर कलियाँ तोड़ने लगीं तो कहीं वे मुद्रिका गिराकर उसे उठाने के बहाने राम से नेत्र चार करने लगीं। प्रेमविह्वला सीता को सखियाँ देवी मण्डप में ले आयीं। उधर राम भी सीता प्रेम विषयक अपना अनुभव लक्ष्मण के समक्ष बताते हैं। उन्हें इस बात का पूर्ण विश्वास होने लगा कि वे ही शिव धनुष को उठायेंगे। सीता के प्रेम में विवश राम यह उद्घोषित करते हैं कि यदि अन्य किसी बली राजा ने उस धनुष को तोड़ दिया तो वे बलात् सीता को उससे मुक्त करा लेंगे। सीता ने भी राम से ही विवाह करने का निश्चय मन में कर रखा था। इस प्रकार सीता के रूप गुण सौन्दर्य का ध्यान करते हुए वे विश्वामित्र के पास आते हैं। इसी समय विश्वामित्र

के आगमन की सूचना सुनकर जनक उनकी अभ्यर्थना करने पुष्पवाटिका आते हैं। राम के कामदेवोचित रूप सौन्दर्य को देख जनक को अपने ब्रह्म की निस्सारता अनुभव होने लगी। अपरान्ह राम लक्ष्मण पुर भ्रमण को निकले। आबाल वृद्ध नरनारी दोनों भाइयों के मोहनी रूप को देख सीता के साथ विवाह होने की कामना करने लगे क्योंकि इसी सम्बन्ध से भविष्य में उन्हें रामके दर्शन हो सकेंगे।

शुभ दिन जनक ने धनुष मंगाकर सभा में रखवाया। पाँच हजार योद्धा मिलकर भूधर के समान गुरू धनुष को सभा में रखते हैं। उसकी विशालता को देख राजा भयभीत एवं निराश होने लगे। भाट ने आकर जनक के प्रण को सूचित किया। वीरों ने अपनी अपनी भुजाओं में बंधे यंत्रों का स्पर्श कर मंत्रों का स्मरण किया। राजा लोग अपने अपने आराध्य देव का स्मरण कर धनुष उठाने का प्रयत्न करने लगे। शंकित पराजित ग्लानियुक्त , खण्डित कामना वाले वीर श्रीहीन होकर अपने अपने स्थान में बैठने लगे। धनुष उठाने के प्रयत्न में किसी का हाड़ टूट गया किसी की नस चढ़ गयी किसी की छाती दरक गयी किसी की पगड़ी किसी का मुकुट गिर गया। यहाँ तक रावण से भी वह धनुष न उठ सका। सीता की माँ ऐसी सन्तापमयी परिस्थिति में पश्चात्ताप करने लगी। विश्वामित्र के आदेश से राम ने धनुष उठाकर तोड़ डाला। उस धनुष के टुकड़े स्वर्ग पाताल और भू पर गिरे। सीता ने राम को विजय श्री वाली वरमाला पहना दिया। धनुष भंग के शब्द को सुनकर परशुराम आ गये। कुपित परशुराम को राम ने अपनी शान्त वाणी से प्रबोध दिया और परशुराम के जाते ही चतुर्दिक हास हर्षोल्लास छा गया। हाट बाट महल सज्जित होने लगे। सब लोग सीता राम की वन्दना करने लगे।

अठारहवाँ विश्राम सीता राम के विवाह से सम्बन्धित है। पण्डितों तथा ज्योतिषियों ने वर्ष, मास, नक्षत्र, राशि, योनि, वर्ण इत्यादि का विचार कर राम विवाह की लग्न निकाली। मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष, द्वितीया तिथि का विचार कर लग्न-पत्रिका लिखी गयी। अक्षत, हल्दी, दूर्वा, सुपाड़ी, कुमकुम, श्रीफल, वस्त्र एवं द्रव्य देकर जनक ने ब्राह्मण एवं नाई को अयोध्या भेजा। तथा सीता के हल्दी चढ़ने लगी। विवाह का आमन्त्रण पाकर दशरथ गद गद हो गये और निश्चित तिथि के दिन सदानन्द ऋषि ने बरयात्रा के प्रस्थान का संकेत दिया। हर्ष, उल्लास से युक्त सभी बराती अनेक वाहनों में चढ़-चढ़कर ~~अयोध्या~~ जनकपुर पहुँचे। राम लक्ष्मण ने सभी का आशीर्वाद प्राप्त किया। जनक ने सभी आगन्तुकों का स्वागत कर सबको यथायोग्य आवास दिया। सीता ने ऋद्धि-सिद्धियों को संकेत कर अतिथियों की सेवा में नियुक्त कर दिया। जनक ने राम सीता के अतिरिक्त भरत लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न को उनके अनुरूप अपनी कन्याओं का कन्यादान दिया। यहीं पर लाल दास ने तद्युगीन विवाह संस्कारों में से चौक-पूरण परछन, मधुपर्क, शाखोच्चार, कन्यादान, पदप्रक्षालन, सप्तपदी, भ्रमर, ध्रुव-दर्शन इत्यादि लौकिक रीतियों का उल्लेख किया है। साथ ही विवाह में किये गये कौतुक तथा भोजनार्थ व्यंजनों की लम्बी सूची दी गयी है।

उन्नीसवें अध्याय में राम सीता के विवाहोपरान्त बारात विदा, अयोध्या के मांगलिक आचार का वर्णन का वर्णन है। पुत्र एवं पुत्रवधुओं को देखकर दशरथ निश्चिन्त हो गये और उनका मन धर्म की ओर प्रवृत्त हो गया। देव, पितृ, ब्राह्मणों को दान देने लगे। इसी सन्दर्भ में दान माहात्म्य प्रगट करने के लिए लालदास ने

अनेक प्रासंगिक कथा कथाओं की विवेचना की है। इस प्रकार राम सीता के सुखमय दिन व्यतीत होने लगे। कि अचानक वीणावादन के साथ हरिगुण गायन करते हुए नारद राम के पास पहुंचे और उन्होंने राम की स्तुति करते हुए अवतार का प्रयोजन राक्षसवध का स्मरण कराया। राम वनगमन के कारणों की खोज में उदास बैठे थे कि कैकेयी पीछे आकर दोनों हाथों से राम के नेत्र बन्द कर लेती हैं। राम की उदासी देख कैकेयी ने कारण जानने का हठ किया। अतिशय हठ करने पर राम ने राक्षसों के वध हेतु अपने चौदह वर्ष के वनवास की बात कही। अपने वाक्चातुर्य से राम ने कैकेयी को दशरथ से वर मांगने हेतु तैयार कर लिया। इधर दशरथ अपने श्वेत केशों को देखकर राम को युवराज बनाने की बात सोचने लगे और राम के सामने ही सन्यस्त होकर तपोलीन होने की अभिलाषा प्रगट की। इस विचार को जानकर देवताओं को भय प्रतीत होने लगा और वे सरस्वती के पास जाकर अपनी प्रार्थना सुनाते हैं कि वे ही ऐसे संकट के समय में सहायिका हो सकती हैं। सरस्वती कुमति कुबुद्धि एवं कुवात लेकर मन्थरा के कण्ठ में बैठ गयीं जो कैकेयी की बहुत पुरानी और मुंहलगी दासी थी। राम के युवराज्याभिषेक को सुनकर अनेक देशों से राजा आने लगे। चतुर्दिक घरों में उत्साह छा गया। लोग मांगलिक गीत गाने लगे जिसे सुनकर मन्थरा द्वेष से जल गयी और वह कैकेयी के मन में कौशल्या के प्रति सपत्नी भाव जाग्रत कराया। अपने पुत्र का अहित सुनकर और त्रिया चरित्र सम्बन्धी दूहा का मंत्र पढ़कर कैकेयी कोप भवन में जाकर मुंह छिपाकर जा बैठी। वह राजा दशरथ की बाह्य प्रीति और उनके सरल वचनों पर व्यंग्य निकाल कर मन ही मन कुपित होने लगी। कौशल्या

का पुराना शिष्ट व्यवहार भी उसे षडयन्त्रकारी प्रतीत होने लगा। राजा दशरथ उसे रूष्ट सुनकर मनाने गये। और कैकेयी के वाकजाल में फंसकर दो वरदान देने की बात स्वीकार कर ली। कैकेयी ने उन्हें राजा की उंगली में उत्पन्न पीड़ा और अपने प्रयासों का स्मरण कराकर एक वर तथा युद्धरत दशरथ के रथ की कीली के स्थान पर अपनी उंगली रख देने के कारण दूसरे वर की प्राप्ति का आश्वासन लिया था और उसी के परिणाम स्वरूप भरत को राज्य एवं राम वन गमन मांगा। दशरथ शोक पश्चात्ताप करने लगे तथा कैकेयी के वाक्जाल में फंसने की विवशता का अनुभव करने लगे। स्त्री के वशीभूत दशरथ ने राम को बुलाकर चौदह वर्ष के वनवास की आज्ञा सुनाई। राम वन--गमन की बात सुनकर अयोध्या के नरनारी व्याकुल हो गये। हाथी, घोड़े, जड़,चेतन आबालवृद्ध नरनारी अयोध्यावासियों को व्यथित छोड़कर राम लक्ष्मण सीता वन चले गये। सम्पूर्ण अयोध्या श्रीहत हो गयी।

बीसवें विश्राम में वनगमन के तिथि का उल्लेख करते हुए लालदास ने बताया है कि फाल्गुन मास की शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि को राम ने माता-पिताऔर गुरू वशिष्ठ से आज्ञा लेकर तमसा नदी के किनारे पहुचे। तीन दिन ही निराहार रहकर वे नदी के किनारे तीन दिन व्यतीत किये। राम सीता के वनगमन के प्रति चिन्तित होने लगे और इस प्रकार अनुगमन करने वाले अयोध्या के समाज को चौथे दिन फलाहार कराकर उन्होंने वापस कर दिया। और केवट की नाव पर चढ़कर गंगा पार कर प्रयाग पहुंचे। उन्होंने सुमन्त मंत्री को रथ सहित अयोध्या वापस भेज दिया। इस प्रकार पांचवे दिन चित्रकूट आ गये। पिता मरण की बात सुनकर भरत अयोध्या वापस आये तथा पुरवासियों के साथ वे चित्रकूट आकर राम से अयोध्या

लौटने की प्रार्थना की। राम ने भरत को बहुविधि समझा बुझाकर अयोध्या भेज दिया और स्वयं दण्डकारण्य में प्रविष्ट हो गये। सभी वनवासी राम लक्ष्मण की शोभा देख उनकी सेवा में तत्पर हो गये।। सूर्पणखा सुन्दरी का वेष धारण कर राम से अपना प्रणय निवेदन किया परिणाम स्वरूप लक्ष्मण ने उसे कुरूप कर दिया। लक्ष्मण द्वारा रचित पर्णकुटी पर सीता को एकाकी छोड़ राम कनक मृग के पीछे गये। इस प्रकार माघ शुक्लपक्ष चतुर्दशी को सीताहरण हुआ। इसके बाद की कथा कवि ने अत्यन्त संक्षेप में कही है। मात्र प्रमुख घटनाओं का उल्लेख ही यहाँ हुआ है। राम हनुमान भेंट, समुद्र लंघन वाटिका विध्वंस, ब्रह्मपाश में बंधना, लंकादहन, असुर संहार और रावण वध की घटनायें वर्णित है। यहीं यह काव्य समाप्त हो जाता है।

प्रासंगिक कथायें :—

मूल कथा के साथ ही लालदास ने अनेक प्रासंगिक कथाओं का विन्यास किया है। ये कथायें कहीं मूल कथा की हेतु कथायें हैं कहीं किसी पात्र के उत्पत्ति हेतु वर और शाप से सम्बन्धित हैं तो कहीं किसी वर्णन विशेष पर आधारित कथायें हैं। इन कथाओं का विस्तृत जाल अवधविलास में फैला है जो निम्नलिखित हैं —

सरयू उत्पत्ति की कथा :—

सरयू उत्पत्ति एवं पृथ्वी पर उसके आगमन की विस्तृत कथा लालदास ने द्वितीय विश्राम में वर्णित की है जिसे दो भागों में बाँटा जा सकता है (1) गंगा उत्पत्ति (2) उसी की धारा के रूप में सरयू उत्पत्ति। कथा क्रम इस प्रकार है —

एक समय बैकुण्ठ में नारायण लक्ष्मी एवं पार्षदों सहित विराजमान थे। इसी समय महादेव एवं पार्वती प्रभुदर्शन हेतु पधारे। नारद, सरस्वती, इन्द्र, देव

गुरू बृहस्पति, रम्भा, उर्वशी, आदि अप्सरायें विद्याधर गन्धर्व आदि शेष ब्रह्मा सनकादि वहाँ उपस्थित हो गये। ऐसे उपयुक्त अवसर को देखकर शंकर ने नृत्य द्वारा प्रभुस्तुति करने की अभिलाषा व्यक्त की। नारद, सरस्वती, एवं पार्वती ने मिलकर संगीत और गायन प्रारम्भ किया। शिव, ताण्डव नृत्य दिखाने लगे। उनके नृत्य कौशल से प्रभु प्रसन्न हो गये। शंकर ने उनसे अविरल भक्ति मांगी। उस समय पुलकावली के कारण उत्पन्न जल को ब्रह्मा ने कमण्डल में भर लिया। जो बाद में गंगा के रूप में अभिहित होकर शिव के मस्तक पर सुशोभित हुई। इसके बाद कवि ने इक्ष्वाकु की इच्छानुसार नदी हेतु वशिष्ठ के प्रयास का वर्णन किया है। कथा कुछ इस प्रकार है –

एक बार वशिष्ठ पितृ दर्शन हेतु ध्यान योग के बल से ब्रह्म लोक गये। रूद्र सनकादि गन्धर्वों द्वारा पूजित पितामह को देख वे प्रफुल्लित हो उठे। वशिष्ठ ने पिता से कहा कि श्रेष्ठ यजमान की नगरी अयोध्या श्री सम्पन्न होते हुए भी सरिता विहीन है। कृपा करके ब्रह्मा ने कमण्डल से एक धार प्रवाहित की। आकाश से नीचे आते हुए उस जल के कारण भयावह शब्द होने लगा। वह जल सुमेरू पर्वत पर एकत्र होकर नदी रूप में प्रवाहित होने लगा। ऐरावत हाथी के दांतों को विदीर्ण कर वह नदी सरसर करती हुई क निकल गयी। इसीलिए इसका नाम सरयू पड़ा है। इस प्रकार पृथ्वी में आने के पूर्व ही वह नदी मानसरोवर में जाकर विलुप्त हो गयी। वशिष्ठ ने इस घटना से चकित होकर विष्णु लोक जाकर तप प्रारम्भ किया। हरि के दर्शन देने पर उन्होंने उक्त घटना सुनाकर पुन नदी की याचना की। विष्णु ने मानसरोवर के जल का मन्थन करने का आदेश दिया और इस प्रकार सरयू अयोध्या आई। विष्णु के नेत्रों से तेज रूप में उत्पन्न होने के कारण इसे नेत्रजा भी कहते हैं। वशिष्ठ द्वारा आनीत होने के कारण इसे वाशिष्ठी गंगा कहा जाता है। राजा इक्ष्वाकु

ने नदी की बहुविधि पूजा कर विप्रों को दान दिया।

<u>जयविजय शाप कथा :-</u>

जय विजय वैकुण्ठ के द्वारपाल थे। अचानक सनकादि मुनि वहाँ पर जाते हैं जय विजय उन्हें रोककर कहते हैं कि यह समय प्रभुदर्शन का नहीं है साथ ही सनकादि अनेक युगों से बालक रूप में ही दिखाई देते हैं जो स्वाभाविक नहीं है। कुपित सनकादि ने उन्हें राक्षस होने का शाप दे दिया। विष्णु बाहर आकर उनसे क्षमा मांगते हैं और उनके शाप को अपनी इच्छा बताते हैं। इस प्रकार हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु और रावण कुम्भकर्ण के रूप में ये अवतरित होते हैं।

<u>रावण उत्पत्ति :-</u>

हरि अवतार के कारणों में रावण वध मुख्य है। अतः तुलसीदास ने रावण के जन्म के साथ अनेक घटनाओं का विस्तृत वर्णन किया है।

ब्रह्मा पुत्र पुलस्त्य वन में तप कर रहे थे। उसी समय सुमेरु पर्वत के पास तृण बिन्दु शासन कर रहे थे। उनकी रूप, गुण, शील, युक्त एक कन्या थी जो ऋषि की तपस्थली के पास क्रीड़ा करती थी जिसके कारण उनका संयमित मन बारम्बार विक्षुब्ध होकर वासनाभिभूत हो उठता था। पुनः ध्यान में विघ्न पड़ने के कारण कुपित ऋषि ने यह शाप दे दिया कि यहाँ पर आने वाली युवती गर्भिणी हो जायेगी। उस कन्या के गर्भिणी हो जाने के कारण पिता ने उसे ऋषि को सौंप दिया। समय पाकर उसके गर्भ से विश्रवा का जन्म हुआ। तपस्वी विश्रवा का विवाह ~~कन्या~~ भरद्वाज की कन्या से हुआ जिससे कुबेर ने जन्म लिया। बड़े होने पर ब्रह्मा ने कुबेर को लंका का शासक बना दिया। कुबेर ने दूत भेजकर मयदानव से उनकी कन्या की मांग की। अस्वीकार करने पर वे युद्ध के लिए तैयार हो गये। युद्ध में विजयी कुबेर ने मय दानव की तीन कन्याओं का अपहरण कर पिता की सेवा में भेज दिया और इस प्रकार

विभीषण एवं त्रिजटा का जन्म हुआ।

रावण जन्म की एक अन्य कथा का उल्लेख लालदास कवि ने किया है। माली सुमाली एवं माल्यवान नामक वीर राक्षस लंका के शासक थे जिन्होंने देवताओं को युद्ध में पराजित कर [redacted] लंका को अधिकृत किया था। उनकी कन्या का नाम कैकसी था। उसके विवाह के लिए चिन्तित सुमाली ने पुलस्त्य पुत्र विश्रवा को देखा और उन्होंने उसका विधिवत विवाह ऋषि से कर दिया। एक दिन संध्या समय कामारत्त कैकसी ने ऋषि से रति याचना की। ऐसे अशुभ समय का विचार कर ऋषि ने उसे अनेक भांति समझाया कि निद्रा, स्त्री सहवास, विद्याध्ययन और आहार संध्याकाल में वर्जित हैं क्योंकि इससे दारिद्री, दुष्ट रोगी और मूर्ख संतति होती है। किन्तु उस कामातुरा के समक्ष ऋषि विवश होकर रतिदान करना पड़ा। उससे रावण की उत्पत्ति हुई।

रावण का जन्म होने पर अनेक प्रकार के अनिष्ट, अपशकुन होने लगे। आकाश में उल्कापात, भूमिकम्पन, रुधिरवृष्टि, विद्युत निपात, काक, शियार का रोना, अग्नि का मंद पड़ जाना इत्यादि अपशकुन का उल्लेख कवि ने किया है। बालक रावण कालक्रम से बड़ा हुआ और वह अनेक प्रकार के उत्पात करने लगा। यज्ञकुंड में पानी गिरा देना, विप्र के तिलक नष्ट कर देना, सद्ग्रन्थों को फाड़ देना, गोहत्या करना और साधु सन्तों के आचरण की नकल करना प्रारम्भ कर दिया। ऐसे समय माता ने उसे लंका के वैभव की कथा सुनाई और प्रतिशोध लेने के लिए तपस्या करने के लिए प्रेरित किया। तपस्या का निश्चय कर रावण कुम्भकरण एवं विभीषण सहित गोकर्ण तीर्थ गया उनकी उग्र तपस्या से ब्रह्मा प्रसन्न होगये। रावण अमरत्व का वर, कुम्भकर्ण ने निद्रा और विभीषण ने हरिभक्ति प्राप्त की और इस प्रकार अजेय शक्ति सम्पन्न वह माँ के पास लौट आया। नाना माल्यवान ने उसे दिग्विजय का परामर्श दिया और रावण की अनेक विजय यात्रायें लालदास ने वर्णित की हैं। रावण को

श्वेतद्वीप की नारियों द्वारा सहस्त्रबाहु बालि एवं बालि द्वारा अपमानित होने की तुल्य घटनायें भी अध्यात्म में हैं। नारद द्वारा प्रेरित रावण ने यमराज से युद्ध कर अनेक जीवों को छुड़ा दिया। शंकर पर दश शीश चढ़ाकर उसने जिस अजेय शक्ति को प्राप्त किया था उसका वह दुरुपयोग करने लगा। जिसके कारण पृथ्वी में अधर्म, नित्यप्रति बढ़ने लगा।

<u>मुर वध की कथा</u> :—

गोरूपधारी पृथ्वी की करुण पुकार सुनकर विष्णु ने भूतकाल में पृथ्वी उद्धार की कथा के रूप में तालजंघ पुत्र मुर की कथा का उल्लेख किया है। चन्द्रवती नरेश तालजंघ का एक वीर पौरुष से युक्त पुत्र था। जिसने अपनी तपस्या से शक्ति शाली बनकर त्रिलोक को आधीन बनाया था। उसने अपने लिए नवीन इन्द्र, ब्रह्मा, वेद, दिग्पाल, स्वर्ग-नर्क तीर्थ, व्रत, देव, अप्सराओं का निर्माण किया था। इस नयी सृष्टि से आर्त देवगण शंकर के पास गये देवाधिदेव शंकर ने इस विषय में हस्तक्षेप करने से अपने को असमर्थ मानकर उन्हें विष्णु के पास भेज दिया। उनकी प्रार्थना से द्रवित हो विष्णु ने चक्र चलाया जिसके कारण मुर के शरीर से निकलने वाले रक्त से अनेक योद्धा उत्पन्न हो गये और सभी विष्णु की ओर दौड़े। अनन्त असुरों के साथ उनका युद्ध हुआ मुर ने अपने त्रिशूल से विष्णु के शस्त्र छीन कर लिया। इस प्रकार एक सहस्त्र दिव्य वर्ष तक मल्ल युद्ध में वह राक्षस पराजित न हो सका। परिणाम स्वरूप विष्णु ने माया का आश्रय लेकर एक गुफा की ओर भाग चले मुर ने उस गुफा को घेर लिया। उस गुफा से खड्गत्रिशूल धनुधारी एक देवी प्रगट हुई उसने अपने रूप की मोहनी डालकर सभी असुरों को वशीभूत कर लिया। उसकी माया से मुग्ध असुर परस्पर ही मारकाट मचाने लगे और क्षण में ही उन सबका विनाश हो गया। उस कन्या ने अपना वृत्तान्त विष्णु से कहा परिणाम स्वरूप विष्णु ने उसे एकादशी तिथि को व्रत योग्य एवं

एवं शोखदा रूप में स्मृत रखने का आदेश दिया।

त्रिपुरवध कथा :—

देवों की रक्षा प्रसंग में त्रिपुर शत्रु संग्राम की कथा उल्लिखित है। त्रिपुर दैत्य ने सोने, चाँदी एवं धातु के निर्मित तीन नगर बसाये थे। अनेक प्रकार के सब ऐश्वर्य, वैभव एवं भोग विलास की सामग्री से वह नगरी युक्त थी। किन्तु यज्ञ या धार्मिक अनुष्ठान पर पूर्ण प्रतिबन्ध था। त्रिपुर राक्षस सूर्य चन्द्र का मार्ग रोकने लगा। तीर्थों पर उत्पात मचाने लगा। यज्ञ विध्वंस करने लगा। देवताओं पर आयी इस विपत्ति से ब्रह्मा बहुत दुखी हुए और वे देवताओं के साथ शंकर के पास गये। देवताओं करुण पुकार से द्रवीभूत होकर शंकर ने त्रिपुर से भयंकर युद्ध किया और अपनी शक्ति से त्रिपुर का दाह कर दिया। इस प्रकार वह त्रिपुरारि कहलाये।

मधुकैटभ वध कथा :—

देव रक्षार्थ प्रसंग में मधुकैटभ वध की कथा लालदास ने वर्णित की है। महा प्रलयोपरान्त विष्णु शेष पर शयन करने लगे जिनकी नाभि से कमल उत्पन्न हुआ उससे चतुर्मुख ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। चतुर्दिक जल ही जल देखकर आश्चर्ययुक्त होते हुए वे कमल नाल की मूल की खोज में निकले किन्तु उसकी सीमा न जानने पर असफल होकर चुपचाप बैठ गये। तभी उन्हें तपस्या करने की आकाशवाणी हुई। जिस समय ब्रह्मा तपोलीन थे कि विष्णु के कान से मल उत्पन्न हुआ जिससे मधुकैटभ का जन्म हुआ। जो देखकर ब्रह्मा भयभीत हो गये और उन्होंने महामाया देवी से प्रार्थना की कि वह विष्णु को जगा दे। विष्णु के जागृत होने पर मधुकैटभ ब्रह्मा को मार

देने लगे परिणाम स्वरूप विष्णु कुपित हो गये दोनों का जल में युद्ध हुआ। पराजित राक्षसों ने विष्णु से प्रार्थना की कि उन्हें पानी में न मारें। अतः हरि ने अपनी जंघा पर उन्हें रखकर चक्र सुदर्शन से उनका शिरच्छेदन कर दिया। उनके शरीर के अंगों से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई इसी से विष्णु मधुसूदन एवं कैटभारि कहलाये।

जलंधर कथा :-

एक बार शंकर दिगम्बर वेष धारण किये तपलीन थे। तब पुरंदर उनके दर्शनार्थ पहुँचा। शंकर के मौन रहने पर वह अभिमानी अपने को अपमानित अनुभव कर रूद्र पर वज्र प्रहार किया। कुपित शंकर के तृतीय नेत्र से अग्नि का प्राकट्य हुआ भयभीत देवराज के भागने पर उस अग्नि ने उसका अनुगमन किया। प्राणरक्षार्थ सुरपति देव गुरू के समीप पहुँचे ब्राह्मण के बीच में आ जाने के कारण अग्नि लौट आयी। कुपित शिव ने उसे समुद्र में फेंक दिया वह ज्वाला बालक रूप में प्रकट हुई। उसे देखने ब्रह्मा गये। समुद्र के आग्रह पर ब्रह्मा ने उसे गोद ले लिया। बालक ब्रह्मा की दाढ़ी लेता है जिसे छुड़ाने के लिए उन्हें बहुत प्रयास करना पड़ा। उनके आँखों से जलधार बही जिसके कारण उसका नाम जालंधर पड़ा। बड़े होने पर कालनेमि की कन्या वृन्दा से उसका परिणय हुआ।

युद्ध विजय रतार्थ जालंधर की भेंट राहु से हुई। उसकी आकृति को देखकर जालंधर ने जिज्ञासा की। तभी उसे ज्ञात हुआ कि अमृत प्राप्ति के लिए संघर्षरत देव दैत्यों में क्रमशः अमृत और मदिरा दी जाने लगी। इसके रहस्य को जानकर राहु छद्मवेश में देवताओं के बीच बैठ गया। चन्द्रसूर्य के संकेत से प्रभु ने उसका शिरच्छेदन किया। इसी समय समुद्र से चौदह रत्न की बात सुनकर राहु उसे अपनी सम्पत्ति मानने लगा उसने विशाल सेना सज्जित कर वैकुण्ठ पर आक्रमण कर दिया। इसी सन्दर्भ में

देवर्षि नारद से उसकी भेंट होती है जो श्रेष्ठ रत्नों में पार्वती की ओर संकेत करते हैं। जालंधर राहु को बुलाकर दौत्य कर्म हेतु कैलाश भेजता है राहु पार्वती के अनिन्द्य सौन्दर्य को देख मुग्ध रह जाता है। उसके कुत्सित प्रस्ताव को सुनकर शंकर ने अपनी जटा से एक भीमकाय गण उत्पन्न किया। जिससे राहु भयभीत होकर भाग खड़ा हुआ। भूखा कीर्तिमुख शंकर के आदेश से अपना शरीर ही खाने लगा। उसके अभीष्ट गुण को देखकर शंकर ने उसे अपना द्वारपाल नियुक्त किया। इसी लिए शिवालयों में कीर्तिमुख की स्थापना की जाती है।

राहु की पलायन की घटना सुनकर जालंधर ने योगी शंकर को पकड़ने के लिए शुम्भ, निशुम्भ एवं कालनेमि को भेजा। शंकर की कोपाग्नि में भस्मीभूत सेनापतियों की सूचना सुनकर कुपित जालंधर स्वयं सेना लेकर वहाँ पहुँचा। शंकर के भूतप्रेतों के उत्पात से जालंधर की सेना तितर बितर हो गयी। उसने अपनी माया शक्ति से शंकर के सामने नृत्य वाद्य करती हुई सभा उपस्थित कर दी जिसे देख शंकर भी नाचने लगे। इस बीच जालंधर शंकर का वेष बनाकर पार्वती के पास पहुँच गया। पार्वती ने धोकर शंकर की अभ्यर्चना की। बाद में उसने इस रहस्य को जान लिया और शेष-शायी विष्णु से अपनी रक्षा की प्रार्थना की। विष्णु ने बतलाया कि वृन्दा सती पत्नी है। उसकी शक्ति के कारण जालंधर का अनिष्ट नहीं किया जा सकता। पार्वती को आश्वासन देकर विष्णु ने तपस्वी वेष धारण कर जालंधर की राजधानी के उपवन में अपना आसन जमाया। पति विरहिणी वृन्दा उस उपवन में भ्रमण कर रही थी। तभी प्रभु माया प्रेरित दो भयंकर दैत्य उसकी ओर दौड़ पड़े। भयभीत वृन्दा छद्मवेष धारी मुनि से आलिंगन बद्ध हो गयी। उसकी क्रोध भरी गर्जना से मायावी दैत्य अन्तर्धान हो गये। मुनि के इस अद्भुत महात्म्य से प्रभावित वृन्दा अपने पति विजय के सम्बन्ध में पूछती है। किम्वदन्ती यह थी कि जालंधर के प्राण दो वानरों में रहते जिनसे मुनि ने वृन्दा को

मृतक दिखा दिया। इसी क्रम में विष्णु ने जालंधर का रूप धारण कर वृन्दा के सतीत्व को भंग कर दिया। पति के मृत्यु की सूचना सुनकर विष्णु को भी नारी अपहरण का शाप दिया। वृन्दा के सती होने पर उस श्मशान भूमि पर वृन्दा तुलसी रूप में उदित हुई उसकी पत्तियों को सिर पर धारण करने पर विह्वल विष्णु को शान्ति प्राप्त हुई।

<u>रघुदान प्रसंग :—</u>

रघुवंश वर्णन के प्रसंग में लालदास ने रघु के दान महिमा का उल्लेख कि किया है। गुरू वरतन्तु के पास शिक्षार्थी कौत्स षडंग एवं चौदह विद्याओं का अध्ययन करता है। दक्षिणा रूप में गुरू पत्नी ने चौदह भार कनक की माँग की। कौत्स पृथ्वी भर के राजाओं के पास क्रमशः जाकर अपना मन्तव्य बतलाता है। क्रमशः और इतनी प्रभूत दक्षिणा देने के संकल्प के कारण विक्षिप्त मानते हैं। तब वह अयोध्या नरेश रघु के पास पहुँचा। उससे कुछ देर पूर्व ही राजा ने विश्वजित यज्ञ मे अपना सर्वस्व कोष अर्पित कर दिया था। कौत्स की अभ्यर्थना के पश्चात् राजा ने उससे आने का प्रयोजन पूछा। चौदह कोटि भार कनक की माँग सुनकर रघु हर्षित हुए। किन्तु मन्त्री को इस धन की चिन्ता लग गयी उसने रिक्त कोष की सूचना देने के साथ ही यह ज्ञापित किया कि इतना धन कुबेर के पास ही मिल सकेगा। रघु ने अपने बाण में इस आशय की माँग लिखकर कुबेर की नगरी में बाण चलाया। भयभीत होकर कुबेर अपेक्षित स्वर्ण भेज देता है रघु कौत्स को सम्पूर्ण सोना देना चाहते थे और अपरिग्रही कौत्स ने गुरू दक्षिणा के अतिरिक्त स्वर्ण का लेना नहीं स्वीकार किया।

<u>शृंगी ऋषि की कथा :—</u>

दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में शृंगी ऋषि प्रधान पुरोहित थे उनके माहात्म्य विज्ञापन हेतु लालदास ने उनकी कथाओं को विस्तृत रूप में वर्णित किया है। कथा इस प्रकार है —

अंग देश में चंपकवती सुंदर नगरी थी जिसमें एक बार बारह वर्ष तक वर्षा नहीं हुई। चिन्तित नरेश लोमपाद को किसी ने श्रृंगी ऋषि के आनयन का परामर्श दिया। लोमपाद ने रूपवती गणिकाओं को बुलवाकर ऋषि के लाने का भार सौंपा क्योंकि नारियाँ ही ऋषि तपस्वियों को वशीभूत करने में प्रवीण होती हैं। पूर्व काल में इन्द्र चन्द्र, नारद, महादेव, पराशर और ब्रह्मा भी उनकी मोहक बंकिम कटाक्ष से अप्रभावित नहीं रह सके। श्रृंगार करके वह सुन्दर स्त्रियाँ ऋषि की खोज में निकल पड़ीं। अज्ञात यौवन श्रृंगी ऋषि ने मुनिवेषधारी स्त्रियों को देख भ्रम में पड़ गये। उन्होंने उनकी विधिवत अभ्यर्थना की चतुरा गणिकायें मुनि पर कामबाण चलाने लगी पिता विभाण्ड के आने पर युवतियाँ भयभीत होकर भाग गयीं। पुत्र को भ्रमित स्तब्ध मुग्ध तथा चकित देख विभाण्ड कुछ शंकित हो गये। श्रृंगी ऋषि ने अद्भुत वेषधारी मुनियों के आगमन की बात कही पिता ने सम्पूर्ण रहस्य समझ लिया और पुत्र को उनके साथ कहीं आने जाने के लिए वर्जित कर दिया। किन्तु वह नारी ही क्या जिसके कामबाण से पुरुष आहत न हो। उन गणिकाओं ने छलहीन निष्कपट, सरल हृदय युवा ऋषि को नाना सुस्वादु भोजन तथा हाव भाव कटाक्ष आलिंगन, चुम्बन, स्पर्श से अपने वशीभूत कर लिया। एक चतुरा ने प्राकृतिक वृक्षों से युक्त नौका तैयार कर छल से श्रृंगी ऋषि को बैठा लिया। इस प्रकार वह उसे राजधानी तक ले आयीं। वृष्टि होने पर भाव विभोर राजा अपनी कन्या का विवाह ऋषि से सम्पन्न कर दिया। कुपित विभाण्ड शाप देने जब राजधानी पहुँचे तब पुत्र एवं पुत्रवधू को देख गद्गद हो गये।

बलि की कथा ?—

रूदन करते हुए राम को शान्त कराने के लिए राजा दशरथ ने वामन अवतार की कथा संक्षिप्त में इस प्रकार सुनाई। सतयुग में राजा बलि दैत्यराज बना।

इन्द्रासन लेने के लिए उसने सौ अश्व अश्वमेध यज्ञ किये। भयभीत इन्द्र नारायण के पास गया। विष्णु वामन रूप धारण कर बलि से कुटी बनाने हेतु साढ़े तीन पग धरती की भूमि की बलि के संकल्प युक्त होने पर उसकी रक्षा हेतु शुक्राचार्य सूक्ष्मरूप धारण कर जलपात्र के छिद्रों में प्रविष्ट हो गये। वामन विष्णु ने कुशा डालकर शुक्र की आँख फोड़ दी और इस प्रकार अपरिमित भूमि को नापने के लिए वामन ने अपने अंगों का विस्तार किया और तीन पगों से त्रिभुवन को प्राप्त कर लिये। आधे पग के लिए बलि को अपनी पीठ प्रस्तुत करनी पड़ी।

<u>भृगु की कथा</u> :—

दुर्वासा द्वारा राम को अवतारी कहने पर नारद ने उसका कारण पूछा। दुर्वासा ऋषि बताते हैं कि देवासुर संग्राम में देवताओं की विजय हुई और पराजित असुरों ने भृगु पत्नी की शरण ग्रहण की। विवश देवताओं ने विष्णु को सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। कुपित हरि ने चक्र सुदर्शन से भृगु पत्नी को मारकर असुरों का संहार किया। अपनी पत्नी की मृत्यु का दारूण समाचार सुनकर भृगु ने उन्हें शाप दिया कि वे वैकुण्ठ का परित्याग कर मनुष्य बनेंगे और युवावस्था में उन्हें पत्नी वियोग का असह्य दुख प्राप्त होगा।

<u>रक्तजा सीता की कथा</u> :—

सीता की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लालदास ने तीन कथाओं का उल्लेख किया है। प्रभुसत्तामद चूर्ण रावण ने अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए देव, नर, तपोरत ऋषि सभी से राजस्व ग्रहण करता है। भोजन भट्ट अकर्मण्य एवं मिथ्याडम्बर हेतु ब्रह्म ब्रह्म की बकवास करने वाले ब्राह्मणों को पकड़वाकर रावण ताड़ित करने लगे। जिससे सभी ब्राह्मण वनों का पलायन करने लगे। इस संकट से बचने के लिए

उन तपस्वियों ने शरीर से रक्त निकालकर एक घट में उसका संग्रह किया। रावण ने उस घट के विषय में पूछा जिसे ऋषियों ने उसे उसका काल बताया। भयभीत रावण उस घट को अन्यत्र फेंक देने की बात करता है। मन्दोदरी ने उस घट को खोलकर देखा जिसमें एक सुन्दरी कन्या थी। सपत्नी के डरसे मन्दोदरी ने उस कन्या को एक स्वर्ण मन्जूषा में बन्द कर समुद्र में प्रवाहित करवा दिया। वह मंजूषा तिरोहित प्रदेश में आकर भूमिस्थ हो गयी।

एक अन्य कथा का उल्लेख करते हुए लालदास कहते हैं कि एक समय शिव के गुरुकुल आश्रम में रावण एवं जनक एक साथ विद्यार्जन कर रहे थे। किसी वाद-विवाद में जनक ने रावण को अपमानित किया था। गुरु आश्रम मर्यादा के कारण रावण उस समय शान्त हो गया। किन्तु मन में उसने वैर बाँध लिया था। राजा बनने के बाद अभिमानवशात् ऋषियों से कर रूप में रक्त एक कमण्डल में एकत्रित कर जनकपुरी की भूमि में रखवा दिया था।

एक अन्य विवरण आनन्द विलास में उपलब्ध है जिसके अनुसार किसी वन में मन्द और उदर नामक तपस्वी तपोरत थे। आकाशवाणी द्वारा उन्हें अन्नाहार का आदेश मिला था। अतः भिक्षाटन हेतु वे नगर पहुँचे वहाँ उन्हें दूध प्राप्त हुआ। वे किसी वृक्ष के नीचे बैठकर खीर पका रहे थे कि बाज के पंजों में फँसा हुआ एक सर्प उस खीर पात्र में गिर पड़ा। जिसे एक मेढकी ने देख लिया। तपस्वियों के प्राणरक्षार्थ मेढकी दूध में कूद गयी परिश्रम व्यर्थ देख उन तपस्वियों ने उसे शाप दे दिया। उसने स्त्री का रूप धारण कर समस्त वृत्तान्त बताया अतः उसके इस उपकार भावना से प्रभावित होकर तपस्वियों ने उसे नित्य युवती रहने का वरदान दिया। वही आगे मन्दोदरी कहलायी। वह ऋषियों की सेवा शुश्रूषा करते-करते संयोगवश गर्भिणी हो गयी। तपस्वियों ने उसे कुलटा एवं व्यभिचारिणी मान चण्डालिनी होने का शाप दे दिया।

कैलाश जाते समय रावण ने उसके रूप लावण्य को देख उसे पत्नी बनाने का संकल्प लिया। और चण्डाल रूप में उपस्थित होकर उसे ले चला। उस मन्दोदरी ने मार्ग में ही एक कन्या को जन्म दिया। कन्या को देख मन्दोदरी ने उसे जनकपुरी की भूमि में दबा दिया।

शोभवती की कथा :—

इक्ष्वाकुवंश में सुदर्शन में शोभवती एक दम्पती थे। उन्होंने मृत्युंजयी बनने के लिए गृहस्थ धर्म का निष्ठापूर्वक पालन करने का संकल्प किया और कई वर्षों तक सविधि उस व्रत का निर्वाह किया। मृत्यु उनकी निष्ठा को देख परीक्षा हेतु तत्पर हो गयी। वह काल को लेकर शोभवती के पास गयी और उससे अंगदान की कामना की। अत्यधिक हठ करने [redacted] पर काल को लेकर रति शैय्या पर बैठ गयी कि इसी बीच उसका पति सुदर्शन पहुंच गया और उसने शोभवती के इस त्याग की सराहना की। परीक्षा में सफल देख मृत्यु के प्रभाव से वे दोनों सदेह स्वर्ग पहुंच कर अमर बन गये।

साहु की कथा :—

आतिथ्य धर्म माहात्म्य निरूपण प्रसंग में लालदास ने इस कथा का वर्णन किया है। एक साहु बहुत ही उदार था। उसकी उदारता से प्रभावित होकर प्रभु वृद्ध वेश धारण कर उसके पास गया और मनुष्य मांस के भोजन की याचना की। पति पत्नी ने अपना अपना मांस अर्पित करने का हठ किया। किन्तु याचक ने पुत्र के मांस की बात कही। माता पुत्र को लेकर बैठी और पिता उसका वध करे किन्तु शर्त यह है कि अश्रुपात नहीं होना चाहिए तभी वह मांस ग्रहण करेगा। उनके द्वारा पुत्र का वध कर प्रसन्न होकर चतुर्भुज रूपधारी भगवान प्रगट हो गये और उसके पुत्र को जीवित कर दिया।

राजा शिवि की कथा :—

आतिथ्य धर्म के सन्दर्भ में ही लालदास ने राजा शिवि की कथा का उल्लेख किया है। इन्द्र पद प्राप्त्यर्थ राजा शिवि ने शत यज्ञ का विधान किया। भयभीत इन्द्र गुरु बृहस्पति के पास गये एवं योजना अनुसार वे कपोत एवं सचान बनकर राजा के पास पहुँचे। भयभीत कपोत ने शिवि से शरण माँगी। उसी समय सचान ने प्रकट होकरउसे अपना भक्ष्य बताया। राजा शिवि ने जीव रक्षा एवं शरणागत के प्रति अपना संकल्प सुना दिया। निर्णय अनुसार कपोत के भार तुल्य राजा ने अपना मांस देना स्वीकार कर लिया और क्रमशः अपने अंग काट काट कर तुला में रखते गये। ब्रह्मा, विष्णु एवं रूद्र इस अभूतपूर्व दान को देखने के लिए आये और अन्त में हरि ने चतुर्भुज रूप में उसे दर्शन देकर उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की।

कथावस्तु की समीक्षा

अवधविलास की आधिकारिक कथा का कार्य रामलीला करना है। सामान्यतः यह सिद्धान्त स्वीकृत है कि ईश्वर को अवतार लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। क्योंकि उसके अंगुलि निर्देश या भृकुटि निक्षेप मात्र से ही कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। फिर भी भक्तों के प्रेम वश आग्रह के कारण वह एक देहीय बनकर सगुण साकार रूप में अवतरित होता है। यही मान्यता रामावतार रूप में स्वीकृत है। अतः राम भक्त कवि भूभार हरण एवं शाप के कारण परब्रह्म के रूप में अवतार लेकर अपनी अगाध लीलायें रचते हैं किन्तु कवि ने जन सामान्य में प्रचलित मर्यादावादी कथा का आश्रय लेकर इस ग्रन्थ की रचना की है। अतः इस कथा का फलागम रावणवध के पश्चात् अयोध्या में लीला करना है। यहाँ से संक्षिप्त रूप में आधिकारिक एवं प्रासंगिक कथाओं का उल्लेख

करना असमीचीन नहीं होगा क्योंकि इससे उसके सन्तुलन, घटना-व्यापार आदि की सम्यक् समीक्षा हो सकेगी।

(1) आधिकारिक कथा :-

मंगलाचरण, प्रस्तावना वन्दना के पश्चात् राम जन्म के अनेक कारणों की विस्तृत कथाओं का विन्यास किया गया है। पुत्राभाव से पीड़ित दशरथ का लोमपाद ऋषि से परामर्श, श्रृंगी ऋषि द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ, पायस विभाजन, गर्भ प्रकाश, राम-जन्म, नन्दी मुख श्राद्ध, जातकर्म, नामकरण, राम की बाल लीलायें, सीता जन्म, राम का व्रतबन्ध उनकी पौगण्डलीला, शिक्षा कार्य, नैपुण्य, राम का निर्वेद, तीर्थाटन, विश्वामित्र आगमन लक्ष्मण के साथ राम वन गमन ताड़का सुबाहु वध, मख-रक्षा जनकपुर प्रस्थान, अहल्योद्धार, पुष्पवाटिका में राम सीता का पूर्वराग, धनुर्भंग, परशुराम आगमन रामादि चारों भाइयों का लोकरीति के अनुसार विवाह, अयोध्या आगमन नारद आगमन एवं अवतार उद्देश्यों का स्मरण, वनगमन के कारणों की खोज में राम का उदास होना, कैकेयी को माध्यम बनाने के लिए तत्पर करना, राम राज्याभिषेक का निर्णय, सरस्वती प्रेरित मन्थरा की कूटनीति कैकेयी का वरयाचन शोकाकुल मातापिता एवं प्रजा को छोड़कर राम सीता एवं लक्ष्मण का अयोध्या परित्याग, नगरवासियों द्वारा उनका अनुसरण, सबको वहीं छोड़ राम का निषादराज से भेंटकर प्रयाग-प्रस्थान सुमन्त्र का प्रत्यावर्तन, राम का चित्रकूट निवास, भरतागमन, चित्रकूट में राम भरत-मिलन, दण्डकारण्य प्रवेश, कनक मृग मारीच वध, सीताहरण, सीता शोध, हनुमान भेंट, वानर प्रेषण, हनुमान का समुद्रोल्लंघन, वाटिका विध्वंस, लंकादहन, रामसेना का प्रस्थान एवं रावण वध की घटनायें उल्लिखित हैं।

(2) प्रासंगिक कथायें :–

आधिकारिक कथा का सम्बन्ध मुख्य पात्र से और प्रासंगिक कथा का संबंध अन्य पात्रों से होता है। कुछ प्रासंगिक घटनायें बड़ी और महत्वपूर्ण होती हैं। और कुछ कथायें न्यून महत्व की होती हैं। आधिकारिक कथा के कलेवर और सौष्ठव के विस्तार में ही इन प्रासंगिक कथाओं की उपयोगिता होती है जिनकी योजना कर लेखक कथा सौन्दर्य में वृद्धि करता रहता है। लालदास ने प्रस्तुत काव्य में अनेक प्रासंगिक घटनाओं का उल्लेख किया है । जैसे स्वायम्भू-मनु जन्म, अयोध्या उत्पत्ति, सरयू एवं गंगा की उत्पत्ति, सरयू का अवध आगमन, कश्यप अदिति तप, जय-विजय शाप, रावण जन्म, लाल जन्म पुत्र पुर, एवं त्रिपुर वध, मधु कैटभ वध, जालन्धर उत्पत्ति एवं उसका वध, रघुदान प्रसंग, ऋष्यशृंग प्रसंग, लिंगस्थापना, राजा बलि प्रसंग, भृगु द्वारा विष्णु को शाप, काकभुशुण्ड द्वारा राम के ईश्वरत्व की परीक्षा, रक्तजा सीता मन्दोदरी की उत्पत्ति, वेणु की कथा, अहल्या उद्धार, सुदर्शन एवं ओमवती, साधु का आतिथ्य प्रसंग, राजा शिवि की दान कथा। इसके साथ कवि ने कुछ ऐसी संक्षिप्त घटनाओं का वर्णन किया है जो परम्परया विश्रुत हैं। ऐसी घटनाओं का लेखक ने संक्षेप में निदर्शन कराया है जैसे प्रह्लाद, वाल्मीकि, च्यवन, मनु समुद्रमंथन, बलि, विन्ध्याचल की वृद्धि का अवरोध, अगस्त्य द्वारा समुद्र शोषण नहुष नृग ययाति, त्रिशंकु, अष्टावक्र, दधीचि, एवं सती प्रसंग, विराधवध, दुर्वासा द्वारा इन्द्र का शाप, वशिष्ठ और विश्वामित्र का वैर, भानुप्रताप की कथा गजेन्द्र उद्धार, अम्बरीष इत्यादि।

कवि ने प्रासंगिक कथाओं को पताका और प्रकरी कथाओं के रूप में उल्लिखित किया है। लालदास ने धार्मिक नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक सन्दर्भों के साथ सत्संगति नाम माहात्म्य व्रत कर्म, भक्ति प्रसंग और धर्म की व्याख्या के लिए शताधिक पौराणिक पात्रों का मात्र उल्लेख ही किया है क्योंकि लोक में यह कथायें विश्रुत हैं। जैसे

सनक सनातन, नारद, व्यास, शुकदेव गौतम, भृगु, ध्रुव, प्रह्लाद, अम्बरीष चित्रकेतु भर्तृहरि, परीक्षित, पिंगला वेश्या, सुजानन्द, [illegible], दत्तात्रेय रहूगण, बालखिल्य इत्यादि।

प्रस्तावना :-

कवि ने अपना ग्रन्थारम्भ करने के लिए लम्बी चौड़ी प्रस्तावना प्रस्तुत की है जिसके तीन मुख्य भाग बनाये जा सकते हैं। ग्रन्थारम्भ के रूप में कथा का उद्देश्य काव्य समीक्षा हेतु स्वकीय मान्यताओं की स्थापना एवं मंगलाचरण के रूप में वन्दना तथा विनय का प्रदर्शन।

कवि का उद्देश्य सीता राम की अगाध, माधुर्यपूर्ण एकान्तिक लीलाओं का गायन है जिस प्रकार गोपिका अनुरक्त कृष्ण ब्रज में सदैव विलास करते रहते हैं उसी प्रकार अयोध्या में सीता राम की माधुर्यपरक लीलायें चलती रहती हैं।

कृष्ण यथा ब्रज मांहि सदा, करत विहार प्रकास।

तैसे सीता राम को नित ही अवध विलास।"(पृष्ठ 1)

इस गुप्त कथा को कवि ने अपने अनुभव ज्ञान से विकसित किया है।

'वेद उक्त अनुभव युक्त ज्ञान रतन की खानि।

लाल गुप्त यह प्रकट किय अवध विलास बखान।'(वही: पृ.1)

यह अवधविलास स्वच्छ दर्पण के समान है जिसमें राम की कथा प्रतिबिम्बित हो रही है। इस अवधविलास रूपी समुद्र में साधु तट एवं रत्न राम कथा है। धन विद्या, अपार ज्ञान प्रदान करने वाली इस कथा से मनोवांछित फल प्राप्त किया जा सकता है। यह तो भक्तों के लिए आधार ग्रन्थ, रसिकों के लिए रस रूप तथा ज्ञानियों के लिए ज्ञान का अक्षयकोष है।

भक्तन कौं है भक्ति यह रसिकन कौ रस रूप

ज्ञानि को है ज्ञानमय, अवध विलास अनूप।'

इसके पाठ करने से पाठक के हृदय में सीताराम निश्चय ही विहार करते हैं। सीताराम के विहार की मूल कथा अत्यन्त लघु घटना व्यापार आरोह, अवरोह विहीन प्रतीत होती इसीलिए लालदास ने इस कथा के साथ मर्यादा वाली कथा का आश्रय लिया है। तात्पर्य यह है कि मर्यादावादी मूलकथा के साथ ही अन्तःसलिला गुप्त गोदावरी के समान रसिकोपासना के अनुरूप माधुर्य पर विद्यमान है। अवधविलास की मूल कथा रामवनगमन एवं चित्रकूट निवास पर ही समाप्त हो जाती है क्योंकि रसिक सम्प्रदाय में यह मान्यता प्रचलित है कि राम सीता चित्रकूट से आगे गये ही नहीं। वहीं उनकी विहार लीलायें चलती रही हैं।

'सदा राम सीता बसत रहत हैं अवधहिं माँह।
लाल लखि वन बसि मोह आये गये कहुँ नाह।'
मनोवांछित सीतारवन लखि दशरथ नृप बाल।
ये माया के ख्याल हैं राम है लाल निराल।।

इसीलिए कवि ने अपने काव्य कौशल से भविष्यवाणी तथा अन्य शैलियों से रामकथा को पूर्ण करने का प्रयास किया है जिसके लिए कवि ने हेतु कथाओं का आश्रय लेकर एवं मात्र कुछ घटनाओं का उल्लेख किया है।

प्रस्तावना का दूसरा भाग है, कवि का काव्य सम्बन्धी अपनी मान्यताओं [redacted] का निरूपण करना। बात यह है कि कवि मनोरंजनार्थ कथा नहीं लिखना चाहता है। अपने समाज के प्रत्येक वर्ग – कवि पंडित, गायक, यति, भक्त रसिकोपासक, नृप, दास, वीर, बन्धु, दैवज्ञ आदि के लिए नव रसयुक्त इस कथा को मनोहर छन्दों में लिखा है –

अद्भुत अवधविलास यह कहत जथा मति लाल।

जानहिं सीताराम की सुंदर कथा रसाल।

कवि पंडित गायन जती भक्त रसिक नृप दास।

बीर बद्ध जोतिष विराट सबै पढ़ैं अवधविलास।

कहत सुनत सब कहँ सुखद है नव रस को कन्द।

लाल अवध लीला रची ललित मनोहर छन्द।(पृ01)

इस अद्भुत कथा की समीक्षा के लिए कवि ने काव्यशास्त्रीय मान्यताओं का उल्लेख कर अनुत्तम रस से कसौटी प्रस्तुत कर दी है। शास्त्रीय मान्यताओं के ज्ञान के साथ ही साथ राम रति अवध विलास के अध्ययन मनन में अत्यन्त सहायक है —

राग रंग रति राम सों नव रस ज्ञान प्रकास।

जस प्रभुता जग चाह चहै तौ पढ़ु अवधविलास।।

× × × ×

वचन रचन मुक्ता रतन कुंदन कल इतिहास।

लाल हेम कुंदन रचेउ भूषन अवधविलास।

अभूषन है भक्त को राम नाम गुन हीर।

लाल अलंकृत देखि कै रीझतु है रघुबीर।(पृ01-2)

लालदास ने सबसे प्रथम भाषा की सम्प्रेषणीयता पर प्रकाश डाला है।

सुबुध प्रगट लौकिक बचन सुनि समुझै सब कोइ।

कठिन शब्द नाहिं संस्कृत भाषा कहिये सोइ।(पृ02)

पाण्डित्य प्रदर्शन से दूर लाल कवि ने सरल भावाभिव्यक्ति को ही प्रामुख्य दिया है।

गूढ़ाई भली न प्रयास ही बानी लाल विचारि।

जिमि कुच प्रगट न गुपत ही राखति नागरि नारि।

जानि बूझ नाहिन धरत कठिन अर्थ के ठौर।

राम नाम ज्यों भगत नाहिं प्रगट चलै सब ठौर।(पृ03)

अपने मन्तव्य की पुष्टि हेतु लालदास ने कुछ उदाहरण दिये हैं —

गुरु काव्य जयदेव कवि तुलसी सूर बखान।
केशव विद्यापति विकट लाल सरल मन मान।(पृ०3)

प्रस्तावना का तीसरा भाग वन्दना से प्रारम्भ होता है, जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश गणेश, लक्ष्मी सरस्वती, हरि पार्षद, ऋषि, मुनि, संत आदि की चरण वन्दना दशावतार, नवधा भक्ति, ज्ञान, धर्म, दर्शन सत्संगति नीति, सदाचार के तत्वों का विवेचन है जिसके लिए लालदास ने यत्र तत्र संक्षिप्त पौराणिक कथाओं का आश्रय लिया है। बीच-बीच में विनय प्रदर्शन कवि ने किया है।

यह ग्रंथ सं० 1732 में वैशाख शुक्ल में अयोध्या में निवास के समय लिखा गया है—

संवत सत्रह सय बत्तिस सुदि बैसाख सुकाल।
लाल अवधि माधि रचि रच्यौ अवध विलास रसाल। पृ० 3)

प्रथम अध्याय का समापन लालदास ने इस प्रकार किया है —

कश्यप औ अदिति रूप दसरथ वसुदेव राइ।
भक्तिहित है प्रभु लाल के पुत्र भये हरि आइ।(पृ० 14)

'इति श्री अवध विलासे बुद्धिप्रकाशे सबगुन रासे भक्त हुलासे पाप विनासे कृत लाल दासे ग्रंथारंभे प्रथम विश्राम।'(पृ०14)

इस प्रकार लालदास ने राम की माधुर्य एवं ऐश्वर्यपरक लीलाओं के गायन हेतु रचित अवध विलास के प्रथम अध्याय में मंगलाचरण, ग्रन्थ का नामकरण उसके पठन का माहात्म्य फलश्रुति काव्य समीक्षा हेतु रस, छन्द, अलंकार, ध्वनि, गुण दोष सम्बन्धी अपने दृष्टिकोण का प्रकाशन सरल काव्य का वैशिष्ट्य पूर्ववर्ती कवियों की काव्य शैलियों की समीक्षा एवं उनके प्रभाव की सूचना रामावतार भावना की रूप रेखा नवधा भक्ति विवेचन नीति, सत्संगति सदाचार, धार्मिक आचरण, ऋषि मुनि देव, भक्त एवं दुष्टों की वंदना कवि का विनय प्रदर्शन ग्रन्थ रचनाकाल एवं कुछ पौराणिक मिथकपूर्ण घटनाओं का उल्लेख है।

सर्गानुक्रम एवं कथा का आनुपातिक विवेचन :-

सफल प्रबन्धकार की दृष्टि से प्रबन्धकार की यह अभीप्सित होती है कि गृहीत कथावस्तु का विवेचन समानुपातिक रूप में करे। इससे एक ओर कथा में क्रमबद्धता रहती है तो दूसरी ओर घटना व्यापार सुनियोजित, सुव्यवस्थित एवं प्रवाह युक्त रहता है। देखा यह जाता है कि कवि मूल कथा का प्रारम्भ बड़े विशाल व्यापक फलक पर करता है किन्तु मध्य या अन्त भाग में एकतानता नहीं रख पाता है, जिसके कारण कथा में अन्वय दोष उत्पन्न हो जाता है। बात यह है कि विवेच्यकथा के किसी घटना व्यापार में उसका इतना मन रम जाता है कि उसके प्रवाह में अन्य महत्वपूर्ण भाव या व्यापार छूट जाते हैं। कभी-कभी पाण्डित्य या बहुज्ञता प्रदर्शन के लोभ में वस्तुओं का ऐसा चमत्कारिक या विस्तृत वर्णन करता है कि समानुपातिक कथा का ध्यान उसे रहता नहीं अतः शेष कथा को समाप्त करने के लिए वह घटना-व्यापार हीन रूप में वर्णनात्मक ढंग से अपना काम चलाता है। कवि अपनी कथा को खण्डों, अध्यायों, काण्डों या विश्रामों में इसीलिए विभक्त करता है जिससे कथा में एकरसता बनी रहे।

अवधविलास में 20 विश्राम(अध्याय) हैं जिनकी   में प्रस्तुत कथा को देखकर एक नयी बात सामने आती है अतः उसकी सूची देना अनुचित न होगा -

विश्राम -

(1) ग्रन्थारम्भ

2- सरयू उत्पत्ति वर्णन

3- रावण जन्म

4- पृथ्वी के दारुण कथन

5- रघुवंश कीर्ति

6- दशरथ प्रयाग प्रवेश लोमपाद समागम

7- शृंगी ऋषि लोमपाद दर्शन

8- शृंगी ऋषि का अवध आगमन

9- गर्भ प्रकाश

10- राम जन्म उत्सव

11- राम बाल लीला

12- सीता जन्म

13 सीताबाललीला

14- ईश्वर ऐश्वर्य वर्णन

15- अष्टांगयोग साधन

16- ब्रह्म संवाद

17- धनुष विभंजन

18- राम विवाह

19- राम बनगमन

20- राम विजय

तात्पर्य यह है कि ग्रन्थारम्भ के बाद आठ विश्राम तक राम जन्म से सम्बन्धित हेतु कथाएँ हैं जिसमें अयोध्या एवं सरयू उत्पत्ति रावण जन्म, तप, वर व अत्याचार पीड़ित पृथ्वी की याचना विष्णु का आश्वासन, रघुवंश कीर्ति, पुत्र जन्म के लिए दशरथ के प्रयत्न एवं गर्भ प्रकाश उल्लिखित है। राम जन्म एवं बाललीला तथा सीता जन्म एवं उनकी बाल लीला के लिए दो दो विश्राम विश्वामित्र की याचना मखरक्षा, पुष्पवाटिका प्रसंग, धनुर्भंग के लिए एक विश्राम विवाह साज-सज्जा, लोक रीत्यनुसार विवाह के लिए एक विश्राम, वनगमन के कारणों की खोज, राम बनगमन प्रजा दुख वर्णन एक विश्राम में तथा चित्रकूट के बाद रावण वध तक की घटना एक विश्राम में ही वर्णित है। इस प्रकार लालदास ने मुख्य रामकथा की अपेक्षा हेतु या प्रासंगिक कथाओं के लिए अधिक स्थान दिया है। इस विवेचन से एक बात यह भी

स्पष्ट होती है कि कुछ घटनाओं के लिए कवि ने विस्तारवादी नीति अपनाकर व्यास शैली का प्रयोग किया है। ये घटनाएं मुख्य रामकथा से सीधा सम्बन्ध कम रखती है — जैसे सरयू उत्पत्ति के अन्तर्गत अयोध्या उत्पत्ति, स्वर्ग में गंगा उत्पत्ति सरयू आनयन के लिए वशिष्ठ के प्रयास पृथ्वी द्वारा हरिगुण कथन एवं विष्णु द्वारा किये गये अवतरण के समय मधु-कैटभ हिरण्याक्ष, मुर वध- त्रिपुरवध, जलंधर वध, एवं शृंगी ऋषि आनयन के समय उनका पूर्व वृत्तान्त तथा रामविवाह के बाद भरत की धार्मिक प्रवृत्ति - दिग्दर्शन हेतु शिवि साधु एवं ओषधवती के प्रसंग अति विस्तृत रूप में वर्णित हैं। इसी प्रकार रामकथा से सम्बन्धित घटनाओं में कवि- प्रकाश तथा राम द्वारा तीर्थाटन की घटना के लिए एक एक विश्राम प्रयुक्त हैं। जिसका व्यापार घटनाहीन है। इसी प्रकार लाल दास ने रामकथा के विस्तृत घटना व्यापार को संक्षिप्त रूप में एक ही विश्राम से अपना काम चलाया है। तरहवां विश्राम धनुष विभंजन से सम्बन्धित है जिसमें विश्वामित्र की याचना से लेकर परशुराम प्रसंग वर्णित है। राम वनगमन से संबंधित उन्नीसवें अध्याय में अनेक प्रासंगिक कथाओं के के साथ नारदागमन, वनगमन के कारणों की खोज, राम वनगमन, चित्रकूटनिवास प्रजा का शोक वर्णित है। कहना नहीं होगा कि कवि कथा के समानुपातिक विवेचन में सफल नहीं हो सका है।

कथाप्रवाह :—

प्रबन्धकार घटना व्यापार से युक्त कथा का चयन करता है। ऐसी कथा में गतिशीलता या प्रवाहमयता होती है और वह पाठकों को आह्लादित या आकृष्ट करने में पूर्ण समर्थ होती है। कवि मुख्य कथा के साथ ही साथ आनुषंगिक या अन्यान्य कथाओं का भी वर्णन करता है जिससे पाठकों का मन रमा रहता है। कथा के मध्य कवि अपनी रुचि परिस्थिति आवश्यकता एवं ज्ञान प्रदर्शन हेतु ऐसी वस्तुओं का वर्णन करता चलता है कि पाठक कथा आस्वाद के साथ ही ज्ञान प्राप्त करता

के लिए ही पंचकार्य अवस्थाएँ, प्रकृतियों एवं सन्धियों की विनियोजना की है।

इस दृष्टि से अवध विलास की समीक्षा करने पर यह सहज ही ज्ञात हो जाता है कि इसकी कथावस्तु में सहजता है, सरलता है और गत्यात्मकता भी है। कथा प्रवाह आद्यन्त बना रहता है। कवि ने राम जन्म से पूर्व अयोध्या — उत्पत्ति से लेकर रावण वध तक की घटना का चयन किया है, जिसे प्रवाहमयता के कारण ही 20 विश्रामों में फैलाया है। यद्यपि साम्प्रदायिक आग्रह के कारण लालदास राम की ऐश्वर्यपरक कथा लिखना चाहते थे, जिसमें घटनाओं का अभाव होता है, इसीलिए कथा की एकतानता को दूर कर प्रवाहमयता लाने के लिए ही मर्यादा-वादी कथा को स्वीकार किया जिसमें वे पूर्ण सफल हुए हैं। कहीं-कहीं बहुज्ञता व पाण्डित्य प्रदर्शन हेतु वर्णन बाहुल्य है जिसमें कथा अवरुद्ध सी हो जाती है और पाठक कवि के वाग्जाल में फँस कर रह जाता है। ऐसे स्थानों में कथासूत्र संक्षिप्त है या विरल जैसे कर्म प्रकाश, ईश्वर ऐश्वर्य वर्णन, अष्टांग योग वर्णन तथा लोमश शबरी संवाद योजना से संबंधित अध्याय।

<u>कवि की मौलिकता</u> :—

रससिद्ध कवि ही अपनी रचना की प्रौढ़ता एवं सामग्री से कालजयी बनते हैं। वह अपनी नव नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से ऐसी नूतन अदृष्ट अकल्पनीय कथा का सृजन करता है जो पाठकों के लिए आकर्षक एवं कुतूहलवर्द्धक होती है। वह विस्तृत कथा में नवीन मौलिक उद्भावनाओं या घटना व्यापार की कल्पना कर उसे रस-पेशल रूप में उपस्थित करता है या पिष्टपेषित विषय को ही ऐसे चमत्कारिक ढंग से अभिव्यक्त करता है कि पाठक आश्चर्यचकित रह जाता है।

रामकथा का मूलरूप वाल्मीकि रामायण में सुरक्षित है जिसका विस्तार संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश एवं हिन्दी के राम काव्यों में है। इन कवियों ने राम के अनेक

रूपों को सजाया एवं सवारा है। उनके जीवन की छोटी छोटी घटनाओं को भी अनुद्घाटित नहीं रहने दिया। परिणामतः लालदास के युग तक रामकथा में परिवर्तन या परिवर्धन प्रशंसनीय नहीं माना जाने लगा। समर्थ कवि ही अन्य रूप में प्राप्त विशाल राम साहित्य में मौलिक घटनाओं का समावेश कर राम कथा को नया आयाम देने में सक्षम हो सकता है। कहना नहीं होगा कि लालदास ने अपनी संक्षिप्त एवं विस्तार-वादी शैली अपनाकर राम कथा के कुछ अंशों को संक्षिप्त एवं कुछ अंशों को विस्तृतरूप तथा कुछ अंशों को नवीन रूप में अभिव्यक्त कर अपनी मौलिकता की छाप लगायी है।

<u>पुत्रेष्टि यज्ञ एवं पायस विभाजन</u> :-

हरिवंश विष्णु वायु गरूड एवं अग्नि पुराण में न तो यज्ञ का ही वर्णन है न पायस विभाजन का। वाल्मीकि रामायण में पुत्र प्राप्त्यर्थ अश्वमेध यज्ञ तथा बाद में पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पन्न होता है लालदास इस यज्ञ का विस्तृत वर्णन किया है। सरयू-तट पर यज्ञ कलश स्थापित कर ऋषि मुनियों की उपस्थिति में वेद वर्णित ढंग से हुआ—

सागर छीर जल आरंभा। गाडि गाड जग्य के खंभा।

कौसल्या कैकेयी सयानी। बैठे गांठि जोरि नृपरानी।[1]

इस यज्ञ में ब्रह्मा, विष्णु रूद्र, इन्द्र, कुबेर, चन्द्रमा, सूर्य अग्नि विद्याधर गंधर्व लोकपाल वरूण कोरा यथास्थान आकर बैठे।

अग्निदेव से प्राप्त पायस विभाजन में पर्याप्त मतभेद है। रघुवंश(10/54-56) पद्मपुराण (उत्तर 242/61) में उस हवि के समान चार भाग किये जाते हैं कौसल्या तथा कैकेयी को एक एक भाग एवं सुमित्रा को दो भाग मिलते हैं। मानस का विभाजन अवतारवाद की मर्यादा को ध्यान में रखकर किया गया है। लालदास ने पायस विभाजन के दो आधार प्रस्तुत किये हैं। यज्ञ पुरूष से खीर का

पास शृंग ने लेकर दो भाग कर दिये —

मुनि रिषि उठि आदर करि लीये। उभयभाग करि राजहिं दीये।[1]

राजा दशरथ ने उक्त दोनों भागों में से एक एक भाग कौशल्या तथा कैकेयी को दे दिया —

पुनि दोउ भाग दोउन्ह कहँ दीये। कौसल्या कैकेई लीये।[2]

इसी समय सुमित्रा यह कहती हुई आयी कि मुझे भी इसका भाग चाहिए। क्योंकि पुत्र जन्म ब्याह, भोजन, उत्सव, पर्व, बीज बपन करते समय आगत को दान देना चाहिए। नीति वाक्यों को सुनकर दोनों रानियों ने उसे सप्रेम अपने अपने अंश का अर्ध भाग दिया —

ताही समय सुमित्रा रानी। ठाढ़ी भई कहि बानी।

हमहूँ को कछु आहि सहेली। सावधान सिनि बाहु अकेली।

दशरथ प्रयाग गमन :—

पुत्रेष्टि यज्ञ के पूर्व लालदास ने दशरथ प्रयाग गमन की कथा एक अध्याय में लिखी है। हजार वर्ष व्यतीत होने पर दशरथ को पुत्र की चिन्ता होने लगी। मंत्री सुमंत्र ने उनसे बताया कि सनकादि ऋषि से उन्होंने पुत्रेष्टि यज्ञ की बात सुनी है। अतः राजा को गुरु वशिष्ठ के पास जाकर उनसे परामर्श करना चाहिए।

बरस हजार गये जब तबहीं। चिंता बहुत करी नृप तबहीं।

मंत्री महा सुमंत्र सनेही। राजा दुखित देखि कहि एही।

एक बेर सनकादिक चारो। तिन्ह सों बात सुनी उपकारी।

पुत्र इष्ट जज्ञ जन्य कहावे। ताहि करे सो सुतहि पावे।

सुत इहइ बात गुरु कहँ कहि लीजे। पुनि कछु कहैं सोई सब कीजै।[3]

1- अवधविलास, पृ० 138   2- वही, पृ० 143,   3- वही, पृ० 97

दशरथ सपत्नीक रथारूढ़ होकर गंगातट स्थित वशिष्ठ आश्रम गये। कुशलोपरान्त दशरथ ने पुत्र महात्म्य गान करते हुए कहा कि पुत्र के बिना द्रव्य भूमि राजसुख भोग व्यर्थ होते हैं। मंत्र हीन यज्ञ, वेदहीन विप्र, वेदविहीन सिद्धि ज्ञान बिना कीर्ति, चन्द्र रहित रात्रि व्यर्थ होते हैं इसी प्रकार पुत्रविहीन व्यक्ति व्यर्थ है। वशिष्ठ ने उन्हें प्रयाग जाकर लोमपाद के जामाता विभाण्ड मुनि के पुत्र शृंगी ऋषि से यज्ञ सम्पन्न कराने का परामर्श दिया क्योंकि वे इस समय एकव्रत पूर्ण कर रहे हैं।

हमहूँ कछुक नेम है धारा। पूरन होइ नेम विस्तारा।[1]

इस यज्ञ से उन्हें चार पुत्र प्राप्त होंगे —

ताको जग्य कराउ बुलाई। पैहौ चारि पुत्र सुखदाई।[2]

सुमंत्र को राज्य सौंपकर रानी कौशल्या सहित दशरथ प्रयाग जाकर अपने मित्र लोमपाद से भेंट करते हैं। रोमपाद ने अनेक प्रकार से दशरथ का सम्मान किया। शृंगी ऋषि के आगमन की कथा के साथ ही हास्य विनोद संगीत, रस एवं नायिका भेद का भी वर्णन किया गया है और अंत में कौशल्या के स्मरण कराने पर दशरथ ने अपना प्रयोजन बताया। इस प्रकार शृंगी ऋषि के साथ वे अयोध्या लौट आये। इस प्रसंग में दशरथ द्वारा वशिष्ठ की भेंट, वशिष्ठ द्वारा यज्ञ करवाने की असमर्थता, चार पुत्रों की प्राप्ति का उल्लेख दशरथ का प्रयाग गमन वहाँ उनका काल यापन इत्यादि मौलिक घटनाएँ हैं।

1- अवधविलास, पृ० 100

2- वही, पृ० 100

आवहु लेहु बहुत कछु आही। जे तुम कही बात अस चाही।

आधेइ आध दोउन्ह दीये ताहू। इह लेहु जग्य भाग है बाहू।

वै दोउ भाग सुमित्रा पावा। ताते दोइ पुत्र तिन्ह पावा।

जानहु उहै अइसी रीती। दोउ भाइन्ह बीच निबही प्रीती।[1]

द्वितीयमत के अनुसार अर्धभाग कौशल्या को शेष और के तीन भाग कर एक अंश कैकेयी तथा दो अंश सुमित्रा को प्राप्त हुए ,–

कौसल्या लीये अध सभागा। आधे के भये तीन विभागा।[2]

<u>गर्भ प्रकाश</u> :–

रज वीर्य के मिलन के बिना ही हरि शुद्धब्रह्म होकर गर्भ में आये। जिसके कारण रानियों में अलौकिक शक्ति आ गयी –

चमकत गर्भ अर्भ अभासा। जनु दीपक फानूस प्रकाशा।

जिन्ह के तन हरि आइ समाये। और अनेक शक्ति तिन्ह पाये।[3]

सब रानियाँ मिलकर चौपड़ खेलती जिनमें कौशल्या सदैव जीतती थी।

चौपरि सार करैं कछु लीला। जीतत रानी सदा कौशीला।[4]

दिन प्रतिदिन उनकी सुन्दरता बढ़ती जाती थी। रानियों को देखकर पुत्र प्राप्ति के उत्साह से युक्त दशरथ परमानन्द में मग्न रहते थे।

सुंदरता तन की मनभाई। होत चली दिन दिन अधिकाई।

नृप दशरथ देखत इन पाहीं। मायाकृत कछु व्यापत नाहीं।

परमानन्द मगन मन रहई। होइ पुत्र मुख देखेउ चहई।[5]

1- अवधविलास, पृ० 143   2- वही, पृ० 143   3- वही, पृ० 144
4- वही, पृ० 145   5- वही, पृ० 145

इसी प्रसंग में लालदास ने गर्भ-विकास, स्वर्ग, नर्क, गर्भवास के समय जीव को मिलने वाले कष्टों का विस्तृत वर्णन किया है।

<u>राम जन्म उत्सव</u> :-

अयोध्या के घर-घर नर-नारियों में यह बात फैल गयी कि कौसल्या रानी गर्भवती हैं। वशिष्ठ, शृंगी ऋषि आकर पुत्र प्राप्ति की भविष्यवाणी करते हैं कि यज्ञोपरान्त गर्भधारण हुआ है। पृथ्वी निशंक हो गयी। इस प्रकार राम का जन्म हुआ जिनकी लग्नपत्रिका एवं फलादेश का वर्णन कवि ने किया है।

जन्मपत्र लिखि राख कराई। पुछिहैं नृप तब कहब सुनाई।

मास चैत्र फल सुनहु जु पावै। निठुर सबहि बिदेस प्रभावै।

तिथि नौमी सतितलम लेखा। कोविद काम कला प्रिय देखा।

बार बुध दाता गुन ग्राही। न्याय अधीर प्रसिद्ध बिद्याही।

नखत पुनर्वसु रावहि पावै। साधु अनंद लेन सुधि आवै।

पुरुष दसवें प्रिय दुख होई। अपुहि एक बाह नहिं कोई।

बढ़ करहि दुख परे आही। हृदय डरपा लागे पुनि ताही।

बन पर्वत होइ भ्रमै निरमही। दाह पंथ फलहि सनमाही।

मंगल सतयें प्रिया बिछोहा। व्यापै बिरह परे दुख मोहा।

बुध दसयें जु प्रताप भवंता। कीर्तिवंत राज्य धनवंता।

बौध बृहस्पति जो होइ जाता। महा प्रताप असुर भयदाता।

तपस्वी होइ तजे गृह बासा। जती मित्र होइ फिरै बनवासा।

नवमें शुक्र धर्मरत करना। धर्म आत्मा शुभ आचरना।

शनि चौथे जड़ मुग्ध दुखी जन। जोगी जती अति कष्टतन।

राहु बारहें विग्रह कारी। कठिन काज करै तजि गृहनारी।

फिरै प्रदेस होइ विग्रह विजई। पूरन बेर मनोरथ सबई।

छठयें केतु सत्रु सब हंता। पसु सों बहुत सनेह मिलंता।[1]

राम जन्म के होते ही किन्नर, गन्धर्व, सिद्ध, चारण, गीत गाने लगे। अप्सरायें नर्तन करने लगीं। दशरथ ने लोक वेदरीति से जातकर्म एवं नान्दीमुख श्राद्ध कर दान किया। राम की छठी का भी वर्णन कवि ने किया है। रानियों सहित वशिष्ठ का सम्मान किया। चारों बालकों का नामकरण संस्कार सम्पन्न हुआ। इसी समय दशरथ को राम के विराट् रूप का दर्शन हुआ। यह कवि की अपनी कल्पना है।

माताएँ बालकों के अंगों में तेल मर्दन करतीं, काजल लगातीं, वस्त्रा-भूषण से सज्जित करती हुई आनन्द का अनुभव करती हैं—

कराइ रानी तेल बुकवा अंग अंग सुधारहीं।

बैठ कोमल केस सिर के ललित आप उगुरहीं।

नैन अंजन करहि रंजन अंग मंजन नागरी।

कबहु फूल ही कबहु पटुका, कबहुँ पोषित पाग री।'[2]

1- अवधविलास, पृ0 15।

2- वही, पृ0162

रोते राम को चुप कराने के लिए दशरथ कहानी सुनाते थे —

राजा कहन कहनियाँ लागे। चुप होइ रहे सुनत अनुरागे।[1]

राम के प्रारम्भिक कृत्यों का वर्णन वाल्मीकि (1/18/31) अध्यात्म रामायण (1/3/62-63) तथा रामचरित मानस (1/205/1-2) में प्रस्तुत हुआ है। जिसमें मृगया का वर्णन है। आनन्द रामायण (1/2) पद्मपुराण (पातालखण्ड) कवितावली (1/1-7) गीतावली (1/7) आदि काव्यों में कृष्ण बाललीलानुकरण पर राम की बाललीला वर्णित है। इस सम्बन्ध में लालदास ने अपनी प्रतिभा का विशेष उपयोग किया है। उन्होंने राम की बाल पौगण्ड किशोर एवं युवावस्था के कार्यों का विस्तृत वर्णन किया है। बालकों के कार्यों में घाट-बाट घूमना हरिण आदि पशुओं का पीछा करना, शुक-मैना, शिकारी बाज का प्रशिक्षण अश्वारोहण इत्यादि कार्य प्रमुख हैं।

घाट बाट चहुँहट कहुँ डोलैं। मैना कोकिल मोर से बोलैं।

मृग छौना छगरा सिसु स्वाना। खेलत फिरत ब्याल करि नाना।

सुक सारो तूती सब साथा। सखा संग ठाढ़े लीये हाथा।

शिकराबाज कुही मन भाये। फिरत देखावत पंछि सुहाये।

छुटे छुटे घोड़ बाल सुखकारी। दौरावत सोहत असवारी।[2]

छोटे-छोटे हाथोंमें धनुष कटार, ढाल लेकर शस्त्राभ्यास करते हैं। रंग बिरंगी चकरी, भँवरा, लट्टू, गोली, गिल्ली-डण्डा, गेंद, चौगाना पतंगबाजी भी उनके कार्यों में सम्मिलित है —

चकरी जरित जराव छबीली। खेलत लालनकै ही हाथ रंगीली।

भँवरा लट्टू घुमाई नचावत। कबहुँक गोली खेल मचावत।

1- अवधविलास, पृ० 165

गली अंगन गेह चौगना। बाल संग लीये बिहरहिं खिलौना।

× × ×

रंग अनेक बंग बनाई। स्याम पीत अरविन्द छवि छाई।[1]

माताओं ने उनके सखा मित्रों को बाहर भेज दिया और पुत्रों से खाने के लिए आग्रह करने लगीं। पुत्र कुपित होकर करमाला तोड़कर दाँतों से वस्त्र फाड़कर अपना आक्रोश या खिद व्यक्त करते हैं —

मारे मात कबहुं रिसियाहीं। तोरे मल हार खिसाहीं।

वसन्ह दांत फारि गारयावें। चोटी धार-धार चोट बतावें।[2]

राम की पौगण्ड लीला में यज्ञोपवीत के बाद वेदारम्भ, राजनीति के रहस्य तथा अन्य कलाओं के अध्ययन का उल्लेख है —

करि ब्रतबंध जनेऊ दीना। विद्या वेद पढ़ावन लीना।

अंग मंत्र जुत तंत्र सिखावा। राजनीति बहु भाँति सिखावा।[3]

किशोर राजसिक भाइयों की लीलाओं का विस्तृत वर्णन लालदास ने किया है। अस्त्र शस्त्र संचालन नैपुण्य वर्णनीय है —

करिके धनुष बांड़ धरि ताने। मारें पठलाहिं चोट निसानें।

लागे वीर तीर पर ऐसें। जनु गुरिया गुरिया पर जैसें।

तोले काठि काढ़ि तरवारी। परखें तेज चोख अति भारी।

देखें ढालनि सांगि भंगाई। कवच औ चाप चोप अधिकाई।

राखें तवा ढाल करि जोरी। मारें बान पात बेधें फोरी।

1- अवधविलास, पृ0 186-87 2- अवधविलास, पृ0 188

3- वही, पृ0 189

धरहिं कुम्हार चाक पर घोड़ी देत उड़ाइ बैठि वर गेड़ी।

रावत सात कुंभ तिरछौहैं। एक बान निकरि रावत जोहैं।

ऐंचि धनुष रांह भांति चलावैं। बनहिं बान अकास लरावैं।[1]

प्रतिदिन मल्लों से हाथ मिलाकर भुजाशक्ति-परीक्षा राजदरबार में आगत दूतों, सामन्तों से वे यथायोग्य व्यवहार करते हैं। तसलीम पित से पान ग्रहण करना तथा अन्य मनोरंजन से उनका काल यापन होता है। पित के साथ भोजन, आचमन कर पान एवं संगीत श्रवण उनकी दिन चर्या थी।

जेंवत सुत हित नृप कहे बानी। बहुत अहार भरत सोइ जानी।
× ×

आचमन करि करि पान चबाहीं। अप अपने महलनि सब जाहीं।

कोमल सेजन्ह लेटि करौंटें। कोउ बिजना कोउ पाय पलोटें।

तब कोउ सखी कराहि कल गाना।[2]

तथा साकेत राम की जल क्रीड़ा का भी वर्णन किया गया है —

आवहु सरजु पार करि लीजे। नीर तीर लीला कछु कीजे।

काछ बांधि पैरें रघुबीरा। खेलैं पार सरजू के तीरा।

बूड़ें मीन उरग की नाईं। निकसैं जाइ दूर सरनाईं।[3]

इसी प्रकार सरयू के किनारे बालू का दुर्ग बनाकर कृत्रिम युद्धाभ्यास करते दिखाये गये हैं।

कबहुँ कि बालू कोट बनावहिं। करि करि फौजन्हि चढ़ि चढ़ि धावहिं।

केउ हाथी केउ घोरे होहीं। केउ असवार पयादे सोहीं।

केउ नृप दुष्ट होइ फिरि रहई। करनहिं देहि राम को कहई।
× × × ×

कबहुँ विचित्र बनाइ नवारा। नावन्ह ही पर करहिं बिहारा।[4]

1- अवधविलास, पृ0 190 2- वही, पृ0 195 3- वही, पृ0 195
4- वही, पृ0 196

भरत की शिक्षा :—

लालदास ने भरत शत्रुघ्न की शिक्षा हेतु ननिहाल-यात्रा का भी वर्णन किया है। ननिहाल यात्रा राम के वनवास के सन्दर्भ में प्रायः रामकथाओं में वर्णित है किन्तु लालदास ने इसमें अपनी कल्पना का सहारा लिया है। एक दिन दशरथ ने भरत शत्रुघ्न को बुलाया और उन्हें मुल्तान देश के पंडित से वेदाध्ययन करने का आदेश किया —

एक दिवस राजा मन भाई। भरत सत्रुघ्न लीन्ह बुलाई।
आवहु पुत्र जाहु ननिअरहीं। पढहु जाहु दोउ भाइ सुघरहीं।
जहँ मुल्तान देस सुखदायन। नरहरि रूप भये नारायन।
नगर नाम वैकुंठ बिसाला। देवलोक तें अधिक रसाला।
पंडित एक महा तहाँ आही। विद्या वेद सराहत ताहीं।[1]

सीता की बाल क्रीड़ा —

राम कथा काव्यों में रामादिक भाइयों की बाल किशोर लीला का ही वर्णन हुआ है। सीता उर्मिला इत्यादि बहनों की लीलाओं की अब उपेक्षा की गयी है। इस दृष्टि से लालदास की प्रतिभा ने अपना चमत्कार दिखाया है। कवि स्वयं कहता है कि मैं सीता के बालपन का संक्षेप में वर्णन करता हूँ।

जनक कुमारि ध्यान उर आनौं। लरिकाई संछेप बखानौं।[2]

सीता सामान्य बालकों की अपेक्षा जल्दी बढ़ती है। मूलधन के साथ ब्याज की तरह सीता सौन्दर्य द्विगुणित होता है। वह सहेलियों के साथ गुड्डा गुड़िया का खेल रचाती है जिसमें राम के समान सुन्दर गुड्डा और अपने समान गुड़िया बनाती है

खेलत बहुत सखिन में बाला। मनु ससि कीन गगन उड़माला।
गुड्ड गुड़ि करत जब लीला। रामाकृत स्वाकृत गुन सीला।

1- अवधविलास, पृ0 189 2- अवधविलास, पृ0 181

देखि रीझि कहैं और कुमारी। अस हम कहँ कोउ देहु दुलारी।[1]

सखि मिचौनी खेल में सौन्दर्य के कारण सीता अलग दिखायी देती थी –

वैठति नैन मुँदावति बाला। सखि कर लघु सिय नैन बिसाला।
कन्या दुरत बचन अवकाशा। सीय तन जोति होत परकाशा।[2]

सुनयना उन्हें गुरु से उचित शिक्षा दिलाने का प्रयत्न करती है। सीता वेद पुराण स्मृति इत्यादि विद्याओं में पारंगता बनी –

तारिका ले रिषि अगे राखे। हाथ जोरि रानी अस भाखे।
ए अस पढ़िहैं राजकुमारी। रिषि तस होइ बढ़ाइ तुम्हारी।
मुनि गनेस पूजा करवाई। दछिना आप बहुत कछु पाई।
जो लिखि देत सोइ पढ़ि लेहीं। गुरु कहँ कहुँ अवकाश न देहीं।
पाठ फेरि पूछन की नाहीं। विद्या धरी हिये सब माहीं।[3]

सीता ने स्वाध्याय काल में रामायण और महाभारत का भी अवलोकन किया था, जिसके रामचरित अंशों को सुनकर उनमें प्रेम अंकुरित हुआ है।

रामायण भारत पढ़े पुनि स्मृतिउ और
सीता सुनि हरषित भई राम चरित सब ठौर।[4]

वेद पुराण स्मृति ग्रन्थों में राम को श्रेष्ठ सुनकर पल्लवित प्रेम के कारण वे गौरी गणेश की पूजा करती तथा राम का वर माँगती थीं।

वेद पुरान स्मृतिहु भाषा। सबके राम सिरोमनि राखा।
गुन सुनि सुनि जानकि अनुरागी पूजन गौर गनेसहिं लागी।
विनय करति कहति कर जोरी। देहु राम वर शैल किसोरी।[5]

1- अवधविलास, पृ० 182, 2- वही, पृ० 182, 3- वही, पृ० 183
4- वही, पृ० 183 5- वही, पृ० 223

इसके लिए कार्तिक माघ स्नान, हरतालिका व्रत करती थी --

कार्तिक माघ अन्हाति बैसाखा। होइ रघुवर वर राउ अभिलाषा।

तीज आदि व्रत बिधानि के जेते। सीता करन लगी बिधि तेते।[1]

विश्वामित्र का आकर्षण :-

सीता के अतिशय अनुराग को राम जानते थे। अतः उन्होंने ही राक्षसों को प्रेरित किया कि वे मुनियों को दुःख दे। राम ने विश्वामित्र को अपनी ओर आकृष्ट किया था जिसके कारण वे अयोध्या आये थे --

अस कोउ भक्त भाव मन हरषा। मुनि को मन रघुवर आकरषा।

प्रेरे असुर देहि दुख जाहीं। रिषि मुनि जहाँ रहै बन माहीं।

जप तप जग्य होम जब करहीं। राक्षस देखि देखि जार मरहीं।

विप्र बहुत असुरन्ह सतार। विश्वामित्र अवधि को धार।[2]

दशरथ की आज्ञा :-

वशिष्ठ के उपदेश से ही दशरथ राम लक्ष्मण को विश्वामित्र को भेजने हेतु तैयार हुए थे। दशरथ ने उन्हें इस अवसर पर क्षत्रिय धर्म पालन का उपदेश किया था।

पूत सुबुध सनमुख होइ दीजे। मुनि कछु कहै मान सोइ लीजो।[3]

इस अवसर पर माताओं के मनोभावों की अभिव्यक्ति की उपेक्षा सर्वत्र की गयी है लालदास ने इस अभाव की पूर्ति की है। राम लक्ष्मण के जाने का समाचार सुनकर कौशल्या दशरथ एवं विश्वामित्र के प्रति तिरस्कार भरी बातें कहती है --

सुने जग्य रक्षा के काजा। राम लखन रिषि को दये राजा।

रानी आइ कही सुनि बाता। बूढ़ भये बुधि हरी बिधाता।[4]

कंचन गो, गज, अन्नदान तो सुना गया था किन्तु पुत्रदान आज तक किसी ने नहीं किया। कौशल्या को चिन्ता है कि राम खान-पान में अतिशय संकोची स्वभाव के हैं उन्होंने कभी माँग कर खाना खाया नहीं है। फूल के समान कोमल शैय्या कहाँ उपलब्ध होगी?

खेलै भांति भांह कहाँ रैहै। सब सालन अब को कीर दैहै।
पौढ़ है कहाँ भूमि निबरोरे। सत्य कहते फूलगहल है मेरे।
मांगि न लीन्ह कबहु सकुचाते। हौं ही देति तबहिं कछु खाते।
उबटन तेल तपत जल धरिहै। तहाँ को जतन पूत के करिहै।[1]

राम द्वारा अयोध्या प्रस्थान की आज्ञा :—

विश्वामित्र की यज्ञ रक्षा एवं ताडका सुबाहुवध के पश्चात् राम तीन दिन मुनि आश्रम में रहकर मुनियों को अपनी वाणी से आनन्दित किया। तत्पश्चात उन्होंने विश्वामित्र से अयोध्या प्रत्यागमन की बात कही क्योंकि कृतकार्य होने की सूचना के बाद वहाँ न पहुँचने पर मातायें चिन्तित होंगी —

दरसन संभाषन बहु दीने। रहि दिन तीन सबनि सुख दीने।
पुनि दोउ भ्रात प्रात गहि पाया। आयसु देहु करब प्रभु दाया।
जो हम घर अब वेगि न जैहैं। कहाँ धौं वह गये नृप कैहैं।
चिंता मात सुमित्रा करिहैं। कौसल्या अति दुख करि मरि है।
चित जनु धरहु अहेत हैं करि। जैहैं चले प्रताप तुम्हारे।
जब कछु काज परै प्रभु आनी। आज्ञा करत रहब जन जानी।[2]

तब विश्वामित्र ने अहल्या उद्धार तथा जनकपुर में आयोजित स्वयंवर कौतुक की बात कहते हैं।

जनक प्रण :—

सीता विवाह में धनुर्भंग को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। रामकथा के अनुसार जनक को यह धनुष शिव से त्रिपुरवध के बाद प्राप्त हुआ था, जिसे वे पूजते थे।

महादेव जब त्रिपुरहिं मारा। साहि धनुष करि बान प्रहारा।
सोइ उठ चाप जनक के भवना। संकर राखि गए गिरि भवना।

1- अवधविलास, पृ० 226, 2- वही, पृ०228, 3- वही, पृ०

हरषि जनक ही अति रस रीती। पूजत बहुत भांति कर प्रीती।[1]

एक दिन खेलती हुई सीता धनुष के पास गयी और उन्होंने धनुष उठाकर उस स्थान की सफाई का विचार किया। माता सुनयना ने सीता को रोका किन्तु सीता ने बायें हाथ से धनुष उठाकर उस स्थान को स्वच्छ कर दिया।

खेलत कुँवरि भई मन केही। लीपब आजु सुधारब मैंही।
रानी मनें करत भइ आई। मोहि हाथ कछु जिनि इतराई।
लीपति पोतति हरषति भारी। आजु धौं का है कहति महतारी।
धनुष बाम कर लीन्ह उठाई। ता पे पर फिरि धरेउ बनाई।[2]

सीता की अपरिमेय शक्ति सुनकर जनक ने धनुर्भंग शर्त से सीता के विवाह का प्रण किया।

राम एवं सीता संकल्प :—

लालदास ने राम एवं सीता के जिस पूर्वराग की मनोहारी एवं रस पेशल झाँकी अंकित की है, उसमें प्रेयसी युवती के प्रथम दर्शन आकर्षण एवं तज्जन्य निष्ठा के कारण दृढ़ संकल्प का महत्वपूर्ण स्थान है। भाव-विह्वला सीता की प्रेम-शक्ति देखकर लक्ष्मण से अपना मत व्यक्त करते हैं कि वर्णित धनुष अन्य किसी से नहीं चढ़ सकेगा। अन्य बली राजा के कृतकार्य होने पर राम बलपूर्वक सीता को छुड़ा लेंगे।

लछिमन मोर होत मन ऐसा। कहत हौं तोहि सुनहु कछु वैसा।
चढ़िहै न धनुष और पै काही। तेरब मैं ही बिवाहिब वाही।
जो पै और बली कोउ अवै। लैहु छिड़ाय जानि नहि पावै।[3]

सीता के भी इसी प्रकार के मनोभाव हैं, कि राम के अतिरिक्त सीता का अन्य कोई वर नहीं हो सकेगा। भला कहीं समर्थ सिंह श्रृगाल की शरण लेता है —

पारस का परित्याग कर कंकड़ लेना, विष्णु, शिव की अपेक्षा, प्रेत आराधना, गज मुक्ता के स्थान पर गुंजा या सीसा स्वीकार करना, बालेन्दु को

1– अवधविलास, पृ० 229, 2– वही, पृ० 229, 3– वही, पृ० 231

छोड़कर अन्य कार्य करना मूर्खता नहीं तो और क्या है? उन्हें पिता के प्रण का संकोच है। स्वयंवरा बनने पर पिता एवं धर्म की मर्यादा नष्ट हो जायेगी।

बिनु ही धनुष वरन मन कहई। समुझि पिता पन सकुच रहेई।
जौं बर करौं अपने मन रोपी। धर्म मजाद जाइ जग लोपी।[1]

धनुर्भंग में रावण एवं सहस्रबाहु :— प्रसन्नराघव(1/28-32) पद्मपुराण(पाताल खण्ड अध्याय 112) मानस(1) आनन्द रामायण (1/3/77-85) में धनुर्भंग के समय रावण एवं बाणासुर की उपस्थिति एवं असफलता का उल्लेख है। लालदास का मत है कि महाबली रावण भी बीस भुजाओं से उस विपुल धनुष को हिला भी न सका अतः उपस्थित जनसमूह ने हँसकर ताली बजायी इसी प्रकार सहस्रार्जुन भी अपमानित हुआ —

आयो महाबली बलि रावन। बीस भुजानहि लग्यो उठावन।
हट्यो न धनुष महा अतिभारी। सबही हंसे बजा दई तारी।
आये सहस्रबाहु महराजा। करि अहंकार बढ़ावन काजा।
कहे संसार जबहि डहि गेहै। अब कहा धनुष परयोई रहिहै।
हाथ हजार उठावन लागे। धनुषहि पर खसि परयो अभागे।[2]

धनुर्भंग के प्रयास :—

राम द्वारा धनुष भंजन के पूर्व रामकाव्यों में राजाओं के असफल प्रयासों का संकेत मात्र किया गया है। लालदास ने अभिमित राजाओं की शारीरिक स्थितियों का चाक्षुष बिम्ब उपस्थित कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। शारीरिक क्षमता से अधिक भार उठाने के प्रयत्न में निम्नलिखित इन क्रियाओं का होना सहज स्वाभाविक प्रतीत होता है।

1- अवधविलास, पृ0 235
2- वही, पृ0 236

केउ गहि धनुष बहुत बल बिहुरे। गह कोर हाँउ कवाक रहे निहुरे।

केउ अति आतुर होइ पहुँचे। जिन बल बहुत मुरकि गए पौंचे।

कोउ के गर्व रह्यो मन माहीं। हट्यो न धनुष उघारि गई बाहीं।

केउ अति आतुर होइ छूट्यो। धाय सों झुकि टेहुना फूट्यो।

आयो कोउ चकत झुकत लागि सुआरी। धनुष छुवत पुतरहडी आरी।

आयो कोउ कहत दूरि हो सबहीं। टर्यो टूटि बैठि गयो तबहीं।

भार दोउ भुजा केउक बड़ राजा। अचकत धनुष मुड़ई बाजा।[1]

<u>सीता विवाह के पूर्व के कार्य :-</u>

परशुराम प्रसंग सकुशल समाप्त होने पर जनक सीताराम विवाह को लोकव्यवहार एवं लोक वेदाचार के अनुरूप करना चाहते हैं। राम-सीता-विवाह का विस्तृत वर्णन मानस में ही प्राप्त होता है। लालदास ने इस प्रसंग को कुछ और अधिक बढ़ाया है।

<u>सीता राम के गुणों की गणना :-</u>

हिन्दू विवाह पद्धति में यह मान्यता स्वीकृत है कि विवाह के पूर्व वर वधू के गुणों की गणना करके ही विवाह निश्चित किया जाना चाहिए। देव गुरु बृहस्पति के समान विद्वान् ब्राह्मणों ने राम-सीता की राशि वर्ण, गण, योनि, नाड़ी की गणना की। लालदास लिखते हैं -

चित्रा राम सतभिषा सीता। तारा राम बधे नव सिय कीता।

रासि पंचम है रामा। सीता कुंभ रासि नवधामा।

हारि जीत दोउ आतह जाता। कहीं राम भेहा बीमाता।

बरन शूद्र दोउ एकइ जाना। राक्षस गन दोउ ठाँ ठहराना।

व्याघ्र जोनि सो राम है धारी। अश्व जोनि सिय नारि बिचारी।

1- अवधविलास, पृ० 235

रामकथ्य नाडी अरु बानी। आठइ सीता अति ब्लानी।

रासि अधिप सीता सनि पंचा। पंचई सुक्र कुलाधिप संचा।

राम द्विपद अरु द्वै गुन जीते। जलचर सिया बरय द्वैहारीते।[1]

लग्नपत्रिका का निर्माण :— विप्रों ने शुभदिन में स्वस्त्ययन कर लग्न लिखी।

अगहन मास द्वैज उजियारी। मूल मिथुन सोधे सुखकारी।

याविधि लग्न विचारि लिखाए। अक्षत हरद दूर्वा नाए।

राखि रतन मनीठ सुपारी। रोचन कुकम बरचि सुधारी।[2]

वरेक्षा :— लग्न लिखने के पश्चात् पंडितों ने कहा कि यहाँ उपस्थित वर का तिलक कर अयोध्या के लिए लिखित लग्न एवं आमंत्रण भेजना चाहिए —

बैठे सबाहिं तिलक इहाँ कीजे। लग्न पठाइ अवधि को दीजे।

टीका विप्र ले सजिव सिधाए। रहे मुनि राम लखन तहाँ आये।

करि उपचार सुमंगल करे। विप्रन्ह चौकि पुरि बैठारे।

कलस हाथि गनेसहि आनें। पढि स्वस्त्ययन तिलक तब ठाने।

टीका करि पूजे रघुनाथा। पुंगीफल मुद्रा दे हाथा।[3]

लौकिक कृत्य :— लग्न ले जाने के बाद मिथिला में लौकिक रीतियों का विधिवत पालन किया गया। मटछुहा, हल्दी, मातृपूजा, मंडिरपूजा, नहछू का उल्लेख लालदास ने किया है —

प्रथम लग्न लिख दिये नाऊ विप्र बलाय।

करि मटछुहा पुनि स्थापन हरदी चढाय।

कीन्हे पुनि ले मातृपूजा चौक कलस जु धारये।

मौरि पुनि कुश तोरन करि भाल चंदन डारिये।
मंडिरपूजा द्वार की वधू धारि पूजा कीजिए
अलक सपरस विधि सो अभ्युदयक श्राद्ध करीजिये
पुनि स्नान कराय दुलहिन पीत वसन बनाइये
होय नहछू बैठ गीत मंगल गाइये।[4]

1से4तक अवधविलास, पृष्ठसंख्या:—238, 238, 238, 238

विवाहोपरान्त कार्यक्रम :—

रामभक्ति काव्यों के विवाहोपरान्त अयोध्या आगमन का वर्णन सर्वत्र हुआ है। कुछ राम कथाओं में विवाह के समय लौकिक आचारों का वर्णन हुआ है। लालदास ने विवाहेतर कार्यक्रम का भी उल्लेख किया है। विवाह के बाद बारात अयोध्या आती है, जहाँ स्त्रियाँ लौकिक आचार से सीता का गृह-प्रवेश संस्कार सम्पन्न कराती हैं। कुलदेव पूजन, तदनन्तर शुभदिन में मण्डप, कलश, कंकणा और मौर इत्यादि जल में प्रवाहित किये गये —

आये राम विवाहि माइ आरति करैं।
दधि अक्षत मुख वारि धार डारनि धरैं।
वधू प्रवेसहि कीन्ह नखत दिन सुभ घरी।
गये जहाँ कुलदेव हरषि पूजे तबै।
पुनि तदनन्तर विवाह जुआ खेले सबै।
मंडवा कंगना अरु कलस सुभ दिन कीन्ह उठाइ।
दुलहा दुलहिन पुनि जल आये मौर सिराइ।[1]

दशरथ की निश्चिन्तता :—

चारों पुत्रों एवं पुत्र-वधुओं को दशरथ अपनी आत्मतुष्टि व्यक्त करते हैं। वे ब्राह्मणों को भोजन कराकर पुराण कथा-श्रवण में अपना मन लगाते हैं।

पुत्र पतोहू देखि मनमानी। भये निश्चिन्त नृपति अरु रानी।
दान पुण्य ब्राह्मन सब धरहीं। बहुधा साहस धर्म सब करहीं।

नारद आगमन :—

युवराज्याभिषेक के पूर्व नारद राम के पास आते हैं। राम की स्तुति में उन विशेषणों का प्रयोग किया गया है, जिनसे राक्षस संहार के संकल्प का प्रयोग

1- अवधविलास, पृ0 250

स्मरण होता हो। राम ने मुनि आगमन का कारण पूछा। नारद ने उन्हें विस्मृत देवकार्य का स्मरण कराया —

अब बैठे का करत हो कहा बिसरिगये सुरकन्द।
उठो राम बैकुण्ठ सों चलो तोरि दसकन्ध।[1]

वहीं पर राम ने अपने संकल्प को दुहराया है —

सुनि ये असुर अधम दुख देना। मारे बिना कहाँ कोउ चैना।
पूरन भई आयु अब तिनकी। बाकी कछुक रहत है जिनकी।
याते मैं न करत अतुराई। आयु अछत मारेउ नहिं मरई।
ऐसी तुम मानत कत चिंता। मोहीं को जु बहुत है चिंता।
जब लगि देव बंदि नहिं छूटे। रावन के दस सीस न टूटे।
जब लगि कुंभकरन नहिं मारे। तब लगि जीवन कौन हमारे।
मारि असुर सुर बंदि छुड़ाऊँ। तो दशरथ को पुत्र कहाऊँ।[2]

<u>राम की चिन्ता :—</u>

नारद के प्रस्थान करने पर राम वनवास के कारणों की चिन्ता करने लगे। किस प्रकार उन्हें वनवास मिले। वनवास में सीताहरण होगा तभी रावणवध सम्भव है। अन्यथा बिना अपराध के दण्ड देना वेदविरुद्ध है —

एक समय रघुनंदन राजा। बैठ अवास होइ निज धामा।
पास खवास पास नहिं कोई। सचिव सखा दूरि किये सोई।
करत बिचार सोच रघुनायक। कहौं कहूँ कौन मते लायक।
कौन भाँति लीजै बनबासा। बिनु बनबास न असुर बिनासा।
बन के बास हरन सीय होई। रावन कुंभकरन मरे सोई।
बिनु अपराध मारिए नाहीं। वेद प्रमाण धर्म अस आही।

1- अवधविलास, पृ० 258

बिनु अपराध दोह दुख बाई। होइ स्वभाव मलेछ कसाई।

जौं नहीं जाऊं लोग कह बामी। मात पिता राम भयो त्यागी।

अब कछु होइ विचारहि कीजै। बन को गमन आन फिर दीजै।[1]

तब उन्होंने कैकेयी को आकृष्ट कर बुलाया। [illegible] ने वत्सल भाव से राम के पीछे आकर नेत्र मूंद लिये। राम की उदासी देख कैकेयी ने उसका कारण पूछा --

तब कैकेयी आपु अकर्षी राम जहाँ आई मन हर्षी।

बैठे राम देखि रुचि बाढ़ी। नैन मूंद पीछे रहे ठाढ़ी।

तब कह राम छाड़ देहु माता। मोहि आजु नाहि कछु सुहाता।

बहु आजु अनमने चाहे। काहु तुम्हें कह कछु आहे।[2]

तब राम ने स्वार्थ परमार्थ की बात करते हुए अपने उद्देश्य को बतलाया। जिसे सुनकर कैकेयी ने अपराधी होने की शंका की।

कैकेयी कहत जो दोष आवै। सोइ मैं करौ तो तोहि सुहावै।

राम कहे मूरख नर जेहे। माता तोहि अजस ले देहे।[3]

राम ने कैकेयी को बनवास जन्य दुःखद परिस्थितियों से अवगत कराया कि मेरे वन जाने से उसे अपयश मिलेगा। पिता की मृत्यु होगी। भरत सन्यासी होंगे। रानियाँ विधवा होंगी। सीता एवं लक्ष्मण उनका अनुगमन करेंगे।

तोहि अजस जीत सह्यो नाहि जाइहै। मेरे बिरह पिता पुनि मरिहै।

भरत भोग तजि जोगी होई। कौशल्या दुख मरिहै रोई।

साढे सात सय करे रानी। विधवा सबै होइहै जानी।

सीय मोहि तजि घर नाहि रहिहै। लछिमन मोर संग गहि चहिहै।

बालक छोट शत्रुघन भाई। सो मोहि बिनु मरिहै बिललाई।

सुबुधि साधु मम प्रान पियारो। मोसों कबहु रह्यो नाहि न्यारो।[4]

किन्तु अन्त में दुःखी राम को देख कैकेयी उनसे सहमत हो जाती है।

दशरथ का वार्धक्य :-

रघुवंश एवं रामचरित मानस में श्वेत केश दर्शन से दशरथ ने वार्धक्य के अनुमान का वर्णन है। अवधविलास में इस समय दशरथ के मनोभावों का विस्तृत वर्णन हुआ है। दर्पण में श्वेत केश देखकर उनमें वैराग्य जागृत हुआ। युवावस्था में ही भोग विलास करना सुशोभित होता है।

उहाँ मुकुर दीखि नृप दर्पन लाया।
राजा जब अपनो मुख देखा। पहे बार दरपन में देखा।
तब वैराग्य भयो मन माँही। राज्य करत शोभा अब नाहीं।
जब लगि जुवा रहत नर कोइ। जो कछु करै छजै नहिं सोई।
भोग करन पहिरन असवारी। वसन पाग मुकुट तरवारी।[1]

कैकेयी की वरयाचना :-

कैकेय राजा की कन्या कैकेयी मन्थरा के बहकाने से दशरथ द्वारा पूर्व प्रदत्त दो वरों को मांगकर भरत को राजा बनाना चाहती थी। दो वरों की प्राप्ति के सम्बन्ध में अनेक कथायें प्रचलित हैं।

(1) वाल्मीकि रामायण :- (2/9/11/17) दण्डकारण्य में वैजयन्त पुरी में तिमि - ध्वज नाम का असुर राजा था। इसे शम्बर भी कहते थे। एक बार इन्द्र से इसका घोर संग्राम हुआ। इन्द्र ने दशरथ से सहायता माँगी। राक्षसों के प्रबल प्रहारों से राजा दशरथ मूर्छित हो गये। सारथी के हत होने पर कैकेयी ने दशरथ के प्राणों की रक्षा की। राजा के दो वर माँगने की बात कहने पर कैकेयी ने धरोहर रूप में रखने की बात कही।

1- अवधविलास, पृ० 26।

(3) आनन्दरामायण — सार (1/75-85) देवासुर संग्राम में आकाशवाणी द्वारा यह सूचित हुआ कि दशरथ जिसके पक्ष में युद्ध करेंगे वही विजयी होगा अतः देवताओं ने दशरथ को आमन्त्रित किया। दशरथ कैकेयी सहित युद्ध में आमन्त्रित होकर भाग लेते हैं तभी रथ का धुरा टूट जाता है। कैकेयी ने उसमें अपना हाथ लगा दिया क्योंकि पूर्वकाल में उसे मुनि से वर प्राप्त था कि अवसर आने पर उसका बाँया हाथ वज्र के समान कठोर हो जायेगा। दशरथ के दो वरों को न्यास रूप में सुरक्षित रखने की बात कैकेयी ने कही। यही कथा ब्रह्मपुराण तथा अग्निपुराण में भी है। लालदास ने इस सम्बन्ध में अपना मत प्रस्तुत करते हुए अध्यात्म रामायण की कथा का संकेत किया है :

और एक वर कैकई पावा। युद्ध करत कछु नृपहिं रिझावा।
टूटेउ रथ रन में जब भागा। रानी भुजा टेकि तहँ राखा।
राजा कहेउ माँगि वर मोरी। आनु समय राखेहु स भल मोरी।[1]

दूसरी कल्पना कवि की अपनी मौलिक उद्भावना है। दशरथजी पैर की उंगली के अत्यधिक पीड़ा थी। अनेक उपाय करने पर भी जब वह दूर नहीं हुई तब रानी कैकेयी ने अपने मुँह से उसका जहर खींच लिया —

एक बेर नृप के कछु कबहीं। चरन अँगुलि पीरा भई तबहीं।
जतन अनेक करे न सिरानी। तब मुख में धरि कैकइ रानी।
पीरा गई बहुत सुख पाए। नृप रीझे माँगहु मन भाये।[2]

इस प्रकार पूर्वप्रदत्त वरों के आधार पर कैकेयी ने भरत को राज्य एवं रामवनगमन की याचना की।

दशरथ का अन्तर्द्वन्द्व :—

कैकेयी की वरयाचना से क्षुब्ध दशरथ रात भर मर्मान्तक पीड़ा से छटपटाते रहते हैं। (मानस) अवध विलाप में दशरथ की मनोभावों की अभिव्यक्ति इस प्रकार की

गयी है कि पुरुष के वचनों की रक्षा करनी चाहिए। इस संसार में वही चतुर पंडित और ज्ञानी है जो नारिवशीभूत न हो —

राखो बोल कि पुताहि धाई। बोल जाय तो सबहि नसाई।

पूत जाहु धन जाहु जीव छिनि। पुरुष के बोल जाहु कबहुँ जिनि।

अब लौं तो हौं रह्यो सयानो। हरी बुद्धि स्त्री हाथ बिकानो।

सोइ पंडित सोइ चतुर सयानो। जो स्त्रीवश भयो न प्रानी।

राम वनवास की अवधि :–

देव षड्यंत्र एवं मंथरा के अथक प्रयास से दृढ़ बनी कैकेयी ने दशरथ से राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास माँग लिया। लालदास ने इसमें अपनी नवीन कल्पना के द्वारा मौलिक उद्भावना की है, जिसमें राम की पितृभक्ति प्रदर्शित हुई है। उनके अनुसार दशरथ ने राम को बुलाकर बारह वर्ष वन में रहने का आदेश किया। पिताज्ञा को शिरोधार्य कर राम चौदह वर्ष वन में रहने का संकल्प करते हैं।

अस कहि रामहिं लीन्ह बुलाई। बारह वर्ष रहो वन जाई।
× × ×
पिता कृपा कीनी मोहि भाई। रहिहौं दोउ और अधिकाई।(पृ0264)

रामराज्य :–

मर्यादावादी राम काव्यों में राम भरत के मिलन के बाद राम का दण्डकारण्य प्रवेश एवं मुनियों से भेंट का विस्तृत वर्णन है। किन्तु ऐश्वर्यपरक लीलाकारों की धारणा है कि राम ने चित्रकूट में विहार किया था। लालदास के राम जहाँ रहते हैं वहीं अपना राज्य स्थापित करते हैं। चित्रकूट में प्राकृतिक परिवेश से मंडित यह राज्य अत्यन्त आकर्षक एवं मौलिक है। इस राज्य में कल्पना में मध्ययुगीन सामन्तशाही के स्पष्ट दर्शन होते हैं —

सिला सिंहासन लसत विताना। भंवरी चमर चलत तहँ नाना।

पुहुप पात बिछौना साजे। कोमल गिलिम गलीची राजे।

पुहुप मुकुट पर तुल अंबारा। सोह जनु छत्रशीश पर धारा।

तर तरु तमाल के मूल सुहाये। तकिया देइ बैठे सुख पाये।

हिंग कन्या बहु और सुहाई। कराहिं बतास डोलि सुखदाई।

गिरि के श्रृंग महल जनु बाढे। दंप कदम्ब रस रथ ठाढे।

ध्वजा केरि निशान फहरारा। पर्वत कोट बहु आरारा।

बन पशु भिक्त और बहु चोरा। सोइ जनु आनि फेरियत घोरा।

पक्षी प्रजा करत व्योहारा। कुतुहल होत बन नगर मझारा।

दीपक चन्द्र नक्षत्र प्रकाशा। चौकी बाघ सिंह चहुँपासा।

चाकर आइ मिले बनवासी। भालु किरात बनचर रासी।

पतरी थार है दोन कटोरा। रतन्ह अनेक भरे नाहिं थोरा।

पीपर पात ताल सोइ बाजत। झरना झरत पखावज राजत।

सुआ कपोत दुमरी जाने। नरकुल गीत संगीत बखाने।

नूपुर दादुर धुनि संचारा। बाजत चटक शब्द कठतारा।[1]

<u>रामसीता का दाम्पत्य प्रेम :—</u>

प्रायः सभी राम काव्यों में राम सीता-लक्ष्मण दण्डकारण्य में प्रवेश कर ऋषि मुनियों से भेंट करते हैं। इस समय लालदास ने दाम्पत्य-प्रेम का अच्छा निरूपण किया है। कंटकाकीर्ण मार्ग की कठोरता, सूर्य का प्रखर ताप किस प्रकार दम्पति के मन दूसरे के प्रति अनुराग की वृद्धि करते हैं, द्रष्टव्य है —

सिय पर राम को सुनहु सनेहू। सोइ अनुकूल पीय सिये नेहू।

सिय तन राम चितै मुख मोरी। चितवनि गति छबि बदन किशोरी।

धरत चरण कोमल जब जाहिं। अपने नैन राखि कहै ताहीं।

ये सब धरा मृदुल तन धरहु सिय पद कोमल रक्षा करहू।

तृन कंटक ने दुखद अनारे। ते मग ते सब होहु निन्यारे।

रविकर अति तेज तपकारी।व्याकुल होत है जनककुमारी।

गिरि लघु होहु रहो बुझ बानिहै। सिव ते उतरत बहुत न बानिहै।

सीतल अरु समीर बहावो। जानकी तन मन तपनि जुड़ावो।[1]

राम लक्ष्मण का काल-यापन :— दण्डकारण्य में उपयुक्त स्थान देखकर लक्ष्मण कुटी का निर्माण करते हैं। यहाँ मृगया, वाद-विवाद में ही काल यापन होता है —

फूल फल सघन सुखद बन देखा। जल थल अमल विचित्र विशेषा।

तहाँ राम मन में कछु आई। लछिमन रचि तृन कुटी बनाई।

मृगया करें फिरें चहुँ ओरा। लीला वाद विनोद किशोरा।[2]

स्वर्ण-मृग कंचुकी :— वाल्मीकि सहित सभी रामकथाओं में रावण प्रेषित मारीच कनक मृग बनकर राम सीता को आकृष्ट करता है। मारीच वध के समय राक्षस रूप में परिवर्तित हो जाता है अतः उसके स्वर्ण चर्म आनयन का प्रश्न ही नहीं उठता है। लालदास के राम स्वर्ण चर्म को लाकर सीता को देते हैं और सीता उसकी कंचुकी बनाती हैं —

तब रावण मारीच पठावा। देखतु राम लखन तहँ आवा।

तब मृग रूप धारि फिरि देखी। कनक रूप तेहि कीन्ह विसेषी।

मारेउ ताहि चाम ले दीया। सीता अंग कंचुकी कीया।[3]

कवि द्वारा उल्लिखित कथा स्रोतों का वर्णन :—

सर्जनशील कवि जहाँ एक ओर अपनी नव-नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से काव्य में नूतन अध्याय स्थापित करता है, वहाँ दूसरी ओर उसे प्रतीत होता है कि प्रतिपाद्य विस्तृत कथा में कवि के मनोनुकूल स्थलों का वर्णन पूर्ववर्ती रचनाकारों ने किया है, तब वह गृहीत स्रोतों का उल्लेख कर उस कथा का वर्णन करता है। लालदास के समय तक राम काव्य में अनेक घटनाओं का सृजन एवं मिश्रण हो चुका था। कवि कहता है कि अब तक अनेक रामावतार हो चुके हैं, प्रति कल्पानुसार अठारह पुराणों में यह कथा विन्यस्त है, जिसका विवेक साधारण मनुष्य नहीं रख सकता है —

राम एक अवतार अनेका। अस जिते को करै विवेका।

दस अरु आठ पुरान हैं जेते। राम चरित गावत सब तेते।

भाँति अनेकन्ह करत बखाना। अस को नरवर सब जिन्ह जाना।

जाने राम आइ कछु जैसी। कमला लाल सुनी कहै तैसी।[1]

कवि लालदास कथा वर्णन करते समय गृहीत स्रोतों का उल्लेख यथास्थान करता चलता है। जिसका विवरण यहाँ किया जा रहा है —

<u>(1) अयोध्या उत्पत्ति :</u>— अयोध्या उत्पत्ति संबंधी अनेक मतों का वर्णन करके कवि ने हरिवंश पुराण का भी विवरण दिया है —

केउ द्वादस जोजन अनुमाना। ग्रंथांतर है होत बखाना।

पुनि कहुँ है हरिवंश सुनावा। नृपति अयोधन अवध बसावा।[2]

अयोध्या में वर्णानुसार गृह संख्या का विवरण यामलरुद्र संहिता के आधार पर किया गया है—

यामलरुद्र कथा यह पाई। लालदास तस कहि समुझाई।[3]

<u>(2) संगीत वर्णन :</u>— सरयू उत्पत्ति एवं पृथ्वी आनयन के पूर्व देवलोक में दिव्य संगीत (वाद्य, नृत्य, एवं गायन) का आयोजन उल्लिखित है। कवि लालदास ने पारिजात दर्पण नाट्यशास्त्र, रागार्णव, संगीतार्णव नृत्य निर्णय के आधार पर संगीत के विविध अंगों का वर्णन किया है —

पारिजात दर्पन भरत रागार्नव एक।

संगीतार्नव नृत्य निर्नय औरउ ग्रंथ अनेक।[4]

<u>पुराण लक्षण :</u>— द्वितीय विश्राम के अन्त में भागवतोक्त दस पुराण लक्षणों की सूचना दी कवि ने दी है —

दस लच्छन करि लच्छित होई।
ह दस लच्छन व्यास बखाना।[5]

---

1 से 5 तक अवधविलास, पृष्ठ क्रमशः— 50, 18, 20, 29, 39

(4) रावणउत्पत्ति :— लालदास ने रावण की उत्पत्ति अगस्त्य संहिता के अनुसार वर्णित की है —

कथा अगस्ति संहिता गाई। इह रावन उतपति मन भाई।[1]

(5) त्रिपुरदाह :— भक्त एवं धर्म रक्षा प्रसंग में त्रिपुरदाह की कथा हरिवंशपुराण के अनुसार कही गयी है —

सुन हरिवंस लाल मनमाना। त्रिपुर दाह की कथा बखाना।[2]

(6) रोगवर्णन :— रावण ने दिग्विजय अभियान में रोगों पर भी विजय प्राप्त की थी। इन रोग वर्णन का स्रोत माधव निदान है —

ए जो नाम रोग के राखा। माधव ग्रंथ निदान है भाषा।[3]

(7) स्वाद वर्णन :— पार्वती के प्रति जालन्धर की आसक्ति के सन्दर्भ में गीतोक्त इन्द्रिय विषयों का वर्णन किया गया है —

अम्ल कटुक और तिक्त रस मधुर कषाय जु लौन।

× × ×

तमे झूठ सबाई अचरना। गीता माहिं कृष्ण है बरना।[4]

(8) धर्म वर्णन :— पुत्र प्राप्ति हेतु दशरथ वशिष्ठाश्रम गये। कवि ने आश्रम की स्थिति वर्णन के सन्दर्भ में विभिन्न धर्मों एवं उपासना पद्धतियों का वर्णन महाभारत के अनुसार किया है —

इहै ध्यान श्रीकृष्ण है राखा। भारत माहि अर्जुन सों भाषा।[5]

तत्ववर्णन :— पंचतत्व, तन्मात्राएँ, क्षेत्र एवं क्षेत्रज्ञ एवं जगत की नश्वरता का वर्णन गीता एवं वेदान्त के अनुसार किया है —

पंच पचीस समूह सरीरा। जड़ अरु द्रव्य अनित्य अधीरा।

× × ×

ए सब क्षेत्र जानु सतधारी। क्षेत्रज्ञ आपु रहत अविकारी।

× × ×

गीता सहित वेदान्त बताया। सचि ब्रह्म झूठ है माया।[6]

---

1 से 6 तक अवधविलास, पृ०सं०क्रमशः — 48, 70, 52, 80, 101, 117

अमरकोष वर्णन :— लोमपाद राजा के राम रंग-प्रकरण में अमरकोश का संक्षिप्त रूप उपस्थित किया गया है —

अब सुनु अमर कोश के नामा। कहत हऊँ कछुक अर्थ के कामा।[1]

नायक-नायिका वर्णन :— दशरथ एवं लोमपाद भेंट के समय नायक नायिकाओं का वर्णन रस मंजरी(भानुदत्त) के अनुसार किया गया है —

नायकु हैं अनुकूल दक्ष पुनि सठ धृष्ठ बखानि।
लक्षिन हैं रस मंजरी ते तहाँ लीजेहु जानि।[2]

गर्भ प्रकाश :— कौशल्या, कैकेयी एवं सुमित्रा के गर्भवती होने पर कवि ने स्वरोदय ग्रन्थ के आधार पर गर्भ-विकास का क्रम उपस्थित किया है —

ग्रन्थ स्वरोदय को मत आही। सोइ मैं कहऊँ सुनौ सब ताही।[3]

विभूतिवर्णन :— राम जन्म के बाद उनके ऐश्वर्य का वर्णन लाल कवि ने किया है जिसका स्रोत श्रीमद्भागवतगीता है —

सोभा गुन श्रीमंत जे लाल देखि धरि ध्यान।
इह विभूति गीता कह्यो सर्व बीज भगवान।[4]

रत्नमण्डप में राम की शोभा :—राम भक्ति के रसिक सम्प्रदाय में अगस्त्य संहिता की विशेष प्रतिष्ठा है। लालदास ने ध्यान हेतु दिव्य रत्न मण्डप स्थित राम की माधुर्य परक शोभा का वर्णन उक्त ग्रन्थ के आधार पर किया है —

ग्रन्थ अगस्ति संहिता आही। कथा कहत हौं कही जा माही।[5]

राम का वैराग्य वर्णन :— लालदास ने विवाह पूर्व राम के वैराग्य एवं तीर्थाटन की कथा लिखी है, जिसका मूलस्रोत वृद्ध वशिष्ठ ग्रन्थ(योगवाशिष्ठ-रामायण) है,,-

वृद्ध वशिष्ठ ग्रन्थ माहिं पाई। सोइ यह कथा लाल कहि गाई।[6]

षड्दर्शन वर्णन :— ईश्वर ऐश्वर्य प्रकरण में कवि ने षड्दर्शन के प्रसिद्ध तत्वों का वर्णन किया है —

कापिल सांख्य पातंजल शेषा। करता न्याय वेदान्त विशेषा।

इसके बाद इन ग्रन्थों का संक्षिप्त रूप लिखा गया है।

इस प्रकार कवि द्वारा उल्लिखित ग्रन्थों में हरिवंशपुराण, श्रीमद्भागवत महाभारत, गीता, यामलरुद्र संहिता, वृद्ध वशिष्ठ संहिता, अगस्त्य संहिता, पारिजात दर्पण, नाट्यशास्त्र, संगीतार्णव, नृत्य-निर्णय, माधव निदान, अमरकोश, रस मंजरी, सांख्य योग, वेदान्त, न्याय, मीमांसा, वैशेषिक इत्यादि दर्शन ग्रन्थ प्रमुख हैं। अयोध्या-उत्पात्त रावण जन्म, त्रिपुरदाह, वैराग्य वर्णन कथा प्रधान है, शेष वर्णन प्रधान हैं जिनसे कवि की बहुज्ञता प्रकाशित होती है।

चतुर्थ अध्याय

अवधविलास में पात्रों का चरित्र-चित्रण

चतुर्थ अध्याय

मयनिलास के पात्रों का चरित्र-चित्रण

चरित्र-

साहित्य मानव समाज के सांस्कृतिक जीवन की अभिव्यक्ति नहीं वरन् उसका अक्षय कोष भी है। समाज के उत्थान-पतन, उसकी स्वस्थ एवं ह्रासमूलक विकृतियों का प्रभाव साहित्य पर प्रतिफलित होता है। इसीलिये उसमें जीवन की विविधता रहती है। जीवन के इसी अनेक रूपता एवं विविधता का चित्रण साहित्य निर्माण का अनिवार्य अंग है। जिस प्रकार सामाजिक क्रियाकलापों को गतिशील रखने के लिये एक सफल नेतृत्व की आवश्यकता होती है उसी प्रकार साहित्य में जीवन की सच्ची अभिव्यंजना के लिये घटनाओं के उचित संघर्ष से सहृदयों में रोचकता, उत्कण्ठा एवं औत्सुक्य वृत्ति को जागृत करने एवं रसस्थापन के लिये नायक तथा अन्य पात्रों की आवश्यकता होती है। सामाजिक जीवन के सच्चरित्र-दुश्चरित्र, अच्छे बुरे, सुखी-दुखी, उच्च-निम्न सभी स्तर के पात्रों को साहित्य में स्थान देना पड़ता है। पात्रों के निर्माण के द्वारा ही रचनाकार अपने उद्देश्य की अभिव्यक्ति करता है।

किसी कथा के पात्रों के चरित्र का प्रकाशन चरित्र चित्रण है। चरित्र के दो स्वरूप कहे गये हैं — सच्चरित्र से तात्पर्य यह है कि उसका आचरण नीतिसम्मत एवं समाज के अनुकूल हो। इसके विपरीत आचरण असत् माना जाता है। मनुष्य अमर नहीं पर है, जड़ नहीं चेतन है, स्थिर नहीं क्रियाशील है। मृत्युपर्यन्त वह कुछ न कुछ करता रहता है। उसका आचरण समाज के अनुकूल हो या विपरीत नैतिक हो या अनैतिक। उसके पास अपना चरित्र है। शारीरिक अंगों की समता होने पर भी मनुष्य मनुष्य के चरित्र में अन्तर होता है। क्योंकि शरीर में अन्तःकरण ही सारवस्तु है। इसी कारण मनुष्य की भिन्नता में भिन्नता दिखाई पड़ती है। वस्तुतः अन्तःकरण ही मनुष्य का मूल चरित्र है। इसी के आधार

प्रबन्धकाव्यों में पात्रों की रचना और उनका चरित्र चित्रण एक पूर्व निश्चित ढंग पर ही होता है। उसमें नायक, प्रतिनायक, सहायक पात्र नायिकाएँ होते हैं। नायक शब्द की व्युत्पत्ति = नी(नय) धातु से हुई है जिसका अर्थ है ले जाना। काव्य की मुख्य कथा को जो [redacted] विकास की ओर ले जाता है, जो कथा के फल का भोक्ता हो उसे अधिकारी कहते हैं। वही नायक होता है। दशरूपककार धनंजय और साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने नायक की अपेक्षा नेता शब्द का प्रयोग किया है —

नेता विनीतो मधुरस्त्यागी प्रियंवदः (दशरूपक)

दक्षो नुरक्त लोकस्तेजो वैदग्ध्यशीलवान् नेता। (सा०द०)

साधारणतया नायक शब्द से अभिप्राय उस व्यक्ति से है जो सामाजिक धरातल पर भिन्न भिन्न परिस्थितियों एवं अवस्थाओं में बड़ी सावधानी, साहस, उत्साह, कर्मठता, दृढ़ता और तन्मयता आदि गुणों से युक्त होता है। ऐसा परिश्रमी एवं कर्मठ व्यक्ति राजनीतिक धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्र में अपने व्यक्तित्व के कारण जन हृदयों का शृंगार करता है। इस अर्थ में नेता वही हो सकता है जो जीवन के विशिष्ट क्षेत्र में अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व एवं उदात्त चरित्र के द्वारा सामाजिकों का मार्ग प्रशस्त करने की क्षमता रखता हो और जिसमें जनता का प्रतिनिधित्व करने की सामर्थ्य होती है।

उपर्युक्त पंक्तियों में शब्दान्तर से यह कहा जा चुका है कि नायक समाज का एक लघु अंश है अतः उसका स्वरूप भी समाज के सामान्य व्यक्ति के रूप से भिन्न नहीं हो सकता। समाज परिवर्तनशील है और उसी के अनुरूप प्रत्येक युग में नायक के स्वरूप में थोड़ा बहुत अन्तर आता रहा है।

रामकथा शताब्दियों से मानव समाज में लोकप्रिय रही है। आदि कवि वाल्मीकि से लेकर देश विदेश में सहस्राधिक राम काव्य लिखे गये हैं। बात यह है कि राम के चरित्र में जितनी उदारता आदर्शमयता एवं लोकानुरञ्जन है उतनी अन्य कथा में नहीं। वाल्मीकि के प्रश्न 'चारित्रेण च को युक्तः' के उत्तर में नारद ने जिस चरित्रगत

आदर्शों की उद्भावना एवं प्रतिष्ठा की है उससे युग-युगान्तर तक समाज प्रेरणा लेता रहेगा। आदर्श एवं यथार्थ का समन्वय रामचरित्र में ही देखने को मिलता है। रामकथा वृहत्काय चरित्रकोष है जिसमें विशाल समाज के विविध पात्रों का समुदाय है। इन पात्रों का वर्गीकरण असम्भव तो नहीं किन्तु कठिन अवश्य है; कथानक की दृष्टि से, जाति, लिंग, गुण, स्वभाव, वर्ग, इत्यादि आधारों पर इनका विभाजन किया जा सकता है फिर भी ऐसे अनेक पात्र या समुदाय रह जाते हैं जिनका अध्ययन वर्गीकरण विश्लेषण नहीं हो पाता है। डाक्टर भ0ह0 राजूरकर ने रामकथा के पात्र शोधप्रबन्ध में कुछ पात्रों का विवेचन एवं वर्गीकरण कथानक सम्बन्धी योगदान की दृष्टि से किया है। उन्होंने मुख्य पात्र एवं गौण पात्र का विभाजन स्वीकार कर दोनों का अन्तर निरूपित करते हुए लिखा है कि—

(1) कथा की कालसीमा में प्रमुख पात्र देर तक छाये रहते हैं। उनकी भूमिका लम्बी होती है। वे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अपनी उपस्थिति और अस्तित्व का ज्ञान कराते रहते हैं।

इसके विपरीत गौण पात्रों का आगमन कथा में अल्प काल के लिये होता है। कभी-कभी तो उनकी एक झलक मात्र ही दिखलाई देती है। इनकी उपस्थिति एवं अस्तित्व का पूर्ण आभास नहीं हो पाता।

(2) कथा के विकास में प्रमुख पात्रों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। कथा का प्रयोजन एवं लक्ष्य इन पात्रों की भूमिका पर ही निर्भर रहता है। अधिकांश घटनायें इन पात्रों से सीधा संबंध रखने वाली होती हैं। इसलिए इनकी भूमिकाओं में सघनता और निश्चितता होती है।

इसके विपरीत गौण पात्रों की भूमिका अल्पकालीन होती है। इनका कथा की घटनाओं से सीधा संबंध नहीं होता है। प्रसंग विशेष को व्यक्त करने के लिये इनका उपयोग होता है।

(3) कथानक के कार्य की पूर्णता प्रमुख पात्रों द्वारा व्यक्त होती है। उनका योगदान सक्रिय एवं प्रभाव डालने वाला होता है।

गौण पात्र इसके स्थान पर प्रमुख पात्रों के कार्यों को पूर्ण करने में सहायक होते हैं। वे एक प्रकार से पूरक होते हैं। गौण पात्रों की सहायता से प्रमुख पात्रों की भूमिका अधिक स्पष्ट होती है।[1]

रामकथा ऐतिहासिक होने के साथ ही साथ प्रतीकात्मक कथा स्वीकार की गयी है अतः उसके पात्र भी प्रतीकात्मक विशेषताओं से युक्त हो गये हैं।[2] जिसमें राम दशरथ कौशल्या कैकेयी सुमित्रा भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न सीता, बालि सुग्रीव, हनुमान, रावण कुम्भकर्ण, मेघनाद, सूर्पणखा, तथा राम वनवास, सीताहरण, सेतुबन्धन एवं राम-रावण वध की घटनाओं के प्रतीकात्मक अर्थ किये गये हैं।

डाक्टर रमेश कुन्तल मेघ ने रामकथा का मिथकीय प्रतीकीकरण प्रस्तुत करते हुये उसके पात्रों का इस प्रकार वर्गीकरण किया है —

(क) दिव्य अलौकिक प्रसाधन की धुरी पर वैदिक मण्डल के देवता, पौराणिक देवता, राम पंचायतन (राम-सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान) पंचदेव (शंकर गणेश विष्णु (राम) सूर्य देवी) आदि।

(ख) अलौकिक असाधन की धुरी पर — रावण मेघनाद, प्रहस्त कुम्भकर्ण तथा सुरसा-सिंहिका आदि।

(ग) सन्यासवृत्त पर — राम, लक्ष्मण, भरत, ऋषि मुनि संत आदि चातक और मीन (प्रतीक)

(घ) वीर्यवृत्त पर — लक्ष्मण, रावण परशुराम अंगद हनुमान आदि।

1- रामकथा के पात्र पृ0 12।

2- नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वीरेन्द्र नारायण, वर्ष 65 अंक 4 पृ0 329-37

(ङ)धार्मिक नेतृत्व की धुरी पर — नारद, विश्वामित्र, याज्ञवल्क्य, पुरोहित, साधक, सन्त, ज्योतिषी, कथावाचक, मन्त्रोच्चारक, कर्मकाण्डी आदि।

(च) नायक वर्ग मे — राम लक्ष्मण, हनुमान अंगद सुग्रीव जामवन्त।

(छ)खलनायक वर्ग में — रावण, खरदूषण, वर्णाश्रम, च्युत व्यक्ति मन्थरा, कैकेयी खल, कुचक्री, [illegible] देवता, बाद की रचनाओं में स्वयं तत्कालीन समाज(कलियुग) सम्राट प्रशासक शैव, कर्मकाण्डि, और चकोर और कोयल (प्रतीक)

(ज) विदूषक मूर्ख वर्ग में — नारद, परशुराम, केवट(भावुक) अंगद रावण प्रसंग में रावण, लंकादहन के पूर्व हनुमान, रावण के चापलूस सभासद, भगोड़े और कायर देवता कुम्भकर्ण शूर्पणखा खरदूषण(नाटकीय प्रतीक) परनिन्दक कामी लोभी ब्राह्मण, ज्ञानी शुष्क राँड बगुलाध्यानी, सन्त, सुरसा, राम युद्ध में रावण की माया से मूर्ख बनी वानर भालु सेना धूर्त जयन्त, धोबीजन मारीच आदि।

(झ) मानवीय पात्र — भक्त और सन्त(धारणायुक्त) ग्राम्य वनितायें, मन्थरा, केवट, शबरी, लोक जीवन के सरल ग्रामीण पात्र) दीन हीन भिखारी, कंगाल किसान(पूरे कृषक समाज के)[1]

इसी प्रकार डा० राम प्रकाश अग्रवाल ने वाल्मीकि और तुलसी का साहित्यिक मूल्यांकन नामक शोध प्रबन्ध में राम कथा के पात्रों का वर्गीकरण निम्नरूप में प्रस्तुत कियाहै।

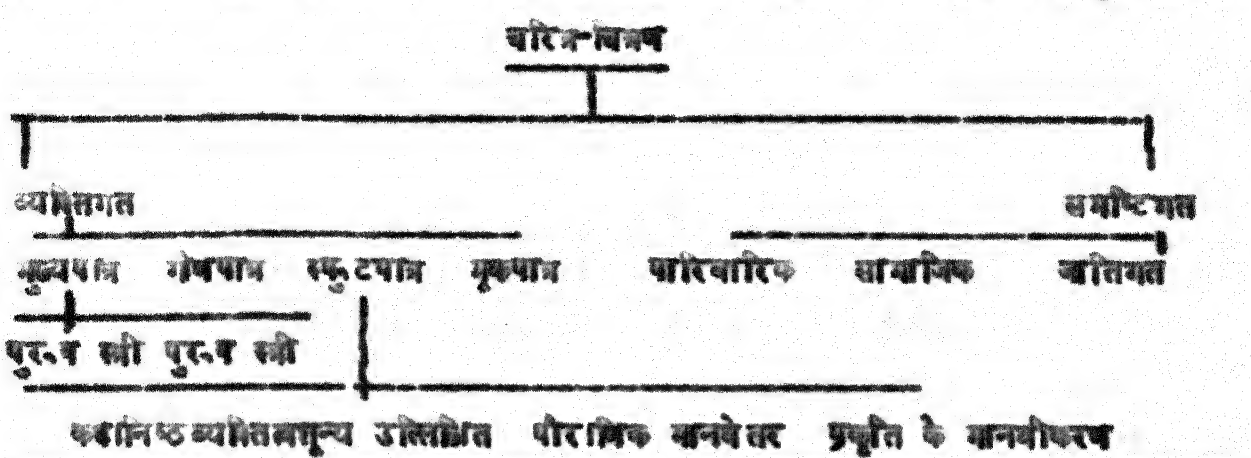

1- तुलसी आधुनिक वातायन से।

2- वाल्मीकि और तुलसी : साहित्यिक मूल्यांकन, पृ० 117

वर्गीकरण का आधार प्रस्तुत करते हुए डा० अग्रवाल ने लिखा है कि चरित्र का अध्ययन मुख्य रूप से व्यक्ति के आधार पर ही किया जाता है जिसमें व्यक्ति और उसकी परिस्थितियों के बीच होने वाली क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं की परीक्षा की जाती है और व्यक्ति विशेष के गुणों तथा अवगुणों के आधार पर मानव स्वभाव का अनुशीलन किया जाता है परन्तु अनेक स्थलों पर व्यक्तियों के समूह तथा समाज जाति सम्प्रदाय आदि के भी स्वभाव और संस्कृति का चित्रण होता है जिनमें नाम रूप से किन्तु जातिगत विशेषताओं का ही उल्लेख या चित्रण होता है जैसे प्रजा सैनिक योद्धा अथवा वानर, राक्षस आदि।[1]

तुलसीदास ने अपने विनय में निम्नपात्रों का उल्लेख किया है —

(1) गणपति विष्णु, शिव, सरस्वती, ब्रह्मा, सनक, सनातन, सनन्दन, नारद, व्यास, वशिष्ठ, पराशर, शुकदेव, भरद्वाज, वाल्मीकि, कश्यप, विश्वामित्र, अत्रि, गौतम, शौनक पुलस्त्य, सौभरि, बृहस्पति, शुक्र, अगस्त्य, दधीचि, भृगु, च्यवन, ध्रुव, सुदामा, प्रह्लाद अम्बरीष, रुक्मांगद, बालि, भरत, जनक, विभीषण, हनुमान, अर्जुन, उद्धव, विदुर रामानन्द, गोपिकायें, मनु, कपिल देवहूति, काकभुशुण्डि, गरुड़, याज्ञवल्क्य, सुरथ, मार्कण्डेय, भीम, नहुष, युधिष्ठिर, चित्रकेतु, परीक्षित, पिंगला वेश्या, भर्तृहरि, स्वायम्भुव, शतरूपा, इक्ष्वाकु, लक्ष्मी, पार्वती, इन्द्र, रम्भा, उर्वशी, अदिति, जय, विजय, हिरण्यकश्यप, रावण, कुम्भकर्ण, कुमिन्द, सुरसा, कुबेर, मय राक्षस, माया, सुलसा, देवी, त्रिशिरा, शूर्पणखा, माली, सुमाली, माल्यवान, कैकसी, विलवा, सहस्रबाहु, बलि, अंजनी, मुर त्रिपुर, मधु, कैटभ, जलन्धर वृन्दा, राहु, कीर्तिमुख, कौशल्या, रघु, वरतन्तु, कौत्स, कैकेयी, सुमित्रा, सुमन्त्र, शत्रुघ्न, लोमपाद, शृंगी, निषाद, अरुन्धती उद्दालक, नृग, ययाति, निमि, अष्टावक्र, दक्ष प्रजापति, विराध, सीता, भानुप्रताप

1- वाल्मीकि और तुलसी : साहित्यिक मूल्यांकन, पृ० 117-18

नलकूबर, मन्दोदरी, शतानन्द, सीता, राम, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, वामदेव, प्रचेता, वसिष्ठ, वेनु, ताड़का, अहिल्या, सुदर्शन, साधु, शिवि, दधीचि, सम्पाति, एवं गज, ग्राह, अप्सरा, दूत, राक्षस, देवता, दास, दासी, सचिवी, पार्षद मुनि, दिग्पाल, तपस्वी, विप्र, प्रजा, भिखारी, व्यापारी इत्यादि। व्यक्ति एवं समूह जातियाँ उल्लिखित हैं।

उक्त सूची पर विहंगम दृष्टिपात करने पर यह सहज ही समझ में आ जाता है कि लाल कवि ने राम कथा से संबंधित सभी पात्रों का उल्लेख तो किया ही है उससे संबंधित प्रासंगिक पात्र भी आये हैं। यद्यपि कथावस्तु विश्लेषण में यह कहा जा चुका है कि अवध विलास की कथावस्तु राम वनवास के पूर्व की है। अतः वनवास के बाद की घटनाओं से संबंधित पात्रों का उल्लेख मात्र ही हुआ है। उनके अन्तर में झाँकने का प्रयास कवि ने नहीं किया है। मुख्य कथा के घटनाओं का निदर्शन करने वाले पात्रों की संख्या सीमित है अतः लाल दास ने सीमित पात्रों का विस्तृत कथाफलक प्रस्तुत करते हुए उनके आन्तरिक बाह्य सौन्दर्य का अंकन किया है। लालदास ने कुछ पात्रों को विनय प्रदर्शन के सन्दर्भ में तथा कुछ को मंगलाचरण के रूप में स्मरण किया है। कुछ पात्रों का उल्लेख नीति धर्म, अनन्य भक्ति, सदाचार, अनन्य प्रेम विश्वास, वचन पालन शरणागति इत्यादि नैतिक गुणों के निर्भ्रान्त प्रतिपादन के उदाहरण रूप में प्रस्तुत किया है। शेष रामकथा से संबंध रखने वाले पात्रों के पूर्व जन्म की घटनाओं के दिग्दर्शन अथवा, पुराणोक्त किसी विशिष्ट घटना के वर्णन में उदाहृत किया है। जातीय गुणों का प्रतिनिधित्व करने के लिए लालदास ने यथावसर उन्हें उपस्थित किया है।

प्रस्तुत अध्याय में पुरुष एवं स्त्री पात्रों के चरित्र का अंकन उनके आन्तरिक एवं बाह्य क्रिया कलापों तथा चिन्तन के आधार पर किया जा रहा है।

राम

राम कथा के नायक राम ही हैं उन्होंने अपने गरिमायुक्त व्यक्तित्व से भारतीय जनमानस को अनादिकाल से आच्छादित कर रखा है। इसी लिये वे ईश्वर होकर भी मनुष्य हैं उसके आकर्षण के केन्द्र हैं। विद्वानों का विचार है कि राम एक क्षत्रिय जाति के नेता थे जो अपने महत् कार्यों द्वारा चारणों एवं कवियों की वाणी से गौरवान्वित होकर क्रमशः एक राष्ट्रीय नेता के रूप में समादृत होने लगे और अन्ततोगत्वा उनकी परिणति मानव मनीषा द्वारा निरूपित महत्तम सत्ता अर्थात् पूर्ण परब्रह्म में हो गयी। वाल्मीकि रामायण के पूर्ववर्ती स्फुट आख्यान काव्य में वे इक्ष्वाकु वंशीय क्षत्रिय नेता के रूप में प्रकट हुए, आदि काव्य में उनकी प्रतिष्ठा आदर्श मानव या पूर्ण पुरुषोत्तम के रूप में हुई। पुराणों ने उन्हें विष्णु और महाविष्णु माना और वेदान्त की पृष्ठभूमि पर पल्लवित ब्रह्मवाद का प्रवेश जब भक्ति आन्दोलन के माध्यम से काव्य के क्षेत्र में हुआ तब यही राम परब्रह्म तत्व की भी व्याख्या के आधार बने।[1]

अयोध्या में दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ से प्राप्त पायस के फलस्वरूप राम का जन्म हुआ उन्होंने माता को चतुर्भुज रूप दिखाया तथा अन्य अवसर पर दशरथ को भी इस रूप के दर्शन कराये। काकभुशुण्डि की परीक्षा में भी वे ब्रह्म रूप में उल्लिखित हुए हैं। तुलसीदास ने राम की बाल कुमार, पौगण्ड और किशोर लीलाओं का विस्तृत वर्णन कर उनकी शारीरिक श्रेष्ठता का प्रदर्शन कराया है। राम में वैराग्य आने के कारण तीर्थाटन की भावना उत्पन्न हुई। विश्वामित्र के मखरक्षण, अहिल्या उद्धार ताड़का का संहार, जनक की पुष्पवाटिका सीता के प्रति पूर्वराग उनका संकल्प, धनुर्भंग, परशुराम का प्रकोप, तथा विवाहोपरान्त नारद द्वारा राक्षसों के हनन का आग्रह वनवास के लिये कैकेयी की तत्परता लक्ष्मण सीता सहित राम का वनगमन, वन में राम सीता की एकान्तिक लीलाओं का वर्णन

1- हिस्ट्री आफ इंडियन लिट्रेचर, पृ0 501 तथा रामकथा डा0 बुल्के पृ0 480-83

लालदास ने जहाँ किया है वहीं आगे की घटनाओं में से सीता हरण, रावण वध भी उल्लिखित है। इस प्रकार लालदास ने राम के तीनों रूपों का उल्लेख अवध विलास में किया है।

(1) श्रेष्ठ महामानव :—

महापुरुष नेता अथवा काव्य नायक के चरित्रांकन के लिये सौन्दर्य शील एवं शक्ति का निरूपण स्वीकार किया गया है। लालदास ने राम की देहयष्टि का वर्णन अनेक स्थानों पर किया है। जन्म के समय माता उनकी सुन्दरता देखकर मुग्ध हो गयी थी। कवि ने सौन्दर्य के लिये शास्त्रीय प्रतिमान राम सौन्दर्य के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। श्रेष्ठ एवं आनुपातिक सौन्दर्य के लिये आवश्यक है कि अंगों में उचित समता हो राम कोटि काम सदृश हैं —

अति सुन्दर कछु कहे न जाहीं
कोटि काम लावन ता माहीं।'[1]

उनके सौन्दर्य का निरूपण नखशिख परम्परा के अनुरूप किया गया है —

आभा अंग नील मनि मोहै। कोमल ललित मात मन मोहै।
चरन अरुन पैजनि जुत नूपुर। रत्न जटित किंकिनि कटि ऊपर।
अंगुली अलक तड़ित द्युति हारी। अल्प उदर पर हार विहारी।
कर नख हीये बने छवि जाला। मोती रतन मानिक की माला।।
कुंचन कल करधनी विशेषा। मनहुँ कसौटी कंचन रेखा।
लघु लघु बाहु ललित रतनारे। पहुँची बलय मुद्रिका धारे।
कठुला कंठ भरे छवि झूले। बघनह नागफनी रवि झूले।
सुन्दर बदन कमल की शोभा। कुंचित केश भ्रमर जनु लोभा।

1- अवधविलास, पृ० 159

लोल विसाल रसाल सुलोचन। चितवत चित चोरित दुख मोचन।
भृकुटी निकटाई तिलक डिठौना। मानत दीन्ह मति लागै टौना।।
सोहत सीस पर क्रीट सुघराई। सोभा सकल अनूप भई आई।
गहना और कहै को जेते। राजन्ह के सोहत वर तेते।
उर भृगु लता वत्स श्री जो है। अंगदी लगे रंग से सोहैं।
केसरि चन्दन मृग मद लाये। औरसुगंध अनेक सुहाये।
तुलसी कुंद पुहुप मंदारा। माल अनेक प्रकार है धारा।।[1]

लाल कवि की मान्यता यह है कि सौन्दर्य वही है जिसे अनवरत देखते रहने की चाह बढ़ती रहे। कवि ने राम के बाल, कौमार, पौगण्ड किशोर अवस्था के सौन्दर्य का अंकन किया है —

पटुका पाग चोलना राजै। अंग अंग गहना मनि भ्राजै।
कोमल भीज फुलेलन्ह केसा। सोहत पेंचन्ह बीच सुदेसा।
मयूराकृत कुंडल अति लोला। कल कपोल पर करत कलोला।
भाल गाल पर दीन्ह डिठौना। जिनि कहुँ नजरि लगै कछु टोना।
चाबत पान हैं ब्यान अमाने। पीक मुखन्ह बरह लपटाने।
कंचन माल रतन मनि माला। मुकता माल बिसाल रसाला।
सोहत बघ नख फनि मनि भितर। अर्धचन्द्र जनु उडगन अंतर।
राजित जंत्र मंत्र जुत भूषन। अंग अंग कछु लगै न दूषन।
कटि किंकिनि पैजनियाँ राजै। धावत चलत मनोहर बाजै।।

1- अवधविलास, पृ0 168

सौन्दर्य का मात्र वस्तुपरक वर्णन कवि ने नहीं किया है। उसके व्यापक प्रभाव की बात कवि से ओझल नहीं रह सकी है। राम के सौन्दर्य को देखने के लिए लोग लालायित रहते हैं। स्त्रियाँ अपने अपने कार्यों को त्याग कर बाहर निकल पड़ती हैं —

तात तजि धाम काम जिय पेखन। धावत राजकुमारहिं देखन।

जोइ देखें सोइ संग रखाई। तजत न जात रूप अधिकाई।

देखत बाल ख्याल मन माने। लोगन्ह जन्म सफल करि जाने।

ये रघुवंश बधू कुल सीला। बकति चढ़ी अटारिन्ह लीला।'[1]

राम का कामविनिन्दक सौन्दर्य साधारण मनुष्यों को ही नहीं अपितु ऋषि मुनियों को प्रभावित करने वाला है। विश्वामित्र के साथ राम को मुनिगण देख कर अभिभूत हो उठे

सुन्दर बाल किशोर कृपाला। देखि देखि मुनि होय दयाला।

चितवनि चलनि चपल मन भावनि। वनचर मोर मृगन्ह संग पावनि।[2]

जनकपुर की नारियाँ इस सौन्दर्य को देख कर स्तब्ध रह जाती हैं —

देखति राम लखन छवि जोरी। बिसरि गई घर के मग खोरी।[3]

सौन्दर्य का प्रभाव तत्काल पड़ता है। लालदास को यह तथ्य भली प्रकार विदित है। उन्होंने आंगिक सौष्ठव के साथ ही उसके प्रभाव का भी निरूपण किया है —

केउ कहै चलहु नहीं मत कीजे। ऐसे पुरुष देखि सुख लीजे।

केउ कहैं पूछि लेहु रस रसहीं। जेहिं चले किधौं कहाँ काहीं।

केउ कहैं बडे भाग ए देखे। नैन सफल भए जनम बिसेषे।

ब्याहे देखदेखि पछिताहीं। यह आ बर हम कहँ दये नाहीं।

कन्या कहैं कहा अब करिये। कौन भाँति ऐसे बर बरिये।।

1- अवधविलास, पृ0 186
2- वही, पृ0 227
3- वही, पृ0229

गूँने की रही मौनहि सबरी। अब तो होन भरि होई निबरी।

जे लरकोरि रही कहँ तेई। देह अस पूत विधाता देई।

अद्भुत राम लखन की जोरी। जोह देखे लगि रहे ठगोरी॥[1]

पुष्पवाटिका में सीता भी राम के अपरूप सौन्दर्य को लखकर विह्वल हो गयी थीं —

देखि राम छवि रीझि कुमारी। विह्वल होइ गिरी न सँभारी।[2]

विदेहराज जनक भी राम सौन्दर्य से अप्रभावित न रह सके। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि निर्गुण ब्रह्म परीक्षा हेतु सगुण रूप में आ गया है। धनुष भंग का प्रण न किया होता तो वे सीता का विवाह राम के साथ ही कर देते —

मुनि ये कौन कहाँ के वासी। काके पूत रूप की रासी।

शोभा सिन्धु मध्य से आये। तुम ए रत्न कहाँ कब पाये।

देखत इन्हहि हरत भवपीरा। परम प्रीति वैराग रहीरा।

किधौं हारि हर ए हीरि छवीला। निकसे आइ करत कछु लीला।

जिनके रूप देखि सुख जीजे। तिन्ह को पलक ओट किमि कीजे।

अंग अंग शोभा अवगाहे। बार-बार नृप देखि सराहे॥

किधौं ए अगुन ब्रह्म सुखदाई। परजन मोहि सगुन भए आई

× × × ×

गोर स्याम छवि पद मृदुल मनोहर माधुरी।

नृप मन मग निकसि गिरे गरु निकसे नहीं॥[3]

जनकपुर के घर घर में राम लक्ष्मण के शील और सौन्दर्य की चर्चा होने लगी। जहाँ व जाते भीड़ लग जाती थी। वे ही सीता के लिए उपयुक्त वर थे।

1- अवधविलास, पृ० 230

2- वही, पृ० 231

3- वही, पृ० 233

कोटि काम छवि रूप निकाए। सबके मोहि मन संग लगाए॥

घर घर सभा सबहिं नर नारी। चरचा राम लखन की चारी।

निरखैं हरषि हरहिं मन पीरा। जहाँ जहाँ जाहिं होत तहँ भीरा।

× × × × × ×

ठाढ़े राम लखन मुनि संगा। गौर स्याम सुंदर वर अंगा।

वय किशोर सुकुमार निहारी। देखि परस्पर कहै नर नारी।

कहै कौन जनकहि नर नायक। वर मत रहै वैदेही लायक।

× × × ×

रीझे देखि रूप की रासी। भए पुनीत जनक पुरवासी॥[1]

कवि ने राम के लावण्य उनकी शोभा की चर्चा सर्वत्र की है। धनुष भंजन के वक्त उनकी शक्ति की प्रशंसा होनी चाहिए किन्तु नगर निवासी उनके रूप लावण्य पर ही मुग्ध हैं –

सोभा सब लावनि इन माहीं। अस छवि कोटि काम में नाहीं।[2]

इसी प्रकार वनवास प्रसंग में कोल भील किरात तथा ग्राम वासिओं के आकर्षण में राम के रूप का अधिक हाथ रहा है।[3] यहाँ तक कि विरोधी पक्ष भी उनसे प्रभावित था जिसमें सूर्पणखा प्रमुख है, जिसने राम के समक्ष प्रणय निवेदन किया था।

कहना नहीं होगा कि तुलसीदास ने राम के बाल, कुमार, पौगण्ड एवं किशोर सौन्दर्य का बहुविध वर्णन किया है। सौन्दर्य वर्णन कहीं स्वतंत्र एवं कहीं नखशिख परम्परा के अनुकूल हुआ है जिसमें प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से उनके अंग सौष्ठव की श्रेष्ठता स्थापित की गयी है। शोभा दीप्ति सौकुमार्य, लावण्य कान्ति माधुर्य कोमलता मधुरता विशेषण रूप में उल्लिखित हैं। माता पिता और मुनि देवता स्वजन ग्राम-नगर-नर-नारी कोल-किरात उनके सौन्दर्य से प्रभावित बताये गये हैं।

1- अवधविलास, पृ० 233-34
2- वही, पृ० 236
3- वही, पृ० 270

जिस सौन्दर्य में शक्ति का समन्वय नहीं है, पुरुषोचित दृढ़ता नहीं है, साहस और ओज का अभाव है, वह सौन्दर्य मात्र नारी सुलभ सौन्दर्य रह जायेगा। इसी लिए वाल्मीकि ने पुरुषोचित गुण सूचक विशेषणों का अधिष्ठान राम को बताया है तो लाल-दास राम के शौर्य उत्साह परक लीलाओं का विस्तृत वर्णन किया है। राम के जिन हाथों में छोटी तलवार-ढाल सुशोभित थे, अब वे हाथ स्वभावतः मूँछों पर चलने लगे। विशाल वक्षस्थल उन्नत अंस आजानुबाहु ताल ठोंकती भुजायें शत्रुओं को भयप्रद लगने लगे —

कछु कछु अब दरबार सँभारा। बैठे बाह बाँधि हथियारा।
मुछ पर हाथ फेरि भुज टेवैं। वक्र भाग करि दर्पन जेवैं।
उन्नत अंस सुभग सिर ग्रीवा। रूप प्रताप तेज बल सींवा।
सैधे धनुषबान करि ऊँचे। बैरिन्ह जाने धाल पहूँचे।।[1]

युवावस्था में वृद्धिगत शरीर की अनुभूति व्यक्ति को दर्प के समक्ष पहुँचा देता है। युवक राम के शस्त्रनैपुण्य का विशिष्ट वर्णन अवधविलास में प्राप्त है —

करें धनुष बाँह भरि ताने। मारें पहलांह चोट निसाने।
तेतें काटि काढ़ि तरवारी। परखें तेज कौन अति भारी।
बेधैं ढालनि सांग मँगाई। कवच औ चाप चोप अधिकाई।
राखैं तना ढाल करि जोरी। मारे बान पात ज्यौं फोरी।
× × × ×
बाधि जंजीर चरन अटकावें। माते गज चलने नहिं पावें।[2]

इसी प्रकार अश्वों को वशीभूत करना, अखाड़े में जाकर मल्ल युद्ध करना, सरयूतटपर जलयुद्ध इत्यादि रामकी दैनिकदिनचर्या कही गयी है।[3]

1- अवधविलास, पृ० 190
2- वही, पृ० 190
3- वही, पृ० 191-196

यह शक्ति संचय बिना परीक्षा के अनुर्वर, निष्फल कही गयी है। जो उत्साह धैर्य, दृढ़ता, ओज, दुर्धर्षता, पराक्रम शत्रु या विपक्षी को देखकर अपने समस्त रस में प्रस्फुटित होता हो वही सच्चा आत्मधर्म है। यह रस लोकमंगलकारी होता है। कहना नहीं होगा कि राम का जीवन आत्मधर्म का मूर्तिमन्त रस है। समाज के अत-तायियों, धर्म-विरोधी शत्रुओं का जिस निष्ठुरता एवं दृढ़ता से दमन किया है, अपनी घृणा या क्रोध प्रकट किया है, उसका कवि सौन्दर्य किसे प्रिय नहीं लगेगा। विश्वामित्र दशरथ को पूर्ण विश्वास दिलाते हैं कि राम असुर संहारक सिद्ध होंगे —

हने असुर ए पुत्र तुम्हारा। तुम को जस हाथ काज हमारा।[1]

राम ने एक ही बाण से ताड़का का संहार कर डाला। इसी प्रकार मारीच सुबाहु को पराजित किया —

> अब असुर राम जब जाना। गहि कर धनुष बान दोउ ताना।
> वायुबान मारीच बिडारी। सत योजन गिरेउ फटकारी।
> पावक बान सुबाहु संघारे।।[2]

शंकर के धनुष को सहस्रबाहु, रावण तथा अन्य बिपुल वीर उठाने में असमर्थ रहे, राम उसे बायें हाथ से उठा कर जहाँ एक ओर सबको श्री शक्तिहीन कर दिया वहीं दूसरी ओर अपने अप्रमेय बल को स्थापित कर दिया।

> तिलक राम अतुल बलधामा। चरन अंगुष्ठ तें गहि कर बामा।
> बहुरि उठाइ प्रभाव निहारी। दैवी तनकु टूट गयो भारी॥[3]

इसी प्रकार परशुराम प्रसंग में राम की शक्ति समन्वित शीलता का श्रेष्ठ उदाहरण है। विवाहोपरान्त नारद की प्रार्थना पर राम का कथन उनकी शक्तिमत्ता का ही प्रतीक है —

1- अवधविलास, पृ0 225
2- वही, पृ0 228
3- वही, पृ0 236

जब लगि देव बन्दि नहिं छूटे। रावन के दस सीस न टूटे।

जब लगि कुंभकरन नहिं मारे। तब लगि जीवन धौन हमारे।

मारि असुर सुरबंदि छिडाऊं। तौ दसरथ को पुत्र कहाऊं।[1]

लालदास ने राम की शक्ति सूचक घटनाओं में मारीच बालि रावण वध इत्यादि का उल्लेख ही किया है क्योंकि इन घटनाओं का विस्तृत वर्णन संसार जानता है। कवि ने शक्ति से शारीरिक बल का आशय ही नहीं ग्रहण किया अपितु उसमें मानसिक एवं आत्मिक शक्ति समन्वय किया है। इस प्रकार लाल दास के राम में बल, पराक्रम एक छोर पर हैं तो दूसरी ओर शस्त्रास्त्र नैपुण्य एवं अद्भुत रण चातुर्य है। तात्पर्य यह है कि सृष्टि में जितनी भी अधिक से अधिक शारीरिक और मानसिक बल ओज, पौरुष एवं शक्ति की कल्पना की जा सकती है, वह सब राम में दिखाई देती है। रामकथा के अनेकानेक प्रसंगों द्वारा उनके असाधारण शारीरिक बल, साहस, वीरत्व और रणचातुरी का प्रकाशन हुआ है। वे जितने महान् धर्मवीर हैं उतने ही महान युद्धवीर भी।[2]

राम का रामत्व न तो सौन्दर्य में ही है, न ही शक्ति सामर्थ्य में। वस्तुतः राम की उत्तमोत्तमता उनके श्रेष्ठ शील में ही है। यह एक अलग बात है कि वे शक्तिसम सिन्धु के साथ ही साथ शील समुद्र भी हैं। शील का अर्थ व्यक्ति के आन्तरिक व्यक्तित्व मनोविकार उसकी सबलता एवं दुर्बलता से है। राम का शील मानव स्वभाव, सुलभ सबलता एवं दुर्बलताओं से युक्त यथार्थरूप में वाल्मीकि द्वाराही चित्रित हुआ है। 'चारित्रेण च को युक्तः (वा0रा0बाल0 1/3) के उत्तर में राम के गुणों की तालिका में धर्मज्ञता, कृतज्ञता सत्यभाषण, दृढ़ संकल्प, सर्वभूत हित विद्वान् आत्मवान्, जितक्रोध, अनसूयक, द्युतिमान, कु बुद्धिमान, नीतिमान, वाग्मी, शुचि, इन्द्रियजयी, समाधिमान, वेद-वेदांग सर्वशास्त्रार्थ-तत्त्वज्ञ, साधु अदीनात्मा और विचक्षण[3] इत्यादि गुणों को विशेष स्थान प्राप्त है।

1- अवधविलास, पृ0 259

2- वाल्मीकि और तुलसी : साहित्यिक मूल्यांकन, डा0 रामप्रकाश अग्रवाल, पृ0 13।

3- वाल्मीकि रामायण, 1/1/2-4, 8/15

साथ ही उन्हें गम्भीरता में समुद्र के समान धैर्य में हिमालय के समान वीरता में विष्णु के समान कहा गया है। इसीलिए वे धर्मज्ञ्यापरः हैं।[1] तुलसीदास ने ये ही गुण शीलरूप में कहा है।(अयो04) जिसमें राम की प्रकट बुराइयाँ परब्रह्म की लीलामात्र हैं। वास्तविकता तो यह है कि अपनी बहुत सारी दुर्बलताओं के बावजूद भी वाल्मीकि के राम पुरुषोत्तम हैं, जो सामान्य जन का परमप्रिय पात्र बन गये हैं। ऐसा प्रतीत होने लगता है कि यह अपने परिवार का ही एक पात्र है जो आदर्श भाई, आदर्श पुत्र, आदर्श पति है, समाज में अपना ही अनन्य सखा एवं सहायक है तथा व्यवहार में आदर्श लोक शिक्षक, धर्मचारी एवं मार्ग दर्शक है।[2] तुलसीदास ने राम की सुशीलता का वाल्मीकि रामायण की अपेक्षा उत्कर्ष भी किया है और विस्तार भी अर्थात् एक ओर उन्होंने राम के अवतारिक गुणों को उच्चतम सीमा तक पहुँचाया है और दूसरी ओर कुछ नवीन कथा प्रसंग जोड़कर इस शील के अभ्यास की नवीन परिस्थितियाँ तथा क्षेत्र भी प्रस्तुत किये हैं। यह शीलोत्कर्ष और शील विस्तार परिवार, समाज, राज्य और साम्राज्य सभी क्षेत्रों में देखा जा सकता है।[3]

आदर्श पुत्र :—

राम बाल्यावस्था से ही मातृ-पितृ के आज्ञा पालक थे। माता के लिए ही वे चतुर्भुज से द्विभुजधारी बने हैं। पिता की आज्ञा पाकर विश्वामित्र के साथ वन गये। मख-रक्षण के बाद स्वयं राम कहते हैं —

पितु मातु सुमित्रा करिहैं। कौसल्या अति दुख करि मरिहैं।।(अयो0 228)

राम कैकेयी को अतिशय प्रिय थे। दशरथ एवं कैकेयी की आज्ञा से ही वे 14 वर्ष वन रहे।

पितु कह्यो अठ जो नहिं करिए। ताको दोष अजय ए हरिए।।(वही, 260)

वन गमन के समय वे हर्षपूर्वक कहते हैं —

1- वाल्मीकि रामायण, 1/16-19

2- रामकथा के पात्र, पृ0 141

3- वाल्मीकि एवं तुलसीः साहित्यिक मूल्यांकन, पृ0 127

पिता कृपा कीन्हि मोहि भाई। (अवध 264)

राम वशिष्ठ से पिता की रक्षा हेतु प्रार्थना करते हैं —

राजहिं ध्यान विवेक सुनाइये। बहुत भाँति समुझावत रहिये। (वही, 267)

आदर्श शिष्य :-

भारतीय संस्कृति में आचार्य देवोभव की परम्परा विश्रुत है। राम उसके मूर्तिवान रूप हैं। उनके विश्वामित्र और वशिष्ठ दो गुरु हैं। दीक्षा गुरु विश्वामित्र हैं तो दार्शनिक उपदेश एवं व्यावहारिक जीवन यापन के लिए वशिष्ठ गुरु सदृश हुए हैं। कुल-गुरु वशिष्ठ ने उनके जातकर्म, नामकरण, व्रतबन्ध के बाद, सम्पन्न कराया था। वन प्रस्थान से पूर्व राम के द्वारा वशिष्ठ की शरण में रामवासियों प्रजा-पुरजनों को सौंपना उनके प्रति अगाध विश्वास का प्रतीक है। शिष्यत्व के सन्दर्भ में लालदास ने विनयशीलता निरभिमानता, कृतज्ञता, प्रणति उल्लिखित किया है —

(1) गुरुहिं देखि उठि कीन्ह प्रनामा। (अवध0पृ0201)

विश्वामित्र से राम कहते हैं —

(2) जिन्हे नाथ अब तुम तारे। तिन्ह के भय दुख दोष निवारे॥
सब कछु काज परे प्रभु आनी। आज्ञा करत रहब मन जानी॥ (वही, 228)

(3) गुरु वशिष्ठ के घर गये मिलन होत हैं राम।
हाथ जोरि पाय लागन कीन्हा। आशिरवाद गुरु तब दीन्हा।
प्रभु अब कृपावंत भए राखिए। है कछु चूक अजगा साखिए॥ (वही, 267)

आदर्श भ्रात :-

रामकथा में आदर्श भ्रातृत्व का उदाहरण भरत, लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न हैं किन्तु इनके प्रेरक राम ही हैं। अवधविलास में राम के भ्रातृ रूप का विकास बाल्यावस्था से ही दिखाया गया है। प्रारंभ से ही एक साथ भोजन, क्रीड़ा-शयन के बाद क्रमशः उनमें

समानता का भाव उत्पन्न होता है। तदुपरि माता-पिता उन्हें छोटे बड़े का ज्ञान कराते हैं यही भाव आगे चलकर प्रौढ़ परिपक्व होकर जीवन क्षेत्र में त्याग के अवसर उपस्थित करता है —

लछिमन भरत अनुज कछु मानैं। नैकु न संक सत्रुघन आनै॥
वे दोउ रहहिं राम तें हेठे। रिपुजित राम बराबरि बैठे।
तब तहाँ तात कहे समुझाई। बंधु राखहु लहुर बड़ाई॥[1]

लालदास ने अनेक बाल क्रीड़ाओं में से भ्रातृभाव का विकास दिखाया है। इसी कारण राम लक्ष्मण अत्यन्त निकट हो गये। निश्छल राम ने अपने अंकुरित प्रेम का प्राकट्य लक्ष्मण से किया था। राम वनवास के पूर्व कैकेयी से कहते हैं — कि उनके वनवास जाने पर भरत सन्यासी हो जायेंगे —

भरत भोग तजि जोगी होई।
बालक छोट सत्रुघन भाई। सो कैहि बिनु मरिहै बिललाई। (अवध० 260)

<u>आदर्श प्रेमी :—</u>

जनक की पुष्पवाटिका में सीता के प्रथम दर्शन से राम अनुरक्त हो जाते हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि वे ही धनुष तोड़ेंगे।

लछिमन मोर होत मन जैसा। कहत हौं तोहि सुनहु कछु वैसा।
चढ़िहै न धनुष और पहिं काही। तोरब मैं ही निवाहिब याही।
जो पै और बली कोउ आवै। तेहु छिद्र जान नहिं पावै।[2]

यह प्रेमांकुर वनवास वैभव प्रगाढ़ रूप में दिखाई देता है।

1- अवधविलास, पृ० 185

2- वही, पृ० 231

आदर्श मित्र :—

निषादराज गुह, सुग्रीव एवं विभीषण उनकी मित्रता के श्रेष्ठ उदाहरण है, जिनके सम्बन्धों का वर्णन अवधविलास में नहीं नहीं है, किन्तु बाल्यकाल के सखाओं उनके साथ समानता का व्यवहार में राम के इस रूप की झलक मिलती है। मल्लयुद्ध, आखेट, सरयू संतरण तथा आपकी बालुके किले बनाकर देना सहित काल्पनिक युद्धों में राम की मित्रता दिखाई देती है।

राम का वैराग्य :—

प्रचलित रामकाव्यों में राम के वैराग्य का वर्णन प्रायः नहीं हुआ है। लालदास जी ने राम के वैराग्य, गुरु वशिष्ठ का प्रबोध, मात-पिता की चिन्ता एवं राम के तीर्थाटन का वर्णन किया है। उदास राम मौन होकर गहन चिन्तन रत थे। दशरथ ने वशिष्ठ से अपनी चिन्ता व्यक्त की। वशिष्ठ ने औदासीन्य का कारण पूछा, राम कहते हैं —

जीवन अल्प देह छिन भंगी। मिथ्या सब झूठे धन संगी।
नरतन पाइ विलम्ब न कीजै। मुक्ति हेत साधन करि लीजै॥[1]

यहीं पर राम ने धन जीवन, यौवन, सांसारिक सम्बन्ध तथा माया में लिप्त के क्रमशः साधन इनसे दूर रहकर भजन करने वाले प्रह्लाद, देवदत्त व्यास, शुकदेव वामदेव, बालखिल्य, कपिल इत्यादि के उदाहरण दिये हैं।

ताते प्रभु जो पर हित कीजै। साधन प्रथम भूमिका होई।
बिनु तीरथ पातक नहिं जाहीं। अंतह करन सुद्ध होइ नाहीं।
बिना सुद्ध भये अंतह करना। उपजै ध्यान न छूटे मरना।[2]

दशरथ के कहने पर राम कहते हैं —

1- अवधविलास, पृ0 201 2- वही, पृ0 202

3- वही, पृ0 203

कैसे राम पित मत माता। परमारथ को समय न रखा।

तीरथ दान करत तप दाना। मनें न करत ये लोग सयाना।[1]

इस प्रकार मात-पित को प्रबोध कर राम तत्क्षण तीर्थाटन कर आये।

अवतारी रूप :-

राम के अवतारी रूप का विकास भी अति प्राचीन है। वे विष्णु के अवतार कहे गये हैं। जिसका मूलरूप भी वाल्मीकि रामायण में सुरक्षित है। रामायण में विष्णु श्रेष्ठ देवता है जो दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में उपस्थित होकर रावण वध का आश्वासन देते हैं।[2] यह आश्वासन रामचरित मानस में देवताओं की प्रार्थना पर आकाशवाणी से हुआ था।[3] रामायण के अवतारवादी अंशों को प्रक्षिप्त कहा गया है। अवतारधारी राम के चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ कही गयी हैं(1)सजातीय देवताओं की रक्षा के लिए अवतार लेना (2)यज्ञादि पवित्र कर्म करने वाले ऋषि मुनि और ब्राह्मणों की रक्षा करना।(3)भक्तों की विविध इच्छाओं को पूर्ण करना।(4)शापग्रस्त व्यक्तियों का उद्धार करना। अवधविलास के के अनेक प्रसंगों में राम को हरि, विष्णु, का अवतार कहा गया है। कश्यप अदिति को उन्होंने ही वरदान दिया था -

नारायण त्रैलोक निहारा। अपने सम नहिं और कुमारा।

वर दै हरि गये अपने धामा। अंतरजामी सबके रामा।।[4]

सनकादि ने जय-विजय को राक्षस होने का शाप विष्णु की प्रेरणा से ही दिया था।

जन की रक्षा न करौं बैठि रहौं धरि मौन।

जन्म कर्म अवतार बिनु तो मोहि जाने कौन।।[5]

1- अवधविलास, पृ0 203

2-वा0रा01/15

3- मानस,1/186

4- वाल्मीकि और तुलसी साहित्यिक मूल्यांकन,144

5- अवधविलास, पृ0 41

इसी शाप के कारण विष्णु को राम का अवतार धारण करना पड़ा था। असुरों के अत्याचार से पीड़ित पृथ्वी चन्द्र इन्द्रादिक देवताओं के साथ नारायण हरि, विष्णु के पास जाकर अपनी मर्मान्तुद वेदना व्यक्त करती है जिससे द्रवित होकर विष्णु ने अवतार धारण करने की घोषणा की, क्योंकि भूतकाल में भी असुरों से देव, गो, विप्रों की रक्षा की है। सीता उत्पत्ति के समय वैकुण्ठ स्थान विष्णु से रहित था। एकाकी लक्ष्मी उदास थीं क्योंकि विष्णु रामरूप में अवतरित हो चुके थे।

लागत सून भवन बिनु साईं। भोग सुगंध कछु न सुहाई।

राम जन्म के समय चतुर्भुज रूप धारी विष्णु प्रगट होकर कौशल्या के पूर्व जन्म प्रदत्त वरों का स्मरण कराते हैं –

रूप चतुर्भुज जबहि दिखावा। मात देखि परम सुख पावा।[2]

इसी प्रकार दुर्वासा के अयोध्या आगमन पर दशरथ ने राम का भविष्य पूछा था। उस समय दुर्वासा उन्हें विष्णु का अवतार कहते हैं –

तजि बैकुंठ शाप मम पाई। होइ मनुष्य जगमहि अब आई।[3]

तात्पर्य यह है कि गो, द्विज, देव, धर्म, शाप या वरदान के कारण विष्णु राम के रूप में अवतरित हुए। कहीं आंशरूप में कहीं पूर्णरूप में यह अवतार हुआ है।

राम का ब्रह्मरूप :—

पहले कहा जा चुका है कि तुलसीदास तक राम के अनेक रूप विकसित हो चुके हैं। एक तरफ श्रेष्ठ ऐतिहासिक पुरुष हैं तो दूसरी तरफ अवतारी तथा तीसरी तरफ वे पूर्ण ब्रह्म दिखाई पड़ते हैं। वेदान्त की पृष्ठभूमि में प्रतिष्ठित भक्ति एवं अवतार भावना के कारण राम परब्रह्म हो गये। उनके औपनिषदिक ब्रह्म की चर्चा तुलसीदास ने

1- अवधविलास, पृ0 172

2- वही, पृ0 154 3- वही, पृ0 167

अनेक स्थानों पर की है। कवि कहता है कि ब्रह्म गर्भ में नहीं आता है, वह तो लीलावश है। अल्पज्ञान के कारण हमें वास्तविकता नहीं हो ज्ञात हो पाती है।

हरि येहि भांति नाहिन कछु आये। गर्भ दिखाइ लोक भरमाये।
अल्पज्ञान नर भेद न पावे। ब्रह्म होइ सोइ गर्भ न आवे।।[1]

जन्म, वृद्धि, रस, विरूप क्षीणता और नाश देह के छः विकार हैं, जो राम में नहीं हैं। उनके सगुन और निर्गुन दो भेद हैं —

अगुन सगुन दोउ रूप हैं हरि के गावत वेद।[2]

ये परब्रह्म राम को कौशल्या पुत्र रूप में देखते हैं —

नारायण पर ब्रह्म जो आही। कौसल्या सुत माने ताही।
ब्रह्मरूप से पुत्र तुम्हारे। ते कस होत हैं पुत्र तुम्हारे।[3]

राम सबमें रमण करने वाले हैं —

सब में रमे रमावे जोई। ताको नाम राम अस होई।[4]

राम ने दशरथ को विराट स्वरूप का दर्शन कराया जिसका सिर आकाश पद पाताल सूर्य चन्द्र दो नेत्र, चार दिशा, चतुर्भुज पर्वत अस्थियाँ और वनस्पतियाँ रोमावलि हैं —

ब्रह्म रूप हैं गर्भ तुम्हारे। सो काहे के पुत्र हमारे।
पांव पताल सीस असमाना। अवर अकथ नहीं परमाना।
चंद सूर दोउ नैन विराजे। चारि भुजा चहुँ दिसि सोउ छाजे।
पर्वत हैं सोइ अस्थि तुम्हारा। वनस्पती रोमावलि वारा।
मास मेदिनी सलिल भवानी। अंतह करन सदा सिव जानी।
नाड़ी नदी बहति थिर नाहीं। नीर प्रस्वेद रहत तन मांही।
अग्नि वचन सोइ आहि अपारा। जग्य होम आहुती अहारा।।
सागर कूप पवन है स्वासा। चौदह लोक अंग है वासा।।[5]

1 से 5 तक — अवधविलास, पृष्ठसंख्या: — 149, 145, 154, 159, तथा 160

कवि ने त्रैलोक्य विभूतियों की स्थिति राम में दिखाई है —

रामहिं जाने ब्रह्म करि एक रंच रह्यो ज्ञान।[1]

काकभुशुण्डि प्रसंग में भी राम को परब्रह्म बतलाया गया है जिसके उदर में ब्रह्माण्ड स्थित है। ऐसा ब्रह्म पूर्ण, अविनाशी सच्चिदानन्द है —

पूरन ब्रह्म राम अविनाशी। नित्यानन्द परम सुखराशी॥[2]

प्रथम दर्शन में जनक उन्हें निर्गुण ब्रह्म का साकार रूप ही समझते हैं। उन्हें देखकर विरागी जनक का मन भी मुग्धाकृत हो गया —

देखत इन्हहिं हरत भवपीरा। परम जोति बैराग न धीरा।

किधौं न अगुन ब्रह्म सुखदाई। परगट मोहि सगुन भए आई॥[3]

चित्रकूट प्रसंग में भी राम को ब्रह्म कहा गया है —

ब्रह्म जीव माया बहुरंगा। इन्ह को सदा अनादि है संगा।

ब्रह्म जीव माया बिच जैसे। राम लखन मधि जानकि तैसे।।[4]

दशरथ

वाल्मीकि से लेकर अद्यावधि राम काव्यों में दशरथ का चरित्र अस्पष्ट, जटिल, अन्तर्विरोधों से युक्त तथा विवादास्पद रहा है। लालदास ने घटनाओं के माध्यम से उनके चारित्रिक गुणों का उद्घाटन किया है। पूर्वकाल में कश्यप ने कठिन तपस्या की थी, जिसके परिणाम स्वरूप त्रेता में राम पिता दशरथ के रूप में उनका जन्म हुआ —

अज घर आइ कश्यप तन धारा। दसरथ नाम प्रगट संसारा॥[5]

दशरथ अत्यन्त तेजस्वी राजा थे। उनका यश चतुर्दिक फैला था।

अज के सुत भये दसरथ राजा। सात समुद्र लगि तेज बिराजा।[6]

1- अवधविलास, पृ0162
2- वही, पृ0 185
3- वही, पृ0233
4- वही, पृ0269
5- वही, पृ0 89
6- वही, पृ0 97

उनकी तीन रानियाँ थीं। हजार वर्ष बीतने पर भी उन्हें पुत्र प्राप्त नहीं हुआ अतः वे पुत्राभाव से पीड़ित रहने लगे –

बरष हजार गये तब जबहीं। चिन्ता बहुत करी नृप तबहीं।[1]

पुत्रेष्टि यज्ञ की महिमा सुनकर सपत्नीक दशरथ वशिष्ठाश्रम गये। विनम्रता पूर्वक उन्होंने गुरू को प्रणाम किया –

राजा देखि बहुत अनुरागे। करे प्रनाम चरन जाइ लागे।[2]

गुरू से पुत्रेष्टि यज्ञ हेतु शृंगी ऋषि के आमन्त्रण का आदेश सुनकर दशरथ स्वयं जाते हैं। वे सुमंत्र से कहते हैं –

कहे राजा सुनु विधि ब्यवहारा। धर्मकाज इह आहि हमारा।

मात पिता गुरू बड़ भ्राता। तपसी साधु देवता जाता।

इन्ह के दरस आपुहि जैये। और ठौर सब दूत पठैये।।[3]

वे रानियों सहित शुभ मुहूर्त में प्रयाण करके मित्र लोमपाद से मंत्रणा करते हैं और सम्मान ऋषि को अयोध्या ले आये। उत्तम मास में विधि-विहित पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पन्न किया तथा भूमि, भोग तथा द्रव्यों से युक्त दक्षिणा ब्राह्मणों को दी –

पूरन जग्य भयो जब जाना। दीन्ह दछिना करि सनमाना।

भूमि भोग बहुते दये द्रब्या। पाइ परे सबके नृप सब्या।[4]

दीन विप्र एवं गौ प्रतिपालक दशरथ को समयपर चार पुत्रों की प्राप्ति हुई। उन्होंने यथाकुल नान्दीमुख एवं जातकर्म किया।

पुत्रजात विधि कीन्ह सनाना। तब नान्दीमुख श्राद्धहि ठाना।

जातकर्म विधिवत सब कीने। देव पितृ पूजा करि लीने।[5]

1- अवधविलास, पृ0 97
2- वही, पृ0 98
3- वही, पृ0 104
4- अवधविलास, पृ0 139
5- वही, पृ0 155

हर्षातिरेक के कारण दशरथ ने दस लाख घोड़े, एक अरब रथ, तथा ग्रामदान किया। वशिष्ठ एवं शृंगी ऋषि को दान देकर सम्मानित किया

धेनुलक्ष दस दीन्ह भुवाला। भूषन वसन सहित संग बाला।
पूजे पुनि रिषि शृंगी सयाने। बहुत जतन करि नृप गृह आने।
वेद उचित पूजे सतोषे। दान मान करि बहु विधि पोषे।
महापुरुष तुम प्रभु हमारे। पुत्र भये सब दीन्ह तुम्हारे॥[1]

बड़े उत्साह से पुत्रों का नाम करण संस्कार कराया गया। पुत्रों की कुशलता के लिए देवालय, जलकुण्डों का निर्माण दशरथ ने कराया —

पुत्र कुशल कुल कीरति काजा। देवालये रचे बहु राजा।
जहँ जहँ तीरथ बाग लगाये। मठ मंदिर जल कुंड बनाये।
महादेव देवी बहु देवा। ठौरि ठौरि थापे करि सेवा।[2]

पुत्र के उज्ज्वल भविष्य की लालसा प्रत्येक पिता में होती है। दशरथ इसके अपवाद नहीं हैं। आगत दुर्वासा मुनि से वे पूछते हैं —

पूछत भूप कहहु मुनि भेवी। देखहु आयु सिसुन्ह की केवी
नाहि कहहु हित सुखदाई। मोरहि हमार वचन सेवकाई।[3]

चारों राजकुमारों के साथ दशरथ भोजन करते हैं। उनकी बाल-क्रीड़ाओं में मग्न रहते हैं। राम से सीधी-टेढ़ी की बात सुनकर दशरथ स्तम्भित हो जाते हैं। वे ऐसे वचन कहते हैं जिसमें एक पिता की मनोव्यथा अन्तर्निहित है —

मत हमार सेवा सुत कीयेहु। वृद्ध भयो वन को मन दीयेहु
मत बिवाह करि पुत बिलपि। करि दिग्विजय राज सुख पायेि।
मत महतारी की भीर सिराये। मत पलेड सों पांव छुवाये॥[4]

1- अवधविलास, पृ0 158 2- अवधविलास, पृ0 162

याचक रूप में आगत विश्वामित्र का स्वागत बड़ी विनम्रता से उन्होंने किया —

बैठे मुनि नृप आदर कीना। पग वंदन करि आसन दीना।
सेवक मोहि जानि मुनि लीजे। आयसु देहु वचन सिर कीजे।[1]

दशरथ का पुत्र प्रेम प्रसिद्ध है। वृद्धावस्था में प्राप्त चारों पुत्र उन्हें अत्यधिक प्रिय हैं। राम तो उनके प्राण ही हैं — वे कहते हैं —

राज पाट सौंपे देउँ जेहीं। मेरे तो जीवन धन एहीं।
राखे निकट सदा रहे पकरी। जैसे होइ अंध की लकरी।
पुत्र न देउँ सहउँ बरु गारी। दैहै शाप लेब हम धारी।
पाये पुत्र बहुत दिन बीते। रिपि हिये जात नहीं ताही ते।
पुत्रसहित मम प्रान पियारे। करौं न राम हिये ते न्यारे।।[2]

विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण भेजते समय जहाँ एक ओर वे पुत्र प्रेम से आप्लावित थे किंकर्तव्यविमूढ़ हो रहे थे, वहीं दूसरी ओर उनका अदम्य वीररस मुखरित हो उठा। पुत्र को शिक्षा दी कि युद्ध में पीठ नहीं दिखानी चाहिए।

पूत युद्ध सनमुख होइ कीजो।[3]

उनके वीर रूप की चर्चा कैकेयी वरदान प्रसंग में भी हुई है? उन्होंने देवासुर संग्राम में देवों की ओर युद्ध लड़ा था, जिसमें उन्हें विजय भी प्राप्त हुई थी। जनक के निमंत्रण को प्राप्त कर उनका पुत्र-प्रेम उमंगित होने लगा। बड़े उत्साह से बरात सजाकर जनकपुर पहुँचे। राम मिलन के समय उनकी स्थिति देखिये —

बिछुरे पुत्र मिले भयो चैना। उमगेउ हिय जल भरि आये नैना।
लिये दोउ कंठ लगाइ निहारी। मनु मनि कनक भाल नृपधारी।[4]

1- अवधविलास, पृ0 223   2- अवधविलास, पृ0 226

3- वही, पृ0 226   4- वही, पृ0 240

विवाहोपरान्त पुत्र-पुत्रवधुओं को देख वह सुखी एवं निश्चिंत हो जाते हैं[1]

पुत्र पतोहू देखि मनमानी। भये निहचिंत नृपति अरु रानी।

अब उनका मन धार्मिक कार्यों की ओर प्रवृत्त होनेलगा –

दान पुण्य व्रत मन सब धरहीं। श्रद्धा सहित धर्म सब करहीं।[2]

इस प्रकार राज्य करते हुए दशरथ काल यापन कर रहे थे कि अचानक दर्पण में अपने श्वेत बालों को देखकर उनमें विराग छा जाने लगा। उनकी धारणा है कि युवावस्था में ही राज रंग शोभा देते हैं। वृद्धावस्था में वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करना चाहिए –

राजजब अपनोमुख पेखा। पके बार दरपन में देखा।

तब वैराग्य भयो मन माहीं। राज्य करत सोभा अब नाहीं।

जब लगि युवा रहत नर कोई। जो कछु करै छजै ताहि सोई।

वृद्धहिं और करब कछु नाहीं। भजन लेबैठे वन माहीं।

जो कछु और करै कुटिलाई। तो सब हँसी ताहि गरियाई।[3]

उन्होंने राम को युवराजबनाकर वन जाने का संकल्प किया। इस सूचना को सुनकर मंथरा ने कैकेयी को उत्तेजित कर राम वनगमन एवं भरत के राज्याभिषेक के लिए तैयार कर लिया। रूष्टा कैकेयी को मनाने दशरथ कोप भवन गये किन्तु कैकेयी के वाग्जाल में फँस कर वर-याचना की बात कह बैठते हैं –

मिनि हठि करहु उठहु नहिं टरिहौं। जोइ तु कहु कहब सोइ करिहौं।[4]

कैकेयी के दारूण वरों को सुनकर उन्हें भविष्य बोध हो गया है अतः उन्होंने वचनों की रक्षा को महत्व दिया।

1- अवधविलास, पृ० 25।

2- वही, पृ० 26।

3- वही, पृ० 263

4- वही, पृ० 263

राखौं बेल कि पूतहिं भाई। बेल जाय तौ सबहिं नसाई।

पूत जाय धन जाय जीव किनि। पुरुष के बोल जाय कबहुं किनि।[1]

दशरथ को इस कृत्य के लिए भारी ग्लानि हुई। वे चतुर, पंडित, राजनीतिज्ञ थे, किन्तु स्त्री से विवश होकर मूर्खतापूर्ण कार्य किया —

अब लौं तो हौं रह्यो सयाने। हरी बुद्धि तिय हाथ बिकाने।

सोइ पंडित सोइ चतुर सयानी। जो स्त्री बस भयो न प्रानी।[2]

वे राम से अपने प्रेम के विषय में कहते हैं कि राम के वन जाने पर वे जीवित नहीं रहेंगे —

यह निश्चय जानहु मन माहीं। तुम बिनु मरब जियब मैं नाहीं।[3]

और राम वियोगी होकर उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये।

इस प्रकार अवधविलास के दशरथ तेजस्वी, राजनीतिज्ञ, नीतिपरायण, अतिथिसत्कार प्रिय, देव-द्विज, दीन, गो रक्षक, बुद्धिमान, वाग्मी, विनम्र दानी उदार, सरल-हृदय, दयालु, धार्मिक, वचन-पालक, पुत्र-प्रेमी और विलासी राजा थे।

जनक

अधिकांश राम कथाओं में जनक का वर्णन केवल विवाह प्रसंग में ही होता है। वाल्मीकि रामायण(बाल।3/21) में वे परम तेजस्वी, धर्मात्मा, श्रेष्ठ पुरुष, सत्य प्रिय दिखाई देते हैं। तुलसीदास ने चित्रकूट सभा में उनकी उपस्थिति तथा अयोध्या के शासन को सुव्यवस्थित करने की बात कर उनके चरित्र-चित्रण में नवीनता लाने का प्रयास किया है। लालदास ने अवधविलास में जनक के चारित्रिक गुणों का विकास इस प्रकार दिखाया है। सोमवंशी जनक ज्ञान के अगाध-सागर थे —

1- अवधविलास. पृ0 263

शोकमंद के बस उजागर। राजा जनक ध्यान के सागर। (अय0 178)

उन्होंने शिव को गुरु बनाकर ज्ञान प्राप्त किया था। शास्त्रार्थ करना उन्हें प्रिय था। विचारों की दृढ़ता के कारण ही सहपाठी रावण का अपमान किया था

रावन जनक परस पर रामा। पढ़त रहे शिव के निज धामा

विद्यावाद होउन्ह मिलि ठना। जनक कीन्ह रावन अपमाना। (अय, 177)

जनक अपने पुरोहित शतानन्द के पास जाकर पुत्राभिलाषा व्यक्त करते हैं। पुत्रेष्टि यज्ञ हेतु भूमिमार्जन किया गया। राजा रानी ने सोने का हल चलाया। वहीं उन्हें सीता की प्राप्ति हुई, जिसे देख जनक उदास हो गये।

राजा मन मनहीं पछितांई। मांगिउ पुत्र कन्यका पाई। (वही, पृ0 179)

शतानन्द ने अपने उपदेशों से राजा का शोक दूर किया। इस प्रकार सीता जनक महल में लालित पालित होने लगी। वयः प्राप्त सीता के विवाह की चिन्ता जनक करने लगे

कन्या भई सयानी जानी। वर चिंता राजा मन आनी। (वही, पृ0 184)

उसी समय नारद आकर उनकी चिन्ता का कारण पूछते हैं। जनक ने मुनि की उचित अर्चना कर और अपनी चिंता का कारण बताया –

सोच करत रह बैठ भुवाला। नारद आइ गये तेहि काला।

करि प्रनाम नृप आसन दीने। जाने रिषि चिन्ता रस भीने। (वही, 184)

नारद से भविष्यवाणी सुनकर विदेह जनक निश्चित हो गये –

जनक छिनक मन चिंत कर बैठे होइ विदेह।

होये है सो होइगो करौ कौनु सदेह। (वही, पृ0 184)

शिव का जनक पर अत्यधिक स्नेह था, जिसके कारण त्रिपुर-विजय के बाद धनुष जनक को दे दिया था जिसे वे समर्पित पूजते थे –

हरहिं जनक ही अति रस रीती। पूजत बहुत भाँति करि प्रीती। (वही, 229)

सीता द्वारा धनुष उठा लेने पर उन्होंने दृढ़ प्रतिज्ञा की कि इसे चढ़ाने वाला ही सीता का पति होगा। विश्वामित्र के आगमन को सुनकर जनक सभासदों सहित उनके पास जाकर अभ्यर्थना की

राजा जनक सुने मुनि आये। सभा सहित दरसन को धाये।[1]

यहीं पर राम के काम विनिंदक सौन्दर्य को देख वीतरागी जनक का ज्ञान तिरोहित होने लगा। उन्हें शंका होने लगी कि उनकी परीक्षा हेतु अगुण, निर्गुण ब्रह्म ही साकार रूप में उपस्थित हो गया है। वे कहते हैं —

देखत इन्हहिं हरत भय धीरा। परम जोति वैराग हीरा।

किधौं ए अगुन ब्रह्म सुखदायी। परखन मोहि सगुन भये आई।

विषय रहित निष्काम निरासी। सदा रहेउ मन ओर उदासी।

नीरस असार असत जग जाना। इन्हहिं देखि अब रति करि माना।[2]

यहीं जनक का विवेक जाग उठा। वे राम को सीता के सर्वथा योग्य पतिरूप में कल्पना करने लगे और उन्हें वैयक्तिक प्रतिज्ञा व्यर्थ प्रतीत होने लगी। धनुष भंग होने पर हर्षित जनक ने पंडितों से लग्न पत्रिका लिखवाकर राम विवाह में सम्मिलित होने के लिए राजा दशरथ को निमंत्रण भेजा। बरातियों का स्वागत सत्कार कर वैदिक एवं लौकिक रीति से कन्या का विवाह सम्पन्न किया। उन्होंने उदारतापूर्वक विवाह यौतुक सजा कर दिया —

दये अर्ब खर्ब धनराशी। दये लाख तीन सय दासी।

दस हजार रथ साजे। दये दस सहस्र गज गाजे।

दये मनिगन नेपा। दये मोती रत्न अनेका॥[3]

1- अवधविलास, पृ० 232

2- वही, पृ० 233

3- वही, पृ० 248

वशिष्ठ :-

वशिष्ठ ब्रह्मा के पुत्र थे। सृष्टि विस्तार हेतु ब्रह्मा ने स्वायम्भुव मनु को राजा बनाया तब उन्होंने वशिष्ठ को पुरोहित बनने का प्रस्ताव किया। त्यागतपस्याजन्य स्वाभिमान के कारण वशिष्ठ पौरोहित्य प्रस्ताव को अस्वीकार कर देते हैं क्योंकि भौतिक सुख साधनों से युक्त विलासी राजा के दोषों का भागी उन्हें भी बनना पड़ेगा —

बोलि वशिष्ठ कहि विधि बानी। होहु पुरोहित मनु के मानी।
कहत वसिष्ठ पुरोहित होई। राज दोष भागी होइ सोई।।[1]

विष्णु ने वशिष्ठ को समझाया कि उन्हें किसी भी प्रकार का दोष नहीं लगेगा। जिस प्रकार सूर्य सभी रसों को खींच लेता है, अग्नि सभी स्वादों को समाहित कर लेती है, वायु जल का शोषण कर लेता है उसी प्रकार ब्रह्मज्ञानी भी सभी को अपने में अन्तर्भुक्त कर लेता है अतः हरि भक्त, ब्रह्मज्ञानी, निर्लिप्त वशिष्ठ कर्मबन्धन से मुक्त रहेंगे।

कर्म अकर्मन बन्धन मुक्ता। तुम निष्कर्म सदा मन युक्ता।[2]

अयोध्या नरेश इक्ष्वाकु ने एक नदी की कामना की, जिसकी पूर्ति के लिए वशिष्ठ ध्यान लगाकर ब्रह्म लोक गये। पितृ वैभव देखकर वे हर्षित हो उठे। ब्रह्मा ने उनके आगमन का कारण पूछा। तब ब्रह्म कमण्डल से सरयू की उत्पत्ति हुई जो मानसरोवर में विलीन हो गयी। हरिभक्त वशिष्ठ विष्णुलोक गये —

तहाँ मुनि गये बहुत अनमाना। देखत प्रभु परम भगवाना।
जाइ वशिष्ठ द्वार भये ठाढ़े। दरसन काज प्रेम अति बाढ़े।[3]

वशिष्ठ को वहाँ की रीति-नीतियाँ भली प्रकार ज्ञात हैं —

1- अमर विलास, पृ0 17

2- वही, पृ0 18

3- वही, पृ0 34

सुनि बैठे वे राजदुआरा। समय होइ जबहि व्यौहारा।

औसर अन औसर नहि जाने। हित अनहित नाहिन पहिचाने।

समय समुझि बोले नहि बानी। ताहि सदा मूरख करि जानी।[1]

विष्णु के आदेशानुसार उन्होंने मानस सरोवर से सरयू निकाल कर अयोध्या लाये। ब्रह्मनिष्ठ वशिष्ठ के तपस्या का प्रभाव उनके आश्रम के चतुर्दिक दिखायी पड़ता था। उनकी तपस्या के कारण जीवन जन्तु अपना वैरभाव भुला बैठे थे –

मुनि तप तेज जीव सब हरषीं। अठन वर्ग परस्पर लरहीं।[2]

उनके आश्रम में सदैव वेद-पाठ होता रहता है। स्मृति व्याकरण, पुराण, अस्त्र-शस्त्र संचालन की विधिवत शिक्षा वे ब्रह्मचारियों को देते रहते हैं। राजा दशरथ के आने पर उन्होंने उनकी कुशलता पूछी। गुरु पुरोहित वशिष्ठ अपने राजा का सदैव हित चिन्तन किया है। पुत्रेष्टि यज्ञ के लिए उन्होंने शृंगी ऋषि आनयन का परामर्श दिया। यज्ञ-पुरुष से प्राप्त पायस को वशिष्ठ ने राजा दशरथ को दिया। वशिष्ठ की सहृदयता, उदारता का वर्णन लालदास ने किया है। विश्वामित्र उनसे द्वेषभाव रखते थे उनका भारी अहित किया था किन्तु उदार वशिष्ठ ने विश्वामित्र के उग्र तप को देख उन्हें राजर्षि कहा था –

ताहि वशिष्ठ राजरिषि भाषा। (अवधविलास, पृ0 142)

राजाधिराज पुत्रों के जन्म होने पर वशिष्ठ ने कुल एवं वेदोक्त विधियों से जातकर्म एवं नान्दीमुख श्राद्ध करवाया तथा बालकों के गुणों का पूर्वाभास कर यथानुकूल नामकरण किया। राम आदि चारों राजकुमारों के व्रत बंध कराकर वशिष्ठ ने उन्हें यजु, ऋग, साम वेदविद्या तथा राजनीति के रहस्य सिखाये थे।

करि व्रत बंध जनेऊ दीना। विद्या वेद पढ़ावन लीना।

यजु ऋग   साम सिखावा। राजनीति बहुभांति सिखावा।[3]

1- अवधविलास, पृ0 34   2- वही, पृ0 97   3- वही, पृ0 189

वीतरागी राम वशिष्ठ गुरु के पास जाकर अष्टांग योग की शिक्षा ग्रहण करते हैं। विश्वामित्र की याचना के समय वशिष्ठ दशरथ को प्रबोध देकर राम लक्ष्मण भेजने के लिए उन्हें तैयार करते हैं। इसी प्रकार राम लक्ष्मण सीता के वनगमन के समय वे शोकाकुल राजपरिवार एवं नरनारियों को धैर्य बँधाते हैं।

विश्वामित्र

यदि वशिष्ठ राम के कुल गुरु थे, तो विश्वामित्र उनके दीक्षा गुरु थे। विश्वामित्र क्षत्रिय राजा थे। नन्दिनी की लालसा ने उन्हें वशिष्ठ का द्वेषी बना दिया किन्तु ब्रह्म तेज के समक्ष क्षात्र तेज टिक नहीं सका अतः विश्वामित्र तपस्वी बन गये और उनकी संकल्पशक्ति तथा कठोर तपस्या से प्रभावित होकर वशिष्ठ ने उन्हें राजर्षि पद पे मूर्धाभिषिक्त किया।

विश्वामित्र राज रिषि आये। तप बल करि रिषि ब्रह्म कहाये।'[1]

विश्वामित्र में तपस्याजन्य असीम शक्ति थी। दशरथ कहते हैं —

जौ तुम मुनि मन में कछु धरहू। होइ सोइ समरथ सब करहू।[2]

जब भूतकाल में उनके द्वारा आयोजित यज्ञ में देवता नहीं आये, तब उन्होंने अपनी अपूर्व तपस्या शक्ति से नूतन सृष्टि की रचना की थी —

लागे सृष्टि करन तुम जबहीं। होन लगी जानत सब तबहीं।
कुपित होइ नई सृष्टि बनाई। देवन्ह तबहि मनी लिये आई।[3]

अपनी तपस्या के बल पर ही उन्होंने त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग भेज दिया था।

विश्वामित्र जग्य करवाये। देह सहित नृप स्वर्ग पठाये।[4]

1- अवधविलास, पृ0 142
2- अवधविलास, पृ0 24।
3- वही, पृ0 24।
4- वही, पृ0 14।

राक्षसों द्वारा अत्यधिक उत्पात, यज्ञ-विध्वंस, ऋषि-मुनि-संहार से बचने का उपाय दूरदर्शी एवं चिन्तक विश्वामित्र ने अविलम्ब खोज लिया था। राम ही इन कष्टों का नाश कर सकते हैं अतः याचक बनकर अयोध्या जाते हैं। दशरथ उनके निष्काम कर्मयोगी वाले व्यक्तित्व से भलीभांति परिचित हैं अतः उनका आगमन साभिप्राय ही होगा।

बोले नृप मुनि तुम निष्कामी। आये केहि कारण कहो स्वामी।
रहित प्रपंच ममता नहिं माया। विषयभोग तजि तप मन भाया।"[1]

वाग्मी एवं श्रेष्ठ वक्ता विश्वामित्र यह भली भांति जानते हैं कि दशरथ से अचानक राम लक्ष्मण की याचना अनुकूल नहीं है अतः उन्होंने नृप-धर्म वैशिष्ट्य प्रतिपादित किया। वेनु, बलि, हरिश्चन्द्र की कथा का उल्लेख कर उन्होंने अपनी मांग उपस्थित की क्योंकि वे मन के गूढ़ भावों को जानने वाले हैं। वृद्धावस्था में प्राप्त पुत्रों के प्रति ममत्व, अतिशय अनुरक्ति उन्हें विदित है- वे कहते हैं —

कहै रिषिराज भूप समुझाई। राजनीति की कथा चलाई।
निर्बल को बल कहियत राजा। बालक के बल रुदनहिं राजा।
× × × ×
धर्म अधर्म भावना जैसी। राजा जथा प्रजा होइहै तैसी।
× × × ×
रघु हरचंद वेनु नृप आदी। दानि सूर भये सत्यवादी।
× × × ×
ताते तुमहु नृपति जस लेहू। राम लखन दोउ बालक देहू।[2]
अ प्रिय मिलि डरहु करब नहिं जोगी। देबै आनि अधिक करि भोगी।

अपनी वक्तृत्व शक्ति से उन्होंने वशिष्ठ को भी प्रभावित कर लिया अतः उन्होंने दशरथ को परामर्श दिया कि इस संबंध में वशिष्ठ की भी अनुमति लेनी चाहिए।

1- अवधविलास, पृ0 223 2- अवधविलास, पृ0 224-25

मुनि कहै मन एक अब कीजै। गुरु तुम्हार कहे ते दीजै।[1]

राम के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का दिशा-निर्देश विश्वामित्र ने ही किया है।

रावण

लालदास की विशिष्ट कथा में रावण का कोई महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं है।क्योंकि साम्प्रदायिक मान्यता की दृष्टि से सीताहरण माया के खेल हैं फिर भी अवतारवाद की विशिष्ट योजना के कारण रावण के पूर्वजन्म एवं उसके अत्याचारों का वर्णन अवधविलास में है तथा अन्त में विवरणात्मक ढंग से सीताहरण, रावणवध की घटना का उल्लेख प्राप्त होता है।

रावण के पूर्वजन्म की कथाओं में जय-विजय की कथा का उल्लेख हुआ है जो विष्णु के द्वारपाल थे जिन्हें सनकादि ऋषियों ने राक्षस बनने का शाप दिया था। उसके माता-पिता की भी कथा अवधविलास में वर्णित है। तृणबिन्दु की कन्या को ऋषि पुलस्त्य ने ध्यान भंग के कारण गर्भवती होने का शाप दिया। उसके पिता ने कन्या का विवाह ऋषि से कर दिया, जिससे विश्रवा का जन्म हुआ। भरद्वाज की कन्या एवं विश्रवा से कुबेर की उत्पत्ति हुई। बड़े होकर कुबेर ने मय राक्षस को पराजित कर भगाया, सुमाली एवं केशी कन्याएँ पिता की सेवा में भेज दीं, जिससे खरदूषण, त्रिशिरा, शूर्पणखा, विभीषण, त्रिजटा, रावण एवं कुम्भकर्ण पैदा हुए। एक अन्य कथा भी रावण उत्पत्ति के प्रसंग में उल्लिखित है।कैकसी ने संध्या समय पति से रति की याचना की जिसका परिणाम रावण था। रावण के जन्म के समय अनेक अनिष्ट एवं उपद्रव हुए।

रावण के भयानक रूप का वर्णन लालदास ने किया है—

---

1. अवधविलास, पृ0 226

स्याम सरीर भयानक बानी। चितवनि क्रूर लगे डरवानी।

बीस भुजा दस सीसहिं जैहो। जो रावन के सिर पर पैहो।[1]

रावण जन्म से ही धर्मद्रोही था। वह यज्ञभूमि में पहुँच कर अग्नि में पानी डालता था। विप्रों द्वारा रोष लेने पर उनके तिलक एवं यज्ञोपवीत नष्ट कर डालता था।

होम कुंड देखत तहाँ जाई। पानी तहाँ देत ढरकाई।

कनियाँ विप्र लेइ कहुँ कोऊ। तोरे तिलक मिटाइ जनेऊ।।[2]

तुलसी नष्ट करना, ग्रन्थ फाड़ना, शंख-घंटा तोड़ देना, पूजा समय पत्थर एवं धूल फेंकना द्वारा में आये योगियों के पीछे कुत्ते दौड़ाना उसके प्रिय कार्य थे —

तुलसी मूल खनन नहिं पावै। तोरि-तार धनि कोउ बजावै।

पोथी ग्रंथ घरे कहुँ आई। डारे फारि तोरि अधिराई।

घर घर फिरैं रिपुन्ह के चोरे। घण्टा संख देवता फोरै।

पूजा होम जो करत निहारे। मारे धूरि ईंट पटकारे।

बालक संग साधु सुजाता। मारे तिन्हें करे उतपाता।

जोगी जती द्वार कोउ आवै। खेदै तिन्हहि स्वान संग लावै।[3]

रावण राम का जन्मजात विरोधी है।

जो कोउ राम नाम गुन गावै। मुख टेढ़े करि ताहि खिरावै।[4]

उद्दण्ड रावण ने अपने नाना-नानी के विषय में माता से पूछा। कैकसी ने कुबेर के वैभव को देखकर रावण से सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया। दुःखी माता की बात सुनकर रावण क्रोधाविष्ट होकर कहने लगा —

रावन हाथ मूँछ पर फेरा। देखहु मात ख्यात अब मेरा।

एक लंक की कौन बड़ाई। तीन लोक जो राज्य न पाई।

1- अवधविलास, पृ0 49   2- वही, पृ0 48   3- वही, पृ0 48
4- वही, पृ0 49

सब संसार करो अब मेरो। तै मोहि जानि दूध पियो तेरो।[1]

मातृभक्त रावण को समझाया गया कि सूर्य तपस्या से ही प्रचण्ड शक्तिमान होकर संसार को तप्त करता है, ब्रह्मा में सृष्टि रचना का सामर्थ्य है, इन्द्र स्वर्ग का अधिकारी बना बैठा है, अतः तपस्या से ही शक्ति प्राप्त कर असम्भव कार्य किये जा सकते हैं। विनयशील रावण भ्रात सहित उग्र तपलीन हो गये —

तपते और उपाउ न आहै। तपते होइ किये कछु चाहै।
दृढ़ निश्चय करि तीनेउ भाई। चले करन तप ही मन आई।
रावण जाइ किये तप दारुन। राज होन त्रिलोकहि कारन।[2]

तपस्वी रावण ने अपने मस्तकों को सहर्ष अर्पित कर दिया —

रहे उग्र तप कीन्ह जहाँ लौं। सीस होम क्ये कहौं कहाँ लौं।
कोटि बेर दस सीस चढ़ाये। सोइ दस सीस आपने पाये।[3]

इस उग्र तपस्या के कारण ब्रह्मा एवं महादेव से उसे अद्भुत वर प्राप्त हुए। रावण की प्रचण्ड शक्ति की ख्याति सुनकर सुमाली ने उसे उत्तेजित किया। उसने अपनी सेना एकत्रित करके अनेक राजाओं को विजित किया —

रावन सुन नाना की बानी। बोलेउ हरषि सबै मनमानी।
जे जे तुम कहिहौ कछु काजा। करि है हम सेवक तुम राजा।
इहि कहि रावन कीन्ह चढ़ाई। देस देस नृप जीते जाई।[4]

इस दिग्विजय अभियान में रावण का अपमान चार स्थानों पर हुआ। वह नारद के कथन पर आचरण करने के लिए यमपुरी गया।

रावण जाइ नगहि जम घेरा। लिये सब असुर कोट चहुँ फेरा।
आयो महाबली सुनि रावन। भये भये जम लोक परावन।
मारे दूत भूतगन घेरे। नरक उजाड़ दए बहुतेरे।[5]

राज्य लोभी रावण ने कुबेर से लंका छीन कर स्वयं सम्राट बन गया और उसने चौंसठ युग राज्य किया —

देव दनुज कोउ बरो न जाना। नर बानर मन माहिं नहिं आना।
लंका पति रावन भयो राजा। चौसठि जुग लगि राज विराजा।[1]

रावण स्वभावतः शिव-भक्त था। उसने शंकर को प्रसन्न करने के लिए अपने शिर अर्पित किये थे। महादेव से प्राप्त वरों के कारण वह जल वायु, अग्नि, चन्द्र-सूर इत्यादि शक्तियों को अपना सेवक बना लिया और उसका वैर विष्णु से बढ़ने लगा —

जोग जग्य जप तप सब हरई। हरि के द्रोह होइ सोइ करई।
पानी पवन अगनि सब नाथे। चंद सूर सेवक करि राखे।
इन्द्रादिक जु देवता जेते। बल करि बाँधि कीन्ह सब ते ते।[2]

शक्ति सम्पन्न रावण मदान्ध एवं अहंकारी हो गया। राहु केतु शनि उसके चौकीदार बन गये। उसके ब्रह्मा पितामह एवं शंकर इष्टदेव हैं। यह विष्णु उसका कौन है?

रावन घर राखे रखवारा। राहु केतु शनि चौकीदारा।
ब्रह्मा अजा जानि नियारे। रुद्र देवता इष्ट हमारे।
सिर पर बैठि रह्यो है जोई। यह विष्नु हमार कहो के होई।
अति अहंकार बढ़ेउ मन माहीं। सो रावन कछु जानत नाहीं।[3]

रावण का विशाल परिवार था, जिसमें पुत्र पौत्र, कुटुम्ब-जन तथा अन्य संबंधी शामिल हैं। ऐसे परिवार का मुखिया रावण विष्णु के पूर्वकृत कार्यों का स्मरण द्वेषभावना करने लगा। उसकी कामना एक बार विष्णु से द्वन्द्व-युद्ध करने की है —

1- ज्ञानविलास, पृ० 51

2- वही, पृ० 51

3- वही, पृ० 52

अब तो रहा एक बैकुंठ। राज छोड़ फुनि कहा बैठा।

× × ×

ठाकुर बिष्नु कहत सुनि पाऊँ ताहि मारि मैं खाक मिलाऊँ॥

मारे मिले असुर नहिं छोई। रहे गरीब बापुरे कोई।

है कोउ ताहि जाइ समुझावै। मारे जाइ कि धरि लै आवै।

तजि बैकुंठ मिले मोहि आई। कै सनमुख होइ करै लराई॥

तीन लोक मांहि जो रह्यो चाहै। सो मेरी आज्ञा निरबाहै।

जो सब मारि करौं मन भायो। तो रावन केकसि को जायो।

चारि भुजा कहुँ ते करि आनी। मोरी बीस भुजा नहिं जानी।

देखौ एक बेर कहुँ नेरे। तौ चित चैन होइ जिय मेरे।[1]

विष्णु से भेंट करने के लिए उसके साथियों ने परामर्श दिया कि गो, विप्र, धेनु वेदमार्ग नष्ट करने पर निश्चय ही इनकी रक्षा हेतु आयेगा। लालदास ने रावण की विद्वत्ता का परिचय दिया है, कि उसने परशुराम से विद्या प्राप्त की थी और जनक से उसकी लड़ाई होता था।

अपनी अकर्मण्यता के कारण वह अपना प्रभुत्व ऋषि-मुनियों पर दिखाना चाहता था, अतः उसने कर रूप में उनसे रक्त लिया —

रावन दंड सबन्ह को डाँडि। देव असुर नर कोउ न छाँड़े।[2]

रावण मंदोदरी को अक्षत यौवना जानकर तपस्वियों से उसे माँग लिया। धनुर्भंग प्रसंग में उसने भी धनुष उठाने का प्रयास किया था किन्तु असफल रहा। अन्त में शूर्पणखा से प्रेरित होकर उसने सीताहरण का दुष्कृत्य किया, जिसका परिणाम अति घातक भयंकर रहा। राम ने उसका समूलोच्छेद कर डाला।

1- अवधविलास, पृ० 53

2- वही, पृ० 174

पूर्वजन्म की अदिति इस जन्म में कोशल नरेश की कन्या बनी जो अति सुशील सर्वगुण सम्पन्न सुन्दरी थी, जिसके रूप की समता देव, दनुज, मानव कन्याओं में नहीं दिखायी पड़ती थी –

नृप कोशल्य कुशल शुभ चारी। तहाँ अदिति भई राजकुमारी।

अति सुशील सुन्दरि पिक बैनी। शुभ लक्षन पूरन सुख दैनी

देव दनुज मानुष की कन्या ता सम और नहीं कोउ धन्या।

नृप दसरथ पद कीन्ह बिवाही। नाम तासु कौशल्या आही।[1]

वह पुत्राभाव से पीड़ित थी। पति दशरथ के साथ गुरु वशिष्ठ के पास जाती हैं। कौशल्या विनम्रता की साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं। पूज्य का अभिवादन उसे संस्कार रूप में प्राप्त है। गुरु पत्नी अरुन्धती के पास जाकर उन्होंने प्रणाम किया –

रानी गई जहाँ गुरुपत्नि। पूँछी कुशल लगी जाइ पाँइनि।[2]

प्रयाग जाने की बात सुनकर उनका पुत्री-प्रेम छलकने लगा –

कौशल्या के भयो अनंदा। देखिहौं जाइ सुता मुख चंदा।

उमगेउ हृदय सुता सुधि आई। चलेउ नीर नहिं नैन समाई।[3]

पुत्री के प्रति उनकी अत्यधिक उत्सुकता का यह कारण था कि अद्वितीय सुन्दरी कन्या को बाल्यावस्था में ही बाहर रहना पड़ा था –

अबहीं भई होइ दस साला। जनमहिं रही रूप की माला।

बालक ही दई दीन्ह कराई। सेवा जतन करे नहिं पाई।[4]

1- अवधविलास, पृ0 89 2- अवधविलास, 100, 3- अवधविलास, पृ0 104

4- वही, पृ0 105

पुत्री को देख उसे हृदय से लगा लिया और उसे अनेकों रत्न देकर सम्मानित किया।

कौशल्य की दो सपत्नी थीं किन्तु उनमें सापत्न्य भाव लेश मात्र नहीं था। वह कैकेयी एवं सुमित्रा को प्रेम भव से देखती थी। पुत्रेष्टि यज्ञ में प्राप्त पायस को वह सहर्ष सुमित्रा को भी दे देती है। साक्षात् नारायण ही उनके गर्भ में आये। चतुर्भुज रूप में प्रगट हरि कौशल्या के ~~आग्रह~~ आग्रह से बाल रूप में प्रगट हुए। उनका मातृत्व सफल हुआ —

सुंदर बाल देखि मन भाये। हृदय लगाय पयोधर प्याये।
फेरि-फेरि मुख चुंबति माता। तब ही तपनि बुझावति गाता।[1]

हृदय का उल्लास छलक-छलक पड़ता है। कौशल्या ने गुरु-पत्नी एवं पुरोहित वशिष्ठ को बुलाकर वस्त्र आभूषणों से सम्मानित किया —

पतिनिह सहित पुरोहित माना। कौसल्या पूजे कर दाना।
आभूषण दीये मन भाये। विविध बसन पहिराय पठाये।[2]

अब कौशल्या का सारा समय राम के लालन-पालन में लगने लगा। वे उबटन, तेल, काजल, करती उसे पय-पान कराती। उनकी चिन्ता के अनेक उदाहरण अवध-विलास में वर्णित है। राम बड़े हो गये। वे बाहर खेलने जाने लगे। माता के प्यार से उनका पुत्र इतना कमनीय है कि योगी उसे पकड़कर अपना शिष्य बना लेंगे। कहीं यवन तुर्क छुरी से राम के कान न काट ले। बाग के बन्दर राम को काट न लें। पुत्र विषयक दुःख कथा में अशुभ की कल्पना कितनी स्वाभाविक है। मातृ मनोविज्ञान की यही विशेषता का उल्लेख लालदास ने किया है —

गइया चकति लेति हिये लाई। महलनि मांहि खेलहु चलि भाई।
बाहर जात करत हठु खेला। जोगिया धरि करिहैं पुनि चेला।।

1- अवधविलास, पृ० 154
2- वही, पृ० 158

बगिया मैं डेरा है आये। तरिवन्ह के फरत मुंह नाये।

डारन्ह छुरी तुरुक हथियारे। कटिहै धान जाहु जिनि दुवारे।[1]

वे पुत्र की लालसा के अनुरूप भोजन बनाकर अपने को सार्थक करती है —

पुनि पूछत कैसो कछु पूत। अनु कहाँ रहे केर बहूत।

छित सौं सुत बैठति लै कोरा। मात खिलावति करति निहोरा।[2]

राम के तीर्थाटन की सूचना पाकर कौशल्या स्तम्भित रह जाती है। इतनी वृद्धावस्था में तो पुत्र प्राप्त हुआ, और वह भी सन्यस्त होने वाला है, फिर माता का सहारा कौन बनेगा? बिना पुत्र के क्या वह जीवित रह पायेगी?

इहि जब बात मात सुनि पाई। धावत हरत राम पहिं आई।

सुंदर बदन निहारि निहारी। भरि भरि नैन कहति महतारी।

कब अस ध्यान कहाँ ते पायो। जिनि मोहि पत पूत बरजायो।

जौ तू पुत्र छाँडि मोहि जइब। तौ का जियत आइ पुनि पाइब।

का अब मोहि देत दुख भइया। जीवत हौं मुख देखति नहिया।

इक तो दई दीन्ह दुख आहिहीं। बिना पुत्र बिन कछु भये बाहिहीं।

मोहि पाइ हौं भई सनाथा। अब कहा फिरि कियो बहुत अनाथा।[3]

दूसरी ओर, विनम्र कौशल्या उस समय विक्षुब्ध हो उठती है, जब विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण जाने लगते हैं। वह पति की मर्यादा भुला देती है —

सुने जग्य रक्षा के काजा। राम लखन रिषि को दये राजा।

रानी आइ कही कुवि बाता। बूढ़ भये बुधि हरी बिधाता।[4]

माँ से अधिक पुत्र की चिन्ता करने वाला और कौन हो सकता है? विश्वामित्र के साथ राम कहाँ रहेंगे? वे क्या खायेंगे? वे कहाँ सोयेंगे? राम ने कभी माँग कर नहीं खाया।

1- अवधविलास, पृ0 187   2- अवधविलास, पृ0 187

3- वही, पृ0 203-4   4- वही, पृ0 226

मेरे पुत्र के उबटन, तेल, गर्म जल की कौन व्यवस्था करेगा?

कौने भांति खाइ कहाँ रहिहै। सब सालन अब को करि देहै।

पौढ़िहैं कहाँ भूमि निवरोरे। कहते फूल गड़त हैं मोरे।

भामिन लीन्ह कबहुँ सकुचाते। हौं ही देति तबहिं कछु खाते।

उबटन तेल तपत जल धारिहै। तहाँ को जतन पूत के करिहै।[1]

अब रावण एवं युद्ध की बात सुनकर कौशल्या और अधिक विह्वल हो जाती हैं। पुत्र चाहे जितना बड़ा हो जाये, माता की दृष्टि में वह छोटा, सुकुमार एवं भोला ही रहता है। वे सुमंत्र को बुलाकर राम के साथ सेना भेजने के लिए कहती हैं। दुःख के बाद हर्ष का अवसर आता है। धनुर्भंग के बाद सीता-विवाह के आमंत्रण को सुनकर माता आनन्दित हो उठी। पूर्वकाल का वियोगजनित दुख विस्मृत हो गया —

पूत बिवाह सुनत सुख मानी। हरषि उठी कौशल्या रानी।

पुत्र-वधुओं के आने पर कौशल्या सास बनी। उन्होंने लोक रीत्यनुसार वधुओं का स्वागत किया। कौशल्या के हर्ष का पार नहीं था किन्तु यह आनन्द स्थायी नहीं रहा। राम वन-गमन का दारुण समाचार सुनना पड़ा। कौशल्या राम को रोकना चाहती थी, किन्तु वह सम्भव नहीं हुआ। अन्त में कौशल्या को वैधव्य दुख भी सहन करना पड़ा। इस प्रकार अवध विलास की कौशल्या पत्नी, सपत्नी, विमाता, सास, राजमहिषी और राजमाता के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

कैकेयी

कैकय नरेश की कन्या कैकेयी का विवाह दशरथ से हुआ था। वह अद्वितीय सुंदरी थी। उसके रूप-सौन्दर्य की चर्चा अवधविलास में हुई है। सापत्न्य-भाव

1- अवधविलास, पृ0 240

का उसमें ऐसा भाव नहीं था। पुत्रेष्टियज्ञ से प्राप्त पायस को सुमित्रा के आग्रह पर वह बाँट देती है। समयानुसार कैकेयी के भरत पुत्र उत्पन्न हुआ जिसकी सेवा में कैकेयी मग्न रहने लगी।

सरलहृदया कैकेयी अपने पुत्र भरत से अधिक राम पर स्नेह रखती थी। वन-गमन के कारणों की खोज में उदास बैठे राम को वह आश्चर्यचकित करना चाहती थी। उसने पीछे से जाकर राम के नेत्र मूँद लिये —

बैठे राम देखि रुचि बाढ़ी। नैन मूँद पीछे रही ठाढ़ी।[1]

राम के औदासीन्यभाव से विचलित होकर कैकेयी उनके हृदयस्थ रहस्यों को जानना चाहती है। उसकी दृष्टि में तो सब संसार स्वार्थमय है। मात ही इसका अपवाद होती है —

बोली मात उदास निहोरे। राम भरत ते अधिक पियारे।
कहु आजु अनमने याहे। काहू तुम्हें कह्यो कछु आहे।
मात सबै जीव जग माहीं। आपु स्वारथी परहित नाहीं।
जो परहित उपकार होइ आवै। तो परलोक बहुत सुख पावै।
× × × × ×
तुमको दुख कहो कौन गुसाईं। भये उदास कहूँ सुनि पाई।[2]

राम ने कैकेयी के समक्ष रावण सहित असुर संहार की बात रखी। कैकेयी राम की प्रसन्नता के लिए कोई भी कार्य आँख मूँद कर सकती है। उसे संसार में किसी अपयश की भी चिन्ता नहीं है।

कैकई कहै अजस नाहिं डरिये। तुम संतुष्ट होइ सोइ करिये।
लाल अजस डर छाड़ि के पुत्र भगत जे तोहि।
ते सब निरभय होत हैं लाल भरोसा मोहि।।[3]

1- अवधविलास, पृ० 259
2- वही, पृ० 259-60
3- वही, पृ०260

कैकेयी की सरलता और निश्छलता का ज्ञान मंथरा को भी है। राम के राज्याभिषेक की सूचना सुनकर जब वह दासियों के साथ कैकेयी महल में पहुँचती है, तब कैकेयी के उत्साहपूर्वक सामग्री चयन करते देखा।

रानिहु जान सुध मन आई। तौंहि ते कुबरी तहाँ आई।

हरष देखि वहु और रिसानी।[1]

मंथरा ने धीरे-धीरे कैकेयी के मन में विद्वेष के बीजारोपण किया। उसने बताया कि उसका बड़प्पन आज तक ही रहेगा। कल से कौशल्या का गर्व उसे सहन करना होगा। भरत राम पर आश्रित रहेंगे। रूप-गुण-सम्पन्ना कैकेयी किससे कम है? वह सबको अपने समान छल रहित मानती है –

भूलि रही ऊपरि की माया। भीतर कर ते मरम न पाया।

काहे तू घटि कहु महरानी।

रूप निधान तियनि मैं सीवा। गुन लच्छन पूरन सब जीवा।

× × × ×

देख्यो नहिन चरित्र तियनि को। अपनों सो जिय जानति सबनि को।[2]

इस प्रकार कौशल्या के उदय, भरत की पराधीनता एवं अपने अपमान की बात से कुपित कैकेयी कोप भवन चली जाती है। अब वह भरत के पक्ष के लिए तर्कों की खोज करती है तथा पूर्व व्यवहार पर आश्चर्य करती है —

अब या अधिक राम मनमाने। हमरे पूत आन के जाने।

छोटेउ बड़ेहि मानियत मान्ये। एकहि दिवस घरी के जाये।

यह अब कहि कहि छलत है मोही। मेरो प्रान प्रान है तोही।[3]

1- अवधविलास पृ० 262
2- वही, पृ० 262
3- वही, पृ० 262

उसे मंथरा अपनी सर्वस्व, हितकारिणी लगी। कपट की प्रीति ऐसे अवसरों पर खुल जाती है। उसे तो राजा दशरथ पर सर्वाधिक क्रोध है। वह कहती है —

राजा भये मनभावन रानी। बिगरै सब केकई रिसानी।

मिलि कछु कहो कहो मिलि हाथा। राजा करो पूत रघुनाथा।

अपने व्यंग्य वचनों एवं वाग्जाल से दशरथ को आकृष्ट कर लेती है। उसे मनाने से क्या होगा, अन्त में राज्य तो राम ही को मिलेगा। अन्त में दशरथ के द्वारा दिये गये दो सुरक्षित वरों से भरत को राज्य एवं राम को वनवास माँग लेती है। इन वरों के परिणामकी भयंकरता का उसे बोध नहीं रहा जिसका परिणाम उसे वैधव्य दुख सहन करना पड़ा। यद्यपि कैकेयी ने पूर्वकाल में अपनी सेवा, कर्तव्य, एवं प्रत्युत्पन्नमतित्व से युद्ध के समय तथा [illegible] के समय दशरथ के प्राणों की रक्षा की थी, किन्तु आज कैकेयी के दुराग्रह के कारण दशरथ को प्राण गँवाने पड़े।

सीता

अवध विलास की सीता पूर्वकाल की लक्ष्मी है, जो विष्णु के राम रूप में अवतरित होने के कारण सखियों के परामर्श से सीता रूप में अवतरित हुई है। रावण कन्या(सीता) को मंजूषा में रखकर समुद्र में प्रवाहित कर दिया था, जो दैववशात् तिरहुत नरेश की भूमि में विलीन हो गया था। जब सन्तानहीन जनक ने शतानन्द के परामर्श अनुसार यज्ञभूमि साफ करने के लिए हल चलाया, तभी सीता का प्राकट्य हुआ —

कन्या एक रही ता माँही। जा सम रूप अपर कोउ नाहीं।

हलमुख मिल प्रगट भई सोई। सीता नाम कहो सब कोई॥[1]

जनक गृह में पालित-पोषित सीता का सौन्दर्य क्षण-क्षण परिवर्तित होने लगा। वह चन्द्रकला के समान बढ़ने लगी —

1- अवधविलास, पृ0 179

बालक बढ़त एक दिन जाहीं। सीता बढ़त घरी इक माहीं।

जनु छवि बढ़त होत सुखदाई। जैसे चन्द्रकला अधिकाई।

रूप सील गुन लाज सुअंग। जनु दिन बढ़त ब्याज धन संग॥[1]

लाल कवि ने सीता सौंदर्य का निरूपण नख-शिख पद्धति पर किया है –

सिय मुख चन्द्र उदय तेहि ठौरा। सबहि सियनि के नैन चकोरा।

मुख पर अलक कलित छवि छलक। जनु ससि पर खेलत अहि सावक।

गोर अंग कछु सिटि अस कीना। चम्पक कंचन लगत मलीना।

कटि अस सुघट सुदेस कुमारी। जनु विधि निज कर संचय ढारी।

कर पल्लव पर नख अस राजे। कमल दलनि नग मनि प्रभ्राजे।

कोमल चरन लाल रंग भीने। नाऊ नाउन कबहुँ न जावक दीने।

नैन विसाल सहज कजरारे। काजर कबहुँ न देत निहारे।

कदली अर्भ-कर्भ की शोभा। बिनु मंजन रंजन तन सोभा।

कोमल मधुर बचन सुखदाई। कोकिल रीझि सुनत मन लाई॥[2]

इस प्रकार की अनुपमा सीता सखियों, समवयस्काओं के साथ गुड्डा-गुड़ियों का खेल खेलती थीं-

बिना विद्या के रूप व्यर्थ है, यह सोचकर जनक उन्हें गुरु के पास विद्या-अर्जन हेतु भेजने लगे। वहाँ सीता ने वेद, षडंग, पिंगल, काव्य का अध्ययन किया –

जो सिखि देत सोइ पढ़ि लेहीं। गुरु कहँ कहुँ अवकास न देहीं।

पाठ फेरि पूछन की नाहीं। विद्याधरी किये सब माहीं।

वेद चारि षट अंग विचारा। पिंगल काव्य पुरानहु धारा।

सीता पढ़ी बहुत मन माना। × × ×

विद्या पढ़ेउ चारि दस जानी। चौंसठ कला भेद लिये जानी।[3]

1- अवधविलास, पृ0 182 2- अवधविलास, पृ0 182

3- वही, पृ0 183-84

समय पर सीता के शरीर में यौवनागम हुआ। लालदास संक्षेप में उनके यौवनजनित सौंदर्य का वर्णन करते हैं —

जोबन के आगम बदन फिरे बरन गति चाल।
जैसे अंबर रवि उदय भई लालिमा लाल॥[1]

वेद, पुराण, स्मृतियों में वर्णित राम के गुणों को सुनकर सीता के हृदय में गुणश्रवणोत्पन्न प्रेम अंकुरित हुआ। वे राम को वर रूप में पाने के लिए गौरी-गणेश का पूजन, उनसे वर रूप में राम की कामना, मार्गशीर्ष स्नान के साथ ही नियोजित हरतालिका व्रतादि करने लगी —

राम सील गुन बल सब जाना। घर घर जनक कुँआरि मन माना।
वेद पुरान सुमृतिउ भाषा। सबके राम सिरोमनि राजा।
गुनि सुनि पुनि जानकि अनुरागी। पूजन गौरि गनेसहिं लागी।
विनय करति कहति कर जोरी। देहु राम वर सैल किसोरी।
कातिक माघ अन्हाति बैसाखा। छोड़ रघुवर वर रहि अभिलाषा।
तीज आदि व्रत तियनि के जेते। सीता करन लगी विधि तेते।[2]

सीता की अलौकिक शक्ति का आभास लालदास ने अनेक स्थानों पर दिखाया है। त्रिपुर वध के बाद शंकर ने अपना धनुष जनक को दे दिया था, जो उनके पूजागृह में स्थापित था। रानी सुनयना के मना करने पर भी सीता ने उस धनुष को बायें हाथ से उठाकर उस स्थान को लीप साफ कर दिया —

खेलति कुँवरि गई मन पैठी। लीपन लगी सुधारिन में ही।
रानी मने करत गई आई। गांडिव हाथ हाथ कछु लिनि उतारी।

1- अवधविलास, पृ० 184

2- वही, पृ० 223

सीयपति पोतति डरपति भारी। अजु धौंका कठिठ महतारी।

धनुष बाम कर लीन्ह उठाई। लीपे पर फिरि धरेउ कराई।

सीय बल अतुल जान जब लीनो। तब तें जनक धनुष पन कीनो।[1]

पुष्प प्रक्षोभित पूर्वराग पुष्पवाटिका में स्फुरित होने लगा। हृदय में उट्टंकित राम की मूर्ति को सीता ने प्रत्यक्ष देखा—

जोइ मूरति हिय में रही देखी। सोइ मूरत नैनन्ह कर देखी।[2]

राम का कमनीयत्व सीता के चक्षुरिन्द्रिय का विषय बन बैठा। उनके सतृष्ण नेत्र लता ओट से रूप-माधुरी का पान करने लगे। विह्वला सीता को सुधि नहीं रही।

देखि राम छवि रीझि कुमारी। विह्वल होइ गिरी न सँभारी।[3]

प्रेयसी सीता राम का सामीप्य पाने के लिए प्रयास करती हुई प्रतीत होने लगीं। उन्होंने वर रूप में राम को ही पाने का संकल्प कर लिया है।

सीय धनु कीन्ह मनहिं मन भारी। रामहि बरब कि रहब कुमारी।[4]

सीता का विचार है कि सिंह, कहीं शृगाल की शरण जायेगा? कहीं गजमुक्ता के स्थान पर गुंजा सिर पर धारण की जा सकती है। केसर कस्तूरी छोड़कर कीचड़ लगाना किसे अच्छा लगेगा?[5] वे अहर्निश राम का ही ध्यान करने लगीं—

जागत सोवत ध्यान ही धीता।[6]

धनुष की कठोरता, विशालता, भयंकरता देख कर सीता हरि, हर से कामना करती हैं कि राम ही धनुष चढ़ा सकें—

सीय कहे कल हरि हर इन्हें देई। अस कछु होइ चढ़ावे एई।[7]

1- अवधविलास, पृ०सं० 229

2- अवधविलास, पृ०सं० 230

3- वही, पृ०231

4- वही, पृ० 231

5- वही, पृ० 231

6- वही, पृ० 232

7- वही, पृ० 235

और अन्त में उनकी कामना फलीभूत हुई। जनक के साग्रह आमंत्रण को स्वीकार कर दशरथ बारात लेकर मिथिला जब पहुँचे तब सीता ने उनके सुख-विस्तार हेतु ऋद्धि-सिद्धि को बुलाया —

जानी सिय मन महि सँभारा। रिद्धि-सिद्धि सब सुख विस्तारा।[1]

विवाहित सीता अयोध्या आकर पति सेवा में लग गयी। वन-गमन के समय सास कौसल्या ने अयोध्या में ही रहने का आग्रह किया किन्तु पति को ही गति, मति समझने वाली सीता राम का साथ नहीं छोड़ती हैं वे कहती हैं —

सीता कहति माय सुनु बाता। तिय को प्रिय पति कीन्ह विधाता।
पति के अर्ध अंग रहै सोई। अर्धांगी कहियत है सोई।
जप दान तीरथादि पुराना। वनिता संग कर लेइ विधाना।
वानप्रस्थ गृहस्थ आश्रमी। वनिता ही कर रहति है धर्मी।
प्रीतम संग वनवास भल सहब सीत और घाम।
लाल पियारे पाय बिनु इन्द्र लोक केहि काम।।[2]

इस प्रकार सीता राम के साथ वन चली गयी। लालदास ने दार्शनिक दृष्टि से सीता को माया कहा है। राम ब्रह्म है। सीता माया है —

ब्रह्म जीव बिच माया जैसे। राम लखन मधि जानकि तैसे।[3]

मंथरा

महाकाव्यों में कुछ ऐसे पात्र प्रयुक्त होते हैं जो अपनी क्षणिक झलक दिखाकर विलुप्त हो जाते हैं किन्तु उनका प्रभाव दूरगामी होता है। राम कथा में मंथरा एक ऐसी ही पात्रा है जिसका चरित्र-चित्रण बहुत ही संक्षिप्त रूप में हुआ है, पर उसके

1- अवधविलास, पृ० 241 2- अवधविलास, पृ० 266
3- वही, पृ० 269

कार्य की प्रतिध्वनि राम वनगमन के रूप में होती है। वाल्मीकि रामायण की मंथरा कैकेयी की दासी है। तुलसी की मंथरा दासी है। लालदास ने मंथरा की स्थिति पर विशेष ध्यान दिया है। वह कैकेयी चतुरा एवं सयानी सखी है —

कैकेयी के सखी सयानी। नाम मंथरा सब जग जानी।[1]

देवताओं के अनुरोध पर सरस्वती कुमति, कुबुद्धि लेकर मंथरा के कण्ठ में प्रविष्ट हो गयी। राम राज्याभिषेक की सूचना सुनकर उसने कैकेयी की सरलता का अनुमान लगा लिया था, अतः मंथरा दासी सहित कैकेयी के यहाँ जाती है —

'रानिहि' जान कूब मन आई। तौडी ले कुबरी तहाँ आई॥[2]

मंथरा ने अपने उद्देश्य की पूर्ति एवं कैकेयी के मन में विद्वेष का बीज वपन करने के लिए बुद्धि-चातुर्य से ऐसे तर्कों का आश्रय लिया, जिनके समक्ष सरल-निश्छल हृदया कैकेयी राम के विरुद्ध हो जाती है। वह कहती है कि कैकेयी बड़े घर की राज-कुमारी है जिसका बड़प्पन आज ही तक रहेगा। उत्साह से गाये जाने वाले गीत कल रुदन में परिवर्तित होंगे। कल से कैकेयी को सपत्नी की सेवा, चाकरी करनी पड़ेगी भरत रामके अधीन रहेंगे। इस अपमान से तो मृत्यु श्रेयस्कर है।

जनमी भले बड़े घर आई। अजुहिं लौ रहि भली बड़ाई।
अब तो गीत भले तेहि लागे। भवति हौं पै रोइहो आगे॥
भूलि रही ऊपरि की माया। भीतर कर ते मरम न पाया॥
× × × × ×
चाकर ज्यौं करिहै सिवकाई। रामहिं भरत जुहारि है जाई।
यह दुख कौन भाँति सहि पारिहै। सौति को उदय देखि जारि मारिहै।
मरन भलो जु होइ कहुँ काहो। पै अपमान भलो नहिं ताको।[3]

1- अवधविलासः पृ0 261   2- अवधविलासः पृ0 262

3- वही, पृ0 262

इस प्रकार मंथरा ने अपनी स्वामिभक्ति दिखाई है, जिसकी प्रशंसा किसी राम कथा आलोचकों ने नहीं की है।

सारांश यह है कि पारिवारिक सम्बन्धों के आधार पर अवधविलास में पुरुषों के निम्न भेद हैं — पिता, पुत्र, भाई, पति, सखा, गुरु, पुरोहित, सम्बन्धी, श्वसुर तथा दास इत्यादि।

अवधविलास में दशरथ, विभाण्ड, जनक, ब्रह्मा, पुलस्त्य पिता रूप में चित्रित हैं। दशरथ जनक राजा हैं। विभाण्ड और पुलस्त्य ऋषि तथा ब्रह्मा देवकोटि में हैं। जनक विदेह हैं, जिन्हें सांसारिक अनुरक्ति नहीं है फिर भी दशरथ और जनक पुत्राभाव से पीड़ित थे। दोनों ने पुत्रेष्टि यज्ञ किया परिणामस्वरूप रामादिक चार भाई तथा सीता कन्या रूप में प्राप्त हुए। पितृरूप में अपनी संतानों को योग्य, सदाचारी, आदर्श तथा अनुशासन प्रिय बनाने में वे सफल रहे हैं। पुत्रप्रेम सभी में समानरूप से प्राप्त होता है। उसकी उन्नति से सभी हर्षित दिखायी पड़ते हैं।

राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, रावण, विभीषण, तालजंघ, जलंधर, श्रृंगी ऋषि, वशिष्ठ कुबेर, रघु पुत्र रूप में चित्रित हैं। रामादिक पुत्र अवतारी हैं। उनके कार्य लीलाएँ हैं फिर भी नराकार रूप में उनमें अटूट पितृभक्ति है। पिता के वचनों के पालन करके वन गये। रावण माता की आज्ञा से ही तपस्वी बन अजेय शक्ति का स्वामी बना था। कुबेर ने मय राक्षस से छुड़ा कर पिता की सेवा में तीन कन्याएँ भेजी थीं। वशिष्ठ ब्रह्मा के ही आदेश का पालन कर इक्ष्वाकुवंश के पुरोहित बने थे। तालजंघ एवं जलन्धर असुरी प्रवृत्ति के पुत्र थे जो शक्तिशाली और उच्छृंखल शासक थे।

अवधविलास में रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न भाई रूप में वर्णित हैं। सीमित कथा होने के कारण रावणादिक भाइयों का चरित्र विशेषरूप से उल्लिखित नहीं हो पाया। रामादिक भाइयों का भ्रातृप्रेम इसमें वर्णित है। प्रारम्भ से ही लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न क्रमशः राम एवं भरत के अनुयायी रहे। बाल्यावस्था

राम का आदर करते थे। भरत तथा लक्ष्मण भ्रातृप्रेम के मूर्तिमान् आदर्श हैं। भरत ने पिताज्ञा का उल्लंघन कर अनुचित वीतरागी बने तथा लक्ष्मण राम के साथ वन गये।

दशरथ तथा जनक परस्पर समधी बने, जिनमें परस्पर आदर एवं सौहार्द की भावना थी। जनक ने दशरथ का यथोचित रूप से सम्मान किया है। श्वसुर रूप में जनक आदर्श पुरुष हैं। जिनकी कन्या ने अपने पूत आचरणों से पितृ तथा श्वसुर कुल को आदर्श रूप दिया है।

सखा रूप में चित्रित राम के सखा मित्र उनके कार्यों में सहायक रहे हैं। उनको कभी द्वेषभाव छल कपट नहीं रहा। विश्वामित्र, वशिष्ठ, शतानन्द क्रमशः गुरु और पुरोहित थे, जिन्होंने अपने कार्यों उपदेशों तथा विचारों से अपने आश्रितों का शुभ कार्य ही किया है।

सृष्टि विकासक्रम से ही नारी का विशेष महत्व रहा है। वह सृजन और निर्माण शक्ति की आधार शिला है। समाज, संस्कृति की जन्मदात्री तथा पोषण कर्त्री है। यदि पौरुष, शक्ति, शौर्य, कठोरता, दृढ़ता पुरुष के गुण हैं तो नारी कोमल, स्निग्ध, अबला, शी ., वत्सल, मृदुता की साक्षात् मूर्ति है। वह समाज में माता, पत्नी, भगिनी, पुत्री सखी सपत्नी, सेविका, परिचारिका, तपस्विनी अनेक रूपों में दिखाई देती है। उसके रूपों की चर्चा करते हुए डॉ0 श्याम बाला गोयल ने लिखा है कि वह समाज में पुरुष के लिए कभी जन्मदात्री, पोषणकर्त्री, माता के रूप में आती है तो कभी सहचरी सहयोगिनी, अर्धांगिनी के रूप में आती है, तो कभी स्नेह की भावधारा को प्रवाहित करने वाली भगिनी के रूप में लक्षित होती है। अतः समाज में नारी के माता, पत्नी, भगिनी पुत्री सखी सपत्नी सेविका आदि अनेकानेक रूप हैं। धार्मिक दृष्टि से वह रूप जगदम्बा, लक्ष्मी सरस्वती, श्री आदि रूपों में श्रद्धा एवं पूज्यभाव से युक्त होती है। राजनीतिक दृष्टि से नारी योद्धा, कूटनीतिज्ञा, राजनीति शासिका, तथा दूती रूपों में दिखायी देती है। काव्यशास्त्री दृष्टि से स्वकीया, परकीया, वासकसज्जा, प्रोषितपतिका आदि

कथा में नारी पात्रों की महत्ता उनकेवैयक्तिक गुणों की चर्चा चरित्र-चित्रण के अन्तर्गत की गयी है। आवश्यकता इस बात की है कि समग्र रूप से अवधविलास में नारी का प्रतीकात्मक या सामाजिक स्वरूप कैसा है? कवि ने पूर्वोक्त नारी रूपों के किन-किन गुणों की चर्चा की है।

मातारूप :-

अवधविलास में मातृभाव कौशल्या कैकेयी, सुमित्रा सुनयना जैसी पात्रों से व्यक्त किया गया है। अवधविलास की माताएँ स्वाभाविक एवं सुलभ मातृत्व गुणों से भर-पूर हैं। वे शिशुओं का सतर्कता एवं ममत्व से पालन पोषण करती हैं। पुत्र के उल्लसित एवं क्रीड़ानुरक्त मुख को देखकर आह्लादित होती हैं। उसके अनमने होने पर भयभीत होकर, झाड़-फूंक जादू-टोना पर विश्वास कर शुभ कामनाएँ करती हैं। कौशल्या, कैकेयी सुमित्रा, सुनयना में ममत्व, उदारता, दीनता वत्सलता, सहिष्णुता, प्रेम, दया, क्षमा आदि भावानुभूतियाँ समान रूप से दिखायी देती हैं।

शिशु के जन्मोत्सव पर वे आनन्दित होती हैं। उनकी बाल छवि निरखकर अपने को न्यौछावर करती हैं। क्षत्रिय धर्म पालन हेतु माताएँ वत्सलता के कारण अव-रोधक नहीं होती हैं। कर्तव्य परायणता भी उनमें दिखायी देती है। कैकयी अपनी उद्दाम अभिलाषा की पूर्ति के लिए राजा को उत्साहित करती है। उनमें स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा है। कौशल्या के मातृत्व में दिव्य तथा अलौकिकता की झलक दिखायी देती है, संयोग काल में वे जितने स्नेह ममत्व, दुलार और वात्सल्य का अनुभव करती है वनवास प्रसंग में उतनी ही व्याकुल करूणाप्लावित होती हैं। सारांश यह है कि अवधविलास में माताओं के विभिन्न गुणों का वर्णन है। उनमें ममत्व, वत्सलता, त्याग, सहनशीलता, कर्तव्यनिष्ठा, औदार्य, स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा है। कैकेयी पुत्र की अनन्य भावना से ग्रसित होकर धर्म, मर्यादा, विवेक का परित्याग कर समाज-विरोधी एवं निन्दित कार्य कर बैठती है।

पत्नीरूप :-

दया, माया, ममता से युक्त पत्नी घर की शोभा है। उसके बिना पुरुष अधूरा है। पुरुष धार्मिक कृत्यों का सम्पादन पत्नी के साथ ही करता है। पाणिनि के अनुसार पति के साथ जो यज्ञों को सम्पादित करे वही पत्नी है।[1] इसलिए समाज में उसका विशिष्ट स्थान है। डा० श्याम बाला गोयल का कथन है कि वह युग-युगों से पुरुष की सहधर्मिणी और सहचरी के रूप में मानी जाती रही है। पत्नी पति से अभिन्न, सुख-दुख की समभागिनी, पराक्रमभागी, जीवन विलास की सहचरी, शेवाल की वल्ली के समान अपनी प्रेमसुधा से पति-जीवन को रससिक्त करके उसी में लीन हो जाने वाली और गौरवशालिनी रही है। वह आत्मोत्सर्ग, प्रेमानुभूति, कर्तव्यपरायणता और त्याग की साक्षात् मूर्ति है।[2] यद्यपि नारी के पत्नी रूप में प्रणयानुभूति, पातिव्रतधर्म, माया, कोमलता, त्याग, समर्पण, श्रद्धा, आत्मसंतोष आदि अनेक गुण विद्यमान होते हैं, तथापि सम्पूर्ण गुण एक ही नारी में नहीं मिलते हैं। अवधविलास के अदिति, कौशल्या कैकेयी सुमित्रा, सुनयना, सीता, वृन्दा, अहल्या, अरुन्धती इत्यादि नारियों में नारीत्व के गुण मिलते हैं। अदिति, अरुन्धती पति के साथ तपस्या में सहभागी बनती हैं किन्तु अहल्या को पतिशाप भी भोगना पड़ा। पातिव्रत के कारण ही वृन्दा अपने पति जलन्धर को अजेय बना रखा था। कौशल्या में समर्पण भावना एवं औदार्य, कैकेयी में अधिकार लिप्सा, एवं स्वाभिमान, सीता में प्रणयानुभूति, कोमलता कर्तव्यनिष्ठा के दर्शन होते हैं। पति प्रेम के कारण ही राम के साथ वन जाती हैं। उनके सुख-दुख की सहभागी बनती है। तात्पर्य यह है कि लालदास ने अवधविलास में चित्रित नारी के पातिव्रत, विश्वास, श्रद्धा, प्रेमानुभूति, सेवा परायणता, अधिकार भावना आदर्श एवं गौरव तथा अलौकिक शक्ति सम्पन्नता इत्यादि गुणों का चित्रण किया है।

1- पत्युर्नो यज्ञसंयोगे — पाणिनिसूत्र 4/1/33

2- भक्तिकालीन राम तथा कृष्णकाव्य की नारी-भावना (एक तुलनात्मक अध्ययन) पृ0 199

प्रेयसी :-

रामकथा मूलतः मर्यादावादी कथा है, जिसमें प्रेयसी रूप का वर्णन कठिन था क्योंकि नारी के इस रूप में उद्दाम, उन्मुक्त एवं मांसल प्रेम का प्राधान्य होता है जो राम के आदर्श रूप में सम्भव नहीं था कि वे ऐसी नारी को अपने जीवन में स्थान देते। कवियों ने स्वकीया प्रेम का आभास मात्र ही दिया है। लालदास ने पुष्प-वाटिका में सीता का पूर्वराग दिखाकर इस रूप की झलक दी है। राम की रूप-माधुरी के दर्शन कर सीता उन पर मुग्ध हो गयी। अनेक बहानों की सृष्टि कर सतृष्ण नेत्रों से राम की ओर देखना, स्नेहाधिक्य के कारण विह्वल होना, पुष्पों के स्थान पर कलियों का चयन, स्वयम्वर सभा में उनकी आसक्ति एवं आशंका के वर्णन में प्रेयसीरूप प्रदर्शित हुआ है।

सखी :-

सख्य भाव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। समवयस्का होने के कारण सखियाँ परस्पर भावों को सरलता से समझ जाती हैं। सुख-दुःख एवं अपने अन्तर्मन के रहस्य को व्यक्त करने के लिए व्यक्ति समान प्रकृति वाले प्राणी की कामना करता है। लालदास ने सखियों में स्नेह भाव, अटूट प्रेम, विश्वास, निश्छलता, पवित्रता एवं निस्वार्थभाव का उल्लेख किया है। सीता के साथ गौरी पूजन के लिए सखियाँ ही जाती हैं। अनुरक्त सीता को उस रोमांचक एवं मनोहर स्थिति से वंचित कर उनके हृदय को दुखित नहीं करना चाहती, इसलिए कल इसी समय पुनर्दर्शन की बात कर धैर्य बँधाती हैं। सखियाँ ही सीता को कर्तव्यबोध कराती हैं। रामादिक भाइयों के जन्म के समय कौशल्या आदि रानियों की सखियाँ सम्मिलित होकर राजमहल में मांगलिक गीत गाती हैं। विवाह के शुभ अवसर पर अपने सुमधुर गीतों से वातावरण को मोहक एवं आकर्षक बनाती हैं। वनवास प्रसंग में अनेक स्त्रियाँ सीता की सखियाँ बनकर अपने यहाँ ठहरने का प्रस्ताव रखती हैं।

सपत्नी :—

पुरुष की बहु-विवाह की कामना, उसकी कामुक प्रवृत्ति एवं स्वार्थ भावनाओं के कारण सापत्न्यभाव की सृष्टि होतीहै। दशरथ के तीन रानियाँ थीं। उनमें स्नेह, सौहार्द का दर्शन पायस-विभाजन के समय दिखाई देता है जबकि सुमित्रा के आग्रह पर कौशल्या एवं कैकेयी ने उन्हें अपने अपने हव्य-अंश में से उसे दिया था। पुत्र-उत्पन्न होने पर किसी में भेद- नहीं दिखायी पड़ता है। सभी पुत्रों की बाल लीलाओं से आनन्दित होती हैं। लालदास ने कैकेयी का राम प्रेम भरत से भी अधिक दिखाया है। मंथरा द्वारा उत्तेजित करने पर कैकेयी में सपत्नीभाव का आदर्श अपने कठोर रूप में दिखाई देता है। कोई भी सपत्नी यह नहीं स्वीकार करेगी कि वह एवं उसका पुत्र आजीवन अपना स्वाभिमान तथा स्वत्व खोकर सपत्नी-पुत्र की सेवा करेंगे। कैकेयी इसी द्वेष और ईर्ष्या से युक्त, सौतिया-डाह से संतप्त दशरथ को कटुवचन कहकर अपने वाग्जाल में फँसा लेती है।

दासियाँ :—

अवधविलास में परिचारिकाओं एवं दासियों का चित्रण किया गयाहै। कुछ दासियाँ रानियों की विशेष कृपापात्री बन जाती हैं। हर्ष या दुख के समयमें स्वामिनी का अनुगमन करती हैं।

सारांश यह है कि अवधविलास में सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर कौशल्या एवं सुमित्रा श्रेष्ठ एवं आदर्श माताएँ हैं, जिनमें पुत्र प्रेम ममत्व, मृदुलता एवं त्याग की भावना मिलती है।सीता अदिति, वृन्दा, कौशल्या श्रेष्ठ पत्नियाँ हैं, जिनमें सेवा त्याग समर्पण संकट के समय पति का साथ देने वाली, नीति-निपुणता, सत्परामर्श इत्यादि गुण परिलक्षित होते हैं।

लालदास ने नारियों के विविध रूपों का उल्लेख करते हुए न तो मध्यकालिक कवियों के समान उसे निकृष्टीय, त्याज्य, निन्दनीय मानकर मायिक कहा है, नही रीति

कालिक कवियों समान उसके भक्ति, उद्दाम एवं श्रृंगारिक रूप से अवगत होकर उसकी चाटुकारिता एवं जिह्वा-लौल्य के लिए मिथ्या प्रशंसाओं की झड़ी सी लगाकर उसे काम-लिप्सा युक्त ही चित्रित किया है।

<u>जातिगत चरित्र-चित्रण</u> :—

अवधविलास में मुख्य रूप से आर्य, राक्षस और देव जाति के शील गुण, स्वभाव की चर्चा है। देव जाति में देवगण, इन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, देव-गुरु बृहस्पति प्रमुख हैं। ब्रह्मा सृष्टि निर्माता, ज्ञानी, वेदरक्षक हैं, क्षीर शेषशायी विष्णु वे, विप्र, भक्त, धर्मरक्षक हैं जो समय समय पर पृथ्वी पर अवतरित होते हैं। शंकर सृष्टि संहारकर्ता हैं? उन्होंने त्रिपुर का वध कर देवताओं की रक्षा की है। इन्द्र अभिमानी, विषयी स्वर्ग का स्वामी है। समस्त देवगण स्वार्थी और भोग प्रवृत्ति वाले हैं। अवध विलास में आर्य तथा राक्षस जाति की विशेषताओं का विस्तृत वर्णन है।

आर्य जाति में सूर्यवंश का प्रमुख स्थान है। इक्ष्वाकु, रघु, दशरथ, निमि, जनक, लोमपाद, वशिष्ठ, विश्वामित्र, शतानन्द, सुदर्शन जैसे ब्राह्मण एवं क्षत्रिय हुए हैं। इनमें शारीरिक क्षमता, कार्य कुशलता, कुशल प्रशासन सत्यव्रत-पालन, प्रतिज्ञापालन तथा परस्त्री पर कुदृष्टि न डालना एवं संयम, त्याग तपस्या निस्पृह भावना भरी हुई है।

राक्षस जाति वर्णसंकर है। पिता ब्राह्मण माता अन्य वर्ण की। जिसके कारण वे एक ओर ब्रह्मज्ञानी, वेदज्ञ, यज्ञ-पारंगत थे तो दूसरी ओर अकर्मण्य, परदारभोगी युद्ध-लोलुप, विषयी, उद्दण्ड शासक हुए। माली, सुमाली, कैकसी, रावण, कुम्भकर्ण खरदूषण, मारीच, सुबाहु, शूर्पणखा, जलंधर तथा त्रिपुर प्रमुख थे। यदि आर्य आध्यात्मिक उन्नति के लिए यज्ञ याज्ञिक तपस्या करते थे तो राक्षस ऐहिक स्वार्थों की प्राप्ति के लिए। असुरों या राक्षसों का वैरभाव देवताओं, ऋषि-मुनियों से विशेष रहा है जिसके कारण उन्हें दंडित किया जाता था। अपने अधीन करने के लिए उनसे राजस्व ग्रहण किया जाता था।

अन्य जातियों में कोल, किरातों का भी उल्लेख है। तुलसी ने भक्ति के आलोक में इनकी विशेषताओं का उल्लेख किया है, जबकि लालदास ने ऐसा नहीं किया है। ये असभ्य हैं। राम के सौन्दर्य से प्रभावित होकर ये यथाशक्ति फल-फूल, कंद इत्यादि लाकर उनकी सेवा करते थे।

इसके साथ ही अयोध्या तथा मिथिला के पुरवासी, प्रजा जनों का भी चरित्र सीमित रूप में चित्रित हुआ है। अयोध्या की प्रजा राम के रूप शील और गुणों से प्रभावित रही है। राम वनवास के समय प्रजा राम का अनुगमन करती है। राजा-रानी के निर्णयों की आलोचना करती है क्योंकि उनमें विस्मय, विषाद, आक्रोश था। राम के लिए आबालवृद्ध नर-नारी उत्सुक दिखायी देते हैं। मिथिलापुरवासी राम भक्त हैं। राम के विवाह के समय उनका उत्साह वर्णनीय था।

<u>अवधविलास में पारिवारिक चित्रण</u> :—

अवधविलास में अनेक परिवारों का विवेचन किया गया है, जैसे दशरथ, जनक रावण, लोमपाद, वशिष्ठ इत्यादि। इनमें दशरथ परिवार प्रमुख है। ये अयोध्या के राजा हैं। कौशल्या सुमित्रा और कैकेयी तीन पत्नियाँ हैं। उनमें परस्पर सद्भाव एवं प्रेम है। तीनों पत्नियों से राम लक्ष्मण शत्रुघ्न और भरत चार पुत्र हैं, जिनमें परस्पर भ्रातृत्व की भावना है। चार भाइयों की चार पत्नियाँ सीता, उर्मिला, श्रुतकीर्ति तथा माण्डवी हैं। इस प्रकार दशरथ परिवार में तीन पत्नियाँ, चार पुत्र तथा पुत्र-वधुएँ हैं। इस परिवार में अनुशासन एवं सद्भाव है जिससे सामाजिक मूल्यों की अभिव्यक्ति हुई है। पुत्रों के विवाहोपरान्त यह परिवार संयुक्त परिवार के रूप में रहता है जो एक हिन्दू परिवार का आदर्श है। किन्तु दशरथ के वैयक्तिक परिवार में तीन पत्नियों के कारण राज्याभिषेक के समय द्वेष कलह, कटुता एवं सापत्न्य भाव समाविष्ट हो जाता है, जिसके कारण राम वनवास तथा दशरथ मरण की घटनाएँ सामने आती हैं। दूसरा परिवार राम का है जिसमें वे तथा उनकी पत्नी सीता हैं। इस परिवार में कर्तव्यबोध

प्रेम, सहिष्णुता, त्याग की भावना है। इस प्रकार परिवार की लघुत्तम इकाई का चरम आदर्श सीता राम परिवार में देखा जा सकता है। इसी प्रकार लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न परिवार में संयुक्त परिवार का आदर्श दिखायी देता है। पारिवारिक मूल्यों की दृष्टि से दशरथ श्रेष्ठ पिता, दृढ़प्रतिज्ञ, मुखिया हैं। भरत, लक्ष्मण आदर्श भाई, कौशल्या एवं सीता आदर्श माता तथा पत्नी हैं।

निष्कर्षरूप में यह कहा जा सकता है कि दशरथ का संयुक्त परिवार श्रेष्ठ हिन्दू परिवार की झलक है, जिसमें आदर्श पिता, आदर्श पुत्र, आदर्श भाई तथा आदर्श पत्नी एवं माताएँ हैं साथही पुत्र प्रेम, पितृभ्रातृभक्ति, गुरुजनों के प्रति आदर सदाचार, त्याग, प्राणिमात्र की सेवा तथा पारिवारिक अनुशासन चरमरूप में दिखायी देता है। दूसरा परिवार जनक परिवार है जिसमें वे उनके भाई, जनक की पत्नी तथा चारपुत्रियाँ हैं। जनकअपनी कन्याओं के उच्च शिक्षा तथा आदर्शमय जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी। वे स्वयं विदेह, निस्पृह एवं वीतरागी हैं। रावण परिवार बहुत विस्तृत है। तीन भाई, अनेक पत्नियाँ, पुत्र परिजन हैं जिसका वह एक मात्र मुखिया है, किन्तु कामाभिभूत होकर अपने भाइयों से पूछे बिना ऐसा जघन्य कार्य किया जिसके कारण उसका सर्वनाश हो गया। लोमपाद तथा वशिष्ठ का परिवार अत्यन्त सुखी है।

—

पंचम अध्याय

अवधविलास में भाव एवं रस-व्यंजना

अवध विलास में भाव एवं रस - व्यंजना

भारतीय आचार्यों के अनुसार विभाव, अनुभाव एवं संचारियों की समन्वित संश्लिष्टता के आधार पररस-निष्पत्ति होती है। किसी भावनावान् कवि की रचना में विभावों, अनुभावों एवं संचारी भावों की यह राशि बलपूर्वक एक स्थान पर नहीं बैठाईजाती, वरन् इस सम्पूर्ण उपचार के पीछे कवि की सूक्ष्म रसग्राहक भावात्मक अनुभूति का एक ऐसा अकुण्ठित तथा स्वाभाविक स्रोत प्रवाहित होता है जो सहृदयों को भाव निमग्न करा देने में समर्थ होता है।

प्राचीन आचार्यों ने रस-सामग्री — विभाव, अनुभाव संचारी तथा इनके मूल में अवस्थित स्थायी भाव का विशद् विवेचन किया है जो मनुष्य मात्र के हृदय में स्थायीरूप से स्थित रहते हैं, उन्हें स्थायी भाव कहते हैं। साहित्य दर्पणकार का मत है —

अविरुद्धा विरुद्धा वा यं तिरोधातुमक्षमाः।
आस्वादांकुर कन्दो सौ भावः स्थायीति संमतः॥[1]

तात्पर्य यह है कि जो अनुकूल या प्रतिकूल भावों से तिरोहित न हो तथा जिसमें रस के अंकुरण की शक्ति निहित हो उसे स्थायीभाव कहा जाता है। इसके रति, हास, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय और शम इत्यादि नौ भेद हैं, जिनसे शृंगार हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शान्त रस रसरूप में प्रगट होते हैं। लालदास अवध विलास के प्रारम्भ में इन्हीं नव रसों की चर्चा करते हैं —

करुना हास सिंगार भय अद्भुत वीर सभाय।
रुद्र बिभत्स औ सांत हैं ए नव रस के नाय॥[2]

1- साहित्यदर्पण, 3/184
2- अवधविलास, पृ० 1

<u>अवधविलास में स्थायीभाव :—</u>

<u>(1) रति :</u>— स्त्री पुरुषों में प्रिय के लिए हृदय की उत्कट प्रेमार्द्रता रति है। अवध-विलास में रति के अनेक स्थल हैं। सीता राम के प्रथम दर्शन वन प्रसंग, तथा लक्ष्मी विष्णु, पार्वती, एवं जालन्धर प्रसंग में रति स्थायीभाव के उदाहरण मिलते हैं —

(1) कन्या भेंट मिले करि आई। पीछे देखि ताहि रिषि राई।[1]

(2) मुनि कहँ देखि प्रेम अनुरागी। अपने मन ललावन लागी।[2]

(3) गुन सुनि सुनि जानकि अनुरागी। पूजन गौरि गनेसहि लागी।[3]

<u>(2) हास्य :</u>— वाणी वेशभूषा आदि की विकृतियों के दर्शन, चिन्तन, से उत्पन्न चित्त विकास हास है। अवध विलास में हास स्थायीभाव का कम ही वर्णन है। ब्राह्मण, मुनियों के वर्णों का वर्णन रावण के समक्ष जिस रूप में किया जा रहा है, उससे हास स्थायीभाव के दर्शन होते हैं —

खाइ खाइ कछु पेट फुलाई। बैठत एक ठौर जब आई।[4]

<u>(3) शोक :</u>— प्रिय वस्तु के विनाश से उत्पन्न चित्त की विकलता का नाम शोक है।[5] जालन्धर के शव को देख वृन्दा रुदन करने लगी —

वृन्दा रुदन करत दुख पागी। सावधान होइ पूछन लागी।[6]

इसी प्रकार वृन्दा के सती होने पर विष्णु शोक करते हैं —

हा वृन्दा हा वृन्दा वृन्दा। मोहि तज गई कहाँ मुख चन्दा।[7]

<u>(4) क्रोध :</u>— विरोधियों के प्रति हृदय में उत्पन्न प्रतिशोध की भावना ही क्रोध है। आचार्य विश्वनाथ का कथन है —

प्रतिकूलेषु तैक्ष्ण्यस्यावबोधः क्रोध इष्यते।[8]

1- अवधविलास, पृ0 47 2- अवधविलास, पृ0 109 3- अवधविलास, पृ0 223
4- वही, पृ0 174 5- सा0द0 3/177/1 6- अवधविलास, पृ0 85 7- वही, पृ0 86
8- साहित्यदर्पण, पृ0 3/177

अवधविलास में कुबेर, रावण, मुर, शिव, जालन्धर, मधु-कैटभ, का क्रोध वर्णित है –

(1) दूत जाइ तिनसौं कही बाता। सुनि जरि उठेउ दैत्य जनु ताता।[1]

(2) सुनि कुबेर तामस करि बोले। मानहुँ नैन सिंह के खोले।[2]

(3) कोपे सुनत जलन्धर राऊ। बोलिसि जाहु पकरि लै आऊ।[3]

(4) तब हुंकार कियो भगवाना। दौरे भूत पिशाच अनन्ता।[4]

उत्साह :- कार्यों के आरम्भ करने में स्थैर्यशाली हृदय का आवेग या उद्योग ही उत्साह कहलाता है।[5]

(1) रावन हाथ मूंछ पर फेरा। देखहु मास क्याल अब मेरा।[6]

(2) कबहुँ कि लागि चलावै लत्ता। डारे तोरि दैत्य की छत्ती।[7]

(3) कर्यो सब भाँति भयो नहिं पूरा। बैठा तुला नृपति होइ सूरा।[8]

भय :- किसी भीषण वस्तु या दृश्य के कारण चित्त में उत्पन्न वैकल्य ही भय है–

(1) आयो महाबली सुनि रावन। भागि गई जम लोक परावन।[9]

(2) भागे तब मन नहिं भय माना। दौरे जाइ पहार लुकाना।[10]

(3) विफल भयो बल बुद्धि नसाई।[11]

(4) देखे रिपिन्ह कोप रस भीने। रावन प्रान नाश करि दीन्हे।[12]

(5) धरतहि धरनि धमक अस बाढ़ी। जनु भुव कंप भयो बन आई।[13]

जुगुप्सा :— घृणास्पद वस्तुओं के दर्शन से उत्पन्न घृणाभाव जुगुप्सा है – जुगुप्सा के अच्छे उदाहरण अवधविलास में नहीं हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है –

1- अवधविलास, पृ0 45 2- अवधविलास, पृ0 46 3- अवधविलास, पृ0 81

4- वही, पृ0 82 5- साहित्यदर्पण, 3/178 6- अवधविलास, पृ0 49

7- वही, पृ0 62 8- अवधविलास, पृ0 256 9- अवधविलास, पृ0 51

ब्राह्मन कहुं बेताल जिवाऊं। असुर मास तिन्ह कों अचवाऊं।

शोभित सोमपान करवाई।[1]

<u>विस्मय</u> :- आचार्य विश्वनाथ का कथन है कि नाना विध अलौकिक पदार्थों के दर्शन से समुत्पन्न चित्त का विस्तार ही विस्मय है।[2] लाल दास ने अनेक स्थानों पर विस्मय भाव का वर्णन किया है। स्वयं ब्रह्मा के द्वारा अनन्त ब्रह्माण्डों के दर्शन के समय विस्मय का इस प्रकार प्रगट हुआ –

या विधि लखि देखि सिर डारे। गर्व गुमान सबनि के मारे।

इक राजत मुनि अचरज माना। धन्य प्रभु तुम कहँ अब जाना।[3]

पुत्रेष्टि यज्ञ के समय अग्नि के दिव्य रूप दर्शन में चित्त का विस्तार हुआ है –

सीस चढ़ाइ लिये नृप रानी। धन्य धन्य रिषि मुनि कहि बानी।[4]

<u>शम</u> :- निस्पृहावस्था में चित्त की अन्तर्मुखी प्रवृत्ति को शम कहते हैं।[5]

(1) माता पिता त्रिया सुत होई। ए सब अप स्वार्थी लोई।[6]

(2) जीवन अल्प देह छिन भंगी। मिथ्या सब झूठे धन संगी।[7]

इसके साथ ही लालदास ने पुत्र विषयक रति तथा देव विषयक रति स्थायी भावों का भी वर्णन किया है। जैसे –

(1) सुन्दर बाल देखि मन भाये। हृदय लगाइ पयोधर प्याये।[8]

(2) सुन्दर बाल किशोर कृपाला। देखि देखि मुनि होत दयाला।[9]

1- अवधविलास, पृ0 46 2- साहित्यदर्पण, पृ0 3/180/1

3- अवधविलास, पृ0 37 4- अवधविलास, पृ0 139

5- साहित्यदर्पण 3/180 6- अवधविलास, पृ0 149

7- अवधविलास, पृ0 201 8- अवधविलास, पृ0 154 9- अवधविलास, पृ0 227

<u>अवधविलास में विभाव वर्णन :-</u>

वाचिक आंगिक और सात्विक वाचिक अभिनय के द्वारा चित्त वृत्तियों के विभावन या ज्ञापन कराने वाले हेतु कारण या निमित्त को विभाव कहा जाता है। भरत मुनि का कथन है —' विभाव इति कस्मादुच्यते? विभावो विज्ञानार्थः। विभावः कारणं निमित्तं हेतुरिति पर्यायाः। विभाव्यन्ते नेन वागंग सत्वाभिनया इति विभावः। यथा विभावितं विज्ञातमिति अर्थान्तरम्।'[1] विभावों के द्वारा वासना रूप में स्थित अव्यक्त सूक्ष्म रति आदि स्थायी भाव आस्वादनीय बनते हैं।[2] विभाव के दो भेद होते हैं — आलम्बन और उद्दीपन।[3]

<u>(1) आलम्बन विभाव :-</u>

चित्तवृत्तियों के विषयभूत विभाव को आलम्बन कहा जाता है। अवध विलास में आलम्बन का चित्रण करते समय उसकी बाह्य रूपरेखा, कान्ति, वेशभूषा का वर्णन किया गया है, जैसे कश्यप की तपस्या से प्रसन्न हरि वरदान देने के लिए उनके पास गये। लालदास ने आलम्बन का चित्रण इस प्रकार किया है —

सुन्दर स्याम गात सुभ अंगा। देखि मगन मन होइ अनंगा।
सीस मुकुट सुभ कुंडल कानन। नैन बिसाल मनोहर आनन।
भौंह ललाट नासिका ग्रीवा। अति सुदेस सोभा की सींवा।
×　　　×　　　×　　　×
चारि भुज आयुध जुत धारी। संख चक्र गद पदम सुधारी।[4]

इसी प्रकार शिव आलम्बन में इस प्रकार वर्णित हैं —

1- नाट्यशास्त्र,
2- काव्यप्रकाश टीका　　　3- साहित्य दर्पण, 3/29
4- अवधविलास, पृ0 40

देखे पंच बदन भुज चारी। अंग विभूति बघंबर धारी।

देखे नैन पंच दस राते। भांग धतूर खाइ रंग राते।

देखे चन्द्र भाल भल सोहै। देखे जटा मुकुट मन मोहै।

देखे व्याल कंठ विषरेखा। गंगा चलत सीस पर देखा।[1]

इसी प्रकार लालदास ने राम, सीता के सौन्दर्य का वर्णन अलग-अलग आलम्बन रूप में किया है।

<u>उद्दीपन विभाव :-</u>

जाग्रत भाव को उद्दीप्त करने वाले निमित्त कारण को उद्दीपन विभाव कहते हैं। उद्दीपन के अन्तर्गत आलम्बन की चेष्टाएँ एवं देश काल आते हैं।[2] अवधविलास में आलम्बन के गुण, चेष्टाएँ, उसके आभूषण तथा प्रकृति चन्द्र, मलयानिल उपवन इत्यादि उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत वर्णित हैं, कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं- तपस्यारत पुलस्त्य ऋषि का ध्यान तृणबिन्दु की कन्या के आभूषणों एवं उसके सौन्दर्य से विचलित हो उठता है -

नूपुर कंकन किंकिनी आभूषन झनकात।

लाल जुवति कोमल गिरा सुनि मुनि मन चलि जात।[3]

इसी प्रकार मुर राक्षस से युद्ध करते हुए विष्णु भागकर गुफा में छिप जाते हैं जिसे देखकर देवताओं का भय और अधिक उद्दीप्त हो उठता है -

देखे सब भगवन्त पराने। देवन्ह प्रान गये करि माने।[4]

कीर्तिमुख के भयंकर रूप एवं उसकी आंगिक क्रियाएँ देख राहु भय जाग्रत हो उठता है-

---

1- अवधविलास, पृ0 67
2- साहित्यदर्पण, 3/132/1
3- अवधविलास, पृ0 44
4- अवधविलास, पृ0 64

कटकटाइ सनमुख होइ धावा। भाग्यो राहु जान्यो मोहि खावा।[1]

इसी तरह पुष्पवाटिका में सीताराम के प्रथम दर्शन के समय शीतल मंद सुगन्धित वायु, व षड्ऋतु सम्पन्न उपवन उद्दीपन विभाव के रूप में वर्णित हुआ है।

अनुभाव वर्णन :—

जिनके द्वारा स्थायीभावों का अनुभव होता है। वे अनुभाव कहलाते हैं। ये स्थायीभाव के पीछे उत्पन्न होते हैं। अनुभाव आश्रय की चेष्टाएँ कहलाती हैं। भरत मुनि कहते हैं कि अनुभाव वाचिक सात्विक और आंगिक चेष्टाओं को कहते हैं, जो आश्रय के आन्तरिक भावों का प्रकाशन करती हैं।[2] इनके द्वारा भाव विशेष का साक्षात्कार होता है अतः इन्हें कारण माना जा सकता है, यदि अनुभावों को स्थायीभाव के उत्पन्न होने के कारण उनके मात्र बाह्य प्रकाशन को माने तब इन्हें कार्य माना जा सकता है।[3] प्राचीन आचार्यों ने अनुभाव के अन्तर्गत अलंकारों की चर्चा की है – अंगज, अयत्नज तथा स्वभावज[4] जिनमें क्रमशः भाव, हाव, हेला, शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य, धैर्य, लीला, विलास, विच्छित्ति, बिब्बोक, किलकिंचित, मोट्टायित, कुट्टमित, विभ्रम, ललित, मद, विहृत, तपन, मौग्ध्य, विक्षेप, कुतूहल, हसित, चकित और केलि,[5] आते हैं। कुछ आचार्य इन्हें उद्दीपन विभाव मानते हैं। इस विवाद से दूर रहकर कायिक वाचिक सात्विक तथा मानसिक अनुभावों के उदाहरण अवधविलास से प्रस्तुत किये जायेंगे।

1- अवधविलास, पृ0 81

2- नाट्यशास्त्र,

3- साहित्य दर्पण, 3/132/33

4- ना0शा0 22/5 5- सा0द0 3/89-92

(1) कायिक अनुभाव :– काव्यगत आश्रय की आंगिक चेष्टाएँ कायिक अनुभाव [illegible] कहलाती हैं —

अली ओट दै लाडिली देखति रूप निधान।
बदन कमल जनु नैन अलि लाल करत मधुपान।'[1]

उपर्युक्त उदाहरण में आश्रय सीता की आंगिक चेष्टाएँ बतायी गयी हैं। सीता राम पर अनुरक्त हैं, उनकी रति सखी के पीछे छिपकर सतृष्ण नेत्रों से राम के रूप का पान करना, कायिक अनुभावों से व्यक्त होती है। इसी प्रकार शिशु राम की सेवा में आश्रय की चेष्टाएँ दृष्टव्य हैं —

देखि सुंदर ललकि ललकैं बदन चूमति मुख हीं।
बैठि कोमल केश सिर के ललित छाजन्ह गुहहीं।[2]

आहार्य :– आश्रय की वेश रचना आहार्य अनुभाव के अन्तर्गत है –

नैन अंजन बने खंजन नाक मोती नथ बनी।
बदन गोरी तिलक रोरी चीर पचरी छबि घनी।[3]

सात्विक अनुभाव :– आश्रय के अकृत्रिम अंग विकार सात्विक अनुभाव कहे गये हैं, जिनकी संख्या आठ है– स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, वेपथु, वैवर्ण्य अश्रु और प्रलय।[4]

(1) मुख ताकि चकि थकि रही किशोरी।[5]

(2) इह कहि राम नैन भरि आये।[6]

1- अवधविलास 230
2- अवधविलास, पृ0 162
3- वही, पृ0 157
4- ना0शा07/148 तथा सा0द03/135-36
5- अवधविलास, पृ0 230
6- अवधविलास, पृ0 261

मानसिक अनुभाव :-

आश्रय के अन्तःकरण की वृत्ति से उत्पन्न, मोद आदि को मानसिक अनुभाव कहा जाता है, जनक राम को देखते हैं -

(1) जिन्ह के रहस देखि सुख लीजे। तिन्ह को पलक ओट किमि कीजे।

(2) अंग अंग शोभा अवगाहे। बार बार नृप देखि सराहे।[1]

अवधविलास में संचारीभाव :-

इन्हें व्यभिचारी भाव भी कहा जाता है। ये स्थायीभाव के पोषण में सहायक होते हैं। संचारी भाव अस्थिर होते हैं। इनकी संख्या 33 कही गयी है, निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, उग्रता, मोह, विबोध, स्वप्न, अपस्मार गर्व, मरण, शंका, मरण, आलस्य, अमर्ष, निद्रा, अवहित्था, उत्सुकता, उन्माद स्मृति, मति, व्याधि, त्रास, लज्जा, हर्ष, असूया, ~~विषाद~~ विषाद, धृति, चपलता ग्लानि, चिन्ता और वितर्क।[2] अवधविलास में प्रायः सभी संचारी भावों के उदाहरण मिलते हैं -

(1) निर्वेद :- तत्वज्ञान, आपत्ति, ईर्ष्या आदि के कारण संसार से विरक्ति निर्वेद है-

(1) कुछ हि और करब कछु नाहीं। माला लै बैठे बन माहीं। (अ0वि0 261)

(2) ताते अब उत कबहुँ न करिहौं। भजि तुम कहँ संसारहि तरिहौं। (148)

(2) आवेग :- आवेग का अभिप्राय संभ्रम या घबड़ाहट है। इसके कई भेद हैं -

(1) सुनि लोग अवे। बरस पाज धावे। (वही, पृ0 270)

(2) ऐसी बात कहति सुख रैसी। आई धावति और सहेली। (वही, पृ0 154)

1- अवधविलास, पृ0 232

2- साहित्यदर्पण, पृ0 3/141

(3)दैन्य :– विशेष दुःख या दुर्गीत के कारण उत्पन्न मन की दुर्बलता दीनता है–

(1) जौ तु पुत्र छाँड़ि मोहि जइबा। तौ का जीयत आइ पुनि पाइबा।(203)

(4)श्रम :– परिश्रम के कारण मन या शरीर की थकावट को श्रम कहते हैं। सीता के नेत्र राम को देखते देखते ही थक गये –

थकि सा मुखि तकि थकि थकि रही किशोरी।(अ0वि0230)

(5)मद :– बल,धन,रूप,यौवन या मदिरापान की मस्ती को मद कहते हैं।रावण कहता है – अति अहंकार धरे मन माँही। मो रावन कहँ जानत नाहीं।(वही,52)

(6)जड़ता :– इष्ट या अनिष्ट से उत्पन्न किंकर्तव्य विमूढ़ता ही जड़ता है –

अस कहि थकि थकि रहि तिय बाला। चित्रलिखी पुतरी जनु बाला।(235)

(7)उग्रता :– प्रचण्डता या निर्दयता के भाव को उग्रता कहते हैं। सुर कहता है –

मारहु घेरि सबहु सब झारी। जीवत एक न जाइ भिखारी।(पृ061)

(8)मोह :– भय दुख या वियोग के कारण चित्त या विक्षेप मोह कहलाता है – वृन्दा के मरने पर विष्णु को शरीर भान नहीं रहा –

(1) माला मुकुट तोरि तजि डारे। पीताम्बर पटुका धरि फारे।(वही,87)

(2) पलहिं रोकि रोकि रहे ठाढ़े।चलन न देहिं मोह अति बाढ़े।(265)

(9)विबोध :– नींद या अज्ञान के नष्ट होने पर विबोध जाग्रत होता है –

सुभ अरु असुभ कर्म जे होई। तिन्ह के फल भुगतावत सोई।(पृ0 148)

(10)गर्व :–

किसी पद विशिष्ट शक्ति या वस्तु की प्राप्ति से अधिक अहंकार गर्व होता है –

कहँ गए वे धनुष तिन्ह तेरा। नहिं कहुँ नाम सुन्यो तिन्ह केरा।

(अवधविलास, पृ0237)

(11)स्वप्न :– निद्रावस्था में विषयानुभव स्वप्न कहलाता है -

केउ कहै राम देखि हम सपना।घरतांत सब ही चले अपना।(अ०वि०266)

(12)अपस्मार :– चित्त की विक्षिप्त अवस्था के कारण मूर्छित होना अपस्मार का लक्षण है -

सज्जन सुजन मिल रहे कोई। गिरे पछार आइ सुनि सोई।(वही, 265)

(13)मरण :– मृत्यु के समान कष्टानुभव में मरण संचारी होता है। मछली की छटपटाहट से राम वनवास के कष्ट को व्यंजित किया गया है -

छटपटाहिं जल बिनु जिमि मीना। ऊपराहिं मीन होहि जल हीना।(265)

(14)आलस्य :– श्रम या गर्भ धारण के कारण उत्पन्न जड़ता को आलस्य कहते हैं–

(1) सकल उदास लेत अंगिराई।(वही, पृ0 146)

(2) बैठ उदास होइ निज धामा।(वही, पृ0 259)

(15)अमर्ष :– चित्त के अभिनिवेश अथवा आग्रह-परिग्रह को अमर्ष कहते हैं।मय की अपमान भरी वाणी को सुनकर कुबेर का अमर्ष देखिए –

सुनि कुबेर तमक करि बोले। मानहुँ नैन शिखि के खोले।

मय देखी हमरी कमनाई। कुटुम्ब जन्य करवाइब जाई।(वही, 46)

(16)अवहित्था :– लज्जा के कारण अंगों का संगोप, अथवा चातुर्य पूर्वक भाव या बात को छिपाना, अवहित्था कहलाता है। राम को देख सीता के कार्य अवहित्थ के द्योतक हैं –

(1) अली ओट दे लालिही देखत रच निधान।(वही, पृ0 230)

(2) हिय की लगनि प्रगट होइ निसरी। तोरत पात फूल फल बिसरी।(230)

(17)औत्सुक्य :– अभिलषित वस्तु की प्राप्ति में काल विलम्ब न सहन कर सकने का भाव है।

(1) केउ अति आतुर होइ पहुँचे।(वही, पृ0 235)

(2) चाहीं कछु जाहि सोइ ले धावै।अगतहिं देखि पहन नहिं पावै।(241)

(18) शंका — अनर्थ चिन्तन शंका परिणाम है।

उठहि न धनुष रहे भल नाहीं।(अवधविलास, पृ0 234)

(19) उन्माद :— चित्त की व्याकुलतावश बिना विचार का आलाप या आचरण उन्माद कहलाता है। वृन्दा के निधन पर विष्णु का कार्य देखिए —

वृन्दा जरी तहाँ हरि छावा। ले समसान भस्म तन लावा।(वही, 87)

(20) स्मृति — पहले कभी अनुभव में आयी किसी वस्तु का पुनर्बोध स्मृति है।

(1) वैदेहि नर्क बहुत दुखदाई। फिरि फिरि सुरति बहुत पछिताई।(146)

(21) मति — नीति मार्ग का अनुसरण या तत्त्वज्ञान कराने वाली बुद्धि मति है।

जैसे मुनि जेहि कर होई। तपते राज्य भला नहीं होई।(वही, 15)

(22) व्याधि — शारीरिक व मानसिक संताप का नाम व्याधि है।

व्याप्यो विरह पहररहि भीति। तन्मा छूटि गई सब प्रीती।

भोजन अन पान सब त्यागे। ज्ञान ध्यान वृन्दा के लागे।(वही, 87)

(23) त्रास :— अनिष्ट की आशंका या विपत्ति इत्यादि से उत्पन्न भय त्रास है।

(1) संग की देखि सहेली डेरानी। कवच कह पूछि है रानी।(वही, 231)

(2) चले पवन आँधी अरू पानी। डारे रूप सिला उधिरानी।

गरू रूघन मुनि वचन मलीना।(वही, पृ0 48)

(24) व्रीडा :— मानसिक संकोच को व्रीड़ा कहा जाता है।

मुख फेरि मुकति नैन रस माहीं। मोहि कहति कछु बनति है नाहीं।(231)

(25) हर्ष :— अभिलषित वस्तु के प्राप्त होने पर उत्पन्न आनन्द को हर्ष कहते हैं -

(1) इस सुख देखि राम हरषाने।(वही, पृ0 269)

(2) हरषे सब सबके मन भाए।(वही, पृ0 236)

(26) असूया :— दूसरे की गुणसमृद्धि को न सहन कर सकने का भाव असूया कहलाता है।

कैसी देखि कैकयी माता। देखहु पुत्र भाग की बाता।

सौति के पूत की देखि बड़ाई। सहि न सकी कछु बोल लगाई।(49)

(27) विषाद :— कर्तव्यनिश्चय तथा उद्योग की असफलता से उत्पन्न अनुताप विषाद है—

मीजहिं हाथ लोग पछिताहीं। राजा काज कीन्ह भल नाहीं।(वही, 265)

(28) धृति :— विपरीत परिस्थिति में सन्तोष व धैर्य धारण करने की क्षमता धृति है।

ऐसे कष्ट करे कठिनाई। छाडहि नहीं धर्म भलाई।(वही, 58)

(29) चपलता :— चित्त की अस्थिरता का नाम चपलता है —

सीय तहँ देखि डोलि मृग देही। जाहि समीप कहति हैं तेही।(231)

(30) ग्लानि — कुकृत्य, श्रम या व्याधि से मन में जो मलिनता, खिन्नता, पश्चात्ताप उत्पन्न होता है, उसे ग्लानि कहते हैं —

शिव अपमानि जानि दरमानी। परी अगिन महँ जरी भवानी।(141)

(31) चिन्ता :— अभीष्ट की अप्राप्ति से उत्पन्न ध्यान धरने का भाव चिन्ता है —

पति पत्नी नित रहै उदासा। बिनु संतान भवन घर बासा।

बरस हजार गए तब जबहीं। चिंता बहुत करी नृप तबहीं।(97)

शृंगार रस :— प्रेमियों के मन में संस्कार रूप से वर्तमान रति या प्रेम रसावस्था को पहुँच कर जब आस्वाद योग्यता को प्राप्त करता है, तब उसे शृंगार रस कहते हैं। स्थायी भाव रति, नायक-नायिका आलम्बन-आश्रय, सखा-सखी दूत, चन्द्र, उपवन आदि उद्दीपन, आलिंगन, चुम्बन, रोमांच, स्वेद, कम्प, अनुभाव एवं उग्रता, मरण, जुगुप्सा को छोड़कर शेष लज्जा, हर्ष, चिन्ता, व्रीड़ा आदि संचारी भाव हैं।[1] इसके दो भेद होते हैं — संयोग और वियोग।

1- काव्यदर्पण, रामदहिन मिश्र, पृ0 179-81

संयोग श्रृंगार :-

अवधविलास में संयोग श्रृंगार के कुछ ही स्थल हैं। सीता राम के पूर्व राग का विस्तृत वर्णन पुष्पवाटिका प्रसंग में हुआ है। राम लक्ष्मण पुष्प लेने वाटिका गये हैं। संयोगवशात् उसी समय जानकी पहुँच जाती हैं। प्रथम दृष्टि पड़ते ही जानकी का हृदय रसाप्लावित हो उठता है। राम आलम्बन, सीता, आश्रय, राम का सौन्दर्य एवं उपवन उद्दीपन विभाव तथा श्रम, उत्सुकता, हर्ष, व्रीड़ा, संचारी भाव हैं।

(1) मुख ताकि चकि थकि रही किशोरी। मेरो चकित देखि चकोरी।
पुनि कछु हरष भयो हिय माँही। दिनकर उदय कमल विकसाही।
अली ओट दै लाड़िली देखति रस निधान।
बदन कमल जनु नैन अलि लखत करत मधुपान।'[1]

प्रेमाभिभूत मन का देह-अध्यास विस्मृत हो जाना बहुत स्वाभाविक होता है। अनुरक्ता नायिका आस-पास के परिवेश को भूलकर राम में केन्द्रित हो गयी। पुष्प चयन भूल गया। वे कलियों को तोड़ने लगीं। सीता के अंगगत कायिक अनुभाव कितने स्वाभाविक प्रतीत हो रहे हैं।

सुधि बुधि राम निरखि गई भूली। तोरन लगीं कली बिनु फूली।
प्रिय की लगनि प्रगट होइ निसरी। तोरति पात फूल फल बिसरी।
कछु की कछुक कहन लगीं बाती। लखि गईं सखी संग की जाती।[2]

ये पुतलियाँ ऐसा हठ ले बैठी हैं कि राम की ही ओर मुड़कर देखने लगी लगती हैं।

चितवति सखी सनमुख दृग कोरा। पुतरी चली जाति उहि ओरा।'[3]

1- अवधविलास, पृ0 230
2- वही, पृ0 230
3- वही, पृ0 230

कुछ

पुष्प के बहाने प्रिय की प्रतीक्षा करना, सखियों को आलिंगन में बाँधना सखी को सामने करके कुछ हँसना इत्यादि माध्यमों से प्रेम व्यक्त किया गया है -

सखि को कुँअरि कुँवर तन राजति। पियहिं दराहति फूल बहाना।
भरि भरि भेंटति बाँह समागी। झूलति सखि के हिय पर लागी।[1]

यहाँ पर लालदास ने उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत राम का सौन्दर्य उनकी चितवनि का भी उल्लेख किया है -

पीत पितम्बर साँवरे अंग। घन दामिनि जनु सोहत संग।
बरसत सुधा रस धुनि छाया। नाचत सीय मन मयूर हुलासा।
चितवनि चलनि कहनि मृदु बोली। सीता ललित देखि सिय भोली।[2]

ऐसे समय में चिन्ता स्वयमेव आ जाती है। चतुरा, क्रिया विदग्धा, सीता के सात्विक अनुभाव बड़े मनोहारी हैं -

फुलवा लेन कतहुँ नहिं जाइब। या ही ठौर प्रात पुनि आइब।
फुलवा लीन्ह बैठि गैहि छहियाँ। मुदरी थोरि गिरी तेहिं ठइयाँ।
छल करि फिरी कीन्ह चतुराई। देखे प्रान नाथ पुनि आई।
वन मृग खग बैठे तिन्हें धाई। देत उठाइ उठाइ भगाई।
सिय तहँ देखि थेकि मृग देही। जाहिं समीप बहाने रही।
घेरि-घेरि रुकि सिय लगि आवत। फेरि-फेरि धारत चोप चित लावत।
देख राम छवि रीझि कुमारी। बिह्वल होइ गिरी न सँभारी।[3]

लालदास ने एकांगी प्रेम का वर्णन नहीं किया है। राम के मन में भी सीता के प्रति सहानुराग है - यथा

1- अवधविलास, पृ0 23।
2- वही, पृ0 23।
3- वही, पृ0 23।

लाल राम दृढ़ पन कियो देखि रूप छविवान।

मन वच क्रम करि न वरिव जनकि बिनु तिय आन।[1]

सारांश यह है कि निर्जन स्थान, वन, वाटिका, तपोवन, तीर्थ, मंदिर के समीप नायक-नायिका का परिचय, मिलन प्राचीन काल से रूढ़ि के रूप में वर्णित चला आ रहा है जिसका अत्यन्त रमणीय या रोमांटिक रूप लालदास ने दिखाया है। किशोर राम एवं किशोरी सीता आलम्बन आश्रय हैं। वसन्त ऋतु की शोभा से सम्पन्न वाटिका सुरभित वातावरण उद्दीपन है। नायिका एवं नायक के कायिक एवं मानसिक अनुभावों के साथ स्तम्भ, रोमांच, उन्माद, जड़ता, श्रम, औत्सुक्य, हर्ष इत्यादि संचारी भावों से रस पुष्ट हुआ है।

संयोग शृंगार का दूसरा अवसर धनुष भंग प्रकरण पर उपस्थित किया गया है। रंगभूमि में जयमाल लिए स्वयम्बरा सीता राम दर्शन हेतु लालायित हैं। राम को देखकर उनकी रति प्रगाढ़ हो रही है। पिता का संकोच उन्हें लज्जालु बना रहा है। स्तम्भ, वितर्क, औत्सुक्य, हर्ष संचारी भावों का वर्णन हुआ है —

वरमाला सीय लिए ठाढ़ी। निरखि राम पुनि अति रति बाढ़ी।

बिनु ही धनुष वरन मन चहई। समुझि पिता पनु सकुचि रहई।

मैं वर करौं अपने मन रोपी। धर्म प्रभाव जाइ जग लोपी।

अस कहि चकि थकि रहि तिय माला। चित्रलिखी पुतरी जनु बाला।[2]

पुष्पवाटिका में अंकुरित राम का प्रेम सीता को देख वर्धित होने लगा। आश्रय राम की रति हर्ष, आवेग, इत्यादि संचारी भावों से पुष्ट हुई है —

राजीव नयन मदन मद मोचन। चितये सिय तन सोक बिमोचन।

प्रफुलित वदन उमगि मुसिक्याने।[3]

1- अवधविलास, पृ० 232

2- वही, पृ० 235 3- वही, पृ० 235

सीता राम की प्रगाढ़ दाम्पत्य-रति का अन्य अवसर वनवास के समय आया है। चलते चलते पीछे मुड़कर कोमलांगी-सीता की ओर प्रेममयी दृष्टि से देखना राम की आन्तरिक रति को प्रगट करता है —

पियतन राम चिते मुख मोरी। बिलखति गति छवि चलन किशोरी।
सिय पर राम को सुनहु सनेहू। होइ अनुकूल पीय किये नेहू।
धरत चरण कोमल नव चाहीं। अपने नैन राखि कहँ ताहीं।[1]

<u>वियोग श्रृंगार</u> :—

लालदास के सीताराम की इस कथा में वियोग श्रृंगार के अवसर ही नहीं मिले क्योंकि सीता-हरण के कारण उत्पन्न वियोग का वर्णन लालदास ने वर्णनात्मक शैली में किया है। राम सीता का वियोग कवि को अभीष्ट नहीं है, फिर भी कवि ने अपनी चतुराई से वियोग श्रृंगार का अवसर खोज लिया है। विष्णु द्वारा राम रूप में अवतरित होने पर स्वामी लक्ष्मी का विरह सटीक रूप में वर्णित हुआ है। इस स्थल पर विष्णु आलम्बन, आश्रय लक्ष्मी हैं। उदास गरूड़ पार्षद, वर्तिकाएँ आगत सिद्ध, चारण, शून्य भवन, उद्दीपन विभाव हैं। अश्रु, वैवर्ण्य, ग्लानि, उत्सुकता, चिन्ता, वितर्क, व्याधि इत्यादि अनुभाव एवं संचारी भावों से वियोग श्रृंगार व्यक्त हुआ है।

लागत सून भवन बिनु साईं। भोग सुगन्ध कछू न सुहाईं।
बिलखति रहति कछू नहिं बोले। विरह लहरि के परी झकोले।
मन में बहुत होनता आनी। छीन शरीर भयो सिय रानी।
बैठी ऊँचे लेत उसासा। कर कपोल चित उड़त आकासा।
मनहीं मन मँह रहति विचारा। पुरूषारथ अब कौन हमारा।
कछु नहिं कह्यो गये केहुँ देसा। आवत है मन माँह अँदेसा।

1- अवधविलास, पृ० 27।

2- वही, पृ० 172-73

या धौं भयो केशु परमाये। कैसे मोहि लगत वनि आये।

× × × ×

पीय-पीय पल पल रटत नैन बहत जल धार।[1]

काम के प्रेम में विरह की महत्ता का आभास है,[2] इसीलिए इस अवसर पर कवि ने चिन्ता, अभिलाषा, गुण-कथन, उद्वेग, जड़ता इत्यादि विरह की दशाओं का संक्षिप्त उल्लेख किया है। इसी प्रकार कुद्धरत जलन्धर की पत्नी वृन्दा का विरह अत्यन्त संक्षिप्त रूप में वर्णित है।

वृन्दा नाम जलन्धर रानी। पति संग्राम चिन्तत अकुलानी।

घर वन बाग सरोवर फिरई। पिय बिनु पल छन कतहुँ न परई।

खान पान तन कछु न सुहाई। चिंता भइ महादुख पाई। (अ0वि084)

करुणरस :—

'इष्टनाशादनिष्टाप्तेः शोकात्मा करुणो नुतम्'।

के अनुसार इष्टनाश या अनिष्ट की प्राप्ति से करुण रस की उत्पत्ति होती है। शोक इसका स्थायी भाव है। इसमें अश्रु पतन, परिदेवन, मुखशोषण, वैवर्ण्य, निःश्वास आदि अनुभाव प्रकट होते हैं तथा निर्वेद ग्लानि चिन्ता और औत्सुक्य, आवेग मोह श्रम, भय, विषाद, दैन्य, व्याधि, जड़ता, उन्माद, अपस्मार, त्रास, आलस्य, मरण, स्तम्भ, वेपथु, वैवर्ण्य, स्वरभेद इत्यादि व्यभिचारी तथा सात्विक भाव प्रकट होते हैं।[3] अवध विलास में करुण रस के दो स्थल हैं। प्रथम स्थल राम वन गमन का है। पुरजन वासियों एवं माताओं को अनिष्ट की प्राप्ति हुई है। जहाँ राम राज्याभिषेक का उत्साह छाया था कि ऐसा दुःखद, अकाम्य, परिस्थिति उत्पन्न हो गयी।

1- अवधविलास, पृ0 172-73

2- शारदक, पृ0

3- रससिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण, डा0 आनंद प्रकाश दीक्षित, पृ0 353

हाथ मींजना, अंगुली तोड़ना, कायिक अनुभाव, शाप एवं गाली देना वाचिक अनुभाव आवेग, जड़ता, स्तम्भ, अश्रुपात, इत्यादि संचारी भावों से अवधपुरवासियों का शोक व्यक्त हुआ है —

अवध ते जब कहँ कीन्ह पयाना। सबके निकसि चले जनु प्राना।
मींजहिं हाथ लो पछिताहीं। राजा काज कीन्ह भल नाहीं।
किनि अस अधम दीन्ह मत पापी। मारिये ताहि न छाड़िय पापी।
रोवहि सबहि कहँ नरनारी। हा दई भई अब अवध उजारी।
गरी देहि रिसाइ रसाई। केकइ तेहि कवन मति आई।
मरी मंथरा दुष्ट कठोरी। बाधहि ताहि अंगुरि कर फोरी।[1]

हास्य रस :—

जहाँ विकृत वेशभूषा, रूप वाणी, अंग, भंगी आदि के देखने सुनने से हास का स्थायी भाव परिपुष्ट हो, वहाँ हास्य रस होता है। विकृत या विचित्र वेषभूषा, व्यंग्य भरे वचन उपहास्यास्पद व्यक्ति की मूर्खता भरी चेष्टा का वर्णन या अथवा व्यक्ति विशेष के विलक्षण बोलने चालने का अनुकरण हास्योत्पादक वस्तुएँ, छिद्रान्वेषण, निर्लज्जता आदि आलम्बन हास्य वस्तु की चेष्टाएँ उद्दीपन, कपोल कंठ का स्फुरित होना, आँखों का मिचना मुख का विकसित होना पेट का हिलना आदि अनुभाव, अश्रु कंप हर्ष, चपलता, श्रम, अवहित्था, रोमांच, स्वेद, असूया, निर्लज्जता आदि संचारी भाव हैं।[2]

बाढ़-गाढ़ कछु पेट फुलाई। बैठत एक ठौर अब आई।
बकत परस पर सोर मचावत। इवं इवं कहि हाथ नचावत।
ओ ओ आ आ दुर्गंधरू राती। हमरत बकत वज्र की छाती।

1- अवधविलास, पृ0 265
2- काव्यदर्पण, पृ0 212

अब प्रात साँझ दुपहर को जाई। परत हैं पानी बहि अररार्ई।

ठाढ़े हाथ रहत बल नाहीं। पानी फेर फेर ऊकराहीं।

सिर पर हाथ धुवावत कबहीं। नाक पकारि कछु गनत हैं तबहीं।

धरि धरि उठि उठि फिरि फिरि मानत। सूरज को कछु अधिक सिरावत।

पोंछि पोंछि हाथनि सब लीया। फेरत हैं माले के बीया।[1]

उपर्युक्त उदाहरण रावण के अनुचरों द्वारा ब्राह्मणों की स्थिति का वर्णन है। आलम्बन उद्दण्ड ब्राह्मण हैं, जो किसी भी राजा के अधीन नहीं है। उनकी धार्मिक क्रियाएँ उद्दीपन विभाव, व्यंग्यवचन, असूया, निर्लज्जता इत्यादि संचारीभाव हैं।

<u>वीभत्स रस</u> :—

वीभत्स रस का स्थायीभाव जुगुप्सा है, जो किसी अनभिमत गर्हणीय अथवा उद्वेग जनक वस्तु को देखकर या सुनकर अथवा गन्ध, रस तथा स्पर्श दोषके कारण उत्पन्न होती है।[2] श्मशान, शव, चर्बी, सड़ा मांस, रुधिर, मल-मूत्र, दुर्गन्ध द्रव्य, घृणोत्पादक वस्तु और विचार आलम्बन विभाव, गीधों का मांस नोचना, मांस भक्षी जीवों का मांसार्थ युद्ध, कीड़े-मकोड़ों का बिलबिलाना, कुत्सित रंगरस आदि उद्दीपन विभाव आवेग, मोह, व्याधि, जड़ता, चिन्ता, वैवर्ण्य, उन्माद, निर्वेद ग्लानि, दैन्य आदि संचारी भाव हैं।[3] अवधविलास में जुगुप्सा या घृणा रस दशा तक नहीं पहुँच सका है। वास्तव में वीभत्स रस शुद्ध परिपाक साहित्य में कम ही देखने को मिलता है। मय दानव के उत्तर को सुनकर कुपित कुबेर ने जिस भयंकर युद्ध की कल्पना की है उसमें अमर्ष, गर्व, उग्रता संचारीभावों का समावेश है —

1- अवधविलास, पृ0 174

2- रससिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण, पृ0 372

3- काव्यदर्पण, पृ0 217

मय को कुटुंब समिधि करि जारयो। सुरा तेल रुधिर घी डारयो।
रुदन वेद धुनि होइ चहुँ ओरा। मय जजमान करौं तेहि ठौरा।
ब्राह्मन बहु बेताल जिमाऊं। असुर अस्थि तिन्ह कीं अचवाऊं।
गावहिं गीत जोगिनी सारी। जाचक प्रेत पिसाच पुकारी।
शोणित सोम पान करवाई। सहगामिनी नियतंग लगाई।[1]

रौद्र रस :—

जहाँ विरोधी दल की छेड़खानी अपमान आदि से प्रतिशोध की भावना जाग्रत होती है वहाँ रौद्र रस होता है। विरोधी दल के व्यक्ति आलम्बन, उसके द्वारा कृत अनिष्ट कार्य, अपकार, कठोर वचन आदि उद्दीपन, मुख मंडल पर लाली दौड़ आना, भौंह चढ़ाना, आँखे तरेरना, दांत पीसना, होंठ चबाना, हथियार उठाना, ललकारना, गर्जन-तर्जन, दीनता वाचक शब्द प्रयोग अनुभाव, उग्रता, अमर्ष, चंचलता, उद्वेग मद, असूया, श्रम, स्मृति आवेग संचारी भाव तथा स्थायीभाव क्रोध है।[2] अवधविलास में रौद्र रस के अनेक स्थल हैं। यक्षराज कुबेर ने अपने पिता की सेवा के लिए मय दैत्य से उसकी कन्या माँगी। ऐसी अनिष्ट बात सुनकर अपमानित मय दैत्य कुपित हो उठा। आलम्बन कुबेर आश्रय मय है। आश्रय की तिरस्कृत वाणी में वाचिक अनुभाव, गर्व, अमर्ष, उग्रता संचारी भावों से रौद्र रस का पूर्ण परिपाक हुआ है —

कन्या देहु माँगि जक्षराजा। सेवा करन पिता के काजा।
दूत जाइ तबही कही बाता। सुनि जरि उठेउ दैत्य जनु पाता।
देखहु वञ्चना करत ढिठाई। कौन बात कैसी कहि आई।
अपनी ओर न देखि निहारी। बड़ी बात कही जात बिचारी।

1- अवधविलास, पृ0 46
2- काव्यदर्पण, पृ0 196

घर-घर जात फिरै नहिं लाजा। मांगत भीख कहावत राजा।

होम काज को करहिं बहाना। बीच खाइ खाइ बहुत मुटाना।

× × × × ×

ले हमार तरिया तन चाहैं। फोरौं आंखि बीस देखि चाहैं।[1]

मय दानव के तिरस्कृत उत्तर सुनकर कुबेर क्रोधित हो गये। ब्राह्मणत्व पर लगाये गये लांछन सह्य न हुए —

सुनि कुबेर तामस करि बोले। मानहुं नैन सिंह के डोले।

मय देखी हमरी बकनाई। कुद्ध जन्य कराइब जाई।

क्रोध अग्नि रन देखी बापच। राखस मुंडमाल गुहि नापब।

उपर्युक्त उदाहरण में आश्रय कुबेर एवं आलम्बन मय दैत्य है। आरक्त मुखमण्डल, के साथ वाचिक अनुभाव, गर्व, उद्वेग, उग्रता संचारीभाव हैं। इसी प्रकार जलन्धर में ही रौद्र रस व्यक्त हुआ है —

बोलेउ तमकि जलंधर राजा। मानहुं सिंह महाबल गाजा।

बाप हमार अनहक मारा। कहौ देवन्ह को दहा बिगारा।

सिंधुपुत्र जो सबहिं उबारो। रहे अमर अब लौं जब मारो।[2]

<u>वीर रस</u> :-

मनुष्य मन में साहसिक कार्यों के करने के लिए जो एक प्रकार का उत्साह विद्यमान रहता है, वही वीर रस का स्थायी भाव है। शत्रु, दीन, याचक तीर्थ पदादि आलम्बन शत्रु का पराक्रम याचक की दीनता, उद्दीपन रोमांच, गर्वीली वाणी, आदर सत्कार, दयादि के सब अनुभाव एवं गर्व, धृति स्मृति, हर्ष मति, असूया आवेगादि संचारी भाव हैं।[3] अयानविलास में वीर रस के अनेक और अच्छे स्थल हैं।

1- अयानविलास, पृ० 45-46

2- वही, पृ० 78

3- काव्यदर्पण, पृ० 192-93

अवधविलास में युद्ध वीर, दानवीर, धर्मवीर, एवं दयावीर के उदाहरण मिलते हैं। तालजंघ पुत्र मुर के अत्याचारों को देवताओं से सुनकर विष्णु के मन में उसे विनष्ट करने का उत्साह जाग्रत हो गया। वे युद्ध के लिए तत्पर हो गये। आलम्बन मुर एवं राक्षस आश्रय विष्णु, देवताओं का दैन्य एवं राक्षसों के अत्याचार उद्दीपन राक्षसों को पकड़ कर चीर डालना, गदा युद्ध करना, शरीर के वस्त्रों को कसना, अनुभाव, आवेग अमर्ष, औत्सुक्य उद्धृत संचारी भावों से वीर रस व्यंजित हुआ है,

ठाढ़े रहो जहु जिनि भागे। मैं अब लरौं तुम्हारे आगे।
देखहु छिन इक बल हमारा। मारौं सबहि एक ही बारा।
चक्र फिराइ गदा कर लीने। मारे असुर बीर रिस भीने।
× × × × ×
असुर अनन्त लगे चहुँ ओरा। जनु भादौं बादर ससि घेरा।
ऊरे तमकि चले रिपु मारन। सिंह जनु गज जूथ बिदारन।
पीताम्बर कटि कसि अस टूटे। बाजराज आय मन पर छूटे।
गो गभीर गरजति जब डाटे। पवन प्रचंड जनो घन फाटे।
लागत चक्र बान हरि करषे। बरषे रुधिर असुर तन बरषे।
असुर अनन्त एक भगवाना। मारत सब यहँ करत बिताना।
× × × × ×
मारत लातन्ह असुर पछारी। काटी मनहुँ कुठार तरारी।
चीरे पकरि आँत नस टूटे। असुर अनेक केस सम फूटे।[1]

इसी स्थल पर लालदास ने मुर के युद्ध कौशल का वर्णन कर वीर रस का उदाहरण प्रस्तुत किया है —

---

1. अवधविलास, पृ० 62-63

तहाँ पुनि दंड पेलि भुज ठोंकी। तकत चहुँ ओर चितवत चौंकी।
बरषहि बान मनहुँ झरि लाई। चंचल गति अति बात चुकाई।
एक बेर सुर कर गहि झटकेउ। फिरि दवौ भुजा धरनि गहि पटकेउ
सनमुख होइ त्रिसूल चलावा। ताहि चतुर्भुज काटि बहावा।
गदा गदा पर अरि परि टूटे। चक्र चक्र सौं लागि लागि फूटे।
भये निरायुध माधव मना। अंग युद्ध तबो फिरि ठाना।[1]

इसी प्रकार शिव त्रिपुर युद्ध में वीर रस का अच्छा वर्णन मिलता है। त्रिपुर के अत्याचारों से त्रस्त पीड़ित इन्द्रादिक देव शंकर की शरण में गये। शंकर का त्रिशूल उठाना, डमरू नाद धृति उग्रता से उत्साह व्यंजित हुआ है –

इन्द्रादिक की सुनत पुकारी। शंकर लीन्ह त्रिसूल अगारी।
चले कोप करि शोक नसावन। गहि कर चन्द्र असुर संहारन।
तब शिव कीन्ह बान संधाना। सावधान होइ प्रलय समाना।
ऐसे असुर नगर पर डारे। तूल समान त्रिपुर पुर जारे।[2]

मधु-कैटभ से त्रस्त ब्रह्मा ने विष्णु से रक्षा की याचना की। दुष्टों को देख विष्णु के सात्विक भावों के साथ संचारी भावों की मिली-जुली झलक उत्साह को रस दशा में पहुँचाती है।

बोले विष्णु देखि अनखाये। कहाँ ये दुष्ट कहाँ ते आये।
चितये लाल नैन करि सोहैं। दंत चबाइ चढ़ाई भौंहैं।[3]

शुम्भ-निशुम्भ की पराजय एवं शंकर के पराक्रम की कथा सुनकर जालन्धर उत्साहित होकर युद्ध की तैयारी करने लगा। मूँछ मरोड़ना, अस्त्र-धारण, गर्वोक्तियाँ अनुभाव एवं मद धृति अमर्ष गर्व, उग्रता संचारी भावों का उल्लेख इस अवसर पर हुआ है–

1- अवधविलास, पृ0 62
2- वही, 68-69
3- वही, पृ0 71

देखि भयंकर उठेउ रिसाई। भरत हौं बधिहै कहां जाई।

धारि हथियार औ मूंछ मरोरा। मारौं अनु जाइ जेहि ठौरा।

खेल बान धनुष कर धारे। सबही महा ढाल तरवारे।[1]

तात्पर्य यह है कि लालदास ने वीर रसाभिव्यक्ति हेतु अनेक अवसरों की संयोजना की है। वीर रस की व्यंजना में कवि की एक विशेषता परिलक्षित होती है कि वीर रस के साथ रौद्र रस का संयोग स्वतः होता गया है। वस्तुतः रौद्र एवं वीर रस के [redacted] विभेदक तत्वों का निरूपण कठिन है। लालदास ने दोनों रसों का ऐसा वर्णन किया है कि धूपछांही वस्त्र के समान कभी वीर रस की झलक दिखाते हैं तो कभी रौद्र रस की। दोनों रसों का स्पष्ट और अलग अलग निरूपण बड़े ही रचना नैपुण्य का द्योतक है, जो कम कवियों से बन पड़ती है। अवधविलास में इतना अवश्य हुआ है कि इन दोनों रसों के सम्मिश्रण से पाठक हृदयाभिभूत हो जाता है और आनन्दोपलब्धि में व्याघात अनुभव नहीं करता है। तात्पर्य यह है कि लालदास ने वीर एवं रौद्र रस का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध स्थापित करते हुए पाठक को एक नई भाव-भूमि में ला खड़ा किया है।

युद्धवीर के साथ साथ कवि ने दानवीर का उदाहरण भी प्रस्तुत किया है। रघु-कौत्स प्रसंग में यह अवसर आया है कि कुबेर से प्राप्त समस्त सुवर्ण रघु निर्लोभ भाव से कौत्स को समर्पित करता है। आश्रय रघु है। धृति मति हर्ष, संचारी भावों से दानवीर रस पुष्ट हुआ है।

जहाँ तहाँ देखि कनक की रासी। हरषेउ विप्र और पुरवासी।

राजा कहै लेहु द्विजवर जेता। तेरे मन भावै कुछ तेता।

नृप मंदिर पर परेउ जो कंचन। तामहि कछु राख्यो नहिं रंचन।
सो सब हारि दयो जेहि ठामा। तारथ भयो सोन बर नामा।[2]

1- अवधविलास, पृ0 82

2- वही, पृ0 96

दानवीर रस का उत्कृष्ट उदाहरण राजा शिवि के दान में दिखाई पड़ता है। कपोत की रक्षार्थ वे अपने शरीर का मांस काट काट कर तुला पर रखते जाते हैं और अन्तिम क्षण में अपना सारा शरीर बाज को सौंप देते हैं। आश्रय राजा शिवि, आलम्बन कपोत, उसकी दीन दशा, उद्दीपन भाव शिवि का मांस काट-काट कर चढ़ाना कायिक अनुभाव आश्रय के अन्तःकरण की वृत्ति से उत्पन्न सात्विक आदि मानसिक अनुभाव निर्वेद धृति मति उत्सुकता, हर्ष और चपलता आदि संचारी भावों से इस रस का परिपाक हुआ है।

राजा कहै और सब तजिहौं। सरनागत आयो नहिं तजिहौं।
एक ओर सब धर्महि कीजै। एक ओर जीव दान जो दीजै।
जीव दया कहु भाँति बखाना। मांस अहारी एक न माना।
दृढ़ मत जानि सेन अरु भाखो। अपनो मांस देहि यहि राखो।
अरे सिचान भली कहि ये ते। देहौं मांस मांगि चाहे जेते।
राजा मन उत्साह बढ़ावा। अपनो मांस उतारि चढ़ावा।
छील छील नृप मांस चढ़ाये। देखि देवगन सब अचरज पाये।[1]

इसी प्रकार धर्मवीर का उदाहरण भी अवध विलास में मिलता है। गुरु आज्ञा से दशरथ धर्म में प्रवृत्त होकर पुत्रेष्टि यज्ञ कर रहे हैं। आश्रय दशरथ विधि विहित यज्ञ कर्मों का सम्पादन कायिक अनुभाव मय धृति मति हर्ष संचारी भावों को स्थान दिया गया है।

वेद विहित सब विधि विस्तारा। दान दये को गने अपारा।
कौशल्या कैकेयी सुबानी। बैठे गठि जोरि नृप रानी।
सुंदर यज्ञ वेदी मन मोहै। तापर अग्नि देवता सोहै।
और यज्ञ सामग्री साजा। ले कुश ते बैठे राजा।[2]

तात्पर्य यह है कि लालदास ने वीर रस के चारों भेदों (युद्ध, दान, धर्म, दया) का अच्छा वर्णन किया है।

भयानक रस :-

भय दायक वस्तुओं के देखने या सुनने से अथवा प्रबल शत्रु के विद्रोह आदि करने से जब हृदय में वर्तमान भय स्थायीभाव होकर परिपुष्ट होता है, तब भयानक रस उत्पन्न होता है।[1] इसका स्थायीभाव भय है। भय दायक वस्तुएँ आलम्बन, भयानक वस्तुओं का उल्लेख उद्दीपन, कंप, स्वेद, वैवर्ण्य, स्वरभंगादि अनुभाव एवं चिन्ता ग्लानि, दैन्य अपस्मार संचारी भाव हैं। अवधविलास में भयानक रस के अनेक अवसर दिखायी देते हैं —

(1) तालजंघ पुत्र मुर के प्रबल प्रत्याक्रमण से पराजित विष्णु की दुःस्थिति देखकर देवताओं के प्राण भयाक्रान्त हो उठे। आलम्बन मुर आश्रय देवगण हैं। विष्णु का भागकर गुफा में छिपना, राक्षसों का हर्षातिरेक, आलम्बन की गर्वोक्ति उद्दीपन विभाव, रक्षा विषयक दीनता चिन्ता संचारी भावों का उल्लेख है —

गुफा रहै एक गिरितर भारी। पैठे जाय बिकुंठ बिहारी।
देखे जब भगवन्त पराने। देवन्ह प्रान भये करि माने।
भये अनाथ अमित सुर भारे। हरिउ सहाय भये तउ हारे।
तब ते असुर हरषि कर शोरा। विजयभई सुर की करि थोरा।
मुर महाबली भांति गुररावै। पकरहु धाइ जान नहिं पावै।[2]

(2) त्रिपुर दैत्य युद्ध के समय देवताओं का भय रस कोटि तक वर्णित हुआ है —

रथ समेत संकरहिं गिरावा। नन्दी गन रथ तजि हरि धावा।
भागे देव छाडि रथ भागे। ठढ़े दूर तमासे लागे।
रथ के परत पहार जु कांपे। धसकी धरनि कमठ कटि चांपे।
हलके सिंधु मेरु थहराने। दिग्गज डरे सेस थहराने।

1- अवधविलास, पृ0 199
2- वही, पृ0 64

देखा विष्णु सकल भय पावा। अति आतुर शंकर पहिं आवा।[1]

(3) शंकर के दर्शनार्थ आगत देवराज इन्द्र ने विरूप वेषधारी से अपमानित होकर अवमानना भरा बरतायी। इस कृत्य से शंकर कुपित हो गये। उनके तृतीय नेत्र से निःसृत आग इन्द्र को भयभीत करने लगी। आश्रय इन्द्र, आलम्बन मूर्तिमन्त अग्नि है। देवराज का भागना, कायिक अनुभाव, ग्लानि, दैन्य, त्रास, व्याधि इत्यादि संचारी भावों से भयानक रस पुष्ट हुआ है —

दरसन करन पुरन्दर धीरे। शंकर कहाँ कहो तु को रे?
बोले महादेव नहिं बानी। कोपे महा इन्द्र अभिमानी।
मारी गदा गरे महिं जबहीं। प्रगटी अगनि आँखि ते तबहीं।
देवराज ताहि देखि डेराने। डारि गदा कित ताइ पराने।
पीछे अगिनि लगी संग धाई। जरत जरत अति दुख पाई।
सुरपति तब मन महिं पछितावा। सोचत सिवहि जाइ जगावा।
विकल भयो सब बुद्धि नसाई। आइ गये सुर गुरु सुखदाई।[2]

(4) पार्वती को प्राप्त करने के लिए जालन्धर प्रेषित दूत राहु की बात सुनकर शिव की जटा से एक पुरुष प्रगट हुआ। लालदास ने आलम्बन विभाव का वर्णन इस प्रकार किया है —

श्याम सरीर केस सिर ठढ़े। दंत बड़े मुख बाहिर काढ़े।
लंबे ओठ हाथ नख देखा। दुर्बल देह दिगंबर वेषा।[3]

उसका भयंकर रूप, कटकटाना, उद्दीपन विभाव, आश्रय राहु का भागना, गिर अश्रु, उद्वेग इत्यादि अनुभाव एवं संचारीभाव हैं।

1- अवधविलास, पृ० 69

2- वही, पृ० 75

3- वही, पृ० 81

कटकटाइ धनमुख छोड़ धावा। भज्यो राहु जान्यो मोहि खावा।

राहु डरे कहुँ ते फिरे भागे। चीरति मुख पीछेउ लागे।

× × × × ×

कही बात मुख अपनी ले ले ऊँच उसास।[1]

(5)छठी जलन्धर ससैन्य कैलास पर आक्रमण कर देता है। शिव की हुंकार सुनकर असंख्य भूत,प्रेत बेताल दौड़ पड़े जिन्हें देख राक्षस भयभीत हो गये। जलन्धर की सेना आश्रय, भूत-प्रेत आलम्बन, उनकी क्रियाएँ उद्दीपन विभाव है। स्तम्भ,कम्प, अनुभाव, जड़ता,श्रम, व्याधि, उन्माद, संचारीभाव हैं[2]

केउ नाचत केउ गाल बजावत। केउ घूमत केउ फरकत आवत।

केउ हुंकार देत किलकारी। कटकटात दौरे दै तारी।

बिथुरे केस दंत मुख बाये। रूप भयानक धरि बिकराये।

देखे प्रेत दैत्य भहराने। दौरे डरे निशाच पराने।[2]

कोटि भार स्वर्ण की आवश्यकता के कारण रघु द्वारा प्रेषित बाण को देखकर कुबेर भयभीत हो गया –

देखि कुबेर महाभय माना। पो अस कहीं कवन को बाना।

देखहु बाँधि कहा लिखि डारा। बैठे कहा होहु हुसियारा।

बाँचे बोलि बोलि परवाना। ठाढ़े सभा सुने दै काना।[3]

सीय स्वयम्बर सभा में लाये जाने वाले धनुष को देखकर आगत नरेशों के मन में भय छा गया। आलम्बन धनुष आश्रय नरेश हैं। पृथ्वी का हिलना, उसकी विशालता कठोरता उद्दीपन विभाव स्तम्भ एवं पलायन अनुभाव तथा चिन्ता, आवेग,व्रीड़ा त्रास, जड़ता वितर्क चपलता संचारीभावों का मार्मिक वर्णन है –

1- अवधविलास, पृ0 81

2- वही, पृ0 82

3- वही, पृ0 95

पाँच हजार जोधा मिलि आना। कठिन गँभीर पहार समाना।

धरतहि धरनि धमकि अस आई। जनु भुव कंप भयो मन आई।

केउ ताकि रहे न मुख कछु बोले। केउ भय मानि सभा तजि डोले।

केउ सकुचे अगम न मन माहीं। उठि है न धनुष रहे भल नाहीं।[1]

<u>वत्सल रस</u> :—

इसका स्थायीभाव वत्सलता या स्नेह है। पुत्रादि संतान आलम्बन है। उनकी चेष्टायें उनकी विद्या-बुद्धि तथा शौर्यादि उद्दीपन हैं और आलिंगन, स्पर्श, शिरचुम्बन, एकटक उसे देखना पुलकादि भाव अनुभाव तथा अनिष्ट शंका, हर्ष, गर्व आदि उसके संचारी भाव हैं।[2] अवधविलास में रामादिक भाइयों के जन्म, क्रीडायें, शील जन्य, विश्वामित्र के साथ राम का गमन इस रस के उदाहरण हैं। दासियों से पुत्र जन्म की सूचना सुनकर दशरथ प्रेमाभिभूत हो उठे। इस अवसर पर हर्ष, आवेग स्तम्भ का उल्लेख लालदास ने किया है —

राजा सुनत हर्ष अस बाढ़े। बोलेउ तो न गयो उठि ठाढ़े।

सुख समाधि मन की भई जोई। वा ने उतर और नहिं कोई।[3]

माता कौशल्या पुत्र सौन्दर्य देख प्रसव जनित कष्ट भूल गयीं। कौशल्या, आश्रय, राम आलम्बन, उनका सौन्दर्य उद्दीपन विभाव है। पुत्र को हृदय से लगाना, मुख चुम्बन दुग्ध पान कराना अनुभाव तथा हर्षादि संचारी भाव वर्णित हैं —

सुन्दर बाल देखि मन भाये। हृदय लगाइ पयोधर प्याये।

पीवत दूध मात मन माना। देव करत जनु अमृत पाना।

खेलत हिय पर अति हुलसाई। किलकि किलकि हँसि हँसि सुखदाई।
फेर फेर मुख चुंबति माता। तन की तपनि जुगवति माता।[4]

1- अवधविलास, पृ० 234   2- रससिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण, पृ० 295

3- अवधविलास, पृ० 154   4- वही, पृ० 154

पुत्र की तोतली वाणी उनका किलकना, बाल क्रीड़ायें देखकर दम्पति हर्षित होते हैं। राम के शरीर में तेल उबटन लगाना, बालों को गूंथना इत्यादि आश्रय के अनेक कायिक अनुभावों का वर्णन लालदास ने कुशलतापूर्वक किया है —

तोतरे बचन बोलि किलकाहीं। नृपरानी सुनि सुनि मन माहीं।
धन्य जन्म भये सुफल हमारा। पुत्र बचन श्रवनन्ह अधारा।
करहिं रानी तेल कुल्या अंग अंग सुधारही।
फेरि फेरि बलि गयी कहि कहि रीझि तन मन वारही।[1]

लालदास ने रामादिक चारों भाइयों की शैशव कौमार, पौगंड लीलाओं का वर्णन कर मातृहृदय की झाँकी अंकित की है। बालक चाहे कितना ही बड़ा हो जाय, माँ की दृष्टि में वह बच्चा ही रहता है। मातृ दृष्टि बहुत ही शंकायुक्त रहती है। राजकुमार बाहर खेलने गये हैं। आने में विलम्ब के कारण मातायें जाने क्या-क्या सोचने लगती हैं —

बड़ी बेर खेलत केहि ठाहीं। राम लला आये घर नाहीं।
दौरे सखी खोज तहाँ धायीं। बलकरि करि धरि धरि लै आये।
मैया कहति लेति हिय लाई। कहतनि माहि खेलहु बलि जाईं।
बगिया में कतरा हैं आये। लरिकन्ह को फारत मुंह बाये।
हाथन्ह बु छुरी तुरक हथियारे। काटहिं धन जाहु जिनि दुवारे।

तात्पर्य यह है कि बालकों की रूप माधुरी उनकी शारीरिक चेष्टायें मात पिता का दुलार माता द्वारा विभिन्न व्यंजनों की तैयारी चारों राजकुमारों सहित दशरथ का सहभोज इत्यादि वर्णनों में वत्सल रस अभिव्यक्त हुआ है।

1- अवधविलास, पृ० पृ० 162

2- वही, पृ० 187

वात्सल्य सीता जन्म एवं माता के द्वारा लालन पालन में भी वत्सल रस की अभिव्यक्ति की है। सीता आलम्बन, सुनयना आश्रय, सीता सौन्दर्य उद्दीपन विभाव एवं रानी का हृदय से लगाना, मुख चुम्बन अनुभाव हैं -

राजा दई रानी को बाला। हृदय लगाइ लई जनु माला।
अति सनेह भयो कियो दुलारा। आनद् गर्भ रही सब माया।
माया महा लगी मन भोरा। दूध प्रवाह चले तेहि ठोरा।
दुलरावति मुख चूंबति रानी। पुलक-पुल कहि कहि मृदु बानी।[1]

वियोग वत्सल के दो स्थल अवध विलास में है। राम की तीर्थयात्रा की बात सुनकर दशरथ चिन्तित हो जाते हैं। ग्लानि, स्तम्भ, वैवर्ण्य, इत्यादि से उनका पुत्र प्रेम प्रगट किया गया है। दशरथ की काकु वक्रोक्ति से उनकी पुत्र विषयक कामनाएँ व्यक्त होती हैं —

कहत है मैं आयसु जो पाऊँ। एक बेर तीरथ फिरि आऊँ।
सुनि दशरथ कछु उत्तर न आये। कहा जो भयो बहुत पछितये।
× × × ×
भल बिवाह करि पूत मिलाये। करि दिग विजय राजसुख पाये।
भल बहुतरी भीर मिराना। भल पतोह सौं पौत्र कुमारा।[2]

दूसरा स्थल विश्वामित्र की याचना के समय का है। राम लक्ष्मण को भेजते समय दशरथ अत्यन्त दुखी होते हैं -

गहि कर कमल अंक बैठाये। चुंबन करि मुख हिये लगाये।[3]

दशरथ की ग्लानि दृष्टव्य है —

राजा समुझि सोच पछितार्ई। कीन्ह कहा दिये पुत्र बहाई।
देखहु कुमति भई बुध याते। मैं हूँ न संग गयो जहाँ जाते।

1- अवधविलास, पृ0 181   2- अवधविलास, पृ0 203
3- वही, पृ0 226

कौसल्या का प्रेम अनेक संचारियों से व्यंजित हुआ है —

रानी अस कही बूझि बाता। कुछ भये बुधि हरी सिराता।
कौने भांति जाइ कहां रैहैं। सब पालन अब को करि दैहैं।
पौढ़ि हैं कहां भूमि निठुरोरे। कहते फूल गड़त हैं मोरे।
माँगि न लीन्ह कबहुँ सकुचाते। हौं ही देति तबहि कछु जाते।
उबटन तेल तपत जल धरिहै। तहँ को जतन पूत के करिहै।
धुनति सीस मींजि कर दूनो। भल दइ मोर कीन्ह घर सूनो।'[1]

पुत्र विषयक माता की चिन्ता बड़ी स्वाभाविक है।

शान्त रस :—

यद्यपि काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में शान्त रस का स्थायी भाव निर्वेद कहा गया है जबकि निर्वेद स्वयं संचारी भाव है। इसीलिए इसके स्थायीभाव के रूप में शम की प्रतिष्ठा की गयी है।[2] जहाँ इन्द्रियों इन्द्रियों के विषयों का शमन हो जाता हो वहाँ शान्त रस का परिपाक होता है। शब्दान्तर से यह कहा जा सकता है कि क्षण भंगुर संसार में विरक्ति, उसकी नश्वरता का बोध होना अथवा तत्वज्ञान के कारण वैराग्य भाव की पुष्टि शान्त रस के उपादान हैं।

अवध विलास में इस रस के एक दो ही स्थल हैं। लाल कवि को संसार की क्षणभंगुरता तथा उसके मूल प्रेरक तत्व ईश्वरीयशक्ति का अनुभव इस प्रकार हुआ है। यहाँ भक्त आश्रय है। ईश्वर (भगवान) के अस्तित्व का बोध उद्दीपन विभाव निर्वेद, उद्वेग, ग्लानि, आदि संचारी भाव हैं।

मैं परतंत्र रहत जग माहीं। कहन करन समरथ कछु नाहीं।
जीवन जन्म कठपुतरी समाना। करता प्रेरक श्री भगवाना।

1- अवधविलास, पृ0 226

जेहि जेहि भांति बजाइ नचावत। सोइ सोई नाच जीव दिखरावत।[1]

शान्त रस का सर्वश्रेष्ठ स्थल राम के वैराग्य प्रकरण में है। प्रसंग इस प्रकार है कि किशोर राम को जीवन की क्षणिकता और उसके मिथ्यात्व का जब बोध हुआ तब गुरु वशिष्ठ से सन्यस्त होने की कामना व्यक्त की —

जीवन अल्प देह छिन भंगी। मिथ्या सब झूठे धन संगी।
नरतन पाइ विलम्ब न कीजै। मुक्ति हेत साधन करि लीजै।
धन यौवन जीवन तन जेते। दामिनि सम चंचल सब तेते।[2]

उक्त उदाहरण में राम आश्रय है। संसार की क्षणिकता एवं पुराणोक्त ऋषि मुनियों का सन्यस्त होना उद्दीपन विभाव, दुनिया के झंझटों से कतराना अनुभाव उद्वेग, असूया निर्वेद, मति, धृति विबोध, वितर्क संचारी भावों से इस रस की अभिव्यक्ति हुई है।

भक्तिरस :—

जहाँ ईश्वर विषयक प्रेम विभावादि से परिपुष्ट होता है वहाँ भक्ति रस जाना जाता है।

आलम्बन विभाव — परमेश्वर, राम कृष्ण अवतार आदि।
उद्दीपनविभाव — परमेश्वर के अद्भुत कार्य, अनुपम गुणावली, भक्तों का सत्संग।
संचारीभाव —— औत्सुक्य, हर्ष, गर्व, निर्वेद, मति आदि।
अनुभाव —— नेत्र-विकास, रोमांच, गद्गद वचन आदि।
स्थायी भाव — ईश्वरानुराग।[3]

कश्यप अदिति तपस्या प्रसंग में भक्ति रस का उत्तम उदाहरण प्रस्तुत किया गया है, उनकी कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर हरि ने उन्हें दर्शन दिया।

1- अवधविलास, पृ0 7 2- अवधविलास, पृ0 201
3- काव्यदर्पण, पृ0 225-26

लालदास ने आलम्बन विभाव का वर्णन इसप्रकार किया है —

सुंदर स्याम गात सुभ अंगा देखि मगन मन होत अनंगा।
सीस मुकुट सुभ कुंडल कानन। नैन विसाल मनोहर आनन।
भौंह ललाट नासिका ग्रीवा। अति सुदेस सोभा की सींवा।
दसन औ अधर चिबुक छवि छाये। कोमल ललित कपोल सुहाये।
सोहत गल मुकता मनि माला। अति अनूप भुज हृदय बिसाला।
उदर उदार नाभि गंभीरा। सुघटित कटि तटि किंकिनि हीरा।
जघन सघन जुग कलित नितंबर। कोमल चरन कमल मन मधुकर
चारि भुजा आयुध जुत धारी। संख चक्र गद पदम सुधारी।[1]

आश्रय कश्यप दम्पती स्तम्भ, रोमांच अनुभाव तथा मद हर्ष आदि संचारी भावों से भक्ति रस की अभिव्यंजना की गयी है —

xxxxx देखत ही दंपति मन मोहे।
भये अनंद महा मन माँही। प्रेम बिबस तन की सुधि नाहीं।
x x x x
बहुत काल के जरत हैं अंगा। भए सीतल अब ही इन्ह संगा।
तन मन भये कछु नाहिं बोले। रस सिंधु में परे झकोले।[2]

अद्भुत रस :—

विभावादि के संयोग से विस्मय नामक स्थायी भाव ही अद्भुत रस के रूप में व्यक्त होता है। लोकोत्तर वस्तु अथवा घटना इसका प्रधान विभाव है।xxx नयन विस्तार, अनिमिष दृष्टि रोमांच अश्रु, स्वेद, स्तम्भ, वेपथु, साधुवाद, हाहाकार कर चरण अंगुलि भ्रमणादि को अद्भुत रस में प्रकट होने वाले अनुभाव कहा जायेगा। आवेग, सम्भ्रम, जड़ता, हर्ष, गर्व, स्मृति, मति, श्रम, धृति, भय, शंका तर्क, विबोध, चिन्ता, प्रलयादि उसके व्यभिचारी भाव माने जाते हैं।[3]

1- अवधविलास, पृ० 40   2- अवधविलास, पृ० 40
3- रससिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण, पृ० [illegible]

रामकथा में इतिहास एवं किंवदन्तियों के मिश्रण के साथ अवतारवाद व भक्ति भावना के कारण उसमें रहस्यात्मकता, अलौकिकता का आवरण आच्छादित हो गया है। अतः कवियों को इस कथा में अति प्राकृत व्यक्तियों, कार्यों या पदार्थों का दर्शन स्वयमेव हो गया। अवधविलास की मूल कथा में राम-वन-गमन, सीताहरण रावण-वध की घटनाएँ नहीं हैं, क्योंकि साम्प्रदायिक प्रतिबद्धता या आग्रह के कारण रसिक कवियों ने उक्त घटनाओं का वर्णन नहीं किया है अतः अवशिष्ट रामकथा में अद्भुत रस विषयक घटनाओं की विरलता था, जिसकी पूर्ति के लिए कवियों ने अनेक नवीन घटनाओं की कल्पना या अन्य विश्रुत घटनाओं का अप्राकृतिक, रहस्यात्मक ढंग से वर्णन किया है। लालदास ने सम्प्रदाय,-सिद्धान्तों की रक्षा के साथ ही साथ राम की उत्तरकालिक घटनाओं को विवरणात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। अतः अवध विलास में अद्भुत रस की व्यंजना के लिए कवि पूर्वोक्त दूसरी पद्धति का आश्रय लिया है। कवि कहता है —

अद्भुत अवध विलास इह कहत जथा मति लाल।
जामइँ सीताराम की सुंदर कथा रसाल।[1]

इस प्रकार अवध विलास में वर्णित घटनाओं, रसाभिव्यक्ति की पद्धति को देख कुछ लोग आश्चर्य करेंगे —

अदृष्ट बात अघटित अद्भुत अन्य जन जोहि देह।
ताको अवधविलास रस अटपट लागिहै एह।'[2]

तात्पर्य यह है कि अवध विलास में अद्भुत रस आद्यन्त विद्यमान है। अयोध्या उत्पत्ति के प्रसंग में सुदर्शन चक्र में उसकी स्थिति, उसका भौगोलिक एवं ऐश्वर्य परक वर्णन विस्मय जनक है। अवध विलास में आलम्बन विभाव का ही वर्णन कर

1- अवधविलास, पृ० 1

2- वही, पृ० 3

अद्भुत रस के स्थायीभाव को पुष्ट किया गया है। इसी तरह सरयू उत्पत्ति के समय ब्रह्मलोक में ब्रह्मा, शंकर नारदादि का उत्तम संगीत गायन, वादन एवं नर्तन से प्रभावित हरि का द्रवीभूत होना विस्मय है अद्भुत है –

भक्ति सवाँह हरि के मन भाई। नृत्य गीत कछु अति सुखदाई।
भये सब भेद अस बानी। मगन भये सुनि सारंग पानी।
गद्गद गिरा कहे हरि राई। धन्य धन्य संकर सुखदाई।
× × × × ×
रोमे पुलक नैन जल ढारा। सो जल ब्रह्म कमंडल धारा।[1]

पृथ्वी पर सरयू आनयन के प्रयास में रत वशिष्ठ का ध्यान लगाकर ब्रह्मलोक पहुँचना एवं ब्रह्मा का ऐश्वर्य वर्णन पुत्र के मन में अद्भुत रस की अभिव्यंजना करता है। वशिष्ठ आश्रय, ब्रह्मा आलम्बन विभाव का माहात्म्य उद्दीपन तथा हर्ष, मद, आवेग, उत्सुकता संचारी भाव हैं –

तात जोग बल साधि के ध्यान समाधि लगाइ।
ब्रह्मलोक पल माहि गये गुरू वशिष्ठ मन राइ।
शोभा अधिक अधिक विस्तारा। रचना रचित अनेक प्रकारा।
बैठे विधि सिंहासन अंगा। सावित्री गायत्री संगा।
कामधेनु सनमुख ही राजे। अष्ट सिद्ध नव निधि विराजे।
चारि भुजा मुख चारि सुहाये। चारि वेद चारों मुख गाये।
एक हाथ पोथी लये सोहै। एक हाथ माला मन मोहै।
पकरे एक कमंडल हाथा। दंड गहे बैठे जगनाथा।
जग्योपवीत औ सिर जटा बिसाला। कृपाकरा तिलक बिराजत भाला।
दोसी पाहरि ओढ़ि उपरेना। पदमासन बैठे सुख देना।

1- अवधविलास, पृ० 32

वाहन संग ठाढ़ मुख आगे। सुंदर रम सुहावन लागे।

रुद्रादिक सनकादिक जाहीं। दरसन पाइ पाइ सुख पाहीं।

धूप दीप चन्दन मन हरषा। करैं देव पुहुपन्ह की बरषा।

या विधि देखि पिता प्रभुताई। उमगेउ हिय आनन्द न समाई।

दरसन करत अतिहिं अनुरागे। करे प्रनाम चरन जाइ लागे।[1]

वशिष्ठ के आग्रह से ब्रह्मा ने कमण्डल से जल प्रवाहित कर दिया। उसकी गति, प्रवाह का वर्णन अद्भुत रसोत्पादक है —

गगन तें परत सबनि अस जाना। भयो अति शब्द फटेउ असमाना।

परेउ सुमेर सीस पर आई। पुनि भूधर परिनदी कहाई।

ऐरावत के दंत लगे जब। फाटि चहार प्रवाह चलेउ तब।

सो चारि चारि दंत स्रवत जल धारा। सरजू नाम कहत संसारा।[2]

ब्रह्माण्ड विषयक अर्जुन के प्रश्नों के उत्तर बकदाल्भ्य ऋषि इस प्रकार जिसे सुनकर अर्जुन को आश्चर्य होता है, हर्ष, निर्वेद संचारीभाव हैं।

कहैं बकदाल्भ्य सुनहु महीसा। मम देखत ब्रह्मा भये बीसा।

एक बेर इक विधि यहाँ आये। चारि भुजा मुख चारि सुहाये।

× × × ×

मम कहत बँदर इक आवा। मोहि लियतहिं धरि उचिरावा।

उड़े गगन तन सुधिहिं भुलाना। उलटत पलटत पात समाना।

भये अलखि लोक सब छाडू देख्यौ एक और ब्रह्मण्डा।

या तरह दून करत होइ लेखा। ब्रह्मा देख आठ मुख देखा।

दून ते दून एक ताईं एका। ब्रह्मा मुख ब्रह्माण्ड अनेका।

× × × ×

इह राजेन्द्र सुनि अचिरज माना। धन्य प्रभु तुम कहँ अब जाना।[3]

1- अवधविलास, पृ० 32-33 2- अवधविलास, पृ० 33
3- वही, पृ० 37

मय राक्षस की सभा सुरन्नरों में विभ्रम उत्पन्न कर देता है —

सभा विलक्ष रचत यहि भाँती। सुर नर देखि होहि विभ्रान्ती।

थल तहाँ जल जल तँह थल माने। धरिहि तहाँ बिछौना जाने।

जहाँ भीति तहाँ लखै दुवारा। जहाँ दुवार तहाँ जानि दिवारा।[1]

इसी प्रकार रावण जन्म के समय उत्पन्न अनिष्टकारक घटनायें ऋषियों के मन में विस्मय उत्पन्न करती है —

रावन जन्म भयो जेहि बारा। उठे अरिष्ट अनेक प्रकारा।
× × × ×
रिषिन्ह के घर की अगिनि बिधाना। भई शान्त अचरज तिन्ह माना।

मिटि गये हिय के उमग हुलासा। सबके मन भए उदास उदासा।[2]

प्रलयोपरान्त शेषशायी विष्णु के नाभि निकले कमल में ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। विराट, अनन्त कमल को देखकर ब्रह्मा अपने माता-पिता की खोज करने निकले, किन्तु उन्हें कमल नाल का ही अन्त नहीं मिला। वे आश्चर्य चकित हो उठे, तभी आकाशवाणी से तप करने का आदेश किया गया —

एक समय इक कलप के अंता। महा प्रलय जल बढ़ेउ अनंता।

ब्रह्म लोक लौं चढ़ेउ अखंडा। भरिजायो घट ज्यों सब ब्रह्मण्डा।

जीव तत्त्व सब लीन्ह भवानी। अहि विष्णु माहिं जाइ समानी।

विष्णु रहे जल माहि करि सयना। शेषनाग तर कीन्ह बिछौना।
× × × ×
विष्णु नाभि ते कमल निकासा। जल ऊपर होइ जाइ विकासा।

तहाँ ब्रह्मा प्रगटे तप धारी। चारि भुज सोहत मुख चारी।

देखि कमल जल कहत बिहाता। कहाँ मम तात कहाँ मम माता।

डोलि कढ़ि कमल नाल महि पैठे। खोज करत ब्रह्मा गये हेठे।
कबहूँ तर ऊपर कहुँ आवा। कमल नाल को अंत न पावा।[3]

1- अवधविलास, पृ० 45   2- अवधविलास, पृ० 48   3- अवधविलास, पृ० 70

उक्त उदाहरण में विस्मयकारी घटना आलम्बन, ब्रह्मा आश्रय, उसके अनुभावों के साथ मति, भ्रम, तर्क, वितर्क आदि संचारीभाव हैं।

लालदास ने वृन्दा के सतीत्व भंग प्रसंग में अद्भुत रस की योजना की है। विष्णु छद्म-मुनि-वेष धारण कर विरहिणी वृन्दा के उपवन में ध्यान रमाये बैठे कि इसी समय दो राक्षसों से भयभीत वृन्दा मुनि के पास आती है और मुनि अपनी हुंकार से राक्षसों को अंतर्धान कर देते हैं। वृन्दा आश्रय, हर्ष, संभ्रम, संचारीभाव वर्णित है —

मुनि हुंकार कियो तेहि ठौरा। प्रेत बिलाइ गये केहि ओरा।
तब वृन्दा कर जोरि कहाई। धन्य धन्य तुम बड़े गुसाईं।[1]

पुत्रेष्टि यज्ञ उसमें देवताओं की उपस्थिति, यज्ञ-पुरुष का प्राकट्य, इत्यादि सम्पूर्ण प्रसंग अद्भुत रस से सिक्त है —

होम करत संतुष्ट हुतासन। भये प्रसन्न सु पुत्र प्रकासन।
दिव्य रूप पावक अधिकाई। जग्य पुरुष प्रगटे तहाँ आई।
अद्भुत रूप अग्नि मोहि राचै। कनक थार दोउ हाथ बिराजै।
तामहिं सुंदर खीर अहारा। लेहु लेहु कहि हाथ पसारा।
मुनि रिषि उठि आदर करि लीये। उभय भाग करि रानिहिं दीये।
सीस चढ़ाइ लीये नृप रानी। धन्य धन्य रिषि मुनि कहि बानी।[2]

राम जन्म के बाद नामकरण संस्कार के समय दशरथ राम के अद्भुत रूप को देखकर तर्क, वितर्क से अपने भाव व्यक्त करते हैं —

प्रथमहिं जब सुत देखा भुवाला। चारि चारि भुज वारिज वाला।
अति सुंदर कछु कहै न जाहीं। कोटि काम लावनि तन माहीं।
× × × ×

1- अवधविलास, पृ0 84-85

2- वही, पृ0 139

पुनि भये बारि एक ही देखा। धारा फूटि मिलत है भेखा।

राजा देखि कहत मन मांहि। जागत हौं कि हौं जागत नाहीं।

स्वप्न भयो किधौं मर्म बिसेषा। रहे बारि पुनि एकइ देखा।[1]

काक भुशुण्ड द्वारा राम की परीक्षा प्रसंग में अद्भुत रस का पूर्ण परिपाक हुआ है। राम के हाथ से पकवान छीनकर काक उड़ गया, जिसे पकड़ने के लिए राम ने हाथ फैलाया। काक उड़ गया किन्तु वहीं उसे राम के हाथ दिखायी पड़े। आश्रय आवेग संभ्रम, गर्व, श्रम, भय, संचारी भाव वर्णित हैं।

काक महामुनि कीन्ह बिचारा। सुनियत राम भये अवतारा।

पूरन सब घट व्यापक सोई। उदई राम किधौं और है कोई।

परखन ताहि अवध उडि आये। बालक रूप देखि भ्रम छाये।

खेलत बाल रहे अंगना ही। कछु पकवान राम कर मांही।

ताहि लेन कौं चोंच चलावा। अंतर जामी हाथ उठावा।

छोड़ि हाथ ब्रह्माण्ड उलंघा। उड़े काक ता आगाई संघा।

× × × ×

व्याकुल काक भयो तिहिं काला। अंतर जामी राम दयाला।

देखे काक लोक सब जेते। देवन्ह सहित स्वर्ग सुख ले ते।

और अनेक रूप बहु वेषा। रामहिं एक जहां तहां देखा।[2]

<u>अवधविलास में रसाभास</u> :—

काव्य में रस की चर्चा करते समय प्रायः रसों तथा प्रसिद्ध रसों के उदाहरण ही देना पर्याप्त समझा जाता रहा है, जबकि संस्कृत काव्य शास्त्र में इनके अतिरिक्त रसाभास, भावाभास, भावशान्ति, भावोदय और भाव शबलता भी रस के अन्तर्गत परिगणित होते हैं। पहले कहा जा चुका है कि रसास्वादन में विभाव

1- अवधविलास, पृ0 159-60

2- वही, पृ0 169

अनुभाव और संचारिभाव से पुष्ट स्थायीभाव उद्रेक के सौन्दर्य को प्राप्त करता है, जिसमें वेद्यान्तर स्पर्श एवं तादात्म्य होता है। कभी कभी कवि द्वारा संकलित रस सामग्री जब किसी विशेष कारण वश क्षीण प्रतीत होने लगती जिसके कारण सहृदय तदनुरूप आह्लाद नहीं प्राप्त करता है, तब उस दशा को रसाभास की संज्ञा दी जाती है। रसाभास का मूलाधार अनौचित्य है —

(1) अनौचित्यादृते नान्यद् रस भंगस्य कारणम्। ध्वन्यालोक/3/14(वृत्ति)

(2) तदाभासा अनौचित्य प्रवर्तिताः।(काव्यप्रकाश 4/36)

(3) अनौचित्य प्रवृत्तत्व आभासो रसभावयोः (साहित्यदर्पण 3/262)

तात्पर्य यह है कि अनौचित्य के कारण रस सामग्री असंतुलित हो जाती है, जिससे रस में निर्दुष्टता परिलक्षित होती है। रसाभास के प्रसंगों को पढ़कर सहृदय के चित्त में पहले वर्णित रस का आस्वाद मिलता है बाद में सहृदय के चित्त में विवेक जागृत होने पर क्रोध, क्षोभ, दया इत्यादि भाव में परिवर्तित हो जाता है। बात यह है कि रसाभास के स्थल कवि द्वारा अननुभूत होने के कारण अन्य चित्त में तन्मयता नहीं उत्पन्न करते, अर्थात् उनका पूर्ण साधारणीकरण नहीं होता है क्योंकि इनमें साधारणीकरण के समान आनन्दानुभूति नहीं होती है किन्तु वह आनन्द आता अवश्य है। वेद्यान्तर स्पर्शशून्यता की दृष्टि से यह मध्यम कोटि की रसवत्ता है।

अवधविलास में रसाभास के अनेक स्थल हैं। शृंगी ऋषि के सन्दर्भ में रसाभास का अच्छा उदाहरण मिलता है। विरक्त युवा संन्यासी को विषयाचार से वशीभूत कर चम्पावती पुरी भेजने का प्रयास गणिकाओं द्वारा किया गया है। वेश्याओं के कायिक अनुभाव, तथा ऋषि का अनुचिन्तन पाठकों के मन को क्षणिक आनन्द की अनुभूति तो कराता ही है किन्तु सम्पूर्ण प्रकरण हास एवं सहानुभूति की पुष्टि करता है।

हाव भाव लावनि रूचि राईं। खान पान बहु जुगति बनाईं।
कह कपट रिझावत ताही। मुनि के मन कोउ प्रेमी नाहीं।
× × × × ×

अम्बर कै लै असन दीना। पग धोवन जल बासन लीना।

कछु मुसुक्याइ भई रिषि ओड़ैं। बोली बचन चितै तिरछौंहैं।

बनिता कहति सुनहु मुनिराई। बरन सुनावत धरम नसाई।[1]

आश्रय की शृङ्गार प्रियता पर कवि ने प्रकाश डाला है। उनके शारीरिक सौन्दर्य का वर्णन लालदास ने इस प्रकार किया है —

अँगिया अति ऊँचे कुच तानै। ऐंचति मनहु काम कमानै।

मोहित बदन जँभात अमोला। संपुट करक रतन मनु खोला।

अरसि लै दृग अंजन लावति। मानहुँ बान सिलाकुल लावति।

गोर ललाट देति जब बिंदा। कमल करनि मनु पूजति चंदा।

भौंहैं चंचल करति जब चितहर। अरबरात मनु भ्रमर कमल पर।

लट बर स्याम सटकारे। मनहुँ नील मनि किरनि पसारे।

कंचन की पुतरी जस ढरी। कारीगर मनु काम सुधारी।[2]

उन वेश्याओं ने शृङ्गार रस सिक्त मधुर वाणी से मुनि के मन को वशीभूत कर लिया —

रत्नाकर भई लेति हलोरैं। मुनि के नैन मीन भये डोलैं।

बोलति मधुर मधुर मृदु बानी। करत विलाप बात रस सानी।

मुनि पाहिं सबु बालपाठ आवति। ताहि फेरि रति रस कि चलावति।

अंग परस करि बचन रस जाग्यौ लाल अनंग।

रिषि शृंगी भूली भयो मिलत मधुमिनी संग।[3]

शृंगी ऋषि के चंचल मन को देखकर पिता सशंकित हो गये। पिता के पूछने पर पुत्र ने जिस ढंग से छद्म वेश धारियों की चर्चा की वह उनके सारल्य का द्योतक है जिसको सुनकर हँसी आती है।

1- अवधविलास, पृ0 109   2- अवधविलास, पृ0 110-115

3- वही, पृ0 110-115

अद्भुत एक महामुनि होई। मैं अस रूप न देखेउ कोई।

सुन्दर बेनी बनी रसाला। ताहि कहै इक जटा बिसाला।

मणि अमोल जराय के टीका। ताहि कहै दीये तिलक सुनीका।

कानन की बीरे छबि छाई। तासों मुद्रा कहत बनाई।

अंजन देखि जु ताहि सराहै। अति तप तेज नैन मधि आहै।

कुच उतंग श्रीफल से सोहैं। किय पुन्य के संपुट दो हैं।

केसरि चंदन अंग लगाये। ताहि कहै तन भस्म बढ़ाये।

पहिरे चीर सुरंग निहारे। अति विचित्र बल्कल तन धारे।

कंकन चूरी मुंदरी राजै। अद्भुत कुश मुनि हाथ बिराजै।

और रिषिन्ह कै दाढ़ी बाढ़ी। याके मुख पर मूंछ न दाढ़ी।[1]

पिता ने सारा रहस्य ज्ञात कर लिया। उन्होंने पुत्र को उनके साथ जाने को मना किया किन्तु काम वशीभूत ऋषि ने उनकी अवज्ञा की। उन वेश्याओं ने मुनि की मनोवृत्ति का अध्ययन कर अनेक प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर मुनि के खाद्य-पदार्थों के रूप में प्रस्तुत किया —

बहु बिधि के पकवान मिठाई। छल करि ताहि खियावै आई।

लडुआ लेइ अग्र मधि राखै। ताहु बेलफल रिषि सों भाखै।

खाजा ले मुनि कहँ खिआवै। कहि पट पत्र ताहि बहुरावै।

सुंदर कोमल पूरी आछी। पुरइनि पत्र कहै मुनि ताछी।

पुआ देइ कहै तप आहू। ए गूलरि के फल हैं ताहू।

खुरमा मधुर अनूप सुहाई। ये कदली फल ताहु गुसाई।[2]

1- अनयमितलास, पृ० 109-110

2- वही, पृ० 111-12

वेश्याओं ने अपने कायिक अनुभावों से कवि को पूर्णरूपेण वशीभूत कर लिया। लालदास ने उनके अनेक अनुभावों एवं क्रियाओं का वर्णन किया है। चतुरा वेश्याओं के कुटिल कटाक्षों एवं अंगप्रदर्शन से निश्छल कवि कैसे बच सकता था —

तिया चरित्र करे भरमावै। अपना रंग रूप दिखरावै।
कबहुं कि करसों कर गहि लेई। कबहुं कि तन आलिंगन देई।
कबहुं कि मुख सो मुखहिं लगावति। हृदय लगाइ अनंग जगावति।
कबहुं कि दूरि होइ रहै ठाढी। मारे बान कटाक्षहि गाढ़ी।
कबहुं कि कतहुं न देति दिखाई। कुंज पुंज महि रहति लुकाई।
कबहुं कि पुहुप बीनि गुहि माला। पहिरावति पुनि पौं ले बाला।
कबहुं कि चली चातिकार तोरा। फेरि-फेरि चितवै तिहि ओरा।
कबहुं कि कर पर मुख धरि रहई। मनहिं होइ कछु नाहि कहई।
कबहुं कि फूल माल सौं मारति। रिस कहैं झझकि दूरि करि डारति।
× × × ×
अंगिया कसत लसत छबि चौपही। छिप हरि लेति दिखावति छियही।
कबहुं कि बसन फिरि-फिरि छोरे। कबहुं कि चंचल इत उत दौरे।
कबहुं कि कर सो कर गहि बाला। उरज छुवावति हृदय रसाला।
कबहुं कि मधुर मधुर धुनि गावै। बोलि बोलि मुनि चित्त चलावै।
कबहुंकि कान लागि कछु कहई। समुझि न परे गरे लगि रहई।
कबहुंकि सीस उघारि उठाई। लटकि जाति भरि के मुसकाई।
अरध सीस अंगिया कुच करषा। दरस दिखाइ लजावति हरषा।
कबहुंक चपल नचावति भौंहे। चितऊति मुसकि होइ तिरछौंहे।[1]

1- अवधविलास, पृ0 112-13

इस प्रकार लालदास ने आलम्बन का भोलापन और शारीरिक सारल्य तथा रति प्रवीणा आश्रय केअनुभावों का विस्तृत वर्णन पाठक को आनन्दानुभूति तो कराता है, किन्तु यह आनन्द क्रमशः हास्य, सहानुभूति ~~भक्ति~~ तथा क्रोध में परिवर्तित हो जाता है। इसी प्रकार वृन्दा सतीत्वहरण , उसके सती होने के बाद विष्णु के वियोग में रसाभास प्रतीत होता है। विष्णु वृन्दा के रूप, गुण, शील, स्वभाव एवं कृत कार्यों का स्मरणकरते हैं। आलम्बन एवं आश्रय गत वैषम्य पाठकों को पूर्ण रसास्वाद कराने में समर्थ नहीं है —

हा वृन्दा हा वृन्दा वृन्दा। मोहि तजि गई कहाँ सुखकंदा।
अधर मधुर मृदु बिंब रसाला। जो मोहि पान करइहै बाला।
रही सुख देत करत अति लाडा। औगुन कौन जानि मोहि छाड़ा
नैन सो नैन बैन सों बैना। लगी रहति तन सो तन मैना।
मोहि बिनु नेकु रहति नहिं न्यारी। अब कहा करत छोड़गी प्यारी।
अमृत मधुर बोलि मन मोहै। नैनन्ह के आगे तन सोहै।
बीरी खाति खिआउति बाला। पहिरावति कोमल कर माला।
चंदन अंग अरगजा लावति। सेज संग सुख अति बिलसावति।
कैहि कैहिं भाँति मनोरथ मेरे। करती सुमन सिंगार घनेरे।
नैन रसाल बिसाल न सोचत। अंजन जुत खंजन से नाचत।
लज्जा बिनय बहुत चतुराई। काम केलि कछु कही न जाई।
रूप सुभाउ सील छवि जाना। कौन कौन गुन करउँ बखाना।[1]

तात्पर्य यह है कि उक्त स्थल में करुण रस का पूर्ण परिपाक प्रथम दृष्ट्या दिखाई पड़ता है।

१- अवधविलास, पृ० 86

शोक अभिलाष, गुणकथन, स्मृति इत्यादि की अभिव्यक्ति सजीव रूप में हुई है। विष्णु माला तोड़कर, श्मशान की भस्म लगाकर कृष्ण-वियोग में सन्यासी हो जाते हैं –

हाय हाय कहि हृदय उघेरा। हरि गिर परे तबहि तेहि ठौरा।
माला मुकुट तोरि तजि डारे। पीताम्बर पटुका चीर फारे।
मूड़ा जरी तहाँ धर छवा। लै समसान भसम तन लावा।[1]

सारांश यह है कि लालकवि ने रस सामग्री का पूर्ण वर्णन रस-परिपाक की दृष्टि से किया है। शृंगार, वीर, एवं अद्भुत रस का वर्णन परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में सुन्दर बन पड़ा है। मुख्य कथा में वीर रस का स्थान नहीं है, अतः उसके लिए इतर कथाओं की विनियोजना हुई है। शृंगार रस (मधुररस) की गुप्त गोदावरी अवश्य अनुस्यूत है, जैसा कि ग्रन्थ के नामकरण से विदित है, किन्तु घटनाओं का चयन अद्भुत रस प्रधान हो गया है। अतः अंगीरस के रूप में अद्भुत को माना जा सकता है। रसों के परिपाक हेतु लालकवि ने स्थायीभाव, विभाव, उद्दीपन विभाव तथा अनुभावों का विस्तृत वर्णन किया है। रसाभास के अनेक स्थल अवधविलास में हैं, जहाँ अनौचित्य के कारण पूर्ण तादात्म्य नहीं हो पाया। शृंगार एवं अद्भुत रस का रस पेशल रूप अवधविलास में दिखाई देता है। हास्य रस का उदाहरण रामकथा में नहीं प्राप्त है अतः कवि अन्य स्थितियों की कल्पना कर इस रस का वर्णन करते हैं। लालदास ने भी इसी पद्धति का अनुगमन किया है। कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए सटीक शब्द चयन, पात्रों द्वारा अनुकूल क्रियाओं के प्रदर्शन का वर्णन लालकवि की निजी विशेषता है। संक्षिप्त रूप में यह कहा जा सकता है कि लालकवि रसाभिव्यक्ति में पूर्ण सक्षम हैं। कवि ने अनेक भावभूमियों की रचना की है, जहाँ पहुँचकर पाठक स्वयं, भावभूमियों का दर्शन करता है। वीर एवं रौद्र रस की अनुभूतियाँ कुछ इसी प्रकार की हैं।

1- अवधविलास, पृ० 87

षष्ठ अध्याय

अवधविलास में प्रकृति एवं अन्य वस्तुवर्णन

अवध विलास में प्रकृति एवं अन्य वस्तुवर्णन

महाकाव्य के बृहदाकार और व्यापक पृष्ठभूमि में एक ओर सृष्टि की महिमा का बोध नायक के उदात्त चरित्र के रूप में होता है तो दूसरी ओर उसकी व्यापकता का चित्र प्रकृति के नाना दृश्यों और पदार्थों तथा सामाजिक जीवन से सम्बन्धित सम्पदाओं और उत्सवादिक के रूप में दिखाई पड़ता है। नायक का जीवन जिस प्रकार विविध पात्रों और परिस्थितियों के बीच अपना मार्ग निर्धारित करता हुआ अग्रसर होता है, उसी प्रकार वह प्रकृति के विभिन्न दृश्यों, स्थलों और ऋतुओं तथा सामाजिक जीवन के विभिन्न उत्सवों और पर्वों एवं भौतिक सम्पदाओं के बीच से गुजरता है। अतः उसके जीवन के समग्र चित्रण के लिए इन प्राकृतिक दृश्यों एवं स्थलों तथा भौतिक पदार्थों का वर्णन भी अत्यावश्यक होता है। इसी को साहित्य शास्त्री भाषा में महाकाव्य के अन्तर्गत प्रकृति चित्रण और वस्तु वर्णन कहते हैं।[1] प्रकृति चित्रण के अन्तर्गत कवि की सूक्ष्म सौन्दर्यभावना तथा उसके विविध पक्षों का उद्घाटन परिस्थितियों के अनुकूल होता है। वस्तुवर्णन भौतिक सम्पदाओं, कवि की बहुज्ञता का द्योतक है।

अवधविलास में प्रकृति-चित्रण

मानव प्रकृति का आदि सहचर है। प्रकृति में वह सहचरी, पोष्या, धात्री तथा ममतामयी माँ का रूप देखता है। उसकी गोद में जन्म लेकर वह लालित पालित होता है। प्राकृतिक उपादानों से ही वह अपने जीवन को सरस रुचिकर एवं धन-धान्य सम्पन्न करता है। सर, सरिता, निर्झरों का जल, फलद वृक्षों का फलदान, वायु का कोमल व्यजन, पक्षियों का कलरव, नक्षत्रों का मौन निमंत्रण, उषा का

1- वाल्मीकि और तुलसी : साहित्यिक मूल्यांकन, डा०राम प्रकाश अग्रवाल, पृ०27।

आह्लाद कारक मधुमय सन्देश से वह उपकृत होता रहा है। अपनी भाव रसधारा में निमग्न आत्म-विभोर भावुक कवि मानव तथा प्रकृति को विभिन्न दृष्टियों से देखता है। कभी वह प्रकृति का दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार करता है, कभी वह उसका वैज्ञानिक विश्लेषण करता है, कभी उन्हें परमात्मा के विरह में विह्वल पाता हुआ एक विचित्र रहस्य का अनुभव करता है, कभी उन पर विशुद्ध भावात्मक दृष्टि डालता हुआ उनका प्रकृतीकरण तथा मानवीकरण करता है। कभी वह मानव को प्रकृति के धरातल पर ले जाकर दोनों का तादात्म्य स्थापित करता है और कभी प्रकृति को मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित करके उनमें मानवीय रस भाव, गुण कार्यादि का वर्णन करता हुआ उसे मानववत् चित्रित करता है। अतः उसके विवेचन में यदि एक ओर दार्शनिक तथ्यों का उद्घाटन होता है, तो दूसरी ओर वैज्ञानिक सत्यों की व्यंजना।'[1]

(1) प्रकृति का आलम्बन रूप :-

सुमंत्र के परामर्श से दशरथ पुत्र-कामना व्यक्त करने के लिए वशिष्ठ आश्रम गये। वहाँ आश्रम में लगे वृक्षों, चतुर्दिक परिवेश का कोमल रूप लालदास ने इस प्रकार चित्रित किया है —

बन पुर लगे ये बाग लगाये। उपवन ये जंगल घन छाये।
चंदन चंपक चारु अनारा। कैरि कदंब औ अंब अनारा।
जाती जुही मालती बेला। फूल गुलाब केवरा रेला।
सुंदर बेली बनी विशाला। तापर तुलसी वृन्द रसाला।
त्रिविध पवन सुख बहत निरंतर। शीतल मंद सुगंध सुखंकर।
सदा बसन्त रहत तेहि ठौरा। बोलत चातक कोकिल मोरा।'[2]

1- हिन्दी काव्य में मानव तथा प्रकृति — डा0 लालता प्रसाद सक्सेना, पृ0 40-41

2- अवधविलास, पृ0 97

शृंगी ऋषि आनयन के समय एक चतुरा वेश्या ने नौका में ही विभिन्न वृक्षों को सज्जित कर मुनि के मन में वन का भ्रम पैदा किया। लालदास ने नौका, स्थित वृक्षों के नाम परिगणन प्रणाली से गिनाया है –

प्लक्ष पनस पाटीर पुनागा। नूतन प्रोथ उदंबर नागा।
वट दल ताल तमाल विशाला। पाटल चंपक साल प्रियाला।
श्रीफल कपित्थ कदंब लगाये। सीसम जंबु निंब सुहाये।
अशोक बकुल चिंचनी रानी। करी क्रमुक खजूर विराजी।
नारिकेर कदली दल शोभा। केसर नाग केवरा सोभा।
मधु बिभीतक दारु पलासा। कुब्ज हरीत की वेनु उलासा।
लोटक बदर कुरंट जंभीरा। अर्जुन भोज नारंगी भीरा।
धात्री अरु मधु द्रवा विशेषा। दाख बदाम अंजीर अनेका।
रक्त बीज निंबु सपतालु। तुन आल तेंदू चु रवालु।
पीलु कमरख कपर करौंदा। किरत मधुर छुहार खिरौंदा
बात हरन मुनि तरु तहँ ठाढे। सेमर सिरसि सुभवत बाढे।
भोजपत्र भिलावक वरना। अल धूप जीवागत करना।
मेंहदी पुनि खिरनी चलछोरा। अकउल और कठकाठ डेरा।
खिरउन पूर हब जोगिनि रीठा। निचै सार किरवारा मीठा।
बेरी धामिन छरहर भेरा। पाकर पीपर तरु बहुतेरा।
अस नाहर पाकर रहसेंहा। मैंठ सहु फर रीवा भेवा।
बाला कचर चैनि कचनारा। क्यौंडी मैं न कटाइ अपारा।
आठिल दंत रंग गुरकुंडा। आर नवकुर हरी प्रचंडा।
कंदल अंवरा वीड बाइफर पावन। जाँि संजीवन चारी कठिन।
कमिला सतपुर पीया महा। रूद्र कमारि करिहा राहा।

पारिजात मंदार अनूपा। अरु सिंगार सिराज सुरूपा।
करुना कुंद मल्लिका जाती। करनिकार करवीर सुभाती।
केतकि जूही बेल सरंग। गुल गुलाब मौलसर बहुरंग।
सतपत्री अरु बाम्हन ढरना। जाही जूही चमेली बरना।
पुनि बन्धूक निवारी फूले। मधुकर रहत बास बस भूले।
केसरि रूप मंजरी राजी। और फूल फुलवाइ विराजी।
गुलम लता बिन लाल द्रुम बल्ली औ तुल्वार।'[1]

स्पष्ट है कि उपर्युक्त पद्धति का प्रकृति चित्रण किसी भावुक कवि का नहीं हो सकता है क्योंकि आलम्बन या अन्य किसी रूप में प्रकृति चित्रण करते समय सूची उपस्थित करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। कवि के कल्पना के द्वारा ऐसा बिम्ब उपस्थित करता है कि पाठक के मन में उसका स्पष्ट चित्र अंकित हो जाता है। संश्लिष्ट रूप में अंकित प्राकृतिक बिम्ब पाठकों की इन्द्रिय संवेदना को उद्दीप्त करता है, जब इस प्रकार की पद्धति से मात्र कवि की बहुज्ञता ही द्योतित हो सकती है। पाण्डित्य-प्रदर्शन हेतु नाम परिगणन प्रणाली के प्रकृति-चित्रण अवध विलास में कम ही हैं। आलम्बन रूप में प्रकृति के कोमल रूप का ही वर्ण चित्रण लालदास को वांछित है। राम के ध्यान के लिए सरयू तट पर स्थित दिव्य रत्न सिंहासन के चतुर्दिक इस प्रकार के परिवेश की परिकल्पना की गयी है।

इक मंदार दास तरु अहई। मंडप के पूरब दिसि रहई।
पश्चिम पारिजात द्रुम बाढ़ा। द्रुव संतन दक्षिन दिस ठाढ़ा।
उत्तर हरि चंदन के शोभा। वेदी बीच कल्पतरु सोभा।[2]

1- अवधविलास, पृ0 114-15

2- वही, पृ0 168

राम वन प्रवास के समय दण्डकारण्य के अनेक कोमल रूप कवि ने अंकित किये हैं –

कोमल सरज सरोवर जेहीं। अवहु निकट विनय बन ते हीं।
सारस हंस मयूर तहाँ डोले। चातक सुक कोकिल अलि बोले।
लछिमन फिरि सर कूल तहँ दूब हरित तृन देखि।
फल युत सघन सुखद बन देखा। जल थल अमल विचित्र विसेषा।[1]

उद्दीपन रूप में :—

कुछ स्थल सुन्दरों को प्राकृतिक परिवेश उद्दीप्त करते हैं। जनकपुर के बाहर विचित्र बाग को देखकर विश्वामित्र सहित राम विश्राम करते हैं। प्रकृति उनके हर्ष को उद्दीप्त करती प्रतीत होती है।

(1) अद्भुत एक बाग फुलवारी। षट रितु सदा रहत सुखकारी।
सघन अनेक रंग फल फूला। कंद मूल अमृत सम तूला।
सुनि बन राम मनहिं अनुरागे। लछिमन मुनि पहिं आयसु मांगे।[2]

(2) बन उपवन घन लगत सुहाये। फूले फले देखि मन भाये।
त्रिविध पवन सुख बहत निरंतर। सीतल मंद सुगंध सुखंकर।
सदा बसंत रहत जेहि ठौरा। बोलत चातक कोकिल मोरा।
पढ़त बेद बालक मृदु बानी। सुनि मन मगन भये नृप रानी।[3]

रहस्यमयी सत्ता का संकेत :—

ब्रह्म के अवतरित होने के पूर्व ही प्राकृतिक तत्वों से उसकी सत्ता का आभास प्राप्त होने लगा। सुखदायक वायु चलने लगी, पृथ्वी में मांगलिक शकुन होने लगे।

1- अवधविलास, पृ0 27। 2- अवधविलास, पृ0 230
3- वही, पृ0 497

सूरज गगन मध्य जब आवा। जन्म भयो तिय मंगल गावा।

चले पवन अति ही सुखदाई। सीतल मंद सुगंध सुहाई।

ग्राम-ग्राम वांछित भये सबहीं। मंगल मय पृथ्वी भइ तबहीं।[1]

इसी प्रकार सरयू के किनारे दिव्य सिंहासनारूढ परब्रह्म राम के लिए जिस वातावरण की कल्पना कीगयी है, वह मनोरम है —

जोजन एक कनक मय धरनी। सरजू निकट बहति अघ हरनी।

नाना वृक्ष पुष्पित फल तीरा। सीतल मंद सुगंध समीरा।

हंस कमल अलि पिक सुखदाई। छह रितु सदा रहति छवि छाई।[2]

वशिष्ठ आश्रम में उनके तप का प्रभाव निरूपित करने के लिए लालदास ने जीव जन्तुओं के वैर विहीन बताया है —

गंग तीर तपोवन माहीं। भये गुरू गृह जहँ भय नाहीं।

मुनि तप तेज जीव सब डरहीं। आठहु धर्म परस्पर रहहीं।

गरूड नाग अरू मूष मजारा। बैठा स्वान सिंह सुअरा।(अ०वि०पृ० 97)

<u>मानवीकरण</u> :—

मानव मन की विशेषता है कि वह स्वयमेव सुख दुखों में प्रकृति को सहभागी बना लेता है। प्रकृति उसके समान ही आचरण करती प्रतीत होती है। राम वन-गमन के समय जड़ चेतन प्रकृति भी दुखित हो उठी है —

छनछनाहिं धौरे दुख करहीं। नैन नीर भरि भरि गिर परहीं।

रामहिं जात देखि पछितायें। डारिन्ह तोरि जंभीर बहाये।

डारहिं धूरि सीस मग धूनी। विवस राम बिनु बात न होनी।

× × × × ×

सरजू विरहिन भई दुख आना।[3] रह थकी बहतहिं नीर सुराना।

थके मग पटरा बजारा।

1- अवधविलास, पृ० 153   2- वही, पृ० 167

3- वही, पृ० 265-66

उपमान रूप में :—

लालदास ने उपमान रूप में प्रकृति का चित्रण बहुविध रूप में किया है। कभी वह नायक-नायिका या अन्य पात्रों के शारीरिक सौन्दर्य निरूपण के लिए अलंकारों के रूप में उपयोग करता कभी उसकी क्रिया कलापों को प्राकृतिक क्रियाओं से व्यक्त करता है, कभी किसी परिवेश के निरूपण में उसकी सहायता लेता है। अंगसौष्ठव या उसकी शोभा दीप्ति कान्ति या मधुरता के लिए प्रकृति का उपयोग अवध विलास में बहुत हुआ है— कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(1) आभा इन्द्रनील मणि की है। कोमल ललित गात मन मोहै।
सुंदर बदन कमल की शोभा। कुंचित केस भ्रमर जनु लोभा।(अ०वि०168)

(2) मुख पर अलक ललित छवि पावक। जनु ससि पर खेलत अहि सावक।
गौर अंग कछु विधि अस कीना। चंपक कंचन लगत मलीना।
कर पल्लव पर नख अस राजे। कमल दलनि पर नग गन भ्राजे।(182)

(3) ज्यों खद्योत धरे अंधियारा। करन चहै सब जग उजियारा।
बरषा रितु बरसे जलधारा। अस को गनै बूँद गनि धारा।(वही, पृ07)

(4) भूमि अकास वायु अरु पानी। सूरज अगनि चन्द्रमा जानी।
पावक मधु भ्रमर मृग राखा। हस्ती मीन पतंग जो भाखा।
कोकिल कपोत सर्प सरदारा। कन्या अजगर देह विचारा।(वही, पृ0 10)

(5) चंदन के संगति बन माहीं। नीच परम भेद रहे नाहीं।
बहुत नदी नद छोड़ गयो संगा। गंग मिले कहाये गंगा।(वही, पृ012)

(6) सेवक निर्मल मानसर मुक्ता भव लखंत।
जहाँ छोड़ि सई हंस ज्यों हर्षित धावत संत।(वही, पृ0 13)

(7) पृथ्वी अप वायु तेज अकासा। सब्द सपरस रूप रस वासा।(वही, 38)

चित्रकूट में राम के जिस प्राकृतिक राज्य की परिकल्पना लालदास ने की है, उसमें सिंहासन चँवर, छत्र, पर्यंक, तकिया, महल, रथ, ध्वजा, कोट, घोड़े, प्रजा, वीथि, बाजार, चौकर, भोजन, संगीत, रागरंग का उल्लेख है।

सिला सिंहासन लता बितानां। मंजरी चमर चलत जहाँ नाना।
पुहुप गुच्छ वर तुम्य अपारा। सोइ जनु छत्र सीस पर धारा।
पल्लव पात बिछौना साजे। कोमल पिलिम दुलैचा राजे।
तरु तमाल के मूल सुहाये। तकिया देइ बैठे सुख पाये।
मृग कन्या चहुँ ओर सुहाईं। करहिं बतास डोलि सुख दाईं।
गिरि के शृंग महल जनु बाढ़े। चंप कदंब रूप रथ ठाढ़े।
ध्वजा फेरि निसान फरहरा। पर्वत कोट चहूँ अपारा।
बनपसु फिरत और बहु घोरा। सोइ जनु अनि फेरियत घोरा।
पंछी प्रजा करत ब्यौहारा। कुहुक होत बन नगर मझारा।
बन बिच बिच वीथी बिस्तारा। सोइ जनु हाट बजार अपारा।
हाथी उठे भये बन बारे। मनौ ठाढ़ रहे मतवारे।
दीपक चंद्र नखत प्रकासा। चौकी बना हाँड़ चहुँ पासा।
बानर आइ मिले बनवासी। भालु किरात बनचर रासी।
भोजन होहि कंद फल मेवा। लछिमन आनि धरे करै सेवा।
पतरी थार है दोन कटोरा। रतन्ह अनेक धरे नहिं थोरा।
जेवहिं राम सिया रुचि मानी। प्यावे लाल गंगोदक आनी।
पुनि होइ राग रंग रस जैसा। कहत हौं सुनौ सयाने तैसा।
नाचत मोर कोकिला गावत। तानें मान अनेक दिखावत।
पीपर पात ताल होइ बाजत। झरना झरत पखाउज राजत।
सुआ कपोत कूमरी जाने। भरदुल गीत संगीत बखाने।

नूपुर दादुर धुनिसंचारा। बाजत चटक सबद कठतारा।
भेरी भ्रमर भंवरा साजी। बाजत कनक बरन धुनि आजी।
रितु बसंत तैसी अति राजी। सुख समाज संयुत कई साजी।
बन पंछी फल फूल जो राम भेंट के हेत।
लाल रत्यति हिय हरसि के राव अंस जनु देत। (अवधविलास, पृ0 268-69)

वस्तु वर्णन

अयोध्या वर्णन :—

लालदास ने अयोध्या का विस्तृत वर्णन किया है। कवि की दृष्टि में अयोध्या के दो रूप हैं — स्थूल एवं सूक्ष्म —

दोउ देह हैं अवध के सूक्ष्म थूल प्रकास।
धाम रूप स्थूल है, सूक्ष्म अवध विलास।'[1]

बात यह है कि भारतीय अध्यात्म साधना में परात्पर ब्रह्म नित्य लीलानुरक्त माना गया है, और उसके दिव्य लोक की कल्पना लीला भूमि के रूप में की गयी है। लीला राज्य, योगियों, अथवा तन्मय साधकों द्वारा ब्रह्म विहार के हेतु चिदाकाश में की गयी संकल्पात्मक सृष्टि है। चिन्मयी रचना होने से वह नित्य एवं ज्योतिर्मय होती है। उसके केन्द्र में स्थित महाप्रकाश पूर्ण बिन्दु से सततमय ज्योति की असंख्य किरणें निकलती रहती हैं। इसी प्रकार ब्रह्म और भक्त नित्य लीलानुरक्त साकार ब्रह्म का प्रकाश ~~पूर्ण बिन्दु से सततमय ज्योति~~ मानते हैं अखण्ड ज्योति की इस रजोगुणमयी प्रसरण क्रिया को तमोगुण स्वरूप प्राकारों से अवरुद्ध कर योगी लोक रचना करते हैं। उसके भीतर ब्रह्म की विहार भूमि तथा उसके परिकरों के निवास स्थलों की व्यवस्था की जाती है। यहाँ की समस्त विभूतियाँ भवन, कुंज, वन, उपवन सरिताएँ, पर्वत पशु,

---

1- अवधविलास, पृ0 3

तथा पंचभूतादि तेज के ही विभिन्न रूप होते हैं। इसीलिए इस दिव्य देश को धाम (प्रकाश) की संज्ञा दी गयी है। विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यों ने धाम के अधिष्ठातृ देव को नारायण, विष्णु राम कृष्णादि नामों से अभिहित किया है और उनकी पुरियों को वैकुण्ठ, गोलोक अथवा साकेत की संज्ञा दी है।[1]

अथर्ववेद में अयोध्या को दिव्य प्रकाश वेष्ठित, अष्टचक्र एवं नव द्वारों से युक्त कहा गया है।[2] लालदास ने अयोध्या के स्वरूप का वर्णन भी कुछ इसी प्रकार किया है कि वैकुंठ में स्थित अयोध्या को ब्रह्मा ने वशिष्ठ को दिया था, जिसकी नाप लालदास ने इस प्रकार बतायी है -

पुरी अयोध्या सब पुर माहीं। रहति सदा बैकुंठहि माहीं।
अवधपुरी भूमध्य विराजा। तहाँ भये स्वायंभू राजा।
चौरासी जोजन परवाना। कही ब्रह्म सब ग्रंथ बखाना।
कोस छतीस तीन सय घेरा। कोस आठ दस मधि चहुँ फेरा।
केउ द्वादस योजन अनुमाना। ××××××
चक्राकार कही पुर ऐसा। पूरन परम ब्रह्म जैसा।[3]

अवधपुरी की जनसंख्या का भी विवरण लालदास ने दिया है -

इकतिस अर्ब पाँच सय क्रोरी। लाख उनइसार नियुत चर जोरी।
चौदह लाख इक्यासार धामा। चप सत करै रूप के धामा।
× × × × ×
अर्ब एक सय क्रोरि इकसी। चारि लाख पुनि कहुँ प्रकासी।
चारि हजार दोइ सय जेते। सबी अवध बसत भये ऐते।
चौदह पदम एक सय अर्बै। वनिया वैश्य बसत भये सबै।
पदम तीन सय अरु इक पदमा। बसत भये शूद्र के सदमा।[4]

1- अवधविलास, पृ0 3   2- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, डा0 भगवतीप्रसाद सिंह, 272-73
3- अथर्ववेद 10/2/31   4- अवधविलास, पृ0 18

अयोध्या के महल परिखा, बजार का भी वर्णन उपलब्ध है —

कनक कोट चहुँ ओर बिराजै। ता ऊपरि मनि कंगुरै छाजै।
परिखा अति गंभीर अगोरा। मनु माया दुस्तर चहुँ ओरा।
गोपुर चहुँ दिस चारि अनूपा। महा बिसाल मुनित जनु रूपा।
ध्यान बिराम चारि दरवाजे। भनित खेम प्रतिहार बिराजे।
हाट बजार अलंकृत देखा। दिग्गजहु होत न वीथिन्ह लेखा।[1]

लालदास ने दिव्य अयोध्या के विपुल वैभव, महल, ऋतुएँ पशु इत्यादि का विस्तृत विवरण उपस्थित किया है —

कंचन के घर महल जहाँ लौं। मनिमय खचित रचित सब तहाँ लौं।
हीरक मनि नग फटिक नीलमनि। हरित अरुनमनि चित्रक मनिगन।
पदम राग मनि सूरजकाँती। करत प्रकास दीप की भाँती।
राज मुकुत विद्रुम की हारा। चूनी पन्ना लाल कौ हारा।
वेदी घर घर लगत सुहाई। कहुँकि कनक कहुँ रूप बनाई।
द्वार द्वार हीरामनि जोती। जगमगात रवि ससि की जोती।
पसु पंछी अरु नर तनु वेली। गृह गृह चित्र विचित्र लिखेली।
कहुँ फटिक कहुँ मनिमय खंभा। परत जहाँ प्रति बिंब अचंभा।
आवत जात पुरुष अरु नारी। चीन्हहि माँई मुख लेत निहारी।
महलनि पर कलसा दुति सोहै। देखि देखि सोभा सुर मोहै।
ऊँचे महल धवल गिरि निकरा। कलसा चलत चलत हैं चकरा।
× × × ×
लता फले फूले बन बारी। अन्न अनंत भेद रस भारी।
दूध मह घट भरि भरि देही। बछ अघाइ जाइ जब तेही।
घर घर उत्सव गीत बिलासा। नित्य ब्याहु मनु पुत्र प्रकासा।[2]

1- अवधविलास, पृ0 20   2- अवधविलास, पृ0 20-21।

लंका वर्णन :—

रावण की राजधानी लंका का वर्णन लालदास ने किया है। पूर्वकाल में राक्षसों द्वारा लंका का निर्माण किया गया था, किन्तु कुबेर ने अपने पराक्रम से उसे छीन लिया था। यह लंका सागर पार स्थित है जिसकी लम्बाई-चौड़ाई इस प्रकार है—

सय जोजन बिस्तार गढ़ जोजन तीन उतार।
दस जोजन दच्छिन दिसा लंका सागर पार।[1]

त्रिपुर वर्णन :—

लालदास ने शंकर त्रिपुर युद्ध के समय त्रिपुर नगरी का वर्णन किया है। ये पुर स्वर्ण, ताम्र, रजत धातु से निर्मित हैं जिनके ऊँचे किले हैं —

त्रिपुर दैत्य पुर तीन बनावा। कंचन तांब रूपमय भावा।
बिकट कोट मंदिर बहुत भाँती। हीरा लगे रतन मनि पाँती।
मनिमय कनक कंगूरे राजे। तोरन ध्वजा अनेक बिराजे।
बन फल फूल रहत जिनमाँही। शीतल अवासा सदा तहाँ ही।
बाजत बिबिध दुंदुभी बानी। जनु अकास घटा घहरानी।
जन अनेक धरे बल पूरा। चंद्र नाम रवि नाम से सूरा।[2]

अलकापुरी :—

रघुवान प्रसंग में कुबेर पुरी का वर्णन किया गया है जिसमें महल, कोट द्वार कपाट, ध्वजा, तोरण इत्यादि का वैभवपूर्ण वर्णन किया गया है —

कंचन के घर महल अटारी। रहतु है जहाँ कुबेर भंडारी।
कंचन कोट बिकट छवि छाजे। कंचन आँगन वेदि बिराजे।
कंचन द्वार किवारि कनक के। कंचन तोरन खंभ कनक के।

1- अवधविलास, पृ० 49
2- वही, पृ० 66

जगमगात नग मनि मन लागे। रँग रँग के रंजक पागे।

कंचनमय सब पुर सुखदाई। अलकापुरी नाम छवि छाई।[1]

<u>प्रयाग :-</u> प्रयाग वर्णन में त्रिवेणी का विशेष उल्लेख हुआ है —

तीरथराज प्रयाग त्रिवेनी। करहु सनान स्वर्ग सुखदैनी।[2]

<u>चंपकवती पुरी :-</u> अंग देश में गंगा तट पर चम्पकवती पुरी स्थित है -

अंग देस जहाँ गंग बहाई। चंपकवती पुरी छवि छाई।[3]

<u>गुजरात :-</u> सती वियोगी शिव गुजरात गये, जहाँ की शोभा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है -

पार्वती के विरह बढ़ाये। फिरत फिरत गुजरातहिं आये।

तीरथ तहाँ बड़ नगर सुचारी। नागर विप्र बसत अधिकारी।[4]

<u>पुरी :-</u> मथुरा माया काशी कांती। द्वारावती अवंतिका पाती।[5]

<u>वशिष्ठ आश्रम :-</u> वशिष्ठ आश्रम वर्णन में वृक्ष, ऋतुएँ, विरोधी जन्तुओं का परस्पर वैर-भाव त्याग, यज्ञशाला, वेद पुराण-अध्ययन का उल्लेख है —

गंगातीर तपोवन माहीं। मये खग मृग जहाँ भय नाहीं।

मुनि तप तेज जीव सब डरहीं। आपन बैर परस्पर तजहीं।

सुंदर वेदी बनी विशाला। ता पर तुलसी वृन्द रसाला।

जज्ञशाल शुभ सदा सुहावन। सदा रहत तहँ होम हुतासन।

त्रिविध पवन सुख बहत निरंतर। शीतल मंद सुगंध सुखंकर।

पढ़त वेद बालक मृदु बानी। सुनि मन मगन भये नृप रानी।

बैठे पढ़त घेरि मुनि बाला। मनु ससि चहुँ दिसि उडुगन माला।

1- अवधविलास, पृ0 94-95   2- अवधविलास, पृ0 104   3- अवधविलास, पृ0 108

4- वही, पृ0 141   5- वही, पृ0 19

श्रुति स्मृति व्याकरन पुराना। विप्र पढ़त रस कर्म सयाना।

और नीम आयुध के भेदा। छत्री पढ़त धनुष के वेदा।

<u>पृथ्वी विभाजन</u> :- लालदास ने सप्त द्वीप, सागर एवं नव खण्डों का वर्णन पुराणों के अनुसार किया है —

जंबु प्लक्ष औ कुश क्रौंच शाकल सालमल ठाम।

सात एक पुहकर कहे सप्त द्वीप के नाम।

ए वे सप्त द्वीप हैं भाखा। सागर अंतर अंतर राखा।

क्षार क्षीर दधि मधु मदिराला। एक इक्षु जल सागर साला।

इलावर्त इक खंड बखाना। रम्यक एक हिरण्यमय जाना।

एक भद्र अश्व पुनि हरि बरषा। केतुमाल अरु इक किं पुरुषा।

भरत खंड इक खंडन्ह नायक। कर्म भूमि सबही फलदायक।

एक खंड भू मध्य बिसेखा। इक पूरब पच्छिम कहँ एखा।

उत्तर तीन तीन दक्षिनायन। या विधि से नव खंड बनायन।[1]

नव खण्ड पृथ्वी का विस्तार पचास कोटि योजन है जिसके अन्तर्गत कुछ देशों, नगरों का वर्णन लालदास ने इस प्रकार किया है —

अब देसन्ह के नाम बखानौं। जिन्ह देखे नर होइ सयानौं।

अंग देस प्रिय मान है देसा। बा उर देस बंगाल उड़ीसा।

काम रूप तिरहुत सुखदारा। गौड़ मौड़ अरु मग कलिवारा।

देस हिडंब सालमल कहिये। इन्गल न्यारच पुराहि लहिये।

मिट्ठल बान देसनी मखा। देस कुरुखंड धौरा।

अरु बर एक एक बहुलना। देस ओंडल औ गुजराना।

1- अवधविलास, पृ0 199

त्रिपुर कुठार असाम जयंत। अंतरवेद देस कथमंत।
इरा उत्त मत्या रति संग। करनाट त्रियराज सुरंग।
आंध्र देस महाराष्ट्र बखाना। कुंकन द्राविड मालव जाना।
सोरठ कच्छ देस गुजरात। युगल सिंधु है छत्र विख्यात।
मारवाड मेवाड सुदेसा। बागड देस ढुंढाहर वेसा।
नगर चाल औ दीघी वारा। हाडवती दिल्ली मंडल न्यारा।
म्यान वाव पंजाब बखाना। कासमीर कांचन खुरसाना।
केरल कोसल औ तिरहुतना। बाल हिमालय देस बखाना।
चंपक भूमि कलिंग जु ख्याता। देस भोज कर लंक ख्याता।
चैनि देस सघन देव कन्या। बंग मलाय असाम जु मन्या।
देसे रेव त्रिदेव बखाना। बलख बुखारा औ तुरकाना।
रोह हैतान औ ठठाह वासा। चार रुच्छ अंधार जवासा।[1]

<u>नदियाँ</u> :— लालदास ने राम जन्म के समय देश की प्रमुख नदियों का आगमन बताया है जिनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं —

गंगा सरस्वती यमुना रेवा। चन्द्रभागा शतद्रु पुनि एवा।
सिवादेविका और विपासा। ऐरावती सरजूहि सवासा।
कुलभावा पक्षा इक्षुमती। एक रथोद्रा चर्मणवती।
वृत्रघ्नी अवनीपा बाहू। एक भ्रारा हिरनक आहू।
कावेरी गोदावरि कना। कृष्णावती सीता सुरवदेना।
पुष्यमती तमसा वैतरनी। पुहुप मानिनी तम्बर परनी।
ज्योति रथा उत्पला विलता। भीमरथा चपला वली मस्ता।

1- अवधविलास, पृ० 73-74

बेना कृषना दुवरावती। कालिन्दी सो नव गोमती।

महानदी बीवर्भ गाई। अतुर होइ नर्मदा धाई।

गंग स्वेत बेतवा गंगा। गंग धर्म पतझल बढ़ेगा।

पुनि गंग आषाढ कराई। मानिक धारा बासुकि गाई।

शिप्रा चर्मन्वती सिंधु बनी।xxxxxxx

पुन्यामाहि शुभावति सरिता। वेत्रवती भोजाति चलिता।

पूर्बभद्र औ परा सु भद्रा। चली चर्मिला करत अरद्रा।

मन कातिक बर दृषा पवित्र।चलहि बहुदा उमा पवित्रा।

चलि विबुत मिल धनि पावनि। पृजावती मधुमती सुहावनि।[1]

<u>रोगवर्णन</u> :- रावण वैभव वर्णन प्रसंग में माधव निदान में उल्लिखित निम्न रोगों का वर्णन लालदास ने किया है -

ज्वर सब सूल प्रमेह ई जेते। परे बंदि रावन घर तेते।

अतीसार संग्रहनी अरसा। कमल अजीरन पांडुर अलसा।

कृमि नु विसर्प छर्दि विसूचक। कास स्वास स्वरभेद अरुचिक।

अपस्मार उन्माद भगंदर।आमवात हृदरोग तुषाकर।

सूक दोष दृग्दोष उदोषा। नासा कर्ण रोग मुख प्रोषा।

अष्टादस जे कुष्ट विख्याता। पुनि प्रसूति तेरह सन्निपाता।

सिर संपाति नेत्रोहि विसेषा। बाउ अनेक व्याधि तहाँ देखा।

मद्य पान मदा संबंधी। विद्रधि व्रण सोथ दुरगंधी।

सीत पित्त पुनि वायु अपारा। बर बाढ़ि गोल ज्वर विकारा।

उदावर्त पंचित पै व्याधी। मूत्राघात अस्मरी असाधी।

1- अवधविलास, पृ0 170

गल गंडक ग्रंथी गंडमाला। डमरू मेदि बृद्धि अरु बाला।

वात रक्त मधुमेह जु दोषा। सबलवाउ छिय दाह जु सोषा।[1]

महाभारत वर्णन :—

कवि ने महाभारत के अठारह पर्वों के नाम गिनाये हैं —

पर्व अठारह भारत आही। तिनके नाम कहौं सुनि ताही।

आदि पर्व इक सभा बखाना। पुनि वन पर्व विराटहि जाना।

इक उद्योग पर्व है राजा। भीष्म पर्व द्रोण पुनि साजा।

कर्ण पर्व इक शल्य है बरना। सौप्तिकपर्व स्त्री दुख हरना।

शान्त पर्व अनुशासन पर्वा। इक अश्वमेध पर्व गुन सर्वा।

आश्रमवास पर्व इक होई। मौसल पर्व कहत सब कोई।

महाप्रस्थानी पर्व है एक। स्वर्गारोहन पर्व विवेक।[2]

वामन मत्स्य कच्छ वराहा। अग्नि विष्णु नरसिंह जु आहा।

वायु भविष्य ब्रह्माण्ड सुजानी। लिंग नारदी स्कन्द बखानी।

मारकंड वैवर्त पुराना। पद्म भागवत शिव नरसाना।(अ०वि०पृ०183)

पुराण वर्णन :— अठारह पुराणों का नाम परिगणन इस प्रकार किया गया है —

मद्वय भद्वय ब्रत्रय चारि वकारहिं जान।

अनपा लिंग कू स्कन्द ये अष्टादश पुरान।[2]

लालदास ने भागवत महापुराण का माहात्म्य वर्णन बहुविधि रूप से किया है। साथ ही भागवत महापुराणोक्त पुराण लक्षण भी प्रस्तुत किया है। उन्होंने परम्परित सर्ग, विसर्ग, पोषण, स्थान, मुक्ति ऊति, ईशान, मन्वन्तर, आश्रय, निरोध, इत्यादि दस लक्षणों का इस प्रकार उल्लेख किया है —

1- अवधविलास, पृ० 52   2- अवधविलास, पृ० 102

3- वही, पृ० 38

सर्ग विसर्ग पोषन स्थिति मुक्ति ऊति ईशान।

मन्वन्तर आश्रय निरोध ए दस लच्छन जान।[1]

इनकी व्याख्या करते हुए लालदास लिखते हैं कि पंचमहाभूत, शब्दादि पंच तन्मात्राएँ, मन बुद्धि, चित्त, अहंकार इत्यादि से उत्पन्न महतत्व ही सर्ग है। सृष्टि का विस्तार विसर्ग, भूगोल, खगोल, की स्थापना को स्थिति, भक्तों के दुःखभंजन को पोषण, सत्यासत्य वासना ही ऊति, मनु आदि राजाओं का विवरण मन्वन्तर, सूर्य, चन्द्र की कथा ईशानुकथा, दुष्ट दमन, निरोध, ईश्वर ही सबके आश्रय है।

पृथ्वी अप वायु तेज अकासा। शब्द सपरस रूप रस बासा।

त्वक चक्षु जीभ श्रवन अरु घ्राना। वाक पानि पद गुदा बखाना।

मन बुद्धि चित्त अहंकार कहेई। महतत्व चौबीस है सई।

ब्रह्म आदि पचीस प्रजंता। ए चौबीस तत्व तनवंता।

सर्ग तत्व उत्पत्ति कहि गाया। पुनि विसर्ग विस्तार बनाया।

थापे करि भूगोल खगोला। कहत हैं स्थिति नाहि अडोला।

भक्त अनाथिन के दुख सोचन। रक्षा ताहि कहत कवि पोषन।

सत औ असत वासना पाई। सोइ लच्छिन है ऊति कहाई।

मनु रिषि राजन्ह कर बिवहारा। लच्छिन नाम मन्वंतर धारा।

सूरज सोम वंश होइ गये। सोइ लच्छन ईशान कहाये।

कंसादिक सब दुष्ट विनाशा। ताको नाम निरोध प्रकासा।

ईश्वर हैं सबके आधारा। आश्रय नाम सलच्छन धारा।

मुक्ति छोडि सब जीवहि जाना। ए दस लच्छन व्यास बखाना।

1- अवधविलास, पृ0 38

2 वही 38-39

तीर्थ वर्णन :— लालदास ने तीर्थ-माहात्म्य, सेवन विधि, तीर्थों के नाम गिनाये हैं। कुछ प्रमुख तीर्थ स्थान इस प्रकार हैं —

नैमिष पुष्कर गया प्रयागा। है प्रभास कुरु क्षेत्र सभागा। 267
मथुरा माया द्वारावती। कासी कांती अन्त्य कनमती।
गंगद्वार राम ह्रद गाये। गौतम आश्रम श्रीकंठ आये।
सोमोद्भव जंबु मारग। स्वबरन बिन्दु गये होइ पारग।
त्रिशुल कनक वसा अवभेषा। करत केदार जु पाप निषेधा।
तीरथ एक कपाल मुच नामा। कोकामुख बिल्वक बिश्रामा।
ब्रह्मपुत्र बद्रिक आश्रमा। गंग सागर 'स्नान सुधर्मा।
कुशावर्त ब्रह्मतीर्थ सोई। पर्वत नील महूचट होई।
गया बैकुंठ सूकर अवंबन। सुनो पाप मोचन हर बेदन।
रिषीकेश लोहागर जाना। और पृथूदक सोरु बखाना।
चित्रकूट विंध्याचल आवत। सेतबंध रामेश्वर धावत।
बिन्दु सरोवर कद मुकेश्वर। रमित संग उआरकालिंजर।
दारक वन पिंडारक वासी। त्रिपथगती पुनि-पुनि नहि वासी।
ब्रह्मावती मल्लिका अर्जुन। हेमाचल गोकर्ण तपोवन।
रैवत अचल रेवती कुंड। स्वबरन रेखा महोत प्रचंड।
पौत स्वामि पुरु पोतान गये। शैलाद्रि रेनुका आये।
ब्रह्म जोनि अरु जंबु मारग। तीरथ जते बटेश्वर पारग।[1]

इसके साथ ही लालदास ने तीर्थ फल की प्राप्ति का भी विस्तृत वर्णन किया है। इसे कवि ने अनुभव सिद्ध बताया है —

1- अवधविलास, पृ0 170-71।

मल अरु मूत्र न जल तट करई। बाजन बिनु पावन्ह अनुसरई।
अनहि दे पर आप न लेई। ताहि कहँ तीरथ फल देई।
बोले सांच झूठ नहिं भाषै। पर तिय धन पर मन नहिं राखै।
काहू को कबहूँ न सतावै। सो प्रानी तीरथ फल पावै।
हाथ पाँव अरु सीस कराई। नित कटि बसन धोय तब न्हाई।
राखै सुद्ध नैन मन बानी। सो पावै तीरथ फल प्रानी।
जपै नाम तीरथ व्रत साधै। पितृ अतिथि देवत राखै।
दच्छिन दान करि विप्र संतोषै। ताहि के तीरथ फल होषै।
होइ निष्काम रहै तेहि ठाँई। अलप अहार करै जब ताँई।
इन्द्री बस संयम करि धारै। तीरथ ताहि बहुत फल धारै।
गहि संतोष रहै लवलीना। तीरथ जानु ताहि फल दीना।
दूषन हरत कुगति त्यागै। कथा कीरतन करि निसि जागै।[1]

<u>व्याकरण</u> :— लालदास ने व्याकरण के नौ सम्प्रदाय गिनाये हैं —

इन्द्र चन्द्र पुनु कुम्भ कशायन। रूद्र देवदत्त अरु शंकरायन।
औरि कलाप पानिनीय बरना। कहियत नाम ए नव व्याकरना।[2]

<u>कल्प वर्णन</u> :— कवि ने विभिन्न कल्पों में घटित कथा का स्वरूप उपस्थित किया है, अतः यह आवश्यक है कि कल्प का समय ज्ञात कर लिया जाय। लालदास ने निमिष काष्ठा, कला, मुहूर्त, प्रहर, पक्ष, मास, वर्ष, युग तक गणना की है —

निमिष आठ दस नैनन्ह लाइय। ताको एक काष्ठा कहिय।
होत काष्ठा तीस बखानौ। ताकी एक कला भई जानौ।
तीस कला जब बीते जबहीं। होत है एक महूरत तबहीं।

1.- अवधविलास, पृ0 171-72
2- वही, पृ0 190

तीस महूरत का दिन होई। आठ प्रहर जाने सब कोई।

होत पचदस दिन अरु रैनै। ताको पच्छ कहत या लेखै।

पाख दोइ को मास कहावै। बारहें मास बरस होइ आवै।

सत्रहलाख हजार अठाइस। सतजुग एते बरस रहस इस।

सहस छानवे बारह लाखा। त्रेता जुग बरनन करि राखा।

आठ लाख चौसठि हजारा। द्वापर बरष रहै व्यौहारा।

चारि लाख अरु सहस बतीसा। कलि जुग बरष कीन्ह जगदीसा।

पुनि जुग चारि हजार है जाई। तब लगि राति रहति चलगई।

आठ हजार चाहि जुग सोई। राति दिवस मिलि दिन इक होई।

ताकहँ कलप कहत हैं ज्ञानी। कलप गये कलपांतर जानी।

ऐसे कलप तीस होइ लीना। तब ब्रह्मा को एक महीना।

ऐसे बारह मासहिं जाना। तब ब्रह्मा को बरस बखाना।

ऐसे बरष एक सत जाहीं। ब्रह्मा जियत रहत तब नाहीं।[1]

<u>मन्वन्तर वर्णन</u> :— प्राचीन मान्यता के अनुसार 71 चतुर्युगों का एक मन्वन्तर होता है। पुराणों में चौदह मनु कहे गये हैं —

स्वायंभु स्वारोचिष औत्तम। तामस रैवत चाक्षुष उत्तम।

एक वैवस्वत पुनि सावर्णि। भौत्य रौच्य पुनि मनु ये वर्णि।

ब्रह्म मेरु सावर्णि कहाये। ~~[illegible]~~ सूरज इक सावर्णिहि पाये।

रोहित नाम एक पुनि होई। चौदह मनु कहियत हैं सोई।[2]

1- अवधविलास, पृ036

2- वही, पृ0 36

<u>मानव आयु वर्णन :-</u>

लालदास ने युगानुरूप मानव आयु का भी वर्णन किया है, जो इस प्रकार है —

सत युग लाख बरस नर जीवे। त्रेता दस हजार जल पीवे।
द्वापर एक हजार रहाई। कलियुग आयु सब सउ पाई।[1]

<u>संवत्सर वर्णन</u> :— लालदास ने साठ संवत्सरों के नामों का भी वर्णन किया है—

प्रभव विभव अरु शुक्ल प्रमोदी। एक प्रजापति अंगिरा विनोदी
श्रीमुख भाव युवा इक धाता। ईश्वर अरु बहु धान्य विख्याता।
एक प्रमाथी विक्रम जाना। वृष अरु चित्रउ भान पहचाना।
एक सुभानु है तारन लेखा। पार्थिव व्यये सर्व जित देखा।
इक सब धारि विरोधी पाये। विकृत खरनन्दन इक गाए।
विजय जये मन्मथहु जाने। दुर्मुख हेमलंब बखाने।
एक विलंब विकारी लहिए। और सर्वरी प्लवहि कहिए।
शुभकृत शोभन क्रोधी राऊ। विश्वावसु और पराभव गाऊ।
एक प्लवंग कृत पुनि परमानी। प्रमादी आनन्द सुखानी।
राक्षस नल पिंगल इक जोड़ा। काल युत सिद्धार्थ रौद्रा।
दुर्मति दुंदुभि रु. धिरोद्गारी। रक्त अरु क्रोधन क्षयकारी।[2]

<u>विभूति वर्णन</u> :— राम को परब्रह्म मानकर उनमें विभिन्न विभूतियों के वर्णन कवि ने किया है —

जल माहिं रस शशि सूरज ज्योती। वेद प्रणव है शब्द सुभीती।
नर पौरुष पृथ्वी महि गंधा। सूरज तेज जीवन बंधा।
तप तपस्विन्ह माहिं बुधि बुद्धिमानी। तेज तेजस्विन्ह माहि तुम जानी।

1- अवधविलास, पृ० 38

2- वही, पृ० 153

बल बलवन्तन्ह माहि तुम्हारा। काम धर्म अविरुद्ध पसारा।
द्वादस जे आदित्य कहाहीं। तिन्ह माहि विष्णु नाम तुम आही।
ज्योति स्वरूप प्रकासक जेई। तिन्ह माहिं अंशुमान रवि होई।
मरुत तिन्ह माहि मरीचि है नामा। ससि हो नछत्रन्ह माहिं धामा।
साम वेद वेदन्ह माहि गाजा। देवन्ह माहि है इन्द्र बिराजा।
इन्द्रियन माहि बड़े मन कहिए। भूतन्ह माहि चेतना लहिए।
अष्ट वसुन्ह माहि पावक कहाये। पर्वत तिन्हमाहि मेरु सुहाये।
जिते पुरोहित हैं जग माहीं। बडे बृहस्पति सम कोउ नाहीं।
सेनापति जगमाहिं जे जानी। षडमुख सबके मुख सेनानी।
सरन्ह माहि सागर तुम सोहै। अचर माहि बैरागर सोहै।
महारिषिन्ह माहि भृगु रिषि राजै। बानी माहि अक्षर है बाजै।
जग्यन्ह माहिं जप जग्य बिधाना। स्थावर माहि हिमालय माना।
बनसपतिन्ह माहि पीपर माने। देव रिषिन्ह माहि नारद जाने।
सिद्धन्ह माहि कपिल मुनि राई। गंधर्बन्ह माहिं चित्ररथ पाई।
उच्चश्रवा अश्वन्ह माहिं बरना। गजन्ह माहि ऐरावत करना।
मनुजन्ह माहि नराधिप राजै। आयुध माहि बज्र बड़ साजै।
कामधेनु धेनुन्ह माहिं धन्या। प्रजनिन्ह माहि कंदर्पहि मन्या।
सर्पन्ह माहि बासुकि स्वामी। जादन्ह माहि बरुन बड़ नामी।
पितरन्ह माहि अर्यमा पाऊ। जानु संजमिन्ह माहि जमराऊ।
दैत्यन्ह माहि प्रह्लाद सुपाता। काल कलपतन्ह माहि बिख्याता।
मृगपति सिंह मृगन्ह माहिं जैसा। पक्षिन्ह माहि गरुड़ है तैसा।
पवन पवित्र पवित्रन्ह माहि। राम समान धनुर्धर नाहीं।
मीनन्ह माहि मकर बलधारी। नदियन्ह माहि गंग अधिकारी।

द्वन्द्व समासन्ह माहि समासा। अक्षय काल कालन्ह महि भासा।

कर्ता जिते काज के ज्ञाता। तिन्ह महि मुखि तुम रचत बिधाता।

गायत्री छंदन्ह महि भाषा। मासन्ह महि अगहन बड़ राखा।

षट रितु महि बसंत है राजी। सप्त पुरिन्ह महि अवध बिराजी।

मुनिन्ह महि है ब्यास सुबकता। कबिन्ह में शुक्र समान न कबिता।

जीतिन्ह महि नीति युद्ध बना। गुप्तन्ह महि न मौन समाना।

जप तप और न अन्न नहिं दूजा। सालग्राम समानहिं पूजा।

कंचन धातु धातु सिर ताजा। ब्राह्मन सर्व वर्ण के राजा।

ज्ञानिन्ह महि जो ध्यान बिबेका। और तुम्हार बिभूति अनेका।[1]

अष्टांगयोग वर्णन :-

राम के निर्वेद प्रसंग में वशिष्ठ ने उन्हें योग का उपदेश किया था। इसी प्रसंग में लालदास ने अष्टांग योग का विस्तृत वर्णन किया है। इस योग की साधना मुक्ति के लिए की जाती है। कवि ने रूप, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा ध्यान और समाधि का व्यावहारिक रूप उपस्थित किया है। यम के अन्तर्गत आन्तरिक बाह्य सदाचार पर विशेष बल दिया गया है -

प्रथमहिं जम लच्छिन महि धारे। करै अहिंसा जीव न मारे।

बोलै सत्य झूठ नहिं कोई। रहै अस्तेय चोर नहिं होई।

ब्रह्म ब्रह्मचर्य मैथुन सब त्यागे। रहै अपरिग्रह संग्रह भागे।

हूवै अक्रोध क्रोध नहिं धारी। बोलै बचन मधुर सुखकारी।

मृषा तजै अमृषा आने। निंदक चुगल भेद नहिं जाने।

1- अवधविलास, पृ0 161-62

देखे सुखी संपदा काही। मल जाने हीय मैं हरषाही।

चंचल वचन मौन गहि राखै। बोलै अलप बहुत नहिं भाखै।

निंद करत लज्जा मन आनै। अभय रहै भय देह न जानै।

धीरज धरे रहै मन माँही। अति अकुलाई करै कछु नाही।

अहित सब नाहित नहिं देखै। क्षमा अंग रहै गहि लेखै।[1]

लालदास ने नियम के अन्तर्गत साधक का जीवन यापन स्वाध्याय, शौच, पूजा अर्चना का उल्लेख किया है —

अब कहुँ नियम सुनो समुझाई। ××××××××××××××××××
तपसा करै न तन को पोखै। प्रात न्हान व्रत करि चरि सोखै।

शीत उष्ण अरु भूख पियासा। इनसे कबहुँ न होइ उदासा।

रहै सदा स्वाध्याई सद्‌या।सीखे पुने अध्यातम विद्‌या।

जथा लाभ संतोष रहाई। असंतोष करि मरै न धाई।

सौच देह जलमृत्तिका लागै। राग द्वेष मन के मल त्यागै।

साधै मौन कछु नहिं भाखै। सूरज दक्षिने औरहिं राखै।
× × × ×
पूजा करि षोडस उपचारा। सहित तर्पन विधि व्योहारा।

जप अरु होम वेद विधि चालै। श्रद्धा सहित अतिथि प्रतिपालै।

प्रातःकालिक षट्कर्मोपरान्त आलस्य का परित्याग कर साधक को आसन करना चाहिए। शास्त्रों में चौरासी आसन कहे गये हैं जिनमें निम्न प्रमुख हैं —

स्वस्तिक गोमुख कुक्कुट आसन। धनु उत्तान कूरम वीरासन।

पृष्ट कोकण्डा पश्चिम ताना। मयूरासन अरु भद्र बाना।[2]

1- ज्ञानविलास, पृ० 205

2- वही, पृ० 205-6

तिहि पदम सिंहासन करना। अनुभासन सब असना करना।

चौरासी असन हैं भाषा। सब महि आदि चारि दस राखा।[1]

प्रत्याहार मनोमन का नाश करते हैं। प्राणायाम के पूर्व शारीरिक षटकर्म का वर्णन इस प्रकार किया गया है –

नेती डोरि नासिका पेषै। धोती बसन लीलि मल देषै।

नवली नल पेंड़े जु उठाई। अपर मध्य गुरु ते लखि पाई।

भाथी करै नक स्वर ऐसे। धवै सुनार धातु को जैसे।

ऐसे एक एक स्वर छाडै। अति वेग हठ मांडै।

बस्ती मूल द्वार जल करषै। सब करनी मन ज्यों जल बरषै।[2]

प्राणायाम करने के लिए साधक समतल भूमि में कुश एवं मृग चर्म कम्बल एवं कोमल वस्त्र बिछाकर पद्मासन में बैठता है। इडा, पिंगला का विचार कर ही प्राणायाम करना चाहिए।

प्रानायाम करै तेहि ठौरा। ऐसे पवन बांधिये औरा।

इला पिंगला करै बिचारा। बायें दाहिने नाक दुवारा।

इड़ना पिंगुल सुषमन नारी। नासा मध्य रहत सुखकारी।

दच्छिन पुट नासा स्वर जाना। ताहि पिंगुला कहत सयाना।

बायें इला जानिये सोई। मध्य सुषमना नारी होई।

तिन्ह के तीन देवता गाये। सूर्ज चंद्र ब्रह्म तहाँ छाये।

षोडस बेर प्रणव मन मांही। पूरत जपै अधिक कछु नाहीं।

राखे भूमि पवन नहि जाई। चौंसठि मंत्र जपै तब ताई।

बायें स्वर छाडै तब सोई। बेर बत्तीस मंत्र जप होई।[3]

1- ध्यानविलास, पृ0 206

2- वही, पृ0206-7

3- वही, पृ0 207

मंत्र सहित कुंभक, पूरक, रेचक सगर्भ तथा बिना मंत्र का अगर्भ प्राणायाम कहलाता है। यह प्राणायाम क्रमशः धीरे-धीरे करना चाहिए। हठपूर्वक एकाएक अधिक प्राणायाम करने से साधक रोगी बन जायेगा। धीरे-धीरे उसका मन ध्यान में रम जायेगा —

मंत्र सहित ताहि कहत सगर्भा। बिना मंत्र सो जानि अगर्भा।
राखे आनि प्रान भ्रू माहीं। त्रिकुटी ध्यान करत भय नाहीं।
प्रानायाम करै मति रोधन। प्रानायाम होइ अघ सोधन।
सनै सनै साधै हठि भांति। करै अभ्यास दिवस अरु राती।
प्रान अपान वायु सम धारे। नासा मध्य मध्य संचारे।
मन अरु पवन त्रिकुटि करि मेला। रहै उन्मनी ध्यान अकेला।
जोगी तहाँ करै निज वासा। देखै परम जोति परकासा।
अनाहद सुनै जोति मन लावै। अजपा जपै बहुरि नहिं आवै।
तजन बिन मन तन मैं बिलमावै। राखै रोकि रैकि नहीं धावै।
तन चंचल तें चंचल पवना। पवन चपल तें मन को गमना।
मन के चले बिन्दु चलि जाई। बिन्दु चले बल बुद्धि नसाई।[1]

प्राणायाम की सिद्धि पूर्ण करने पर साधक षट्चक्र भेद पहिचान जाता है। कवि ने चक्र के पूर्ण दल, देव का विस्तृत किया है —

मूलाधार चक्र दल चारी। रक्त बरन गनपति अधिकारी।
स्वाधिष्ठान लिंग थर कर्मा। षट दल हेम बरन तहाँ ब्रह्मा।
मनि पूरक नाभि मधि जानी। दस दल नील विष्नु तहँ बानी।
चक्र अनाहत हृदय बिराजा। द्वादस दल सित संकर राजा।

1- ज्ञानविलास, पृ० 208

कंठ विशुद्ध दल षोडश ताही। रंग फटिक रहै जीव तहाँही।

दल है द्वै मनि रंग मजातम। आज्ञा चक्र देव परमातम।[1]

षट्चक्र भेदन प्रक्रिया का भी वर्णन कवि ने किया है —

जब लौ लगै सुषुमना नारी। रहति वक्र गति चक्र मझारी।

ताहि पवन बल करि सुधि करई। दसयें द्वार वायु लै धरई।

मूल चक्र ते पवन उठावै। मेरु दंड होइ सीस चढावै।

तब तहाँ अनहद नाद है कोई। गरजै गगन मगन मन होई।

देखे तेज पुंज तहँ जोती। रवि ससि कोटि-कोटि मनि मोती।[2]

[redacted]

लालदास ने मूल, उड्डीयान एवं जालन्धर बंध योगियों के लिए आवश्यक कहा —

मूल बंध संकोचन कहिये। ऐचे नाभि उड्डान सु है ये।

दाबे कंठ रहै दृढ पावै। जालंधर सोइ बंध कहावै।[3]

योगी खेचरी, भूचरी, जलचरी, अगोचरी मुद्राओं का रहस्य बड़ी कठिनता से प्राप्त करता है —

खेचरी गगन पंथ उड़ि जाई। भूचरी भूमिहि मध्य चलाई।

जलचरी जल पर चले सो जानी। गुप्त अगोचरी नाहि बखानी।[4]

विषयों के प्रति आचरण की प्रत्याहार है —

प्रत्याहार कहूँ सुनु ताही। इन्द्रिय प्रति प्रति भूल सबताही।

त्वक चक्षु जीभ नासिका श्रवना। राखे रोकि विषय प्रति गमना।

मन को स्थान विशेष में केन्द्रित करना ध्यान कहलाता है। इष्टदेव की मूर्ति को हृदय में स्थापित करना धारणा है —

1- ब्रजविलास, पृ० 209　　2- वही, पृ० 209

3- वही, पृ० 209　　4- वही, पृ० 209

मन को एक ठौर ठहराई। धारे रहै ध्यान टकलाई।

तन मन एक करै व्रत धारै। और अनेक विखेप निवारै।

धारन सहित कराहिं करि लहिए। ताको नाम धारना कहिए।

हृदय कमल द्वादस दल ताही। मूरति ध्यान करै मन माही।[1]

ध्यात, ध्यान का ऐक्य ही समाधि है जो दो प्रकार की कही गयी है —

ध्याता ध्यान रहत कछु जाना। ताको नाम समाधि बखाना।

ध्याता ध्यान नाम मिटि जाई। रहै एक अद्वैत समाई।

तीन भाँति को ध्यान है सगुन नाम निरुपाधि।

निर्विकल्प औरु कल्पना है द्वै भाँति समाधि।[2]

योग्य साधक सद्गुरु की कृपा से ही योग का ज्ञान प्राप्त कर सिद्धियों का अधिकारी बनता है।

मापवर्णन :— कवि ने तिल यव, अंगुल, मुष्टि, धनुष, दण्ड, कोश और योजन का क्रमशः वर्णन इस प्रकार किया है —

षट् तिल सम एक जव राखा। तीन जवहिं भरि अंगुल भाखा।

अंगुलि चारि मुष्टिका कहिए। करि षट मुष्टि दंड को लहिए।

अष्ट दंड को धनुष बखाना। धनुष सहस्र द्वै कोस प्रमाना।

चारि कोस कर जोजन सोई। जोजन भरि सब संख्या होई।

× × × ×

अष्ट बार अब युक्त प्रमाना। ता सम एक जवोदर जाना।

अष्ट जवोदर अंगुल एका। कर अंगुल चौबीस विवेका।

चारि हाथ को धनुष परेखा। दोइ हजार धनुष कर कोसा।[3]

1- ब्रह्मविलास, पृ0 210

2- वही, पृ0 210

3- वही, पृ0 164

<u>योग के षटकर्म वर्णन</u> :—

धोती बस्ती नवलिका गजकर नेती जान।

बाधी सोधन देह के ए षटकर्म बखान।[1]

<u>षट्ऊर्मि वर्णन</u> :—

असन पिपासा सोक अरु मोह जरा मृत्यु जानि।

लाल रई षट ऊर्मी ग्रन्थनि माहि बखानि।[2]

<u>अष्टादस सिद्धियाँ</u> :—लालदास ने प्रसिद्ध अष्ट सिद्धियों के साथ सिद्धियों का भी वर्णन किया है —

अणिमा जो सूक्षम तन होई। देखि न परइ जु काहू सोई।

महिमा जो दीरघ बढ़ि जाई। सीस अकास लगे भू पाई।

गरिमा गरू होइ तन ऐसा। पर्वत हले चले नहिं तैसा।

लघिमा सिद्धि होय तन पाई। रज समान लघुता लहुवाई।

सिद्धि प्राकाम्य नाम शाठ आशय। प्रगट न करे ऐश्वर्य प्रकाशय।

वसि सौं सचर अचर वसि करई। एक अकाम कामना हरई।

दूर श्रवन इक सिद्धि विख्याता। देशांतर की सुने जु बाता।

दूर दरस इक सिद्धि अपारा। बैठा सब देखे संसारा।

मनोजवा इक सिद्धि बखाने। मन की वेग जाइ जहाँ जाने।

एक है काय रूप सिध ऐसा। चाहै भयो रूप होइ तैसा।

सिद्धि परकाय प्रवेस कहावे। मृतक पिंड माहि पैठि जिवावे।

इक स्वच्छंद मृत्यु मन लागे। जब जाने तबहीं तन त्यागे।

देवानां सह क्रीडा गाई। देवन्ह सौं खेले मिलि जाई।

1- ज्ञानविलास, पृ0 206

2- वही, पृ0 212

जथा संकल्प कहावै सोई। मन में धरै सोइ सब होई।

इक अम्या प्रतिहत बखाने। जाको कह्यो करै सब माने।[1]

आयुधवर्णन :—

फूल खड्ग धारिय हल भाला वज्र शक्ति पास।

शूल मुशल तोमर परसु मुद्गर पैटक नास।[2]

दसकर्म वर्णन :— दस कर्म संस्कार हैं जिनकी संख्या में पर्याप्त मतभेद है। कुछ प्राचीन धर्मशास्त्री षोडश संस्कार मानते हैं। लालदास को दस कर्म ही स्वीकार हैं —

जो दस कर्म वेद विधि गाये। तिन्ह के नाम सुनहु मन भाये।

आदिहि कर्म पुंसवन सोई। जब रजस्वला प्रथम तिय होई।

पुनि इक प्रथमहिं मासक लीजे। गर्भाधान रहै तब कीजे।

पंचम मास कहै इकु दूजा। अष्टम मास होत है पूजा।

जनमहि होत करत कछु चहिये। जन्म कर्म ताही सों कहिये।

पुनि इकु नामकरन है कर्मा। अन्न प्रासन षष्टिमा धर्मा।

मुंड न चूडाकर्म कहावै। है व्रतबन्ध जनऊ पावै।

होइ विवाह कर्म कछु जाना। ए दस कर्म है वेद बखाना।

और एक मत है कहुं ऐसा। षोडस कर्म करत कहै तैसा।

जाके संस्कार दस होई। नाम द्विजन्मा कहिये सोई।

जनमत एक बेर शूद्र सब होई। संस्कार ते ब्राह्मन होई।[3]

ब्राह्मण माहात्म्य वर्णन :— दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञोपरान्त ब्राह्मणों को पुष्कल राशि दक्षिणा में दी। इसी समय कवि ने ब्राह्मण माहात्म्य कथन बहु विस्तार से किया है—

विप्र कृपा करि आवहिं जाके। पूरन होहि मनोरथ ताके।

जा घर विप्र धरै पगु धाई। ता घर कीरति होय बड़ाई।

1- अवधविलास, पृ0 ~~86~~ 212   2- अवधविलास, पृ0 66

3- वही, पृ0 97-98

बिप्र प्रसाद इन्द्र भये लोगा। बिप्र प्रसाद पुत्र धन भोगा।
बिप्र प्रसाद राज्य अधिकाई। बिप्र प्रसाद बिपति दुख जाई।
बिप्र प्रसन्न भये जाहि जाना। ताहि प्रसन्न भये भगवाना।
बिप्र चरन पूजे जिन्ह प्रानी। भयेउ कृतार्थ ता कँह जानी।
कपिला दान दीये फल होई। पुष्कर कुंड अन्हावे सोई।
कह सब वेद पुरान सुनावे। बिप्र चरन धोवे फल पावे।
ब्राह्मन छत खेत जिन्ह करषा। दान बीज श्रद्धा जल बरषा।
बिनु कंटक बिनु कर्दम जानी। जन्म जन्म नहिं सकत सिरानी।
बिप्र वृक्ष फले जो कोई। जल भोजन करि सींचै सोई।
ताहि कल्पतरु होइ पृथ्वीतल। अर्थ धर्म देइ काम मुक्ति फल।
हरि के चरन संभु मन मोहै। बिप्र चरन हरि के हिय सोहै।
पाप समुद्र तरन हय जाना। केवट बिप्र नाम गउ दाना।
बिष्नु प्रसन्न किये चहै कोई। ब्राह्मन को आराधे सोई।
ब्राह्मन कोटि को करै निरासा। ताको होइ नरक महि बासा।
बिप्र बिना जग्य दान न होई। दान बिना कछु धर्म न होई।
जब ग्रह क्रूर होइ दुख दाई। तब ब्राह्मन ही होत सहाई।
पंडित मूरख भेद न आनी। ब्राह्मन सबहि बिष्नु करि जानी।[1]

कन्या माहात्म्य वर्णन :—

जनक ने पुत्रेष्टि यज्ञ हेतु भूमि शोधन किया, तभी हल के फाल से सीता की उत्पत्ति हुई। कन्या देख जनक निराश हो गये। उनके गुरु, पुरोहित ने कन्या माहात्म्य का विस्तृत वर्णन किया है —

---

1 जनकविजय, पृ0 139-40

कन्या धर्म मूल जग माँही। और धर्म कन्या सम नाहीं।

अगनित सत मिष्ठ समाना। कन्या कोटि गऊ सम दाना।

जे कोउ दस कूप बनावे। सो फल एक बावली पावे।

दस बापी सम एक तड़ागा। दस सर सम इक कन्या भागा।

गज तुरंग जो देइ हजारा। भूमि ग्राम देइ सहित बजारा।

कनक कोटि महिषी देइ कोई। कन्या एक दिये फल होई।

बिनु कन्या कछु होइ न काजा। ब्याहु बेन मंगल सुभ साजा।

कन्या रत्न खानि बिधि बनी। हीरा पुत्र देहि जग जानी।

कन्या पुत्र नहीं कछु अंतर। जो सत धर्महि बढे निरन्तर।

कन्या गुन को कहै अपार। कन्या ते उपजे संसारा।[1]

<u>राम जन्म स्थान वर्णन</u> :— अयोध्या में राम, भरत, लक्ष्मण इत्यादि के जन्म स्थानों की माप कवि ने इस प्रकार बतायी है —

अब सुनु राम जन्म अस्थाना। जन्म भयो जेहि ठौर ठिकाना।

विघ्नेश्वर के पूरब ओरा। आठ हजार धनुष तेहि ठौरा।

लोमस स्थल के पश्चिम देसा। धनुष पचास और कछु रेसा।

है जनमत्त की दक्खिन छांहीं। धनुष एक सय अधिक नाहीं।

मुनि वशिष्ठ के उत्तर भागा। राम जन्म तहँ मध्य विभागा।

जनम स्थल के उत्तर सुन्दर। धनुष बीस पर कैकेई मंदिर।

महल सुमित्रा कहौं बखानी। तीस धनुष दक्खिन यौं जानी।

तहाँ जनत भई दोउ सुमित्रा। लछिमन और सत्रुघन पुत्रा।[2]

1- अवधविलास, पृ० 179

2- वही, पृ० 163

षट्दर्शन वर्णन :-

सांख्यवाद की उपपत्ति है कि ईश्वर, जीव एवं जगत के सम्बन्ध ही षट्दर्शन का आधार है। सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा एवं वेदान्त षट्दर्शन [redacted] है जिनके प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन कवि ने किया है। शान्त, बुद्धिमान एवं विरागी व्यक्ति को सांख्य दर्शन प्रिय होता है। आत्म स्वरूप का यथार्थ वर्णन तथा तत्वों की संख्या बताने वाला दर्शन सांख्य कहलाता है -

होहि शान्त बुद्धिवन्त विरागी। सांख्य योग तिनको प्रिय लागी।
जथार्थ आत्म स्वरूप जहाँ निरूपन होई।
अरु सब संख्या तत्व की सांख्य कहावे सोई।
आदि ब्रह्म माया उपजाया। माया ते महत तत्व कहाया।
ताते त्रिविध भयो अहंकारा। सत रज तम गुन कृत प्रकारा।
मात्र पंच तामस अहं कीने। तिन्ह कारन तें पंच भूत महा लीने।
पंच भूत ते प्रकृति चौबीसा। चैतन्य परम तत्व पच्चीसा।
पंचीकृत मिलि जग विस्तारा। रंग रूप आकार अपारा।
रज अहं कृत दस इन्द्रिय भेवा। सात्विक अंतःकरन देवा।
ते माया परिणामहि पाई। जैसे दूध दही होइ जाई।
ईश्वर है अविछिन्न अज्ञाना। बुद्धि अविछिन्न जीव को माना।
जैसे उपजे तत्व सब ता विधि होत हैं लीन।
बीज रहित माया विषै लहत सांख्य कहि दीन।[1]

न्यायशास्त्र में नव द्रव्य स्वीकृत हैं —

1- अवधविलास, पृ० 213

पृथि जल अग्नि औ वायु प्रमाना। आरम्भवाद कणादहिं ठना।

दिग अरु आतम मन लेई। तात न्याय द्रव्य नव है सोई।[1]

नैयायिक जग की उत्पत्ति घट के समान बताते हैं —

आरम्भवाद नैयायिक ठाने। जग उतपति घट प्राय बखाने।

पूर्व ही घट रह्यो अभाव। मृतिका सकवात होइ आवा।

मृतिका दंड चक्र जल लागा। आरम्भकरि घट होत विभागा।

आदिहिं नहिन रह्यो संसारा। मिलि नव द्रव्य भयो विस्तारा।

पृथिवी जल अनिल अनुसारी। एक ते दोइ दोइ ते चारी।

बहुत हैं तब क्रमहि क्रम जबहीं। होत स्थूल रूप सब तबहीं।

सबके चारि प्रमाणहि संघा। तिन्ह करि इह सब होत प्रपंचा।

कालहि जगत करत अरु हरता। ईश्वर रहत अलग अकरता।

प्राक अदिष्ट पाइ बुधिजैसा। होत है ध्यान कर्म पुनि तैसा।

इह जगत नाहिन बनत जड प्रधानु करि सोइ।

घट कुम्हरि चेतनि बिना तात कौन विधि होइ।

करता भोक्ता जीवहि आही। सुभ अरु असुभ कर्म फल ताही।

जीव अपर परब्रह्म है भाषा। ईश्वर अन्य भाग है राखा।

नित्य ज्ञान गुत माया संगा। कारण भूत अलिप्त असंगा।

ब्रह्म एक है ईश्वर एका। घट घट जीव है जानि अनेका।

जहाँ धूम तहाँ अगिनि जाना। या विधि न्याइ करत अनुमाना।[2]

मीमांसा दर्शन में कर्म की महत्ता प्रतिपादित की गयी है —

1- अनुभवविलास, पृ0 214

2- वही, पृ0 214

[illegible]

मीमांसा जग उत्पति करन्ता। कर्म अधार कारण जीव धरन्ता।
करता हरता कर्म है ताही। ईश्वर हरता करता कछु नाहीं।
कर्म मीमांसा मत एहि लेखा। बिना किये कछु होत न देखा।
स्वर्ग नर्क शुभ अशुभ हू कर्मा। ता कारण करो सब धर्मा।[1]

इसी प्रकार वैशेषिक, योग एवं वेदान्त में जग को कारण कहा गया है।

विशिष्ट बारह वाक्य :—

षट्दर्शनों की उत्पत्ति के विषय में वैदिक द्वादश वाक्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। लालदास ने चतुर्वेद निरूपित ब्रह्म विषयक विचार इस प्रकार कहता है —

तीन वाक्य ऋग्वेद भनंदा। एक प्रज्ञान ब्रह्म आनंदा।
यजुर्वेद के तीनि ई वचना। अहं ब्रह्म अस्मि इति रचना।
सामवेद के वाक्य है तीने। तत्व असि या विधि कहि दीने।
अयं आत्मा ब्रह्म कहेई। वेद अथर्वन के वचन एई।
चारि वेद एहि भांति पुकारा। द्वादश वाक्य इक ब्रह्म विचारा।[2]

पुण्यकर्म वर्णन :—

भारतीय धर्म शास्त्रों में पुण्यकर्मों की लम्बी सूची है। लालदास ने पुण्यकर्मों के रूप में आन्तरिक बाह्य शुद्धि के साथ सामाजिक कार्यों को भी प्रमुखता दी है —

वापी कूप तड़ाग निधाना। बाग पोखरा देवस्थाना।
खेत भूमि गृह गज गउ कन्या। कनक के रतन कपरा देइ धन्या।

1- अमरविलास, पृ0 215
2- वही, पृ0 215

छत्र पनही कंचन बोरा। दासी देव रचहि सुख जोरा।

तुलादान आभरन अनेका। दधि घृत गुड़ पय पान विवेका।

जीवदान विद्या तिल दाना। अन्न दान भवदान बखाना।

दीन गरीब अनाथनि देई। उपकारी होइ जग जस लेई।

करै न काहू अस निरासा। सो सुख जाय करै कैलासा।

पूजा देव होम जप जापा। काहू कहँ कहुँ करै न बाधा।

माता पिता सेव सुखकारी। वेदाध्ययन करै अधिकारी।

इन्द्रिय जीत रोष नहिं गहै। तीरथ व्रत तप धर्म नियहै।

दीपदान तुलसी कहुँ देई। पीपर कहँ पानी भरि देई।

सत्यवादी निंदा नहिं ठानै? दया सील संतोषहि आनै।[1]

पापकर्म वर्णन :— लालदास ने पाहले पंच महा अपराधों का वर्णन किया है —

ब्रह्महि पंच महा अपराधा। परै नर्क जिन्ह ए साधा।

कनक चोर मद विप्रहि मारै। मदिरा पान करै मन धारै।

गुरु पत्नी सों करै बुराई। सो नर घोर नरक महि जाई।

मित्र मित्र गुरु पुत्र जु भ्राता। परै नर्क मारै जो भ्राता।

स्वामि द्रोह स्त्री वध करहीं। गर्भपात करि नर्कहि परहीं।

पर दारा पर द्रव्य अभिलाषै। लालच लागि झूठि भरै साखी।

करि विश्वास वधि रहै वाकी। सो नर होइ नरक के पाती।

पर सुख देखि महा दुख होई। परत है जाइ नरक महि सोई।

सौचाचार नेम कछु नाहीं। ते जम लोक नरक महि जाहीं।

गुरु वृत्ति भूमि जो हरै बिरानी। चुगली करै चोर होइ प्रानी।
मारै जीव भखि जो खाहीं। ते महानरक महि नर जाहीं।
वापी कूप तडाग तुरावै। विप्र मेड़ देवल भहरावै।[2]

1- अवधविलास, पृ० 102-2   2- वही, पृ० 103-4

<u>प्रकृति के पच्चीस तत्व वर्णन</u> :— पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश इत्यादि पंच तत्व मिल पच्चीस तत्वों का निर्माण करते हैं जिनकी स्थिति शरीर में बतायी गयी है —

पंच तत्व रचना सब जानी। तत्वहि तत्व मिले नहिं होनी।
अमिले तत्व अपंचिकृत मिले पंचि कृत होत।
सूक्षम थूल है देह है प्रकृति पचीसन होत।
पंच पचीस समूह सरीरा। जड़ अरु दृश्य अनित्य अधीरा।
सो आतम सों सदा निराला। उपजै बिनसै वृद्धहु बाला।
सुनहु पचीस प्रकृति के नामा। माया रचित देह के धामा।
अस्थि मांस नस त्वचा जु केसा। ए पृथिवी ते पंच प्रवेसा।
रेत रक्त पित लार और स्वेदा। ये हैं पंच नीर के भेदा।
आलस कांति क्षुधा तृषा निद्रा। ए है तेजहि पंच उपद्रा।
धावन चलन संकोच प्रसारन। उतक्रम पंच है वायुहि कारन।
कंठ उदर कटि हृदय सकाशा। सीस पंचधा होत अकाशा।
एक परस्पर मिले निदाना। तब पंचीकृत होत विधाना।
वाई श्रोत नभ ते दोइ होई। कर अरु त्वचा वायु ते दोई।
चक्षु चरन दोउ तेज तें जानव। जल तें जीभ उपस्थहि मानव।
नासा गुद द्वार ये होई। ए पृथिवी तें होत हैं दोई।
पृथी गंध वायु सपरस तेज रूप रस पानि।
सबद अकास ए पंच के तत्व पंच गुन जानि।[1]

इसी क्रम में लालदास ने गीतोक्त क्षेत्र क्षेत्रज्ञ का भी वर्णन इस प्रकार किया है।

पंच तत्व दस इंद्री लीजै। पंच विषय मिलि एकत कीजै।
बुद्धि अव्यक्त एक अहंकारा। सुख दुख इच्छा द्वेष संचारा।

1- अमरविलास, पृ० ११७-१८

धृति चैतन्य मिलाइ संघात। तब तन जेहि रचत निघात।
ए सब जैन वनु सविकारी। केवल आपु रहत अविकारी।[1]

विषय भोग साधन इन्द्रिय देह भोग स्थान।
मन बुधि है दोउ भोगता कारन कर्महिं जान।
चित सत औ आनन्द अज अचल अद्वैत अखण्ड।
स्वयं ज्योति अक्रीय ब्रह्म लाल व्याप ब्रह्मण्ड।
स्वविषया जड स्वाश्रया अनभव भासि होइ।
है जु अवस्तु स्वभासया, अवच अविद्या सोइ।
जड़ अनित्य अन आत्मा ताहि आत्मा मान।
गोर श्याम स्थूल कृस दह ई लाल अज्ञान।[2]

इस प्रकार कवि ने वेदान्त के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है कि यह दृश्यमान संसार नश्वर, मिथ्या एवं क्षणिक है। सुख-दुःख मन के मानने से ही अनुभव होते हैं। लालदास ने पंच इन्द्रियों के विषय, कार्य एवं उनके देवताओं का भी वर्णन किया है —

त्वक चक्षु जीभ श्रवन अरु घ्राना। पंच ज्ञान इन्द्रिय ए माना।।
सपरस त्वचा रूप दृग जाने। रसना रस के स्वाद बखाने।
शब्द श्रवन सुनै नासा गंधा। पंचो लगे पंच के धंधा।।
वाक पानि पग गुदा उपस्था। पंच कर्म इन्द्रिय ए व्यवस्था।
बोलै वाक ग्रहन कर लागे। चलत है चरन मूल मल त्यागे।
करत है गुह्य मैथुन लीला।। जाने पंच पंच के लीला।
सूरज नैन वायु त्वक माहीं। नासा अश्विनिकुमार रहाहीं।
श्रवन माहि दिग देवहि जाना।। जीभ्हि जीभ माहि वरुण ठिकाना।।

1- अवधविलास, पृ० 118 2- अवधविलास, पृ० 118

वाक अगिन कर इन्द्र विराजा। लिंग प्रजापति सृष्टि के काजा।
मित्र देवता गुदा समाने। विष्णु चरन में रहे सयाने।
मन मांह चन्द्र बुद्धि में ब्रह्मा। चित में वासुदेव आत्मा।
अहंकार के स्वामि शंकर। करत रहत है कर्म भयंकर।[1]

गर्भ विकास वर्णन :-

कवि की मान्यता है कि अन्न, से रस, शुक्र बिन्दु एवं जीव क्रमशः बनते हैं, जिसमें वीर्य से तीन तथा रज से चार धातुएं उत्पन्न होकर देह का निर्माण होता है। पुत्र, पुत्री एवं नपुंसक बनने की प्रक्रिया पर विचार किया गया है और इस प्रकार वीर्य क्रमशः बुदबुद, फेन, पिण्ड, अंड तथा शरीर अंगों के रूप में प्रकट होता है —

अन्न ते रस रस शुक्र पावा। तब जीव बिन्दु महि आवा।
तीन धातु वीरज ते होई। मज्जा अस्थि नसा सब सोई।
तैसे रज भयो चारि प्रकार। त्वचा मांस लोहू अरु बार।
धातु जो तीन पिता की कहिए। चारि धातु माता की लहिए।
ऐसे सप्त धातु ए होई। तबही देह जान सब कोई।
पुत्र होत वीरज अधिकाई। रज अधिकार कन्यका आई।
रज वीरज जो होत समाना। होत नपुंसक कहत सयाना।
वीरज बहुत प्रबल जो होई। पुत्र होत संशय नहिं कोई।
जो रज प्रबल चले तेहि बारा। कन्या जानु गर्भ विस्तारा।
एकहि बेर गिरै जो दोई। जानहु पुत्र नपुंसक होई।[2]

गर्भ परीक्षा की बात लालदास ने इस प्रकार बतायी है —

कन्या पुत्र परीक्षा जाही। जाने गर्भ सुनो अब ताही।
माता स्तन पुष्ट रहै जीये। तो जानहु कन्या है हीये।

छीन शरीर रंग पियराई। जानहु पुत्र गर्भ रहे आई।

× × × × ×

जब पिय देत त्रियहिं रति दाना। तब वीरज रज माँहि समाना।

एक दिवस महिं मिलत है दोई। दिवस पंच महि कुकुच होई।

दिवस सात महि फेन समाना। दिन दस महि पिंडी परमाना।

दिवस पंच दस होत है अंडा। मास एक महि निकसत मुंड।

भुज अरु जंघ मास दोउ पाई। तिसरे मास पेट दिखराई।

हाथ पाँव शाखा ज्यों पसुरी। चौथे मास प्रगट भइ अंगुरी।

पूरन पाँच मास सब अंगा। छठये मास हाड दृढ संगा।

पूरन गर्भ सातौं मासा। कोउ निकसत कोउ गर्भहि वासा।

अठये छलत चलत सब माता। जाने और कौन बिनु धाता।[1]

[redacted] नायिका वर्णन :—

संस्कृत एवं हिन्दी के अधिकांश आचार्य रस को काव्य की आत्मा मानते हैं, जिनमें शृंगार को रसराज स्वीकृत किया है। इसके आलम्बन नायक-नायिका कहे गये हैं। नारी के प्रति भोग प्रधान दृष्टिकोण नायिका भेद का मूल आधार है। वैलासिक मनोरंजन के संतर्पणार्थ वासनामय काव्यसृजन किया गया है। नायिका भेद निरूपण इसी का परिणाम है। हम पहिले ही देख चुके हैं कि लालदास के काव्य में किस प्रकार रीतिकालिक प्रवृत्तियाँ प्रविष्ट हो रही थीं। नायिका भेद कामशास्त्र, नाट्यशास्त्र से विकसित होकर काव्यशास्त्र में पल्लवित हुआ। लालदास के युग तक भानुदत्त की रस मंजरी का विशेष प्रभाव परिलक्षित होता है। लोमपाद के अन्तःपुर वर्णन प्रसंग में नायिका नायक भेदों की चर्चा की गयी है। कवि ने कन्यारत्नीय नायिकाओं के लक्षणों का वर्णन इस प्रकार किया है —

1- अवधविलास, पृ0 166

छीन शरीर रंग पियराई। जानहु पुत्र गर्भ रहे आई।

× × × × ×

जब पिय देत तियहिं रति दाना। तब बीरज रज माहि समाना।

एक दिवस महिं मिलत है दोई। दिवस पंच महि बुदबुद होई।

दिवस सात महि फेन समाना। दिन दस महि पिंडी परमाना।

दिवस पंच दस होत है अंडा। मास एक महि निकसत मुंडा।

भुज अरु जंघ मास दोउ पाई। तिसरे मास पेट बिलगाई।

होय पाँव शाखा ज्यों पसुरी। चौथे मास प्रगट भइ अंगुरी।

पूरन पाँच मास सब अंगा। छठये मास हाड दृढ संगा।

पूरन गर्भ सातयें मासा। कोउ निकसत कोउ गर्भहि बासा।

अठये हलत चलत सब गाता। जाने और कौन बिनु दाता।[1]

[redacted] नायिका वर्णन :—

संस्कृत एवं हिन्दी के अधिकांश आचार्य रस को काव्य की आत्मा मानते हैं, जिनमें शृंगार को रसराज स्वीकृत किया है। इसके आलम्बन नायक-नायिका कहे गये हैं। नारी के प्रति भोग प्रधान दृष्टिकोण नायिका भेद का मूल आधार है। वैलासिक मनोरंजन के संतर्पणार्थ वासनामय काव्यसृजन किया गया है। नायिका भेद निरूपण इसी का परिणाम है। हम पहिले ही देख चुके हैं कि तत्काल के काव्य में किस प्रकार रीतिकालिक प्रवृत्तियाँ प्रविष्ट हो रही थीं। नायिका भेद कामशास्त्र, नाट्यशास्त्र से विकसित होकर काव्यशास्त्र में पल्लवित हुआ। लालदास के युग तक भानुदत्त की रस मंजरी का विशेष प्रभाव परिलक्षित होता है। लोमपाद के अन्तःपुर वर्णन प्रसंग में नायिका नायक भेदों की चर्चा की गयी है। कवि ने कमलावतीय नायिकाओं के लक्षणों का वर्णन इस प्रकार किया है —

1- अवधविलास, पृ0 146

कोउ पदुमिनि कोउ चित्रनि रानी। कोउ संखिनि कोउ करनि दिरानी।

पदुमिनि अंग सुगंध अनूपा। कनक बरन लघु तन अति रूपा।

उज्वल बसन निरमल सब अंगा। पियत सुवास भ्रमर फिरै संगा।

लाज बहुत मृदु हास रिसाला। नैन केस कोउ छोत बिसाला।

छोटे कुच लघु दंत प्रकासी। मनहुँ चन्द्रमा पूरनमासी।

सुकुच उदार पुन्य सुखदाई। पिय सों प्रेम प्रीति मन भाई।

भोजन अलप रोस रति मानी। निद्रा अलप सो पदुमिनि जानी।[1]

इसी प्रकार चित्रनी शंखिनी एवं हस्तिनी नायिकाओं के अंग सौष्ठव एवं कामकर्मी-वृत्तियों का वर्णन किया है —

सुनु चित्रन पिय के मन भाई। नहि रति सो माने मनभाई।

नृत्य गीत बाजन कविताई। चंचल नैन अचल चतुराई।

हास बिलास कलोल सुहाई। फूल फुलेल सो रुचि अधिकाई।

चित्र विचित्र अनेक बनावति। सो चित्रिन पिय मान धरावति।

संखिनि कोप कपट कुटिलाई। दया दान नहिं सील समाई।

निलज निसंक न धीरज आने। छार गंध नख सा रुचि माने।

रकत मलीन अशुच मन भाई। अनाचार निद्रा अधिकाई।

सकल सलोम सरीर बखानी। सो बनिता संखिनि करि जानी।

हस्तिनि बरन भुज कुच भारी। चलति मंद गजगति नारी।

अंगुरी अरध पयोधर थूला। पीन सरीर अधर कटि मूला।

भरे केस सलोम सरीरा। स्वेद दुरद मद सम गंभीरा।

चित चंचल भोजन अधिकाई। हस्तिनि ताहि जानिए भाई।[2]

1- ब्रजविलास, पृ0 133

2- वही, पृ0 133-34

वयस के अनुसार इनके अनेक भेद कहे गये हैं —

त्रिबधी पुनि षट वयस है कन्या गौरी बाल।
तरुनी प्रौढा वृद्ध एक बरनत है कवि लाल।[1]

<u>वयःसन्धि :—</u>

शैशव का अन्त और यौवन का आरम्भ जिस बिन्दु से प्रारम्भ होता है उसे ही तो काव्यपरम्परा में वयःसंधि कहते हैं। लालदास ने यौन प्रधान उपादानों में स्तनों का उभार नितम्बों की पृथुलता, लज्जारुण कपोलों की सन्निकटता, कटि की क्षीणता का वर्णन किया है —

बय संधि एक कहत है प्यारी। उह छबि लाल होत कछु न्यारी।
उरज उकसि कछु देत देखाई। चपल नैन मुख पर अरुनाई।
बढत नितम्ब घटत कटि छिन छिन। कबहुँ कबहु कहुँ होत सकुच मन
भूषन बसन सँभारत ताहिन। चेष्टा जनु ताहि कछु कोहन।[2]

लालदास ने काव्य शास्त्रानुसार नायिकाओं के तीन भेद किये हैं, स्वकीया, परकीया और सामान्या, जिनके पति उपपति एवं वैशिक होते हैं। अवस्थानुसार स्वकीया के मुग्धा, मध्या तथा प्रौढा रति के आधार पर धीरा अधीरा एवं धीराधीरा एवं यौवन के आधार पर ज्ञात यौवना एवं अज्ञात यौवना भेद कहे गये हैं —

रची विधाता याम अहि तीन हैं नायिका।
स्वकीया परकीया नाम लाल एक सामानिता।
स्वकीया पुनि कछु परकीया सामान्य कुलीन।
पति उपपति वैशिक कह तीनहु के पति तीन।
स्वकीया पुनि बिधि तीन बखानी। मुग्धा मध्या प्रौढा बानी।

1— अवधविलास, पृ० 134

2— अवधविलास, पृ० 134

मुग्धा बाल वधू सोइ कहिए। मध्या होइ सयानी लहिए।

प्रौढ़ा पूरन जोबन वंती। इम अपार होइ गुनवंती।

स्वकीया के त्रैभेद गंभीर। धीर अधीरा धीरअधीरा।

धीरा धीर धरै मन मांही। जानु अधीरा धीरज नाहीं।

होइ अधीरन कछु इक धीर। ताहि कहत हैं धीरा धीरा।

स्वकीया दोइ भांति विख्याता। ज्ञात जोबना एक अज्ञाता।

ज्ञात जोबना लज्जा मानै। होइ अज्ञात ताव नहिं जानै।

होत हैं भेद दुहुनि के दोई। एक अनूढ़ा ऊढ़ा होई।

ब्याही ताहि कहत हैं ऊढ़ा। बिना बिवाहि सुजानि अनूढ़ा।[1]

दूसरे की पत्नी परकीया तथा गणिका दासी या धन के लिए व्यापार करने वाली सामान्या कहलाती है जिसके पाँच भेद हैं —

अपनी होइ स्वकीया जाही। परतिय परकीया कहिये ताहि।

गनिका दासी धनहित भाखी। ए दोउ नारि सामानिहि राखी।

दोउ के भेद पंच हैं लहिए। अन्य संभोग दुखिता कहिए।

वक्रोक्ति गर्विता जानी। मानवती पुनि ताहि बखानी।

रूप औ प्रेम गर्विता होई। जानहु पंच भेद ए सोई।[2]

परकीया के कुछ अन्य भेदों की चर्चा लालदास ने इस प्रकार की है —

परकीया के भेद षट मुदिता गुप्ता जान।

एक विदग्धा लक्षिता कुलटा अनु सयान।

प्रोषित पतिका खंडिता कलहंतरिता नाम।

विप्रलब्धा उत्कंठिता वासक सज्जा बाम।

1- अवधविलास — पृ0 135

2- वही, 135

इक स्वाधीन भर्तिका पुनि अभिसारिका तीय।

अष्ट नायिका लाल ए कही कविन्ह रमनीय।[1]

अन्त में लालकवि ने मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा स्वाधीनपतिका अभिसारिका कलहान्तरिता, खण्डिता, प्रोषितपतिका, वासकसज्जा, विप्रलब्धा, आगतपतिका इत्यादि नायिकाओं के लक्षण बताये हैं —

मुग्धा भय लज्जा अति होई। चहै रति रस न चातुरी कोई।
मध्या मदन लघुव वय पाई। रति पिय मिलव न देत जनाई।
प्रौढ़ा प्रगट मदन बस जानी। डरहि न लाज रहै गरबानी।
मध्या प्रौढ़ा लछन जनाये। तिन्ह करि आठ नाम तिन्ह पाये।
प्रेम रूप गुन देखहि जाके। पीय अधीन रहै बस ताके।
पाइ सुहाग प्रमुदित बखानी। सा स्वाधीन पतिका जानी।
उरभित मन सिंगार कराई। जहाँ पिय होइ तहाँ चलि जाई।
अथवा पुरुष धाइ बोलि पठावै। सोइ अभिसारिका नारि कहावै।
पिय सों प्रथम कलह करि लीनी। फिरि पछिताइ मैं मलीन कीनी।
जतन कराइ मिले पुनि जाई। कलहांतरिता बनिता गाई।
आवै न पिय हिय ताप निवारन। तब का भयो रहै केहि कारन।
चहै मिलन पिय कुसल मनावै। उत्क वास नाम कहि आवै।
आजन कहि अवे नहिं जाके। रहै निसि जाइ आन बनिता के।
रति रस चेहि प्रात सुनाई। ताहि खंडिता बनिता गाई।
जाको पति परदेस सिधाए। भरे बिरह दुख सुख बिसराए।
मन मलीन छीन तन लहिए। प्रोषित पतिका बनिता कहिए।

1- अवधविलास, पृ० 135

पान फुलेल सेज रचि राखै। सखि सों रति पिय के गुन भाखै।

चितवत पंथ चपल दृग जोही। वासक सज्जा जानहु ओही।

जाहि जहाँ पिय बोलि पठावै। आप कहूँ उठि जाइ न पावै।

होइ उदास निरास बिचारी। जानहु विप्रलब्धा सोइ नारी।

पिय कहुँ गमन करत है जाती। करिहौं कहा विपत बैसे आली।

असगुन होइ मनाउति तियहीं। प्रीतम गवनी जानु सुतिय हीं।[1]

नायक वर्णन :—

लालदास ने सुपुरुष एवं कुपुरुष दो भेदकर सुपुरुष के अनुकूल दक्ष, शठ, धृष्ट उपभेद बताये हैं। इस वर्गीकरण में भी रस मंजरी का प्रभाव कवि ने स्वीकार किया है —

पुरुष है दोइ भाँति जग माहँ। एक सुपुरुष कुपुरुष कहाए।

रूप विद्या विनय सूर अचारी। दाता सुलि स्वनेष्टाचारी।

क्षमावंत उत्तम सत संगी। कला कुसल सज्जन सब अंगी।

जब धन रूप वंत कुल मानी। ताकों लाल सुपुरुष बखानी।

नायक है अनुकूल दक्ष पुनि सठ धृष्ट बखानि।[2]

इस प्रकार लालदास ने आठ नायिकाओं एवं चार नायकों के आधार पर तीन सौ साठ भेदों की चर्चा की है।

ज्योतिष वर्णन :— लालदास ने राम जन्म के समय ग्रह, नक्षत्र योग इत्यादि की चर्चा की है। कवि ने इसी प्रसंग में ग्रह-मैत्री उनकी उच्चावस्था, ग्रह-स्थिति एवं निवास देश का वर्णन किया है जो इस प्रकार है —

जेहि जेहि रासि मिलत ग्रह जोई। ऊँच नीच गुन कहत हौं सोई।

1- अवधविलास, पृ0 135-36

2- वही, पृ0 136

सूरज ऊंच मेष के बरन।। वृष के चन्द्र मकर कुज करन।।
बुध कन्या गुरु कर्कहिं जाने। सुक्र मीन सनि तुला बखाने।
राहु केतु दोउ मिथुनहि सूचे। या विधि ए नव ग्रह भये ऊंचे।
सुनहु स्वग्रही होत हैं जैसे। रासिहि मिलत कहत हों तैसे।
सूर्य सिंह कर्क के चंदा। मंगल मेष वृश्चिक सुखकंदा।
बुध मिथुन कन्या के राखे। गुरु मीन अरु धन के भाखे।
वृष अरु तुला सुक्र जो होई। मकर कुंभ शनि स्वग्रह सोई।
सूर्य तुला नीच गृह कहिए। चंद वृश्चिक कुज कर्कहि लहिए।
बुध होइ नीच मीन जो आवे। मकर वृहस्पति नीच कहावे।
कन्या सुक्र मेष सनि नीचे। धन के राहु केतु कहे नीचे।[1]

नवग्रह स्थिति इस प्रकार बतायी गयी है,—

अब नव ग्रह स्थिति कहुं गाई। दिन अरु मास रासि भुगताई।
सूरज मास एक रहैं रासी। चंद सवा है दिन सुख वासी।
मंगल दिवस पंच चालीस।। बुध रहत दिन रासिहि तीसा।
तेरह मास होत गुरु वारा।। मास एक है सुक्र करारा।।
तीस मास सनि की ठकुराई। मास अठारह राहु रहाई।
अब इनके कहौं देस सुनाई। जहाँ वे रहत करत ठकुराई।
सूरज सुरस्थान के राजा। चंद्र हिमालय रहत बिराजा।
मंगल जहँ तुरकन है भाये। बुध रूम गुरु चीन बिरावे।
सुक्र चाव सनि हिन्दुस्तान।। राहु केतु के मैं नहिं जाना।।[2]

1- अवधविलास, पृ० 150-5।

2- वही, पृ० 152

कर्मविपाक वर्णन :-

कवि ने मरणोपरान्त जीव के कर्मानुसार नर्क भोग का विस्तृत वर्णन किया है, जो इस प्रकार है -

अष्टधातु पुतरी करि ताती। लपटि सो छपटावत छाती।
मदिरापान करत नर अंधा। औटत ताहि पिवावत रांगा।
निंदा औ परतिय कहानी। सुनत है कुछ महारु सि मानी।
जरत तेल औ तपत सलाकें। डारत दूत कान मांहि ताके।
पर तिय नग्न देखि ललचाई। फोरत आंखि काक दुखदाई।
जीवहि मारि मांस जे खाहीं। कृमि कुण्ड मैंहि नर जाहीं।
जिन्ह पंछिन्ह के पंख उखेरे। सड़सिन्ह तन तोरत तिन्ह केरे।
झूठी साखि भरे जो कोई। कुंभीपाक परे जाइ सोई।
काहू कहं जेउ दोष लगावै। सो जम लोक जाइ दुख पावै।
बिनु अपराध सतावै जाही। सूरी तहाँ देत जम ताही।
चुगलखोर होइ जमपुर जाई। तिन्ह को तेल कराह पचाई।
बिना सुनी बिनु देखी जु भाखी। छेदतु कान औ काढतु आंखी।
कुंभीपाक ब्रह्म हा डारे। रौरव नर्क गऊ हतियारे।
कन्या देत बिघ्न जो करे स्त्री मारि गर्भ कहं डारे।
मारै जीव करै बरियाई। तिन्ह कहुं जमी घालि पिराई।
व्रत अरु दान भंग करै कोई। परै असिपत्र स्वान मुख सोई।
गुरु अरु स्वामि द्रोह करि मारा। तिन्ह को जम काटत छुर धारा।
धनहित वृध बालक जो मारे। जरत कराह तेल मंहि डारे।
सब कहं दुखदात जे आही बांधि कूप महि डारत ताही।
देव ब्रान को दोउ सुरभै। पर तिय हरइ द्रोह उपजावै।

ताहि चढ़ मारत जमराई। पुनि सब नर्कहमाहि गिराई।
घृत गुड़ तेल नु खाइ चुराई। तिन्ह कहँ तिन्हीं माहिं पचाई।
जबहीं परोसा देत जे गिरहीं। पुनि कुम्भ माहि ते नर परहीं।
पर दारा धन आसा राखी। तीर्थ विप्र वेद निंदि भाषै।
लोहा पवन खानहीं चोरे। काटै काग देय ताय फोरे।
भोजन भिन्न करै कहुँ काही। लोह जीव माहिँ पेरत ताही।[1]

<u>नर्क यात्रावर्णन</u> :—

मरणोपरान्त जीव की यात्रा बहुत लम्बी है। जो अनेक कष्टों को पार करना पड़ता है। वैतरणी पार कर वह यमपुरी पहुँचता है। लालदास ने इसका विवरण इस प्रकार किया है —

सो जम लोक है जानु कहाँ सी। जोजन पंथ है लाख छियासी।
प्रथम जोजन एक हजारा। जिहि भयानक दु:खाकारा।
जोजन पंच हजार है बरना। महा तीक्ष्ण कंटक पर चलना।
जोजन दोय हजार बखाना। तप्त बालुका तापर जाना।
जोजन दस हजार छुरधारा। आठ हजार अग्नि अंगारा।
जोजन सहस पचदस माहीं। कालरात्रि अंधियारे जाहीं।
जोजन आठ हजारहिं जानी। बूड़त पैरत पानिहि पानी।
कहुँ इक तैसहिं भीतर चाला। जह होइ जात महा अति पाला।
कहुँ इक जात है घाम अंगारी। द्वादश सूरज तेज पसारी।
दस हजार छाती के वेती। भूख प्यास लागत तहाँ तेती।
पुनि सब जोजन उतरब जाना। महानदी वैतरनी नामा।[2]

1- अवधविलास, पृ0 146-47 2- अवधविलास, पृ0 147

<u>वाहन वर्णन</u> :— कवि ने नवग्रह तथा अन्य देवताओं के वाहनों एवं उनके परस्पर विरोध का वर्णन किया है —

सुरपति वाहन कहियत हाथी। छिमता वाहन अग्नि के साथी
रवि वाहन अश्व फनिन्द काना। ससि वाहन सिव मृग पुनि जाना।
सिव सुत वाहन मोरहि कहिए। गनपति वाहन मूसहि लहिए।
देवी वाहन सिंह कहाए। विधि वाहन भए हंस सुहाए।
जम वाहन महिषासन बरना। वृषभ चढे संकर सुभकरना।
नारायन वाहन गरुड़ आसन। श्री वाहन कहि कमल सुआसना।
बुध वाहन हरख मन माने। दादुर पर चढे गुरु सयाने।
कछुआ पर चढे राहु बिराजे। सुरगुरु वाहन निबुरहिं साजे।
मान सनिच्चर वाहन पाये। भेंढ़ा पर मंगल चढ़ि धाये।
नागनि पर चढ़ि केतु हैं सोहैं। जल वाहन कंवरा जग मोहै।
घन वाहन इह पवनहिं जाने। वाहन नाम ए सकल बखाने

मृग चीता गज सिंह सौं स्वान मेष अहि मोर।
मूष मंजारहि जल अगिनि बैर राहु ससि चोर।
सोन सुभग दीप पट बाबर पवनहिं बैर।
देव असुर हर काम सौं बन्धु पहारहिं बैर।
गौ व्याघ्रहि महिषहि अश्वहि हरिन स्वान अहिनाव।
सर्प निउर बानर मेढक सेन कपोतहि धाव।[1]

<u>संगीत वर्णन</u> :— स्वर्गलोक में लक्ष्मी नारायण को प्रसन्न करने के लिए शंकर नारद सरस्वती इत्यादि ने संगीत का आयोजन किया। लालदास ने इस सन्दर्भ में संगीत के

1- अवधविलास, पृ0 123

अंगों-उपांगों का विस्तृत वर्णन किया है। उनकी धारणा है कि संगीत के तीन अंग हैं — वाद्य, नृत्य एवं स्वर। जिसके दो भेद हैं — मार्ग एवं देसी। मार्ग संगीत देवलोक में विकसित हुआ। देसी संगीत पृथ्वी में आया, जिसके नारद, भरत, शिवा, सरस्वती, दुर्गा हनुमान आचार्य हैं।

तीन अंग संगीत के स्वर औ नृत्त जो वाद्य।
सो तीनों दोउ भांति हैं मारग देसी आदि।
मारग देव लोक महि गाये। देसी भूमण्डल जो आये।
नारद भरत शिवा सरस्वती। दुर्गा हनुमान हैं जती।
सारदूल काहल बहुरंगा कश्यप कंबल बायु सब मतंग।[1]

कवि ने चार प्रकार के वाद्यों का उल्लेख किया है —

तत आनद्ध औ घन सुषिर बाजा चारि प्रकार।
मुख लीनी अरु वे कहे एक ताल झनकार।
× × ×
डफला ढोल डमरू पखि संजा। भेरी संख मुरलि अल मुंजा।
कठली भुंग नाम सर बाजा। बड़ी सुर सागर करि साजा।
तुरही मुरलि पतिका साजी। कुआ बीना कुआ दों करि गाजी।
बंसी रावन हस्त बजाये। अष्ट प्रकार बीन मन भाये।
झालरि घंट कलपतरु एका। बाजे बाजन और अनेका।
धारसि स्वर सुर सुखाई। मन्नक पिनाक बाजे सुर नाई।
बीन मृदंग रबाब। बाजत डफ डमरू अरु ताला।[2]

कवि केअनुसार नाद के पाँच निम्न स्थान हैं —

मुख हैं एक कपाल उलाइये। नाद स्थान पंच ए कहिये।

1- अवधविलास, पृ० 23-24   2- अवधविलास, पृ० 24

लालदास ने वाद्यों से निसृत 232 तालों का उल्लेख कर कुछ विशिष्ट तालों की तालिका प्रस्तुत की है —

है सब ताल बतीस बखानी। कहत हों नाम कछुक इहाँ आनी।
चित्रताल कंदुक कंदु चारी। राम ताल लघु शेखर भारी।
वरुना सर्व एक सनिपाता। पंचम तृतिय आदि विख्याता।
चतुर्मुख लीला निस्संग। हनुमान लक्ष्मी है संग।
कुंड नाद अर्जुन कुल ताला। झम्पा अतालि ताल रसाला।
जयति शेखर सिंह विक्रम जाना। रंग दो सम अरु एक कल्याना।
चंड ताल गति ति सम ताला। संचय पुष्पि कुंडल सुर ताला।
सिंह गति त्रिभंगल प्रहर्षक। बिन्दु ताल पक्षिराज सुवर्षक।
सप्त अंग तालन के गाये। गुरु लघु प्लुत अनुद्रुत भाये।
द्रुत विराम अरु लघु विरामा। ए हैं ताल ताल अंग नामा।[1]

कवि ने पक्षियों की ध्वनियों में ताल-विस्तार देखा है —

तीतर चटक जु बक कहे बाज कोकिल चार।
चापक कुक्कुट ते भये ताल अंग विस्तार।[2]

सप्त स्वरों को चार भागों में विभक्त किया है —

षड्ज ऋषभ गंधार निषादा। मध्यम पंचम धैवत साधा।
तिन्ह माहि तीन ग्राम करि न्यारा। मध्यम षड्ज ग्राम गारा।
स्वर है चारि भाँति इक वादी। संवादी अनुवाद विवादी।
स्वर संवाद परस्पर जानें। दूषक भेद भेत स्वर मानें।

1- अवधविलास, पृ0 25
2- अवधविलास, पृ0 26

मोर पपीहा छाग औ क्रौंच कोकिला बाघ।

दादुर गज ते सात कहि भये सप्त स्वर नाद।

तीन ग्राम तथा सप्त स्वरों से 21 मूर्छना निकलती है, जिसका उल्लेख इस प्रकार किया गया है —

सात सात त्रै ग्रामहि जानी। मूरछना इकईस बखानी।

उत्तर मन्द्रा रजनी राखा। सुद्ध षड्जा उत्तरायत भाखा।

मछरस कृत अभिरुद्गत माना। अश्व क्रांत संग षड्ज बखाना।

सौवीरी हरि नास्वा होई। कलोपनता पौरवी सोई।

हृष्यिका एक मारगी गाई। मध्य ग्राम सों लगत सुहाई।

नंदा एक विशाला सुकुमारी। चित्रा चित्रवती सुख करणी।

सुखा अलापा रस भरि भारी। ए गंधार ग्राम की प्यारी।[2]

एक साथ सात स्वरों से गाया जाने वाला राग संपूर्ण, षट स्वर युक्त षाडव एवं पंच स्वर औडव कहलाता है। इस प्रकार इक्कीस मूर्छना उनचास तानें दो सौ तीस ताल तथा साठ प्रकार के वाद्य हैं —

एक ही बेर सात स्वर गाइये। ताहि राग संपूरन कहिये।

षट स्वर मिलि गावत है जाहि। षाडव राग नाम है ताही।

सु औडव पंच स्वरन्ह मिलि होई। गावै ताहि सगुनि जन सोई।

मूर्छना इकईस हैं तान कोटि उनचास।

ताल दोइ सय तीस हैं बाजा साठि प्रकास।[3]

कवि ने मुख्य षटराग तथा उनके आकार का विस्तृत वर्णन किया है। महादेव ने अपने पंच मुखों से पांच राग तथा छठा राग भवानी ने गाया है —

1- अवधविलास, पृ0 26   2- अवधविलास, पृ0 26

3- वही, पृ0 26

भैरव माल कोश हिंडोला। दीपक श्री अरु मेघ अमोला।

महादेव मन भयो हुलासा। पंच राग मुख पंच प्रकाशा।

एक भवानी कीन्ह प्रगटाना। ए षट राग भये जग जाना।[1]

इसके पश्चात भैरव की पत्नियाँ (रागिनी) तथा उसके आठ पुत्र एवं आठ पुत्रवधुओं का उल्लेख किया है —

मधु माधवी भैरवी ललिता। बंगाल बरारी भैरव वनिता।

तिनके अष्ट पुत्र पुनि लेहू। देव शाख हरषन है एहू।

माधव ललित बिभास बखाना। बंगाल सु बिलावल जाना।

अष्ट है तिन्ह की वधू बखानी। पुनि जन होइ सरसाहिं जानी।

बहुल गुजरी सोरठी पाट मंजरी हेत।

बरवै सूहा बिलावती। आनन्द रूह होत।[2]

इसके बाद मालकोश की रागनियाँ, पुत्र एवं पुत्रवधुओं का वर्णन है —

अब सुनि मालकोस परिवारा। तिय सुत वधू नाम बिस्तारा।

गौरी दुखिनी टोडी जानी। खंभावती ककुभ बखानी।

गौरी दुखिनी टोडी जानी। खंभावती ककुभ बखानी।

एते पंच रागिनी गाई। अब कहुं अष्ट पुत्र समुझाई।

मागरू मेवन सुघर बखानी। देव गंधार पूरिया जानी।

बलभ सहित औ मालिय गौरा। और एक कामोद है ओरा।

तिन्ह की नारि आठ हैं राखी। मालश्री औ चैत श्री भाषी।

एक धना श्री अरु सुघराई। दुर्गा भीम पलासिनी गाई।

गंधारी कमोदी सो है। माल कोस की जानि पतोहि।[3]

1- अवधविलास, पृ0 29 2- अवधविलास, पृ0 29

3- वही, पृ0 29

कवि ने हिंडोल राग परिवार का परिचय इस प्रकार किया है —

अब हिंडोल राग सुनि पनिता। राम करी मालवती मनित।

देव करीगुन करी आसावरि। तिन्ह के अष्ट पुत्रवसावरि।

मालव मारू अचल वसंत। लंका दहन धवल बलवंत।

नागधुनी अरू नव ब्यारा। राग हिंडोल के पुत्र पियारा।

तिन्ह की आठईं प्रान पियारी। लीलावती कौरवी नारी।

चैती औ इक धारावती। पूरवी बिपना अस्वारस्वती।

देवगरी इक है सुखदाई। अप अपने पति सौंमिलि गाई।[1]

इसके बाद दीपक परिवार का वर्णन है —

अब दीपक की रागिनी कहत हौं पंच बखानि।

गौड केदार विधुला गौड गूजरी जानि।

नट नारायन टंक अडाना। कल्लान सहित बिहागर जाना।

फिरोदस्त इक रंभ सर्वमंगल। मंगल अष्टक पुत्र जानु भल।

तिन्ह की आठ त्रिया सुनि लीजे। मंगल गूजरि इक मनीजे।

भूपाली आभीरी गाई। कजवती अरू ई मन पाई।

रूद्रानी अरू एक मनोहरि। आठ पतोहै सोह दीप धरि।[2]

अंत में रामश्री एवं व पक परिवार का उल्लेख इस प्रकार किया है —

अब श्री राग सुनौ सुखकारी। ताकी पंच कहत हौं नारी।

धवेदी सुहठी विविना। ठुमरि मारूी जानिय मित्रा।

आगे पुत्र सुनहु मन भाये। सावत सुरा राग सुहाये।

1- अवधविलास, पृ0 30 2- अवधविलास, पृ0 30

3- वही, पृ0

कोलाहल श्रीवदन बखाना। इक षटराग सकर्मन जाना।

संबोधन बडहंस सुभावा। अष्ट पुत्र श्रीराग के पावा।

अब पुनि लेहु बधू मनमानी। विजया एक धना श्री जानी।

कुभ क्षेम कल्यानी गाई। शशि रेखा सौराष्टरि पाई।

एक सारवा और सुधंगी। इह श्रीराग भयो बडवली।

मेघराग सब जग सुखदाई। तिन्ह की पंच त्रियां कही गाई।

सारंग देसी गौरा मानी। रति वल्लभा सु बिलावल रानी।

अष्ट हैं पूत सपूत बखाने। एक कला इक बानर आनें।

तिलक नटोरंग संकर भूषन। हैं इह और अलंभ अदूषन।

देसकार है एक भनीजै। अब तिन्ह की वनिता सुनि लीजै।

कबँधी सुधनाट औ नाट मंजरी जान।

नाट कबँधी नारि है कारनाट तिय आन।[1]

लालदास ने राग मिश्रण का भी वर्णन किया है —

सारंग मध्यम सुद्ध मलारहिं कीजिए।

करि हिंडोलहिं राग बिलावल लीजिए।

नट देव श्री सन्कर पूरिया गाइये।

गौर हाँ तब भैरव होइ राग प्रात ही गाइये।

गाट कै बडहंसहिं आनि मिलावना।

भैरव और मिलाइ कलाकुर गावना।

नाट सुद्ध औ टंक तहाँ पुनि आनिये।

गौरहाँ मलकोस होइ राग सुजाकि बखानिये।

---

1. अवधविलास, पृ0 30

लीलावति अरु पुरिया भैरव ललित मलोल।
पंचम आनि मिलाइये तब होइ राग हिंडोल।
केदारा सुघनाट औ लीजै सुघर कमोद।
महा विकट तब होत है दीपक राग विनोद।
गौड़ी औ बड़हंस गुनी मिलावै टंक सुर।
तब श्रीराग सुवंस होइ सुनत मोहै जगत।
सावंत और कल्यान होइ बसंत कमोद पुनि।
मेघराग तब जान घन बरसै हरषै जगत।[1]

लालदास ने गायन-विद्या में अवरोध दोषों का परिचय इस प्रकार दिया है —

प्रथम दोष गाइन महि एही। कंठहीन रोगी कुछ देही।
दुतिय दोष सुस्वरता नाहीं। राग भेद समुझे नहिं जाहीं।
बीना ताल बजाइ न जानै। समय राग के नहिं पहिचानै।
गर उठाइ गावै मुख बाई। तान जाय है अधिक दिखाई।
नयन एक ओर टक लाई। फेर फेर गर को झकराई।
नारि मरोरि ऊँच होइ गावै। गावत एक डरत शरमावै।
वदन मलीन बटोरत भौंहैं। लागत विष गावत होइ खोहैं।
गावत अटकि अटकि स्वर भंगा। त्योर चढ़ा श्वास चल अंगा।
बिना अलापनि कहै पुनि नाहीं। सभा मध्य गावै नहिं जाहीं।
काक अजास्वर होइ मिलासी। अरु मध्य ऊरध बरन सम्भाली।
गावत बहुत नाक स्वर धारी। सीस घुमावत हाथ पसारी।
उतरत बहुत कंप स्वर बानी। गुनि जन महिं दूषन ए जानी।

1- अवधविलास, पृ0 30-31।

अति ऊँचो अति छोट लघु अति मोटो अति छीन।

गाढ़ न जाने रस नहिं सो नृत कारी हीन।[1]

कवि लालदास ने नृत्य के भेद उसके अंग प्रत्यंगों का विस्तृत विवेचन अवधविलास में किया है। कवि का कथन है कि नाट्य, नृत्य और वित्त इसके तीन भेद हैं। नाट्य के दो, नृत्य के तीन एवं वित्त के तीन प्रकार होते हैं —

नर्त भेद सुनि तीनिहिं नाटि निर्त और वित्त।

वित्तौ तीन प्रकार है विषम विकट लघु वृत।

तांडव नटनं नाट्य इकु लास्य नर्तन नृत्य।

लाल नाम ए नाच के भिन्न भिन्न हैं कृत्य।

अंग हैं तीन नर्त के जाना। कोप विरस मिल भरु बखाना।

तांडव एवं लास्य नृत्य के साथ साथ कायिक, वाचिक, सात्विक एवं आहार्य अभिनय का उल्लेख कवि ने किया है —

कोमल अंग ललित मृदुताई। लासि नृत्य सो है सुखदाई।

भँवरी पुलत बहुत अधिकाई। चपल गति अति तांडव गाई।

भाव प्रगट करे अभिनय अंगा। कहियतु निर्त ताहि बहुरंगा।

अभिनय रहित जो अंग विक्षेपा। ताको नाम नृत कहि देपा।

आंगिक एक आहार्जक वाचिक। अभिनय भाव कहे इक सात्विक

अभिनय अर्थहि अभिमुख करने। चरन स्थान स्वयावन वरने।

अनवध निबध निर्त दोउ भा।।[illegible] अवध अलापनि निबध सु भाव।।[2]

शंकर ने हरि के सम्मुख नृत्य प्रस्तुत किया था। लालदास ने इसी सन्दर्भ में कुछ नृत्य गतियों का उल्लेख इस प्रकार किया है —

1- अवधविलास, पृ0 31 2- अवधविलास, पृ0 27

नव गति नृत्त कीन्ह त्रिपुरारी। मधुरी गति भाव बिचारी।

हय लीलागज गामिनी अयनी। हंसी एक मृगी कुंडा देयनी।

कुक्कुटी ढंकिनी गति अति राजी। द्वादस उडप भांति सिव साजी।

तिन्हके नाम कहौं सुन लेहू। कठिन भेद गुनि जनमन देहू।

नेरि उडप इक कर्नी है नेरी। त्रिय मत्र इक नम्र रचेरी।

बारमान मुरू रटमुरू एका। कुट्टन लावनी करतरी टेका।

तुल्ह प्रसर ए उडप अनूपा। पुनि बारह धुव आह निरूपा।

लाग एक विडु लाग कैलीन्हा। द्वादस निर्त और हर कीन्हा।

सब निर्त त्रिवर्तक निर्तौं। गति है निर्त कुचाडक नृत्तौ।

चंडु निर्त्य औ काल है चारी। कहरि देसी नृत्त जु चारी।

देखौ ताण्डव चंडु इक नाचे। कलप पेरूनी गौडली राचे।[1]

कवि ने नृत्य सम्बन्धी दस करणों की भी चर्चा की है —

मुख लोचन सिर कटि हृदय ग्रीवा हस्ताहि जान।

चरन जानु उर तल कहि ए दस करन बखानि।[2]

इसके साथ ही लालदास ने उक्त सभी स्थानों या अंगों की क्रियाओं की संख्या का उल्लेख किया है —

जेहि जेहि अंग क्रिया होइ जेती। निर्तहि करत कहत हैं तेती।

पद के भेद कहे अठ सुहाए। भ्रू लक्षन सिव सात बताए।

सिर करि भाव पंचदस कीये। सीस ग्रीव गति एकहि लीये।

कटि के भाव पंच हैं सोई। हस्तक भाव पचीसहि होई।

हृदय तीन जानु के दोई। नर्तक भाव करे सब कोई।

1- अश्वविलास, पृ० 27

2- वही, पृ० 28

नव रस नैन कहत सतुराई। भाव कटाछि अनेकन गाई।
दृष्टि भेद छत्तीस हैं लेखो। जाने गुनी ग्रन्थ जिन्ह देखो।
हसतक होइ भाँति के भाखा। संजुत एक असंजुत राखा।
संजुत तेरह भाव बतावै। गति चौबीस असंजुत ल्यावै।
चारी होत छबीसी जासी। भूमि अकास नाम दोइ भाँति।
चौवन भूमि हैं भेद प्रकासा। चारी होइ बत्तीस अकासा।[1]

सौन्दर्य वर्णन :—

चाक्षुष प्रत्यक्ष करण से रूप तरंग द्रष्टा पर प्रभाव डालती है। सुन्दर और मधुर लगने वाले रूप से भिन्न सौन्दर्य और माधुर्य का कोई अस्तित्व नहीं है। सौन्दर्यबोध का मूल आधार वर्णित वस्तु का मन में आना है। इस मानसिक रूप विधान का नाम संभावना या कल्पना है। आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "मन के भीतर यह रूप विधान दो तरह का होता है। या तो यह कभी प्रत्यक्ष देखी हुई वस्तुओं का ज्यों का त्यों प्रतिबिम्बित होता है, अथवा प्रत्यक्ष देखे हुए पदार्थों के रूप, रंग गति आदि के आधार पर खड़ा हुआ नया वस्तु व्यापार विधान।"[2]
वस्तुतः अनन्यव्यक्त वस्तु के गुण को ही सौन्दर्य कहते हैं। उसका अधिष्ठान शरीर है। लालदास ने पुरुष एवं स्त्री सौन्दर्य का विस्तृत वर्णन किया है।

पुरुष सौन्दर्य :—

लालदास का पुरुष सौन्दर्य बोध शास्त्रीय लक्षणों पर आधारित है। उनके अनुसार बत्तीस लक्षणों से युक्त पुरुष ही मनमोहक होता है। ये लक्षण इस प्रकार हैं — लच्छन पुरुष बत्तीस बखाना। देखि देखि सब के मन माना।

1- अवधविलास, पृ0 28
2- रसमीमांसा, पृ0 260

दीरघ पंच चार लघु होई। सूक्ष्म पंच उन्नति षट होई।

रक्त सात पुनि होइ गंभीरा। विस्तारिन मल तीन सरीरा।

बाहु नैन नासा कुच अन्तर। दीरघ पंच सुहोइ सुखी नर।

ग्रीव कर्ण जंघा अरु पृष्ठी। चारि भले लघु पूजिये दृष्टी।

अंगुलि पर्व दंत नख केसा। त्वक सूक्ष्म ए पंच नरेसा।

नासा भाल हृदय कंध बखाना। षट पुष्टि नख ऊँच बखाना।

हाथ पांव नख नैन ऊ तालु। अधर जीभ ए रक्त रसालु।

स्वर नाभी गंभीर भलाही। उर सिर कटि विस्तारिन चाही।

लालदास ने कुछ अंगों का सौन्दर्य वर्णन भी किया है —

(1) चरणनख : पुनि निहारि देखे नख पांति। रवि समान मनि गन की भांती।

(2) जंघा — जंघ नील मनि खंभ सुहाये। (अवधविलास, पृ0 210)

(3) कटि — कटि किंकिनी कटि ऊपर राजे। (वही, 210)

(4) उदर — उदर अनूप त्रिवली युत देखा। मध्य रोम राजि की रेखा। (वही, 210)

(5) नाभि — ललित नाभि गंभीर सुहानी। (वही, 210)

(6) वक्षस्थल — वक्षस्थल अपूर विशाल (वही, पृ0 210)

(7) भुजा — लंबी भुजा ललित मन हरनी। (वही, 210)

(8) चिबुक — देखे चिबुक चारु सुखकारी। (वही, 210)

(9) अधर — अधर दंत नासा मन हारी। (वही, 210)

(10) नेत्र — आछे बडे नैन रस भरे। वरुनी वलित ललित रतनारे। (वही, 210)

(11) भौंह — बंकि भौंह धनुष समाना। (वही, पृ0 210)

(12) ललाट — ललित ललाट विसाल विराजे। (वही, पृ0 210)

<u>नारी सौन्दर्य</u> :— नारी सौन्दर्य चित्रण का तात्पर्य है उसके अवयवों की रेखाओं की स्पष्टता तथा उसकी शोभा कान्ति इत्यादि का वर्णन। नारी शरीर में यौवनागम

के समय से रेखाओं की स्पष्टता प्रारम्भ होती है। रस का पानिप वयःसन्धिकाल से ही चमकने लगता है जिसका पूर्ण उत्कर्ष अंगों के पूर्ण आकार ग्रहण करने में होता है। लालचदास ने सामुद्रिक शास्त्र और कामशास्त्र के आधार पर नारी अंगों का आकार निर्धारित किया है। परम्परित उपमानों का ग्रहण हुआ है। प्रभा, कान्ति, दीप्ति, अंगप्रत्यंग के यथोचित संगठन से उत्पन्न सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। मांग, बेनी, तिलक, रचना, बिन्दी नैन, नासिका, मुख, कण्ठ, उरोज, हाथ कटि इत्यादि अंगों का उपमानों से वर्णन देखिए —

बेनी रचै विचित्र बिसाला। चंदन अंब चढत जनु व्याला।
बाँधति केस समेटि सुढारी
पुनि कर माँग सीस बिच भासा। जनु कुवाँर मग मध्य अकासा।
मोती माँग सीस पर साजे। मनहुँ नखत आकास बिराजे।
बेनी फूल सीस फूल सोहैं। मनु मनि नागन्ह सिर पर सोहैं।
केसन्ह बीच फूल राखे काढे मनहुँ जमुन जल फेन सुबाढे।
केसरि आड़ जराय को टीका। मोहन मंत्र लिखे जनु नीका।
बिन्दु सिन्दूर भृकुटि बिच राजे। मनु अहि सिसु दोउ चाहत बाजे।
नैन मीन दल कुंज नवीने। अंजन दै खंजन सम कीने।
कंठन्ह पोति देति छवि कैसी। मनु कपोत रेख गर जैसी।
कानन्ह बीर जराउ छबीली। सोभा मनहु आइ सब मीली।
नथ नक बेसरि नाकन्ह सोही। मनु सुक रतन चुगत मन मोही।
पान चबात लगत अरु नाई। परत न दंत रतन बिलगाई।
अंगिया कसत उरोज रसाला। पहिरे हार मनोहर माला।
× × × ×
मेंहदी मंडित भुज रंगीने। सोहत नख जनु लाल नगीने।
कटि तटि छुद्र घंटिका कीना। मनहु काम बजाउत बीना।
× × × ×
कहुँ मुख पर तिल सोहत लोना। कहुँ चुना कहुँ तिलक डिठौना।[1]

1- अवधविलास, पृ० 132-33

सप्तम अध्याय

अन्धविश्वास की झलक

अवध-विलास की भाषा

भावात्मक अनुभूतियाँ जब वाणी के कलात्मक सौन्दर्य से ओत-प्रोत होकर संगीत की सरस लय, या गति यति के साथ अभिव्यक्त होती हैं तब उस अभिव्यक्ति को काव्य का अभिव्यक्ति पक्ष या कला पक्ष कहते हैं। कवि में जितनी गहन अनुभूति होगी अभिव्यक्ति पक्ष भी उतना ही उत्कृष्ट होगा इसके लिए कवि अनेक उपकरणों का सहारा लेता है। भाषा, छन्द, अलंकार, गुण इत्यादि विवेचन कलापक्ष के अन्तर्गत होते है।

भाषा ही मौन भावों को मुखरित करती है। यह ही कवि की प्रतिभा का उद्योतन कराती है। भाषा ही कवि के संचित ज्ञान, राग की अभिव्यंजना शक्ति है। यह ऐसी चतुर चितेरी है, जो जीवन की मार्मिक अनुभूतियों की रागात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करती है।

प्रस्तुत अध्याय में साहित्य-शास्त्रीय मर्यादाओं को ध्यान में रखकर अवध-विलास के भाषा-सौष्ठव पर विचार करेंगे। इसमें भाषा-विज्ञान के सिद्धान्तों की व्यावहारिक व्याख्या नहीं हो रही है वरन् कवि का शब्द भण्डार, अवधी व्याकरण की संक्षिप्त रूपरेखा, मुहावरे, लोकोक्तियाँ तथा अवध-विलास की भाषागत विशेषतायें उल्लिखित होगी।

अवधविलास में शब्द भण्डार :-

सार्थक शब्दों के प्रयोग में कवि जितना पटु होगा, प्रेषणीयता भी तदनुरूप सामर्थ्यवान् होगी। भाषा में उसके शब्द समूह का सबसे अधिक महत्व होता है। यह शब्द समूह तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज शब्दों से बनता है।

<u>तत्सम शब्द</u> :-

लल्लूलाल ने अपनी भाषा को साहित्यिक गरिमा प्रदान करने हेतु तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। कहीं-कहीं शुद्ध संस्कृत के शब्द विभक्ति व प्रत्यय युक्त प्रयुक्त हैं कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

रुचि, अतः पुत्र, तत्र, उक्तः, तत्रत्याः, पुत्र त्वा, को सि, तिष्ठ, ऊर्ध्व, अद्य, क्व यास्यसि, इति पृष्टः, गतः, अस्ति, पठ, केन प्रेषित' अस्य, यस्य तस्य, कस्य, केन कर्मणा, समीचीनं, आगमिष्यसि, कोऽहं, गच्छ, आगम्यते, आगतोऽस्मि, स्थिता सि, स्थितास्मि, स्थातव्यं, उत्तिष्ठ, गम्यतां, गन्तव्यं, जगौ, गत, गतौ, गताः, ब्रूहि, जगाद, श्रुतवान्, किमर्थं, क्वचित्, किंचित्, त्वं, मम, एतस्य, दृष्ट, कस्य, इदं, अयं, कथय, गृहाण, ददातु, दा ददौ, समानय, इमे, निर्गतः, स्थापितः, गृहीत्वा, गतः, गतोऽवतीति, प्रयातु, अहम्, मम, त्वं, मदीया, एनं यदि, सदृशीं कुशलम्, सम्यक्, नास्ति, बाह्यः, अग्रे, पश्चात् पुरः, निरीक्ष्य, अभ्यंतर, दूरं त लग्नं, तरति, मग्नं, उन्नत, निम्न, वक्र, निषेवन, पलायन, तिष्ठन्, क्षण, बहिर्गतं, पतन्ति, स्वप्न, पतति, राजते, शृणोति, प्राप्त, लब्धं, नीयतां, गच्छति गृहीत्वा, स्वल्प, सम्पन्नं, मुक्तं, गोपय, अभिमुख, उन्मुख, वसन, परिशोभित, कूपे, पीत्वा, रक्तमे, वेतान, महिषी, गो, वृषभ, अश्व, वारण, करिणी, रासभ, गृह, प्रसाद, उदय, रुदन, कथते, अव्यय, वृत्ति, प्रचलित, वीथिका, वीथि, भार्या, दारा, कपाटा, द्विदल, पूर्ण, आज्य, स्नेह, भाजन, वपु, मूर्ख, विद्वान्, पारणीत को पि, अतीत, पराजय, विजित, आलिंगन, वेणि, चपल, उष्ण, तूर्ण, उभय, भवतां तादृश, यादृश, अन्नादि, पुष्पादि, अय, इमं, वाद्य, हेम, शकट, लांगल, अष्ट शत्या, पुष्प, काष्ठ, मार्जन, स्थापितं, आमुष्मि, अतिकालो भवति, प्रचलित न पंथा, किमपि भोक्तव्यं एका, शुष्क, स्थित रात्रौ उपविश्य गम्यतां, नो रक्षये, कस्मात्, तस्मात् यत्कमाप्यशागमनं बभूव, कन्यो सि, तत्र अस्माकं कथोपकथनं, ईदृशी, यादृशी, किं

कृश, स्थूल, कुब्ज, पुरःपाद, ढीत, छिन्न, विभीत, राज्य कार्य, मनसि हृदये अपि, स्वामि, मन्यते, यदा, कदा, यद्यपि, तदा, आर्त, अतिक्रमाः, वीर, तक्र, मुक्त, वृद्ध, स्कन्ध, निपुण, कूर्त, क्रियते, या, सा, क्वा, इयं, किं किं भूर्त, प्रश्न, गोधूम, भाष, प्रस्तरण, उड्डीयमान, स्थाली, वराट, ग्राहक, पार-स्तरण, आच्छादन, केन प्रकारेण कर्त, प्रातः, कपोल, नक्ष्य, प्रार्थित, मैत्र्य, भागिनेया सुचितका, मौक्तिक, शुक, कं करोमि, मक्षिका, सूचिका, विस्मरण, इष्टिका, मृत्तिका दन्त, भवामि, पाथेय, दास्यति, कथयिष्यति, सकृत, लोष्ठ, जाय, वराटिका, हारिद्रा हरीतकी, नित्यानित्य, शुष्क, आर्द्र, कषण, स्नुषा, उष्णीष।

देशज :—

ओर, ठौर, चूक, भैंस, ब्यावारि, भुलानं, ठाढे, नगाड़ा, लहुर, मुड़फन्ड, मुहराना, कुली, गोड़, तुतराई, कोढी, ओढी, चींटी, च्यूंटी, बाँडो, उजार, ढुढुवा, डीथी, ठूँठ, विरावत, मूँड, दुरबाये, छिलगनो, नदवा, भतारि ठूसर, अटुके, हल।

तद्भव शब्द :—

गनपति, परमान, अठत, अचल, अचरज, हाट, चांद, काठ, भात, नाच, पिय, निउ, इक, अमिय, सुभाव, बास, गाँव, ऊजड़, छुआ, पितु, पूत, दूब, छेम, सगे, पतोहू, मोर, जोबन, चौक, औसर, लखन, जोर, साख, दूलह पूरब, नैन, पोथी, ओठ, बौंड, साक, अच्छर, असगुन, घी, दूबेस, सिंगार, बीच, बाट, पंगति, तेरहुति, तीन, माघ, दूबर, पूरन, निपुन, पतवा, भँवर, रिसि, सोरह, नखत, अन्हाय, पुरोहित, जुगुति, भसम, मसान, दूध, पलंगा, बायें, सनेह, पकवाना, आँख बांध, ईटि, नींद, पुहुप, निछावर, दछिना, जुआँ कूकुर, पनही, प्रसन, बिपन, रतन, उघारै, मच्छ, रितु, सपरस, कुसम, सूरज.

जती, बल, पीठ, बीरज, भगत, भीख, दूवीस, अगिन, सीस, मूस, कलस, हाट, पोथी, सुमिरन।

विदेशज शब्द :-

बजाने, अरबी, ख्याल, भुलानें, हुशयार, हजार, फूल फुलेल, बुरे चुगली, ठिकाना, बाजार, महल, आसमान, तमाशा, प्यारी, हकीकत, चूक, भुलाने दुश्मन, असवार, अदब, हजूर, गुस्सा, तुफंग, तुर्क, ताजी, [illegible], सिकदार चौगान, खिलौना, छुरी, मजब, ढाल, मुजरा, दस्ती, कमर, कुश्ती, चाकर, दीवान, फौजदार, सरदार, सिकदार, अमीन, कानूनगो, कुतवाल, पोतदार, मुंशी, किताब, कारखाना, दरोगा, मुकद्दम, अहदी, जागीर, पयादे, बेगारी, खलीफ, बंदीखाना, जवान, जासूस, तहसीलदार, परगना, मंडी, वकील, काजी सिपाही, [illegible], पेशदस्त, मुसाहिब, साहब, इनायत, खबर, नवीस, कचेहरी, दाग अरज, चौधरी, महले, हासिल, करारा, सरदार, चोबदार, परवाना, गुजरा, नेकी बदी, परवाह, उमदा, सराय, तालाब, कनात, तम्बू, रंग, फारसी, सिरताज, गरीब, लायक, मुस्तफा, मुशर्रफ हासिल, नौबत, दरबान, गुजर, खवास, खोज, दब, मेवा, पेंच, नजर, कटारी, चौगाना, दाग, निसाना, मौज, सलाम, कैद लश्कर।

ध्वन्यात्मक शब्द :-

बहरानी, दरसने, झलकत-झलकत, ठट्ठा, धेड़-धेड़, घुंग-घुंग, खनखेना घहराने, सहराने, झलके, किलकि-किलकि, कटकटाइ, भभरानें, हलचलान।

मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ :-

१- ब्यौहार पीर बंध नहिं पाई। (अवधविलास, पृ० 5)

२- पार न पाये लाल। (वही, पृ० 5)

3- बबना बंद गह्यो वह जैसे। (अवधविलास, पृ0 7)

4- जैसे लोह लोह सों काटे। (वही, पृ0 15)

5- स्वायंभू लई सीस चढ़ाई। (वही, पृ0 18)

6- सबर साहत सीस धार लीन्हा। (वही, पृ0 19)

7- फूटेउ असमाना। (वही, पृ0 33)

8- पाप कर्म नहिं हमें कराई। (पृ0 41)

9- बिन्दु आधक ते मूंड चढ़ाये। (पृ0 45)

10- तजत बालक बले न अंग। घर घर ढूंढहिं मूसर चंद। (पृ0 46)

11- रंचक मीन मेष गनि देंही। (पृ0 46)

12- मानहुं नैन लिंड के बोले। (वही, पृ0 46)

13- टूटे तुक धूरि उधिरानी। (वही, पृ0 48)

14- रावन हाथ कूक पर फेरा (वही, पृ0 49)

15- छांडेउ नाच नचाय खिझायो। (पृ0 50)

16- सिर पर बैठि रह्यो है कोई। वही, पृ0 52

17- रंगे सियार (पृ0 72)

18- नैनन्ह को काजर किये कानन्ह को दये लोन (पृ0 92)

अवध विलास में प्रयुक्त सूक्तियाँ

1 जे बिगरे परकाज सुधारें। ते अपनों परलोक उबारें। (पृ0 4)

2- बानी गुन सुनबे करें पंडित करें विचार

मूरख लाल भले नहीं झगरा करें कि मार। (पृ0 4)

3- गुन को निंदै निर्गुनी जोगहि जुवती जाति।

पूत को निंदै भंडुवा चोर चांदनी राति। (पृ0 5)

4- चंदन के संगति बन मांही। नींब पलास भेद रहे नाहीं।(अवध०12)

5- जुवा चोरी मधि मद्य निन्दा औ पर नारि।

मिथ्या तामस लाल कहि आठउ अशुभ निवारि।(वही, पृ० 15)

6- लोभी जग धन मय लिखै कामी तिय मय लेख।

लाल धीर परमारथी नारायन मय देख।(वही, पृ० 42)

7- नृपति भिखारी स्वान औ कुल की बढहिं न बाद।

वायस कुर्कट काक ये सुख मानै कुल आदि।(वही, पृ० 51)

8- गीत वादि नाचत पढ़त जद्ध्याव ससुरारि।

लाल अहार विवहार मांहि लज्जा आठि निवारि।(वही, पृ०62)

9- कूवाँ मई यो मेंढुक कहै समुद की बात।

सुनत सराहत भेक बक लाल हँसै अनखात।(वही, पृ० 75)

10- गजमुक्ता औ सर्पमनि लाल बाघनख सोई।

वीन नारि अरु नक्र रद जीवत लहै न कोइ।(पृ०79)

11- जा भोगी जोगी जती देव असुर सुर नारि।

जा घट बिरहा संचरै सो नहिं सकै सँभारि।(पृ०88)

12- तीर तुपक तलवारि के घाव सहै सब कोइ।

बिरह बान जाके लगे लाल जिये नहिं सोइ।(पृ०88)

13- नाम संतुष्ट देवता पंडित तुष्टा वाक।

लाल सती संतुष्ट सत भूखा भोजन पाक।(पृ०93)

14- धर्म नाहिन उपकार सम हित गुरु सम नहिं आप।

सुख न लाल संतोष सम नाहिं झूठ सम पाप।(पृ० 100)

15- जोइ सुख है सोइ स्वर्ग है, दुख है नर्क अपार।

पर पीरा सोइ पाप है पुन्य है पर उपकार।(पृ०104)

16- मंत्र मैथुन औषधी दान मान अपमान।
मर्म द्रव्य गृह छिद्र ए प्रगट न लाल बखान।(पृ0104)

17- सज्जन दुर्जन की पकर जीवत मरत न चाल।
जरे बरे पर जेवरी ऐंठनि तजति न लाल।(पृ0106)

18- प्रेम पंथ खडि की धारा। चलत टिकत बिरला संसारा। (106)

19- जुवा पुरुष बनिता जुवा देखे सुन्दर अंग।
लाल कहो कहाँ लौ रहै घीव अरु अग्नि के संग(111)

20- बनित बसन सुगंध औ भोजन गीत जु पान।
मंदिर बाजी लाल कहि आठ भोग ये जान।(पृ0139)

21- साहिब सेवक नारि नर जती सती सुख दास।
कुदरत को देखि के लाल सबाह सलवात।(141)

22- रस अनित जोबन अनित लाल अनित धन धाम।
देह अनित सुख दुख अनित एक सत्य हैं राम।(पृ0148)

23- असंतोष तें विप्रनाश संतोषी छय राज।
नासे निलज कुलच्छना गनिका नासे लाज।(पृ0165)

24- विप्र चोर कन्या अधम जती भ्रष्ट गऊ नारि।
एते सत्रु अमारने दीजे लाल निवारि।(पृ0176)

25- पाग चलनि चितवनि कहनि अंकुश भौंहें जुद्ध।
ऐते ये टेढे भले लाल भले मन सुद्ध।(पृ0190)

26- कुछ कलह मैथुन सयन तृष्णा भोजन संच।
घटे घटाये लाल ये बढ़े बढ़ाये पंच।(पृ0208)

27- कुदरत अरु धन विष विरह वियोग विहाल।
ये लागे नाहिं जानिये जब लग गिरे न लाल।(पृ0231)

28- बात पित्त भरत जुवा बृथा पुत्र रखपाल।
कबहु न होत स्वतंत्रता त्रिय परबस है लाल।(पृ0 235)

29- गुरु की शिष्य पति की त्रिया पुत्र पिता नहिं मान।
लाल जो आज्ञा ना करै कष्ट कियो तिन्ह जान।(पृ0 260)

30- कहे सुने फूटि जात है चित को लाल सुभाव।
रस गोरस संग घात के बिगरै लगै कसाय।(पृ0262)

31- बुद्धि ज्ञान बल रूप तन रंगा। ये सब जात है नारि प्रसंगा।(पृ0202)

32- ध्यान समाधि अकेलहि होई पोथी पढ़त चाहिए दोई।
गावत गीत तीन होइ रंगा। फिरत विदेस चारि भल संगा।
पंच सात खेती मिलि करना। बहुत भले संग्राम बरना।(पृ0269)

<u>संख्यावाची शब्दों से निर्मित समुच्चयात्मक शब्द</u>

त्रिदेव - ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तहँ सोहैं।(पृ0128)

त्रिगुण- सत रज तम युत गुण प्रकारा।(213)

त्रिवायु त्रिविध पवन सुख बहत निरंतर।सीतल मंद सुगंधा सुखकर।(97)

चतुर्वेद- रिग यजु साम अथर्वन वेदा।(184)

चतुर्युग- सतयुग लक्ष बरष नर जीवे त्रेता दस हजार जल पीवे।
द्वापर एक हजार रहाई। कलियुग आयु सवासर पाई।(38)

चतुर्वर्ण- चार वर्ण के कर्म है भाषे।(16)

पंचगव्य - गोबर मूत्र गरु के होई। दूध घीव दधि गवि कहि सोई।(138)

पंचामृत - दूध घीव दधि मधु गुड़ लाहिए।अमृत पंच नाम ए कहिए।(138)

षडंग- शिक्षा जोतिष कल्प दृढ़ाये। निरुक्त छंद व्याकरन पढ़ाये।(183)

षटकाव्य- रघु कुमार औ मेघदूत नैषध माघ किरात।(190)

षडरस - अम्ल कटुक औ तिक्त रस मधुर कषाय जु लोन।(80)

षड्ऋतु सरद सिसिर रितु पुनि हिमवंता।ग्रीषम बरषा और बसंता।(160)

सप्तस्वर- षड्ज रिषभ गंधार निषादा। मध्यम पंचम धैवत नादा।(26)

अष्टभोग- बनिता बसन सुगंध औ भोजन गीत जु पान।
मंदिर बाजी सात कहि आठ भोग ए जान।(139)

अष्टांगयोग- जम अरु नियम जो प्रथमहिं करना। आसन प्रनायामहिं करना।
प्रत्याहार धारना धारै। पुन धार ध्यान समाधि बिचारा।(205)

नवभक्ति- श्रवन कीर्तन बिष्नु को सुमिरन सेवन करन।
अर्चन बंदन दास सखि आत्म समरपन करन।(5)

नवरस- करुना हास सिंगार भय अद्भुत बीर सकाम।
रुद्र बिभत्स औ शान्त हैं, ये नव रस के नाम।(1)

नवगुन - रिजु तपस्वी संतुष्ट सम दान्त दाति दयाल।
जित इन्द्रिय औ सत्यता ए नवगुन कहे लाल।(98)

नवनिधि- संख पद्म कच्छप मकर खर्व औ नील मुकुन्द।
ए नव निधि के नाम हैं महापद्म अरु कुन्द।(95)

एकादशरुद्र- पशुपति भैरव रुद्र बखाना। शिव बिरेस अघोरहि जाना।
पुनि बिस्वेस त्रिमयंक कहिये। और कपर्दी सूलिन लहिये।
इक ईसान नाम है पाये। ग्यारह रुद्र पुरानन्ह गाये।(169)

चतुर्दशलोक- भुवह स्वमहर्जन लोका। तप औ सत्य ए अर्ध ओका।
तल अरु वितल सुतल जे आही। और तलातल महतल आही।
पुन पाताल रसातल लहिए। चौदह लोक नाम ए कहिए।(160)

चतुर्दशविद्या- चारवेद षटअंग औ ताल पुरान बखान।
न्याय मीमांसा धर्म ये चौदह बिद्या जान।(90)
ब्रह्मज्ञान स्वर बैद रसायन। जोतिष वेद व्याकरन पढ़ायन।
धनुषबान जलतरन सधाये। कावताई पिंगल मत पाये।
बोल काव्य बाहन असवारी। नट पिट कौध चातुरी धारी।(189)

चतुर्दश रत्न- अम्धेनु गजमनि अरु घोरा। अमृत कि ससि धनुष कठोरा।

पारिजात अरु सब धनंतरि। चिन्तामनि मदिरा तननंतरि।

तेरह रतन लिये सब धारी। अरु लक्ष्मी लई बाहनि हमारी।(78)

षोडश शृंगार- मज्जन बसन अरु अंजन तिलक चारु चंदन पुहुपमाल हार हिये जानिये।

कुंडल तमोल नक बेसरि बिराजमान अंगिया अनूप कर कंकनहि बानिये।

जे हार बलय कटि किंकनी नूपुर धुनि बेनी औ बिसाल सीस क्याल शेषीठानिये

षोडशोपचार- अवाहन असन जो बरना। अर्घ पाद्य मधुपर्क अचमना।

पुनि स्नान बसन पहिरावन। जजोपवीत गंध पुहुप चढावन।

धूप दीप नैवेद्य प्रदछिन। रुक बिसर्जन षोडस लछन।(206)

चौरासीलख योनियाँ -

नव लख जीव जोनि जल माँही। दस लख जोनि पंछि उड जाहीं।

तीस लाख पसु जोनि बखानी। चारि लाख बिधि मनुसहि जानी।(

अवधविलास की भाषा का व्याकरणिक अध्ययन

कहना नहीं होगा कि तुलसीदास ने अवधी भाषा को बहुविधि रूप से समृद्ध किया है। ब्रज भाषा के अत्यधिक प्रभाव के कारण अवधी का विकास अपेक्षित रूप में नहीं पाया था। इस दिशा में लालदास का योगदान विस्मृत नहीं किया जा सकता है। जायसी अवधी यदि पूर्वीपन लिए हुए है तो तुलसी की अवधी संस्कृत युक्त है। लालदास ने मध्यममार्ग अपनाया है। उनकी अवधी का अध्ययन करने के लिए अति संक्षेप में उसका व्याकरण प्रस्तुत किया जा रहा है -

(1)संज्ञा - अवधविलास में प्राप्त प्रतिपादिकों के अन्त्य स्वर इस प्रकार है -

अ	तात, रतन, अवध, नारद, जाप, होम, घर, ग्रन्थ, मानसरोवर, नै, तिरद, राक्षस, दूत, लाल, रावन, ठाकुर, असुर, बरद, बाग।

अ- राजा अयोध्या, संध्या, कुमारा, गोपिका, पलना, मंदिरा, ब्रह्मा, लंका, वृन्दा, चन्द्रमा, कन्या, पिता, पंडित, जुवा, दूलहा, सुआ,

इ- अग्नि, अलि, मुकुति, नारि, धरनि, भगति, गुसाईं, बिप्र, हरि, पुलकित, गाइ(गाय)।

ई- पोथी, तुलसी, सरस्वती, भवानी, आरती, पानी, नेगी, नारी, पृथ्वी, गुहनी, केकी, जोगी, लराई, घोडी, भामनी, बिजुरी।

उ- बधु, साधु, गुरु, बिष्नु, कुबेरु, धनु, रितु, राउ, रघु।

ऊ- गुरू, गुरू गऊ।

संज्ञा शब्दों का अन्त्य छन्दानुरोध के कारण दीर्घ स्वर ह्रस्व और ह्रस्व दीर्घ होता रहता है। स्थान स्थलों में दीर्घ बनाने के लिए 'वा' जोड़ा गया है -

(1) फुलवा लेन कतहुँ नहिं जाइब।(पृ0 231)

<u>सर्वनाम</u> :— अवधविलास में सर्वनामों का रूप इस प्रकार है —

<u>(1) पुरुषवाचक सर्वनाम</u> :—

<u>(अ) उत्तमपुरुष एकवचन</u> :—

1- कहत है मैं आयसु जो पाऊँ।(203)

2- तो कुबेर सौं बिप्र कहाऊँ। पृ0 46

3- अब मोहिं देत दुख भरथा।(203)

4- तो कत मोर गर्भ में आयो।(255)

5- अब सुनि लेहु बीनती मोरी।(पृ07)

6- मरे तो जीवन धन गई।(225)

7- पुनि मेरी मूरखता केती।(7)

8- देखहु मात ब्याल अब मेरा।(49)

9- सब संभार करो अब मेरो।(49)

10- तब मोहि जानि बूझ पियो तेरो।(49)

1- हम जीयत जेतहु घर जाहू।(204)

2- नाह हमहिं लागी डह जोरी।(43)

3- हमहूं यह चाहत रहे मिले कहूं जग।(46)

4- हमरे मुये कहूं पुनि जाहू(पृ0204)

5- मय देखी हमरी कैमनाई।(पृ0 46)

6- अब कछु कह्यो हमारो मानी।(पृ0 15)

7- ते हमार लरिका तन चाहौ।(पृ046)

8- जाउं जहां विधि पिता हमारा।(पृ0 23)

9- हमरेउ राम हिडाब कियेई।(पृ057)

मध्यमपुरुष :--

1- तुम रानी सिधी ए ठकुरानी।(पृ0 225)

2- तोहि पाई मैं भई सनाथा।(पृ0 204)

3- मैं हौं भजत करौं तेही।(पृ0 55)

4- जो तुम्हरे मनमाना तेता।(पृ0 41)

5- अब जे तुमहिं छरी हम दीना।(पृ0 43)

6- नाना तोर सुमाली नामा।(पृ0 49)

7- कहा भये भुज बीस तिहारे।(पृ0 49)

8- तातें तुमहूं नृपति जस लेहू।(पृ0 225)

अन्यपुरुष :--

1- ऊ चाव करन तप लाये।(पृ0 15)

2- गई वह कहे जहां तहं जाई।(पृ0 53)

निजवाचक सर्वनाम :-

1- कछ न अवाईं अपने संग लाईं। (पृ0 204)

2- आपहुं तरे पित्र कुल तारे। (पृ0 204)

3- करता आपु आन सिर देईं। (पृ0 43)

4- आपुहिं बड़े भये सुठि जाने। पृ0 45)

5- अपनेइ बरु न मेघ जल बरषे। (पृ0 59)

निश्चयवाचक सर्वनाम :-

1- येहु सब जात है नारि प्रसंगा। (पृ0 202)

2- अहो पुत्र इह हर घर जानो। (पृ0 19)

3- जहाँ मुनि तहाँ इन्ह को भय नाहीं। पृ0226)

4- इनकर रकत धरहिं आनि आवै। (पृ0 267)

5- इन्ह के जनम आहि यहि कारन। (पृ0 267)

6- इन्हहु के जनम कहे समुझाईं। (पृ0 226)

7- तब ओहि बैर आनि भगवाना। (पृ0 54)

8- भक्तन्ह कहँ है भक्त यह। (पृ0 2)

9- इन नवधाहि जाको जोइ भावै। (पृ07)

अनिश्चयवाचक :-

1- कोउ कहू की बात सुनि। (पृ0 1)

2- कौनउ वस्तु जो कहूँ छिराई। (पृ09)

सम्बन्धवाचक :-

1- भक्त काज जे वपु धरे। (पृ01)

2- अस ध्यान जेहि देइ? (पृ03)

3- प्रनऊँ ताहि जगत जिन्ह जाया। (पृ03)

4- जिन्हके हिये राम विश्रामा। (पृ04)

5- जाके करत मिटत संसारा। (पृ05)

6- प्रेम सहित गावै नर जोई। (पृ06)

7- जोग करिये कोई कर्म दृढ़ावे। (पृ015)

8- जाको पुत्र देइ जो कोई। (पृ017)

9- तिनको लाल विशेष तैं। (पृ02)

10- तिन्ह सो विनय करौं कर जोरी। (पृ04)

11- ते अपनो पर लोक उधारे। (पृ04)

12- स्थान समान तिन्हाड करि जानी। (पृ04)

13- ते उबरे जेह जाइ कुमाने। (पृ012)

14- ताके नाम कमल इक नामा। (पृ018)

प्रश्नवाचक :—

1- कवनऊ वस्तु जो कहूं छिपाई। (पृ09)

2- कवन बात कैसे करि आई। (पृ045)

3- सब गुन मय किन राखिये। (पृ02)

परसर्ग :— अवधविलास में प्राप्त परसर्गों का विवरण इस प्रकार है —

कर्म सम्प्रदान :—

1- भक्तन्ह कहँ है शक्ति यह। (पृ02)

2- मात पिता को लगत सुहाई। (पृ04)

3- भरतहिं कौं गोरख समुझाये। (पृ012)

4- भिन्न भिन्न तिन्ह के करि राखे। (पृ016)

5- चित्रगुप्त सब कर्मनि लिखई। (पृ0 197)

करण अपादान :—

1- राम रंग रति राम सौं। (पृ01)

2- जैसे लोह लोह सौं काटै। (पृ015)

3- सुभ ते होइ असुभ कर नासा। (पृ015)

4- राजनीति भय ते सब साँधे। (पृ020)

5- करौं न राम हिये तें न्यारे। (पृ0226)

सम्बन्ध :-

1- गावहिं सीता राम की सुंदर कथा रसाल।(पृ0 1)

2- लाल स्वच्छ त्रैलोक को दर्पन अवधविलास।(पृ01)

3- बुले बजाने राम के।(पृ01)

4- सूत्रधार की संगति पाई।(पृ011)

5- रहति नन्दनी मुनि के घरई।(पृ023)

6- मारे दूत भूत जम केरे।(पृ051)

अधिकरण :-

1- जस प्रभुता जग माहिं बड़ै।(पृ01)

2- रहत हौं मैं जिन्ह कमनि माँही।(पृ011)

3- ताते प्रभु मोपर हित कीजै।(पृ0 202)

4- सो ब्रह्मा राखौ भू मध्या।(पृ0 35)

उपसर्ग :- अवधविलास में जो तद्भव या अर्धतत्सम शब्दों के साथ प्रयुक्त संस्कृत के उपसर्ग प्रयुक्त हैं, वे इस प्रकार हैं —

उन अभय भये दूजे राम निवाजे।(पृ09)

अनु ब्रह्मा सृष्टि करन अनुरागे।(पृ015)

अभि जो अपनो अभिमान मिटावै।(पृ055)

कु कुटिल कुमति दूषक अभिमानी।(पृ04)

नि गुन को निधि निर्गुनी।(पृ04)

सु सुकवि कोउ हरिनाम बखाने।(पृ0 5)

निह महादेव हृदय धरे राम नाम दृढ़ै निश्चकि।(पृ09)

निर तुम निरवैर सदा मम स्वामी।(पृ042)

अव दस अवतार धरौं मन माहीं।(पृ05)

अन अनवध निवध निर्त कोउ भाव।(पृ027)

वि भये भक्त अति परम विशारद(पृ011)

प्र किये प्रनाम विकुंठ विहारी।(पृ0 42)

प्रति धारि अवतार करव प्रतिपाला।(पृ0 55)

विशेषण :– वि पूर्वक शिष् धातु से ल्युट के संयोग से विशेषण बनता है जिसका व्युत्पत्तिपरक अर्थ है जो शब्द किसी की विशेषता बतावे, वह विशेषण कहलाता है। व्याकरणिक दृष्टि से विशेषण के चार भेद होते हैं (1) गुणवाचक (2) संख्यावाचक (3) परिमाणवाचक। इन्हीं आधारों पर अवधविलास के विशेषण विधान की संक्षिप्त कर चर्चा की जायेगी।

(1) गुणवाचक :– जो शब्द वस्तु या व्यक्ति के गुणों का वाचक हो, उसे गुणवाचक विशेषण कहते हैं, जिसके निम्न भेद किये जा सकते हैं 1- वर्णसूचक 2- कालसूचक 3- स्थानसूचक, 4- आकारसूचक 5- अवस्थासूचक 6- गुणसूचक।

वर्णसूचक विशेषण-- किसी भी वस्तु या व्यक्ति के रंग बताने वाले विशेषण वर्णसूचक होते हैं —

1- श्वेत बसन (पृ01)

2- भैता अरुन रंग तन धारा। (पृ05)

3- द्वापर पीत वपुष हार सोहै। (पृ05)

4- कोउक श्याम मयुर पंख द्वारा। (पृ0 92)

5- उज्वल बसन निरमल सब अंगा। (पृ0 133)

6- कोउ गोरी कोउ सांवरि एक एक तें आगरी। (पृ0157)

7- सकल रंग कछु अस रंगे राते। (पृ0182)

8- कोमल चरन लाल रंग भीने। (पृ0182)

9- मरकत नीलै सागर धारये। (पृ0 7)

10- पीरी नील दरस घन पावे। (पृ0 105)

(2) कालसूचक :– जो विशेषण समय का बोध करायें उन्हें कालसूचक विशेषण कहा जाता है —

1- भूत भविष्य सबै लगि जाने। (पृ0144)

2- आदि पुरुष अही अन्तरजामी। (पृ0144)

3- बहुत बेर में लीक बिचारा। (पृ0 149)

4- पूरब प्रीति नर्म सुधि आनी। (पृ0 223)

5- बहुत दिवस तें मिले पियारे। (पृ0 232)

6 उत्तम मास दिवस जब जाना।(पृ0138)

7- कुछे पुरुष विपन्ह बिष लागे।(पृ0 110)

8- बहुत काल के बरत हैं अंगा।(पृ0 40)

(3)स्थानसूचक :- स्थान की सूचना देने वाले विशेषणों को स्थानसूचक विशेषण कहा जाता है -

1- दोउ धनुष की रचित ऊँचाई।(पृ0 168)

2- तोरण तर्कविड नगर सुधारी।(पृ0 141)

3- उन्नत अंस हृदय थिर ग्रीवा।(पृ0 190)

4- उन्नत कुच श्रीफल से सोहैं।(पृ0110)

5- पारवा अति गंभीर सरोरा।(पृ020)

6- कोरह धनुष उतंग है खंभा।(पृ0168)

7- ऊँचे महल धवल गिरि निवरा।(पृ021)

आकारसूचक :- जिस शब्द से किसी वस्तु या व्यक्ति का आकार या स्वरूप सूचित होता हो, वे आकारसूचक विशेषण कहलाते हैं।

1- तप करि जोबन छीन सरीरा।(पृ0 22)

2- दीन छीन मन रहत मलीना।(पृ0 87)

3- बड़ा विशाल सूंड अति बाढे।(पृ0 69)

4- दोउ गिरि महाबल धारी।(पृ072)

5- लम्बे गोड हाथ नख देखा।

दुर्बल देह दिगम्बर वेषा।(पृ081)

6- अलप उदर पर हार बिहारी।(पृ0168)

7- लघु लघु हाथ ललित रतनारे।(पृ0 168)

8- नैन विशाल मनोहर आनन।(पृ0 40)

गुणसूचक :- जिससे किसी व्यक्ति या वस्तु के गुण द्योतित हों उसे गुणसूचक विशेषण कहते हैं -

1 अकृष्ट बृत अपठित अश्रुत अल्प ज्ञान जेहि देह।(पृ03)

2- कोमल बरन धरत जहाँ ताहीं।(पृ0 21)

3- रहे उग्र तप कीन्ह जहाँ लौ।(पृ0 49)

4- मोहु असुर न ईश्वर जाना।(पृ064)

5- सुन्दर बाग सरोवर तीरा।(पृ084)

6- कृपन कठोर हृदय अभिमानी।(पृ091)

7- इह भल काज विलंब न कीजै।(पृ093)

8- अहि गृह द्वार मंदिर जैसे।(पृ097)

9- सुन्दर बेनी बनी रसाला।(पृ0 110)

10- तोतरे वचन बोलि किलकारीं।(पृ0 162)

<u>संख्यावाची विशेषण-</u> संख्यावाची विशेषणों को दो भागों में बाँटा जाता है ---1-निश्चित संख्यावाचक 2- अनिश्चित संख्यावाचक।

[redacted] <u>अवधविलास में निश्चित संख्यावाची विशेषण</u>

इन शब्दों से वस्तुओं की निश्चित संख्या का ज्ञान होता है। इसके निम्न भेद किये जा सकते हैं ---1-गणनावाचक 2- क्रमवाचक, 3- आवृत्तिसूचक, 4-समुदाय वाचक 5- प्रत्येकबोधक।

<u>(1) गणनावाचक विशेषण</u> :-- अवधविलास में पूर्णांक एवं अपूर्णांक बोधक विशेषण प्राप्त होते हैं ---

1- एक आरची मानुषी।(पृ03)

2- जो इक नदी होति इक ठौरा।(पृ021)

3- रिषि एकु विपन महातप धारी।(पृ012)

4- महादेव हृदय धरे राम नाम दे अंक(पृ09)

5- दोउ मूरति महि भेद न करई।(पृ013)

6- आधिदैव त्रैताप कहाना।(पृ010)

7, होत चारि प्रकार निरूपा।(पृ05)

8- तीन प्रकार पाप हैं सोई।(पृ010)

9- गृह तिथि पंच तत्व जब आता।(पृ04)

10- औरउ पांच सरन्ह मिलि होई।(पृ026)

11- मदोंरितु सदा रहत परकासी।(पृ021)

12- सुद्ध पाट सप्तस्वर रचै।(पृ024)

13- सरि ग म प ध नि सात स्वर रहू।(पृ026)

14- बत्तिसर कवि अठ विचारै।(पृ08)

15- ए नव रस के नाम।(पृ01)

16- दस अवतार धरों मन माहीं।(पृ05)

17- तेरह पुनि ग्यारह करै पुनि तेरह पुनि ग्यार।(पृ09)

18- केउ बत्तिस जोजन अनुमाना।(पृ018)

इसके साथ ही लालदास ने अपूर्णांक बोधक विशेषण का भी प्रयोग किया है — जैसे—

1- आधेह आध होउन्ह दीये ताहू।(पृ0143)

2- चौसी अरध अमान तुराही।(पृ174)

3- पाप पुन्य आधे फल पावै।(पृ17)

4- स्त्री ते पति अर्ध बिख्याता।(पृ017)

<u>क्रमवाचक विशेषण</u> :-

1- प्रथमहिं गुरु गनपति सिर नाऊं (पृ03)

2- एकउ जनम एक होइ आवै।(पृ07)

3- पंचम दुतिय आदि बिख्याता।(पृ025)

4- षडसि सुकृत देइ ताही।(पृ017)

5- सूरज बसये किया दुष होई।(पृ015।)

6- चन्द्र बारहें दुष परै आही।(पृ015।)

7- और बीसवां वेद बखाना।(पृ0 15)

<u>समुदाय वाचक</u> :-

1- भुगतत फल तस सब संसारा।(पृ0150

2- बीर भारी पुरुष तारी सिंधु ज्यों घर घर भरे।(पृ0 156)

अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण :—

1- घर घर नगर नारि नर जानी। (पृ0150)

2- केते जुग केते गुन गावत (पृ09)

3- सकल धर्म को नाम है रामा। (पृ09)

तुलनात्मक विशेषण :—

1- राम भरत कछु लागत ऊँचे। लछिमन रिपुजित सम तन सूचे। (पृ0185)

2- तासि सम सख होइ न तोला। (पृ079)

3- देव दनुज मानुष की कन्या। ता सम और नहीं कोउ धन्या। (पृ089)

अवधविलास में क्रिया-विधान

(1) सहायक या अस्तित्वाची क्रियाएँ :— अवधविलास में अस्तित्वाची एवं सहायक क्रियाओं के रूप इस प्रकार प्राप्त होते हैं —

1- अवधविलास समुद्र है। (पृ01)

2- भइ कान्ति अविरज किछ माना। (पृ048)

3- सब के मन भए अति अदेसा। (पृ048)

4- मय दानव तहाँ कोइ है मायामय मय एक।

मय रावन को है ससुर नाना विद्वतीय विवेक। (पृ045)

4- आगे लाभ लेहगो भारी। (पृ018)

6- सबत होहि सबै सुख रासी। (पृ021)

वर्तमानकाल उत्तम पुरुष एक वचन :—

1- मैं अहौं दीन गरीब अनाथा। (पृ0148)

2- ब्रह्म लोक हउँ गयऊँ गुसाईं। (पृ035)

3- जिन्हके बस हौं रहौं निरन्तर। (पृ042)

<u>बहुवचन :-</u>

1- हमके होहिं कवन पहिचानी।(पृ० 262)

<u>मध्यमपुरुष एकवचन</u>

1- दाता भुगुता आपुहिंआही।(पृ०18)

2- जालंधर को आहि बिचारा।(पृ०85)

<u>बहुवचन :-</u>

1- पुत्र होहु हमरे प्रतिपालक(पृ०41)

2- होहु पटोहत मनु के भानी।(पृ०17)

<u>अन्यपुरुष एकवचन :-</u>

1- कहत सुनत सब कहँ सुखद है नव रस को भेद।(पृ०1)

2- एक भेद इह ऐसो आही।(पृ०47)

3- जाने राम आहि कछु जैसी।(पृ०50)

<u>बहुवचन :-</u>

1- नवधा भक्ति के नव हैं प्रकारा।(पृ०5)

2- आनन्द के घर जे कछु आहीं।(पृ०19)

<u>भूतकाल , उत्तमपुरुष :-</u>

1- मोतहिं जानि होत है तेते।(पृ० 42)

<u>मध्यमपुरुष :-</u>

1- हये हुते संग सुभट सयाने।(पृ० 126)

<u>अन्यपुरुष एकवचन :-</u>

1- देत होत नहिं पाप बिनाना।(पृ०15)

2- जो इक नदी होत इह ठौरी।(पृ०21)

3- मगन भयेउ मुनि सारंगपानी। (पृ032)

4- ताके पुत्र विश्रवा भयऊ (पृ044)

5- तीनो विश्रवा भई पियारी। (पृ047)

6- कामधेनु की पुत्री होइये। (पृ023)

बहुवचन :—

1- छत्री अवध बसत भए ऐसे। (पृ020)

2- ब्रह्नाऊ बस भये हमारे। (पृ0108)

3- बहुत बात होत सुख आये। (पृ034)

भविष्यत्काल, मध्यमपुरुष :—

1- तिय वियोग तुम कहँ तब होइहि। (पृ086)

अन्यपुरुष :—

1- विधवा सबै होइहैं रानी। (पृ0 260)

2- जासु काज सब होब तुम्हारा। (पृ0 23)

3- त्रिया वियोग होय बन माहीं। (पृ0 167)

4- होवाइ जुवा होब तस तोही। (पृ0 167)

5- याते पुत्र अवसि हव होई। (पृ0 150)

आज्ञार्थ मध्यमपुरुष :—

1- जो हरि होहि दयाल। (पृ01)

2- असुरहि जाइ होहु जग माहीं। (पृ041)

अन्यपुरुष :—

1- लाल भक्त भगवन्त की कृपा कछु जो होइ। (पृ01)

पूर्वकालिक :—

1- नारि सरीर ऊ च होइ रहवै। (पृ031)

2- होइ विजय वांछित फल पावै।(पृ0 50)

कृदन्त

अपूर्ण कृदन्त :— अपूर्ण कृदन्त तकारान्त हैं। ये दोनों वचन और तीनों पुरुषों में समान रूप से प्रयुक्त होते हैं। स्त्रीलिंग रूपों में तिकारान्त हो जाते हैं —

1- कहत सुनत सब कहँ सुखद है नव रस को कन्द।(पृ01)

2- कृष्ण जथा ब्रज माहि सदा करत विहार प्रकास।(पृ01)

3- जोक करत निटत संसारा।(पृ05)

4- भरि भरि नैन कहति महतारी।(पृ0203)

5- विनय करति कहति कर जोरी।(पृ0 223)

6- जागत सोवत ध्यान ही बीता।(पृ0232)

पूर्वकृदन्त :—

अवधविलास में पूर्व कृदन्त के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं। आ, ई, ए प्रत्ययान्त रूपों का प्रयोग सभी पुरुषों के साथ हुआ है। साधारणतः अकर्मक धातु होने पर ये (आ, ई, ए रूप) कर्ता के लिंग वचन का अनुसरण करते हैं और सकर्मक धातु होने पर कर्म के लिंग वचन का —

1- मच्छ रूप धरि बेद उधारा। कूरम होइ रतन विस्तारा।

2- बावन रूप अनूप बनावा। छल करि बलि पाताल पठावा।(पृ0

3- रामचंद्र रावण बध कीना। इन्द्रादिकन्ह अभय पद दीना।(पृ05)

4- पकरि कमंडल विधि दरसावा।

5- अद्भुत रूप बराह बनाए। कुंडल धरनि दंत धरि ल्याए।

6- बौध रूप प्रभु जग्य छिड़ाए। जैन अहिंसा धर्म छिड़ाए।(पृ05)

7- बोले पुनः वसिष्ठ सयाना।(पृ023)

8- प्रेम विवस लोचन भरि आए। भाया लखि दौरि हीये लाए।(पृ033)

9- आइ वसिष्ठ दुआर भये ठढे।(पृ034)

10- जैसे हृदय भक्ति जब आई। मुक्ति ध्यान बैठे सब पाई।(पृ06)

11- श्वेत भेष धरि पाप जु करई। ताको दोष कह्यौ नहिं परई।(पृ06)

12- ध्यान ज्ञान करि जोगहि सोइ। जब हरि मिले मुक्त तब होई।(पृ09)

13- वनिता सहित गीत गुन गाई।(पृ033)

14- बरष हजार गए जब बीती।(पृ033)

15- अपनी ओर न देखि निहारी। बड़ो बात कहि जाति भिखारी।(पृ45)

एउ एहु इउ :— एउ प्रत्ययान्त उत्तम पुरुष एक वचन पुल्लिंग के साथ और इउ स्त्रीलिंग के साथ प्रयुक्त होते हैं —

1- देखेउँ एक और ब्रह्मण्डा।(पृ0 37)

2- अलप जानि कीनेहु कछु नाहीं।(पृ038)

3- माँगेउँ पुत्र कन्यका पाई।(पृ0 179)

ईन, ईन्ह, ईनो, इन्हीं, इने, ईन्हे, आना, आनी :—

1- अस कहि पुत्रहिं लीन्ह बुलाई।(पृ0 254)

2- सीता रही कुमारी जानी।(पृ0236)

3- आये असुर राव सब जाना।(पृ0228)

4- इह कहि मुनि तेहि मग मन दीन्हा।(पृ0228)

एहु, इहु :— मध्यमपुरुष बहुवचन में ये प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं —

1- देखहु मात ब्यात अब मोरा।(पृ0 49)

2- अब सुनि लेहु बीनती मोरी।(पृ07)

एउ/अउ — यह अन्य पुरुष एक वचन पुल्लिंग कर्ता के साथ आता है —

1- भयउ अति शब्द फटेउ असमाना।(पृ033)

2- आदि पुरुष जब रहेउ अकेला।(पृ0179)

3- विद्या पढ़ेउ चारि दस बानी।(पृ0184)

4- फेंट बाँधि सो भयेउ तयारा।(पृ09)

अत :—

2- बैठ लेत फूंल गुलाला।(पृ0 106)

<u>वर्तमान निश्चयार्थ — उत्तमपुरु ष एक वचन, अउँ, औं —</u>

1- कहउं हरि अवतार भक्त काज जे वपु धरे।(पृ0 ८)

2- प्रनउं ताहि जगत जिन्ह जाया।(पृ0 3)

3- कहौं ताहि भांति मनुहारी।(पृ04)

<u>मध्यमपुरु ष एकवचन— असि, आहि—</u>

<u>बहुवचनः— अहु अउ —</u>

1- समय नहीं तुम्ह जाहु ठिकाने।(पृ0 41)

2- मारहु ताहि सुनहु भगवाना।(पृ0 68)

3- तो जानहु तासम नाहिं कोई।(पृ0 7)

<u>अन्यपुरु ष एकवचन, अइ, आहि, अ —</u>

1- मात पिता बोलगन सुहाई।(पृ04)

2- तैसे कथा बिचारइ बानी।(पृ05)

3- जेहि जेहि भांति नचाइ नचावत।(पृ7)

4- जइ जमदूत समीप नाहिं जाई।(पृ12)

<u>बहुवचन — आहिं अइं —</u>

1- कराहिं रानी तेल फुलेला अंग अंग सुधारहीं।(पृ0 162)

2- गंधर्व पूजाहिं मन लाही।(पृ0 33)

3- ध्यान दीप है बालि मानि उभय प्रकास कराहिं(पृ06)

<u>भूत निश्चयार्थ</u> कृदन्त प्रकरण में भूत निश्चयार्थ के उदाहरण दिये जा चुके हैं।

<u>भविष्य निश्चयार्थ :— उत्तमपुरु ष एकवचन — आउब, अब, अइब, ब, इहउं</u>

1- जेहि कछु कहत करब सोइ सोई।(पृ0254)

2- हिय जिनि हरब करब नाहिं ओछी।(पृ0 [illegible])

3- पुत्र न देहउँ सहज बरु मारी।(पृ0 226)

अन्यपुरुष एकवचन इहि, इहई, अउव, अव

1- बिनती मात सुमित्रा करिहइ। कौसल्य अति दुख करि मरिहइ।(पृ228)

क्रियाओं के कुछ प्रयोग :-

लालदास ने चौपाई और दोहे जैसे छोटे छन्द में क्रियाओं के अनेक प्रयोग किए हैं।

(1)छन्द के प्रत्येक चरण में एक क्रिया :-

1- जौ प्रभु कृपा कटाछहिं हेरैं। तौ कछु ध्यान होइ जिय मेरे।(पृ03)

2- प्रेम सहित गावै नर जोई। ताके राम सहज बस होई।(पृ06)

3- जैसे लोह लोह सौं फाटै। तैसे कर्म कर्म करि काटै।(पृ015)

4- सुरपति संशय दूरि करि, बलि पताल दई दीन्ह।
चारि नदी करि दस दिसा बावन पाउँन कीन्ह।(पृ035)

5- मन ही मन मत कीन्ह भवानी। प्रिय बल करि मारौं इह प्रानी।

(2)छन्द में एक क्रिया :-

1- दूषन भूषन जगत के गन औ अगन अनेक।
लघु दीरघ सुबुधा अबुध में नहिं जानत एक।(पृ05)

2- भूमि अकास वायु अरु पानी। सूरज अगिनि चंद्रमा जानी।(पृ010)

3- सनकादिक रिपु आदि जेते। माया रहित भये सब तेते।(पृ015)

4- मय के गुन अब कहौं बखाना। बिस्वकर्मा ते अधिक सयाना।(पृ045)

(3)दो क्रियायुक्त छन्द :-

1- गगन तें परत सखिनि अस जाना। भयो अति सकल फटेउ असमाना।

2- सुने वसिष्ठ गाधिसुत आए।राजा मिलि सनमुख गृह लाए।(पृ0223)

3- बैठे मुनि नृप आदर कीना। पग कंचन धरि आसन दीना।
देखि होम धूम वेद सुनि बानी। अरु दैत्य होत जग्य जानी।(पृ0228)

(4) अनेक क्रियायुक्त छन्द/चरण :-

1- जरयो डरयो भभरयो निकर्यो, बालाई राखे प्रान।(पृ0 58)

2- काहु तरावत काहु हरषित, काहु खिजाउत नाम है।(पृ060)

जोवत लखत धरत कर साथा। बोलत पूछियत पीडत राजा।(पृ0140)

धावनि नचनि उठावनि करषी। चितवनि तकनि चलनि मन हरषी।

(5) क्रियाहीन चरण :-

1- सनक सनातन सनत्कुमारा। और सनन्दन चारि प्रकारा।(पृ03)

2- गंगा सम नीरजमया, सर्वदिव मय राम।

जैसे गीता ज्ञानमय, अवध धर्ममय धाम।(पृ021)

3- सत जोजन विस्तार गढ़ जोजन तीन उतार।

दस जोजन दक्षिन दिसा, लंका सागर पार।(पृ049)

(6) क्रिया से प्रारम्भ वाक्य :-

1- बन्दउँ हरि अवतार भक्त काज जे वपु धरे।(पृ01)

2- प्रनउँ पारषद प्रभु के संगी। हरि समान वपु रस सुधरंगी।(पृ4)

3- भयो अनन्द महाबन माहीं। प्रेम विवस तन की सुधि नाहीं।(पृ040)

4- ठाढे राम लखन मुनि संग। गौर स्याम सुन्दर वर अंग।(पृ0234)

5- सुनहु रतन मंडप की सोभा। देखत सुनत लगत मन लोभा।(पृ0167)

6- बोले नृप मुनि तुम निहकामी। अब कोउ कारन कहो स्वामी।(पृ223)

अव्यय :- अवधविलास में प्राप्त क्रिया-विशेषणों के कुछ उदाहरण निम्न है -

(1) कालवाचक :-

1- अब अब सुनि लेहु बीनती मोरी।(पृ07)

कब - कबहूँ नाम पार नहिं पावत।(पृ09)

पुनि - पुनि हरि हर सरस्वती मनाऊँ।(पृ03)

सदा- नाम सदा सब जग महिं जाना।(पृ09)

जबलगि जब लगि देव बन्दि नहिं छूटै।(पृ0259)

नित तैसे सीताराम को नित ही अवधविलास।(पृ01)

फिरि- फिरि फिरि चितवत चाहि कानि।(पृ0231)

<u>स्थानवाचक :-</u>

बीच परे बीच जल बुद्धि निधाना।(पृ075)

जहाँ-तहाँ जहाँ मनुष तहवाँ कछु नाहीं।(पृ045)

बाहर- प्रगट असुर जल बाहर आयो।(पृ070)

तर ऊपर- कबहुँ तर ऊपर कहुँ आवा।(पृ070)

भीतर दिव्य कमल सर भीतर राजे।(पृ034)

आगे

नियरे- चरन दूर नियरे रहे आवो।(पृ0271)

निकट अबहु निकट विनय घन ते हैं।(पृ0271)

कतहुँ कुलवा केन कतहुँ नाहँ जाइ वा।(पृ0231)

तहाँ तहाँ कबहुँ कोउ मनुष न जाहीं।(पृ0108)

<u>रीतिवाचक :--</u>

जस जस उन असुर किन्ह है पेला।(पृ0 259)

जैसे जैसे पाहुँ रैन भुलावा।(पृ06)

जथा - कृष्ण जथा ब्रज मोहि तथा करत विहार प्रकाश।(पृ01)

तैसे तैसे सीताराम को नित ही अवधविलास।(पृ01)

अइसो- अैसो है नाम राम को भाई।(पृ010)

भाँति जोइ जोइ भाँति बजाइ नचावत।(पृ07)

बेर बेर बेर बेर शोक सिन्ध लग आवत।(पृ0231)

<u>परिमाणवाचक :-</u>

कछु - तो कछु ध्यान होइ जिय मेरे।(पृ03)

बहुत जाके को बहुते बड़े पोथी भार अनेक।(पृ02)

अधिक विप्र शाप ताहि अधिक डरांई।(पृ0110)

अपारा तो बरषा होइ अन्न अपारे।(पृ0108)

<u>निषेधवाचक :—</u>

न — वनचर गृह आरंभ न ठनै।(पृ04)

नहिं — सुकवि झूठ बोलै नहिं तावै।(पृ05)

बिनु — बिनु रजु सठ पीयौ चहै पानी।(पृ07)

बिना — चाहत चढ़ेउ बिना निस्सरनी।(पृ07)

नाहीं/नाहिं — मैं मूरख कछु नाहिं विवेका।(पृ07)

जिनि — जिनि कहुँ इह छवि जाइ छिराई।(पृ041)

अवधविलास की भाषागत विशेषताएँ

(1) <u>ध्वन्यात्मक शब्द प्रधान भाषा</u> — संगीत वर्णन करते समय लालदास ने 'वर्णात्मक' चौपाई लिखी है —

सुद्ध पाट सप्तस्वर रूपा। ताथा थो छेव है दैया।
पाटा अर हैं बोल बखाना। कख ग घ ट ठ ड ढ ण ज झ ढि जाना।
त थ द ध न र ड म रुक लकारा। सुध बिनु पूट पाट बिस्तारा।
तत थिथि धुं धुं न ना ध्रेरे। अक्षर चारि भेद बहुतेरे।[1]

(2) वाद्य यंत्रों की ध्वनियों के लिए भी इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग है —

बेउ बेइ धुंग धुंग तत्कारा। होत अनेक तान बिस्तारा।
तक तक धिग धिग किट किट दं दं। नाचत हर संगीत सुधंगं।[2]

(3) मल्ल युद्ध या द्वन्द्व युद्ध के समय टवर्ग प्रधान भाषा का प्रयोग वातावरण को सजीव बना देता है —

करैं दंड पेला उठावैं ढपेला,
करैं दंड डल्ला करैं माल सल्ला।
करैं लोट पोटा हरै जनु ग्रोटा। श्री टेक वाला कि पाड़ किवाला।
लरैं दंड वटकी अरैं गोड़ अटकी। धरैं हाथ झटकी जो मारे सपटकी।
औ बैठे उठावैं न बाहें नचावैं। तली लपेटा चलावैं चपेटा।

× × × ×

झटके लटके पग झाब धरें। अटकें पटकें फटकें न डरें।

उभरें तमरें भमरें लटकें, गाढ छाग से ते तिग क्यों पटकें।[1]

(4) अनुरण. शब्दों से भी ध्वन्यात्मकता प्रगट की गयी है —

हर हर हर हर घर घर धरहीं। रम रम रम रम कमताई फिरहीं।[2]

(2) उर्दू प्रधान भाषा :—

बकसी गुरू बादशाहु है आही। देत रजाइ जो भक्त सिपाही।

जफर भाव औलिया जागे। सबकी अकल बावरी लागे।

बावन बीर कहावत जैते। एक सब पैगम्बर है तेते।

× × × ×

धर्मराज पुनि रहत अधीना। आन देव मजनून गहे दीना।

जिनजुन्न सब दर्शन लिआई। कुतोफ़ी भये सागर बिलाई।[3]

(3) संस्कृत/तत्सम प्रधान भाषा :—

श्लोक — मधुमासे सिते पक्षे नवम्यां वर्तिते शुभे।

पुनर्वसु नक्षत्रे वारके ऽवस्थे गुरु पञ्चके।

मेषे पूषानि सम्प्राप्ते पुष्पवृष्टि समाकुले।

आविरासीज्जगन्नाथः परमात्मा सनातनः।[4]

इसी प्रकार स्तुतियों के समय तत्सम बहुला भाषा का प्रयोग कवि ने किया है—

रक्ष रक्ष अहो देव अनन्ता। तुम समरथ सब विधि भगवन्ता।

घट-घटगामी अंतरजामी हो बचन सुनि लीजिए।

सबके स्वामि हे बहु नामी रक्षा जन की कीजिए।

दीन दयाला भक्त कृपाला सिरद तुम्हारा साजिए।

गज उबारन द्विज भयतारन पतित उधारन धाइये।[5]

1- अवधविलास, पृ0 191-92 2- वही, पृ0 174 3- वही, पृ0 197-98

4- वही, पृ0 150 5- वही, पृ0 60

नारदकृत राम वंशस्तुति में भी इसी प्रकार की भाषा प्रयुक्त है —

नमो राम रघुवंश कुल सर कमल धरन औतार भुभार हार।

दत्त वर भक्त को सत्य पूरन करन धर्म के शत्रु संहार कार।

× × ×

चाप शिव भंजनं भूप बल गंजनं जनक मन रंजनं रस सार।

जानकी वर भव्य परस घर बल दर्प मान औ तात हिय हरष धार।[1]

<u>विवरणात्मक शैली :—</u>

जब किसी वस्तु का विवरण साधारण ढंग से प्रस्तुत किया जाता है तब इस शैली का प्रयोग हुआ करता है। भाषा सरल तथा अभिधाप्रधान होती है—

1- जीवन वृत्ति तीन जग माहीं। कृषि व्यापार पारग्रह आहीं।
बानिज करत बिढ़ता कछु पाई। दया और दीजे बिलगाई।(अवध०15)

2- एक समय बैकुंठ के माहीं।नारायन नित रहत जहाँहीं।
लक्ष्मी आदि पारषत जेते। सेवा ध्यान कराहिं सब तेते।(वही,23)

3- ताके पुत्र विश्रवा भयऊ।सोउ ऋषि होइ तपोवन गयऊ।
भरद्वाज मुनि तब भये ज्ञानी। ताके कन्या रहै सयानी।
सोउ ले दीन्ह ताहि मुनि बाला। अति गुनवंत रूप की माला।(वही,44)

कथा वर्णन में भी इस शैली का प्रयोग यत्र-तत्र है —

1- रावण कुछ भली नाहि करी। भाव गुप्त दोबाति सिय हरी।
सीताहरण भयो तब जाना। दसयें मास संपाति बखाना।
बानर वापन्ह कहँ दीन्हिस आई। दसमी मार्ग गुप्त कहँ पाई।(वही,271)

पात्रों के भावव्यञ्जन के समय इस शैली का उपयोग किया गया है —

दुर्वासा ऋषि राम का भविष्य कथन इस प्रकार करते हैं —

सिया वियोग होइ बन माहीं।पुन होइ दुलराइब नाहीं।
तेज प्रताप बहुत जग पइहैं। जब तब तोहि बिछुर दुख दैहैं।(167)

कहीं कहीं विभिन्न बातों का परिगणन इस प्रकार कराया गया है —

बिन दीपक ज्यों गृह अँधियारा। धर्म बिना निष्फल अवतारा।

मंत्र बिना जैसे जग्य न होई। वेद बिना जैसे विप्र न कोई।

जोग बिना जैसे सिद्धि न आवै। पुत्र बिना गति स्वर्ग न पावै।

ज्ञान बिना जैसे मुक्ति न देषा। भक्ति बिना जैसे ज्ञान अलेषा।(अ०99)

(2) कहुँ इक चरन बाँध ऊपरहीं। धूम पान करत सिर तरहीं।

कहुँ इक जटा जूट नष बढ़े। कहुँ इक एक पाइ रहे ठढ़े।

कहुँ इक बमन मौन व्रतधारी। कहुँ इक ऊरध बाहु पसारी।

कहुँ इक मेघाडंबर छाये। कहुँ इक जल माहिं बैठि रहाये।(वही, 100)

बहुज्ञता प्रदर्शन हेतु अनेक स्थल काव्य को मिल जाते हैं। ऐसे अवसर पर भाषा विवरण प्रधान हो जाती है। अनेकार्थक शब्दों के अर्थ तथा पर्यायवाची शब्दों का विवरण लाल दास ने इस प्रकार किया है —

(1) सारंग चातक चाप गिरि होई। ससि बदन मृग भ्रम रहे सोई।

नागराज गृह कुंभ और पानी। सारंग राति मेघ पियजानी।

सारंग धनुष चोरगन कहिये। सेज कमल अरु मोरउ लहिये।

सारंग अगनि पवन अरु वाहन। पंथ अर्क दादुर नभ पाहन।(वही, 123)

(2) अब नारिन्ह के नाम बखानो। एक जोषित स्त्री जानो।

योषा अबला वनिता होई। भामिनी एक कोपना सोई।

प्रिय दामिनी महिला बामा। वधू सिमंतिनी नारी रामा।

अंगना भार्द कामिनी वर्ति। प्रमदा ललना बाला सति।

बाम लोचना भामिनी रवनी। एक नितम्बिनी गज गति गवनी।(129)

विवरणात्मक भाषा के एक रूप यह भी है जिसमें शब्दों के संस्कृत साथ साथ प्रस्तुत है —

जैसे कहाँ अब पारथिव कहर। आवत कहाँ ते शांत कुतः डहर।

गये गतः बहि है अहित मानो। किन पठए केन प्रेषित जानो।

या को अर्थ न जानि जाको कथ्य। ताको कथ्य भाषा कहो कथ।(215)

(1) आत्मकथात्मक शैली :— इस शैली के अन्तर्गत पात्र अपने जीवन की घटनाओं का स्वयं वर्णन करता है। वक्रदालभ्य ऋषि कहते हैं —

एक बेर इक विप्र इहाँ आये। चारि भुजा मुख चारि सुहाए।
चारि वेद चारो मुख गावत। मोहि देखि सनमुख आवत।
बोले मोहि देखि मनमाना। हम सह मुनि कछु पठतु बखाना।
बात कहत बौडर इक आवा। मोहि विधातहि धार उधरावा। (पृ० 37)

(2) संवादात्मक शैली :— इस शैली के अन्तर्गत एक पात्र अपना प्रश्न प्रस्तुत करता है और दूसरा व्यक्ति उसके उत्तर देता है। दशरथ प्रश्न करते हैं —

पूछत भूप कहहु मुनि जैसी। देखहु आयु सिसुन्ह की कैसी।
कहु भगवान इन्ह चारि मझारी। राज्य वंस मन को अधिकारी।
नातो कहहु इते सुखदाई। करिहै हमार कवन सिवकाई।

दुर्वासा ऋषि उत्तर देते हैं —

राम हाथ देखि मुनि अस भाषा। धर्तनृप बढिहै कुल राषा।
सुनु राजन इह पुत्र तुम्हारा। मनुष न होइ राम अवतारा।
राजा कहै ए अंतरजामी। मनुष भये केहि कारन स्वामि।
मुनि कहैं भूप सुनहु मन लाई। पुरा वृत्तान्त कही समुझाई। (वही, 166-67)

अलंकृत शैली :—

(1) क्रोध अग्नि रन केरो थपब। राक्षस मुंड माल गुहि जापब।
ध्वजा दंड जीति खंभ गडाइब। अवाहन सुर सूर बुलाइब।
मय को कुटुम्ब समिध करि जारब। सुधा तेग रुधिर पिय डारब।[1]

(2) सेवक निर्मल मन्दिर मुक्ता मनि लसंत।
जहाँ होहि तहाँ हंस ज्यों हर्षित धावत संत।[2]

1- अयोध्याविलास, पृ० 46

भाव एवं रसानुकूल भाषा :— सजगशील कवि ही भावानुरूप शब्दों का चयन कर भाषा में चमत्कार उत्पन्न करता है। अवधविलास के अनेक स्थलों में इस प्रकार का ध्यान रखा गया है। कोमल भावों के लिए भाषा के विविध रूप द्रष्टव्य हैं —

(1) जगमग गिरा कहैं हरिराई। धन्य धन्य शबरि सुखदाई।
मांगहु आजु देउँ मन भावो। प्रेम भक्ति धरि मोहि रिझावो।
तब बोले शबरि कर जोरी। मांगी भक्ति बहोरि बहोरी।[1]

(2) नारी प्यारी जीव की न्यारी करी न जात।
नारी के न्यारे भये नारी छूटी जात।
हा वृन्दा हा वृन्दा वृन्दा। मोहि तजि गई कहाँ मुखचंदा।
अधर मधुर मृदु बिंब रसाला। सो मोहि पान करइहै बाला।[2]

(3) नैन अंजन खंजन नाक मोती नथ बनी।
बदन गोरा तिलक रोरी चारु पाहरी छवि धनी।[3]

(4) सुंदर बाल किशोर कृपाला। देखि देखि मुनि होत दयाला।
चितवनि चलनि चपल मन भावनि बनचर मोर मृगन्ह संग धावनि।[4]

(5) नाचत मोर कोकिला गावत। ताने भाव अनेक दिखावत।
पीपर पात ताल सोइ बाजत। झरना झरत पखाउज राजत।
सुआ कपोत कूमरी गाने। मरकुल गीत संगीत बखाने।[5]

कठोर ~~[illegible]~~ या परुष भावों के लिए कवि ने तदनुरूप शब्दों का चयन किया है—

(1) टूटे लूम धूरि अंधरानी। बरषे रुधिर भूमि थहरानी।
बिनु बादर घहरान अकासा। बिजुरी तरकि परी चहुँ पासा।[6]

1- अवधविलास, पृ० 32, 2- वही, पृ० 86 3- वही, पृ० 157
4- वही, पृ० 227 5- वही, पृ० 268 6- वही, पृ० 48

(2) तुरग फ्लस हर धरि धरि दौरे। भूसर पारथ औ धनुष टकोरे।

मारु मारु धरि धरि धार गाजे। भेरी ढोल नगारे बाजे।[1]

(3) रथ के परत पहार जु धसके। कच्छवी धरनि कमठ कटि कसके।

झलके सिंधु मेरु थहराने। दिग्गज डरे सेस सहराने।[2]

लाल कवि की मान्यता है कि क्लिष्ट शब्दों से रहित सर्वजन, सम्प्रेष्य ही भाषा का उच्चतम आदर्श है। देशानुसार प्राकृत संस्कृत, फारसी, अरबी, भाषाएँ व्यवहृत होती हैं। अभिव्यक्ति में सरलता और सुबुधता कवि को अभीष्ट है --

सुबुध प्रगट लौकिक बचन सुनि समुझै सब कोइ।
कठिन सब्द नहिं संस्कृत भाषा कहिए सोइ।
देसी प्राकृत संस्कृत पारसि आरबि आन।
जहँ जहँ जाकी लाल कहि भाषा सबही जान।
सहै जानि बानी विमल कहत लाल सुध बुध।
कठिन काव्य कहि संस्कृत भाषा कहिए सुबुध।
गूढ़हिं भली न प्रकासहीं बानी लाल बिचारि।
जिमि कुच प्रगट न गुपत ही राखति नागरि नारि।
जानि बूझ नाहिन धरत कठिन अर्थ के ओर।
राम नाम ज्यों जगत माहँ ग्रंथ चलै सब ओर।[3]

यद्यपि कवि ने स्वीकार किया है कि उसे छन्द-बन्ध रस, अलंकार, पिंगलरचना-ज्ञान नहीं है, तथापि चुनन, एवं रत्नों से जिस आभूषण की रचना हुई है वह निश्चय ही अद्भुत एवं आकर्ष है --

बचन रचन मुकता रतन चुनिन कल हितहास।

लाल हेम कुंदन रचेउ भूषन अवध विलास।[4]

अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति रामकृपा से ही सम्भव है। ग्रन्थानुकरण कर ग्रन्थ तो कोई भी लिख सकता है।

१- अवधविलास, पृ० 62 २- वही, पृ० 69

अष्टम अध्याय

अवधविलास में रीति, गुण

अष्टम अध्याय

'काव्य विलास में रीति, गुण एवं शब्दशक्ति'

गुण विवेचन :—

काव्य-गुणों के सम्बन्ध में दो प्रकार की मान्यताएँ प्रचलित हैं। प्रथम वर्ग के अन्तर्गत वामन, दण्डी, एवं द्वितीय वर्ग में मम्मट, आनन्दवर्धन प्रमुख हैं। प्रथम मान्यता दस शब्द एवं दस अर्थ गुण मानती है। पंडितराज लिखते हैं —

> श्लेष प्रसाद समता माधुर्य सुकुमारता।
>
> अर्थ व्यक्तिरुदारत्वमोजः कान्ति समाधयः।[1]

वामन की दृष्टि में विशिष्ट पद रचना रीति है और गुण रीति की आत्मा है। ये गुण ही काव्य के शोभाकर्ता धर्म हैं —

> 'काव्य शोभायाः कर्ता धर्म गुणाः'[2]

तात्पर्य यह है कि प्रथम वर्ग के आचार्यों की दृष्टि में गुण रस का धर्म न रहकर रचना के धर्म माने गये हैं। शब्द तथा अर्थ के धर्म रूप में गुण स्वीकृत हैं —

> ये खलु शब्दार्थयोर्धर्माः काव्य शोभां कुर्वन्ति ते गुणाः— ओजःप्रसादादयः।'[3]

द्वितीय वर्ग की मान्यता यह है कि आत्मा के गुणों — शौर्यादि के भाँति काव्य में प्रधान रस को उत्कर्ष देने वाले धर्म गुण कहलाते हैं। मम्मट कहते हैं —

> ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः।
>
> उत्कर्ष हेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः।
>
> आत्मन एव हि यथा शौर्यादयो नाकारस्य तथा रसस्यैव माधुर्यादयो गुणा न वर्णानाम्।'[4]

1- रसगंगाधर,

2- वामन-काव्यालंकार 3/1/1

3- वामन काव्यालंकार 3/1/1

4- काव्यप्रकाश, 8/66

मम्मट ने रस एवं गुणों का सम्बन्ध निरूपित करते हुए लिखा है कि माधुर्य गुण का सम्बन्ध शृंगार, करुणा, और शान्त रस से है। ओज गुण का सम्बन्ध वीभत्स और रौद्र से है। प्रसाद गुण का सम्बन्ध प्रायः सभी रसों से है।[1] गुण एवं चित्त दशा पर विचार करते हुए द्रुति, दीप्ति, विकासकी कल्पना की गयी है। रसों से इनका सम्बन्ध स्थापित करते हुए डा0 नगेन्द्र ने लिखा है —' शृंगाररस की अनुभूति में जो एक प्रकार की आर्द्रता का अनुभव होता है, वही माधुर्य है। वीर रस के अनुभव से उसमें जो एक प्रकार की दीप्ति उत्पन्न होती है, उसे ओज कहते हैं तथा सभी रसों के अनुभव में चित्त में जो व्यापकत्व आता है वही प्रसाद है।'[2]

गुणों के स्वरूप के साथ ही उसके व्यंजक शब्दों का भी विवेचन भारतीय काव्य शास्त्र में हुआ है। मम्मट के अनुसार वर्णसमूह, समास एवं रचना गुणों की व्यंजक सामग्री है —

वर्णाः समासो रचना तेषां व्यंजकतामिताः '[3]

अवधविलास राम की रसमयी लीलाकाव्य है। अतः इसमें माधुर्य एवं प्रसाद गुणों का आधिक्य है। कवि अपने चातुर्य से ओज गुण के अवसर खोज लिया है। अवधविलास में सभी गुणों के उदाहरण मिलते हैं जो इस प्रकार हैं —

<u>(1) माधुर्य गुण :—</u>

आचार्य मम्मट के अनुसार चित्त को प्रसन्न करने वाला गुण माधुर्य है। 'आह्लादकत्वं माधुर्यं शृंगारे द्रुतिकारणम्।'[4] आचार्य विश्वनाथ ने माधुर्य गुण की परिभाषा उसका रस एवं अभिव्यक्तिसाधनों पर विधिवत् प्रकाश डाला है —

1- काव्यप्रकाश,

2- रीतिकाव्य की भूमिका, पृ0 101

3- काव्यप्रकाश, 8/73

4- अवधविलास, पृ0 40

चित्तद्रवीभावमयो ह्लादो माधुर्यमुच्यते।

सम्भोगे करुणे विप्रलम्भे शान्ते धिकं क्रमात्॥

मूर्ध्नि वर्गान्त्यवर्गेन युक्तान्टठडढान्वित।

रणौ लघु च तद्व्यक्तौ वर्णाः कारणतां गताः।

अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा मधुरा रचना तथा।[1]

अर्थात् माधुर्य वह है जिसे एक ऐसा आह्लाद अथवा आनन्द कह सकते हैं जिसका स्वरूप सहृदय-हृदय की द्रुति अथवा द्रवीभूतत्व है। यह माधुर्य क्रमशः उत्तरोत्तर संयोग श्रृंगार करुण रस विप्रलम्भ श्रृंगार और शान्त रस में उत्तरोत्तर मधुर लगता है। वर्ण कटु वर्ण ट, ठ, ड, ढ को छोड़कर क से म पर्यन्त वर्ण अपने वर्ग के अन्त्य वर्ण से मिलकर श्रुति मधुर ध्वनि, ह्रस्ववर्णों से असंयुक्त रेफ और मूर्धन्य णकार, असमस्त रचना अल्प समासवती तथा मधुरपद योजना इस गुण के अभिव्यंजन निमित्त हैं। अवधविलास में प्राप्त माधुर्य गुण के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(1) सुन्दर श्यामगात सुभ अंगा। देखि मगन मन होइ अनंगा।

सीस मुकुट सुभ कुंडल कानन। नैन बिसाल मनोहर आनन।[2]

(2) हा सुंदर हा सुंदर सुंदा। मोहि तन गई कहाँ सुभ वंदा।

अधर मधुर मृदु बिंब रसाला। को मोहि पान कराइहै लाला।

नैन सों नैन बैन सो बैना। लगी रहति तन सों तन मैना।[3]

(3) मज्जन बसन अरु अंजन तिलक चारु चंदन पुहुप माल हारु हिये जानिये।

कुंडल तमोल नक बेसरि बिराजमान, अमिय अनूप कर कंकनहिं बानिये।[4]

~~(3) मज्जन ब~~

(4) चलत चंचल उडत अंचल कुच नितंब भारे भरी।

रंभ सी कोउ उर्वसी सी किंनरी सी गति धरी।

1- अवधविलास, पृ0 85 40 2- अवधविलास, पृ0 [redacted] 86

3- वही, पृ0 136 4- वही, पृ0 137

नैन अंजन बने खंजन नाक मोती नथ बनी।

बदन बेंदी तिलक रोरी चीर पांडुरी छबि बनी घनी।[1]

(5) राजीव नयन मदन मद मोचन। चितये सिपत्न सोच विमोचन।

कछु भृकुटि ललित बदन उमगि मुसिक्याने। तोरिहैं धनुष राम सिय जाने।[2]

<u>ओज गुण :-</u>

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार जिसे ओज कहते हैं वह सहृदय हृदय की वह दीप्ति अथवा प्रज्वलित प्रखरता है जिसका स्वरूप चित्त की विस्तृति अथवा उन्नत है। यह ओज वीर, बीभत्स और रौद्र रस में उत्तरोत्तर प्रकृष्ट रूप से विराजमान रहा करता है।

ओजश्चित्तस्य विस्ताररूपं दीप्तत्वमुच्यते।

वीर बीभत्स रौद्रेषु क्रमेणाधिक्य मस्य तु।[3]

इस ओज गुण के अभिव्यंजक साधन इस प्रकार कहे गये हैं —

वर्गस्याद्य तृतीयाभ्यां युक्तौ वर्णौ तदन्तिमौ।

उपर्यधो द्वयोर्वा सरेफौ टठडढैः सह।

शकारश्च षकारश्च तस्य व्यंजकतां गताः।

तथा समासो बहुलो घटनौद्धत्यशालिनी।[4]

अर्थात् वर्गों के प्रथम और तृतीय वर्ण एवं उनके अपने- अपने अन्त्य वर्णों से संयोग नीचे ऊपर अथवा दोनों ओर से किसी वर्ण के साथ संयुक्त रेफ संयुक्त अथवा असंयुक्त ट, ठ, ड, ढ तालव्य शकार और मूर्धन्य षकार, दीर्घ समासवती रचना एवं औद्धत्य-पूर्ण पद योजना।

1- अवधविलास, पृ0 157

2- वही, पृ0 235

3- साहित्यदर्पण, 8/4

4- साहित्यदर्पण, 8/5-6

अवधविलास प्रसाद एवं माधुर्य गुण प्रधान रचना है। कवि ने अपने कौशल से ओजगुण के लिए उपयुक्त अवसर निकाला है। राम की कौमार्य लीलाओं, मल्लयुद्ध सहित युद्धों की कल्पना की गयी है —

(1) एहि भाँति बरो करि ध्यान अरैं। छल सौं बल सौं मल्लयुद्ध करैं।
झटकैं लटकैं पग पग प्रब धरैं। उठके पटके पटकैं न डरैं।
इक इक्क की पंच लखैं कबहूं। नहिं राजकुमार गिरैं तबहूं।
उझकैं झझकैं झहराइ चलैं। जुरि कै जुरि कै तरवारि भलैं।
झकरैं झकरैं बकरैं लटकैं। गहि पाय से लै सिर ज्यों पटकैं।(अ0वि0192-93)

ओज गुण के कुछ अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं —

(1) भगे भभरि जगपति जब डाटे। पवन प्रचंड ज्यों घन फाटे।
चमकत तेग तेग बहु घाती। मनु दामिनि खेलत घन पाँती।
कबहुँक ललकि चलावे सत्ती। अरे टेरि दैत्य की छत्ती।
कबहुँक मुंड मुंड सो जोरे। मारे टक्कर कुंभ से फोरे।
कबहुँक ढाल ढाल धरि रंडा। खेलत हैं मनु बटकी दंडा।(वही,62)

प्रसाद गुण :—

मम्मट ने लिखा है —

शुष्केन्धनाग्निवत् स्वच्छजलवत् सहसैव यः।
व्याप्नोत्यन्यत् प्रसादो सौ सर्वत्र विहितस्थितिः।'[1]
अन्यविह चित्तम् ....।

इसी आधार पर आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है कि प्रसाद गुण हृदय की ऐसी निर्मलता है जो कि सूखी लकड़ी में आग की तरह चित्त में व्याप्त हो जाती है। यह गुण सभी रसों में अवस्थित रहता है। श्रवणमात्र से ही अर्थ की प्रतीति कराने वाले शब्द इसके

1- काव्यप्रकाश, 8 उल्लास।

अभिव्यंजन साधन हैं —

चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः।

स प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च।

शब्दास्तद्व्यंजका अर्थबोधकाः श्रुतिमात्रतः।[1]

अवधविलास प्रसाद गुण प्रधान रचना है। सरलता पर कवि ने विशेष ध्यान रखा है।

(1) अद्भुत अवधविलास यह कहत नहीं नहिं लाल।

जा महिं सीता राम की सुंदर कथा रसाल।(अव0पृ01)

(2) रामहिं पिता राम ही भ्राता। रामहि मात राम ही ताता।

रामहिं मित्र राम कुल देवा। भक्तन्ह के रामहिं की सेवा।(वही, 13)

(3) मुकुट मनोहर तिलक सिरोरुह बदन मदन मन मोहही।

नै रसाला भुजा बिसाला उर बनमाला सोहही।(वही, 61)

(4) रस ध्यान गुन तेज बलधन विद्या मद मानि।

सिद्धि रिद्धि जग भोग सुख ए सब माया जानि।(वही, 71)

(5) धर्म नहिन उपकार सम हित गुरु सम नहिं बाप।

सुख न लाल संतोष सम नहीं झूठ सम पाप।(वही, 100)

अवधविलास में रीतितत्व

रीति सम्प्रदाय के प्रतिष्ठापक आचार्य वामन हैं। उन्होंने रीति को काव्यात्मा स्वीकार करते हुए विशिष्ट पद रचना को रीति कहा है।

रीतिरात्मा काव्यस्य। विशिष्टा पदरचना रीतिः।[2]

रीति भाषा का बाह्य रूप है जेवर्य या ध्वनि का समानपदी है। गुण आन्तरिक रूप है। वास्तव में रीति सम्प्रदाय के दो आधारभूत तत्व हैं— गुण एवं

1- साहित्यदर्पण, 8/7-8

2- काव्यालंकार सूत्र 1/2/7

पद रचना। दण्डी जिसे मार्ग कहते हैं वामन उसे ही रीति समझते हैं। आचार्यों ने वैदर्भी, गौडी, और पांचाली रीतियों का उल्लेख किया है। गुण और रीति के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि ओज, माधुर्य और प्रसाद गुण को क्रमशः गौडी, वैदर्भी तथा पांचाली रीतियों से अभिव्यक्त किया जाता है। वस्तुतः में रीतियाँ ही गुण की पहिचान कराती हैं और गुण रस को उत्कर्ष देने वाले धर्म हैं। इस प्रकार रस, गुण एवं रीति के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि रस चित्त की आनन्दमयी स्थिति है। गुण भी चित्त की स्थितियाँ ही हैं माधुर्य द्रुति है, ओज दीप्ति और प्रसाद परिव्याप्ति। ये रस दशा के पूर्व की स्थितियाँ हैं, जो चित्त को उस आनन्दमयी परिणति के लिए तैयार करती हैं। वर्ण तथा शब्द मन की स्थितियों के प्रतीक हैं — ये स्वयं मन की स्थितियाँ तो नहीं है परन्तु विशेष मनोदशाओं के संस्कार उन पर आरूढ़ हैं। अतएव यह स्वाभाविक ही है कि कुछ वर्ण अथवा शब्द चित्त की द्रुति के अनुकूल पड़े और कुछ दीप्ति और कुछ परिव्याप्ति के। इस प्रकार ये वर्ण और शब्द द्रुति रूप माधुर्य के दीप्तिरूप ओज के परिव्याप्ति रूप प्रसाद के अनुकूल या प्रतिकूल पड़ते हैं। यही उनकी सार्थकता है। अलंकार की तरह रीति भी रस का उपकार करती हुई काव्य में अपनी सार्थकता सिद्ध करती है। इसीलिए उसे अंग संस्थान के समान माना गया है।[1]

<u>(1) वैदर्भी :—</u>

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार माधुर्य गुण व्यंजक वर्णों से पूर्ण, अल्प समासयुक्त ललित रचना में ही वैदर्भी रीति कही गयी है —

1- भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, भाग 2 — डॉ० नगेन्द्र, पृ० 185

माधुर्य व्यंजकैर्वर्णै रचना ललितात्मिका।

अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते।[1]

अवधविलास में वैदर्भी के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(1) घेरि घेरि रहि मिस लग आवत। करि करि चरित चोप चित लावत।

धावनि नवनि उठावनि पटकी। चितवनि तकनि चलनि मन हरकी।[2]

(2) राजीव नयन मदन मद मोचन। चितये सिय तन सोक विमोचन।

प्रफुलित बदन उमगि मुसुक्याने। तोरहिं धनुष राम सिय जानें।[3]

(3) कहँ किन्नर गन गंधर्व सिद्ध चारन गाऊ हीं।

नचत विद्याधरी रचित नंद ताल बजावहीं।

देवनारि सुचारि स्वर सब जन्म गीत गाउन लगीं।

अपसरा गनि हरषि रंभ नचत अति ही रस पगीं।[4]

गौडी :—

ओज गुण के अभिव्यंजक वर्णों से युक्त समास बहुला रचना में गौड़ी रीति की स्थिति स्वीकार की गयी है —

ओजः प्रकाशकैर्वर्णैर्बन्ध आडम्बर पुनः।

समास बहुला गौडी ......।[5]

अवध विलास में गौड़ी रीति के कम उदाहरण हैं —

(1) कबहुँक ललकि चलावे लली। हारे टेरि दैत्य की छली।

कबहुँ कि मुंड मुंड सों भेरे। मारे टक्कर कुंभ से फोरे।

कबहुँकि ढाल मध्य धरि गेंदू खेलत है मनु चटपी ढंग। (अ०वि०62)

1- साहित्यदर्पण, 9/2-3/1 2- अवधविलास, पृ0 231

3- अवधविलास, 235 4- अवधविलास, पृ0 153

5- सा0द0 9/3-4/1

(2) शंकर बटा कोप करि भारी। पुरुष एक प्रगटेउ भयकारी।

श्याम शरीर केस सिर ठाढ़े। दाँत बड़े मुख बाहर काढ़े।

लंबे गोड़ हाथ नख देखा। दुर्बल देह दिगम्बर वेषा।

कटकटाइ सन्मुख होइ धावा। भाग्यो राहु जान्यो बेगि आवा।(अ०वि०81)

(3) बबवा परेउ दौरि बहराई। दीन्हेउ मारि सैन्य बिचलाई।

झपटे उठे करें अति सोरे। दौरे भोर आँखि की फोरें।

ऊठी अग्नि आँखि तें छरके। जरे जीन दौरे मन भरके।

गोला चले नाल धहराने। हलचल भई ऊँट अरराने।(वही, 82)

<u>पांचाली :-</u>

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार पांचाली वह रीति है, जिसमें माधुर्य और ओज अभिव्यंजक वर्णों को छोड़कर प्रसाद गुण अभिव्यंजक वर्णों का प्रयोग हो।[1] अवधविलास प्रसादमयी रचना है, जिसमें प्रयुक्त पांचाली रीति के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(1) विंजन पाक बहुत विधि कीने। रंग सुगंध अनेकन्ह दीने।

देखत के जु मनोहर नीके। एक लवन बिनु लागत फीके।(वही, 9)

(2) जुआ चोरी मास मद्य निन्दा औ पर नारि।

मिथ्या तामस लाल कहि आठउ अशुभ निवारि।(वही, 15)

(3) जप करि तप करि योग करि ध्यान व ज्ञान करि हेत।

लाल शुद्ध जब होत हिय तब हरि दरसन देत।(वही, पृ० 40)

1- साहित्यदर्पण, पृ० 9/4

अवधविलास में शब्द शक्ति :-

शब्द की रचना संस्कृत के शब्द धातु से हुई है, जिसका धात्वर्थ है शब्द करना, ध्वनि करना। शब्द में ध्वनि एवं अर्थ का योग आवश्यक है। शब्द में यह अर्थ तीन प्रकार का होता है — वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ। इनमें वाच्य अर्थ अभिधा से लक्ष्य, लक्षणा से तथा व्यंग्य अर्थ व्यंजना शक्ति द्वारा प्रतिपादित होते हैं।[1]

(1) अभिधा :- अभिधा वह शक्ति है, जिससे संकेतित अर्थ का बोध होता है। अभिधा से ही वाचक कहा जाता है, जिसके अनुसार भेद कहे गये हैं — जाति, गुण, द्रव्य और क्रिया।[2]

(1) अवधविलास में जातिवाचक शब्द :- जिस शब्द से जाति का बोध हो, उसे जाति वाचक शब्द कहते हैं। जैसे —

(1) वट दल ताल तमाल विशाला। पाटल चम्पक साल प्रियाला।
श्रीफल कपित्थ कदम्ब लगाये। सीसम जंबु निंब सुहाये। (वही, 114)

(2) राजा नदी वैद्य धनधारी। श्रोत्रिय विप्र साधु उपकारी। (वही, 22)

(3) सारस हंस मयूर जहाँ डोलै। चातक सुक कोकिल अति बोलै। (वही, 271)

(4) पद्मराग मनि सरज कांती। गजमुक्ता विद्रुम की पाँती। (वही, 20)

(5) पादप सिंधु भ्रमर मृग राधा। हस्ती मीन पतंग जो भाषा।
चील्ह कपोत सर्प सरनारा। व्या अजगर देह विचारा। (वही, 10)

(2) गुणवाचक शब्द :- जाति या व्यक्ति की विशेषता द्योतित करने वाले शब्द गुणवाचक कहलाते हैं —

(1) स्व श्वेत वसन धर कंड जन। (वही, 1)

(2) नीच होहि उत्तम पर संगी। (वही, 12)

(3) शुभ अरु अशुभ कर्म फल त्यागि। (वही, 16)

1- साहित्यदर्पण, 2/2-3

2- वही, 2/4

(4) बिम्ब कमल उर भीतर राजे। (अवधविलास, पृ० 34)

(5) छीन सरीर भये बलहीना। (वही, पृ० 34)

(6) स्वेत स्याम अरक्त पुनि नील पीत रँग लेत। (वही, 35)

(3) द्रव्य वाचक शब्द :— जो शब्द एक विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति का बोध कराते हों, द्रव्य (व्यक्ति) वाचक शब्द माने जाते हैं। जैसे —

(1) तब रावण मारीच पठावा। देखत राम लछन तहँ आवा। (वही, 271)

(2) नारद सारद सनकादि राजा। (वही, 23)

(3) गौतम सौनक और पुलस्ति। सौभरि सुरगुरु शुक्र अगस्ति।
दुर्वासा भृगु बिपन सुदामा। (वही , 4)

4- क्रियावाचक :— जो शब्द क्रिया व्यापार से युक्त हों क्रियावाचक शब्द कहलाते हैं —

(1) धरो हरि अवतार। (वही, पृ० 1)

(2) सारद गावत ताल बजाई। (वही, पृ० 23)

(3) कन्या मिलि खेलन तहँ जाहीं। (वही, पृ० 44)

रचना की दृष्टि से शब्दों के तीन भेद किये गये हैं — रूढ़, यौगिक, योगरूढ़।

रूढ़ :— जिन शब्दों के खण्ड सार्थक नहीं होते हैं उन्हें रूढ़ कहा जाता है —

(1) कमल नाभि ब्रह्मा उपजाए। (वही, पृ० 14)

(2) शिव को नाम कहत जग मीठा। (वही, पृ० 14)

(3) पहाड़ रोकि रोकि रह अड़े। (वही, पृ० 265)

यौगिक :— यौगिक वे शब्द हैं जो दो या दो से अधिक शब्द या शब्दांशों से मिलकर बनते हैं और जिनके प्रत्येक खण्ड सार्थक होते हैं। जैसे —

(1) सीता पति रघुपति अवतारी। (वही, पृ० 14)

(2) द्वारपाल सब बैठे सिर नाई। (वही, पृ० 231)

(3) पीत पितम्बर साँवरे अंग। (वही, पृ० 231)

योगरूढ़ :—

जो शब्द खण्डों से बनते हैं और जिनके खण्ड भी सार्थक होते हैं, किन्तु वे खण्ड अपने सामान्य अर्थ को छोड़कर विशेष अर्थ का ज्ञान कराते हों, योगरूढ़ शब्द होते हैं —

(1) प्रथमहिं गुरू गणपति सिरनाऊँ। (अवधविलास, पृ0 3)

(2) सुरपति संशय दूरि करि। (वही, पृ0 17)

(3) जेहि विधि भइ मनुज तन धारा। (वही, पृ0 40)

(4) रूप भरी गुन भरी प्रवीना। (वही, पृ0 43)

(5) दसमुख देखि मात पछिताई। (वही, पृ0 48)

लक्षणा :—

लक्षणा का मूल है किसी शब्द का अपने मुख्य अर्थ से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होना। किन्तु वह भिन्न अर्थ में प्रयोग होता है, अपने अर्थ के माध्यम से। उस अर्थ का आधार लोक व्यवहार या प्रसिद्ध प्रचलन है। इस प्रकार लक्षणा में मुख्यार्थ बाधा, मुख्यार्थ योग तथा रूढ़ि अथवा प्रयोजन से अर्थ की अभिव्यक्ति की जाती है।[1] आचार्य विश्वनाथ ने लक्षणा के 80 भेद बताये हैं[2] जिनमें से कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। लक्षणा के मुख्य दो भेद होते हैं — रूढ़ि लक्षणा, प्रयोजन वती लक्षणा।

(1) पुरी अयोध्या सब सुर नारी। रहति सदा बैकुण्ठहि भारी।
सोइ ले दीन्ह प्रभु मन भाई। स्वायंभू लई सीस चढ़ाई।
अवधपुरी भू मध्य बिराजा। (वही, पृ0 18)

उक्त उदाहरण में अयोध्यापुरी का अर्थ है — अयोध्या नगरी जिसमें घर महल, बाजार आदि हैं किन्तु यहाँ मुख्यार्थ की बाधा हो रही अतः अयोध्या का अर्थ है अयोध्या के निवासी व्यक्ति। इसी प्रकार अयोध्या को स्वायंभुव मनु ने शीश में चढ़ाकर लिया यह

1- काव्यप्रकाश, सम्पाद —2/   2- सा0द0 2/

अर्थ बाधित है क्योंकि भवनों को सिर में रखकर नहीं लिया जा सकता है अतः लक्ष्यार्थ होगा आदरपूर्वक लेना।

(2) तब मुनि ताहि मंत्र पकराया।(अवधविलास, पृ011)

मंत्र ऐसी वस्तु नहीं है, जिसको हाथ से लिया जा सके।अतः मुख्यार्थ की बाधा है। यहाँ मंत्र उच्चारण की विधि बतायी ऐसा अर्थ किया जायेगा।

(3) मेरी मेरी करत काल नियराना।(वही, पृ0 202)

(4) बिनु तीरथ पातक नहिं जाहीं।(वही, पृ0 203)

काल निकट आ गया। वह व्यक्ति नहीं है जो चल सके। काल निकट आना रूढ़ि है। इसी प्रकार पातक अ, जा चल नहीं सकते। यहाँ मुख्यार्थ होगा नष्ट होना।

(5) सदा फले फूले बनवारी।(वही, पृ021)

इसका अर्थ होगा वन एवं वाटिका सदैव फलती-फूलती है। वन एवं बगीचा नहीं फलते-फूलते अतः मुख्यार्थ की बाधा है। पेड़ फलते-फूलते हैं।

(2) प्रयोजनवती लक्षणा :—

जिस लक्षणा से किसी विशेष प्रयोजन की सिद्धि हो, उसे प्रयोजनवती लक्षणा कहते हैं। जैसे —

(1) रामहिं पिता राम ही भ्राता।रामहिं मातु राम ही तात(वही, पृ013)

(राम भक्तों के सब पिता, भ्राता, मात एवं तात हैं)यहाँ राम को मात-पिता बतलाना मुख्यार्थ में बाधा उपस्थित कर रहा है। कवि का प्रयोजन है कि राम ही भक्तों के रक्षक सर्वस्व और सुखदायक हैं। प्रयोजनवती लक्षणा के दो भेद बताये गये हैं —

गौणी प्रयोजनवती।

शुद्धा प्रयोजनवती।

(1) गौणी प्रयोजनवती लक्षणा :— गुण या सादृश्य सम्बन्ध से लक्ष्यार्थ ग्रहण करने पर गौणी प्रयोजनवती लक्षणा होगी। जैसे :—

(1) अवधविलास समुद्र है, साधु साधु तट जाहि। (अवधविलास, पृ01)

अवधविलास ग्रन्थ है समुद्र नहीं है। गम्भीरता इत्यादि गुण की समानता के कारण ही उसे समुद्र कहा गया है।

(2) भये प्रसन्न कमलदल नैना। (वही, पृ040)

विष्णु के नेत्रों को कमलदल के समान सुन्दर आरक्तवर्ण बतलाना ही कवि का अभीष्ट है।

(3) साधु संग सुअंजन भाई। महातिमिर अज्ञान नसाई। (वही, 22)

साधु संग अंजन नहीं हो सकता है। अंजन जैसे अंधकार में देखने की शक्ति बढ़ाता है, उसी प्रकार साधु संग अज्ञान को देखकर उसे ज्ञान की ओर प्रेरित करता है।

(2) शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा — जहाँ सादृश्य सम्बन्ध के अतिरिक्त अन्य किसी सम्बन्ध से लक्ष्यार्थ को बोध हो, वहाँ शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा होती है —

(1) अवधि क्यारू भई सुख बरसे। (वही, 239) यहाँ पर अवध में रहने वाले स्त्री-पुरुष का अर्थ लिया जायेगा।

(2) नैन मूंद पीछे रही ठाढ़ी। (वही, पृ0259)

नेत्र का अंग पलक बंद किया था अतः अंगांगिभाव सम्बन्धा शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा है।

(3) जैसे नैन हीन होइ कोई? को देख्यो यह सकल जग सोई। (वही, पृ07)

देखने का कार्य नेत्र नहीं पुतलियाँ करती हैं अतः यहाँ अंगांगिभाव संबंधा शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा है।

आरोप की दृष्टि से लक्षणा के दो भेद किये गये हैं। सारोपा एवं साध्यावसाना।

(1) सारोपा लक्षणा :— वह लक्षणा सारोपा लक्षणा कही जाया करती है जिसमें विषय (अर्थात् आरोप विषय जिस पर आरोप किया जाय) अपने स्वरूप में विराजमान रहते हुए भी अपने से भिन्न अर्थात् विषयी आरोप्यमाण जिसका आरोप किया जाय) के साथ एक रस अभिन्न प्रतीत हुआ करता है।[1] जैसे -

(1) सेवक निर्मल मनसर मुक्त भाव लसंत। (अवधविलास, पृ0 13)

(2) कोमल चरन कमल मन मधुकर। (वही, पृ0 40)

(3) प्रेम पंथ खाँड़े की धारा। (वही, पृ0 106)

उक्त उदाहरणों में सेवक चरन, प्रेमपंथ पर मनसर, कमल तथा खाँड़े की धार अभिन्न रूप में प्रयुक्त है अतः यहाँ सारोपा गौणी लक्षणा है। यह आरोप निर्मलता कोमलता एवं तीक्ष्णता के लिए है।

(2) साध्यवसाना लक्षणा :— जहाँ केवल विषयी हो, विषय शब्दों द्वारा व्यक्त न हो, वहाँ साध्यवसाना लक्षणा होती है।

अवधविलास में व्यंजनाशक्ति

अभिधा तथा लक्षणा शक्ति के विरत होने के बाद शब्द और अर्थ की शक्ति से युक्त विलक्षण अर्थ का बोध कराने वाले व्यापार को व्यंजना शक्ति कहते हैं।[1] व्यंजना में एक अलौकिक कमनीय अर्थ की अभिव्यक्ति होती है, जिसमें अभिधा तथा लक्षणा का कोई हाथ नहीं रहता है। यह व्यंजना दो प्रकार की होती है — (1) शाब्दी व्यंजना (2) आर्थी व्यंजना। शाब्दी व्यंजना के दो भेद हैं - अभिधामूलक तथा लक्षणामूलक व्यंजना।

(1) अभिधामूलक व्यंजना :—

अभिधामूलक व्यंजना शब्द की वह शक्ति है जो कि संयोगादि एवं अभिधा नियामकों में से किसी के द्वारा कहीं किसी अनेकार्थक शब्द के किसी एक प्राकरणिक अर्थ में नियंत्रित कर दिये जाने पर एक ऐसे अर्थ को उपस्थित किया करती है जो वाच्यार्थ से सर्वथा विलक्षण अर्थ हुआ करता है। इसे विलक्षण अर्थ का ज्ञान संयोग, वियोग, साहचर्य,

---

1- साहित्यदर्पण 2/13

विरोध अर्थ, प्रकरण, लिंग, अन्य संनिधि, सामर्थ्य, औचित्य देशकाल, व्यक्ति, स्वर आदि अर्थात् अभिनय[1]। अवधविलास में व्यंजना के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(1) लागत चक्रबान हरि करके। (अवधविलास, पृ061) यहाँ पर चक्र सुदर्शन के संयोग के कारण हरि का अर्थ विष्णु किया जायेगा। हरि अनेकार्थक शब्द है, जिसके अर्थ हैं — हरा, हरापन लिये पीला, पिंगल, कपिल, पीत, ले जाने वाला, वहन करने वाला, विष्णु, इन्द्र, शिव, ब्रह्मा, यम, सूर्य, चन्द्रमा, मनुष्य, प्रकाश की किरण अग्नि, वायु, सिंह, सिंहराशि, अश्व, गीदड़, इन्द्र का घोड़ा, वैकुण्ठादि, बंदर वनमानुस, हंस, कोयल, मेढक, साँप, मोर[2] इत्यादि।

(2) एक समय वैकुण्ठहिं माहीं। नारायन नित्य रहत जहाँ ही। (वही, 23)

यहाँ वैकुण्ठ(देश) के संयोग से नारायण का अर्थ विष्णु ही होगा।

(3) बिंजन पाक बहुत विधि कीने।

× × ×

एक लवन बिनु लागत फीके। (वही, पृ09)

उक्त उदाहरणों में बिंजन(व्यंजन) तथा लवन(लवण) अनेकार्थवाची शब्द हैं, जो साहचर्य के कारण पका भोजन तथा नमक के अर्थ में प्रयुक्त हैं।

(4) कंउ हरि अवतार भक्त काज जे वपु धरे। (वही, पृ0 1)

(5) अर्जुन कृष्ण संग वृषकेतु। (वही, पृ037)

हरि अर्जुन, कृष्ण, प्रकरण, के कारण विष्णु, पाण्डव, यदुवंशी कृष्ण अर्थ प्रगट करते हैं।

(6) लाल बान मों आपुनों माल दीजिए काढि। (वही, पृ0 17)

माल अनेकार्थक है, उसके साथ वाले धर्म, लिंग या चिन्ह के कारण माल का अर्थ धन-दौलत होगा।

(7) सबसे नाम दोउ हरि पाये। मधु सूदन कैटभ अरि गाये। (वही, 72)

---

1 साहित्यदर्पण, 2/14 की व्याख्या।

2- वृहत् हिन्दी कोश, सं0 कालिका प्रसाद, पृ0 1589

यहाँ पर हरि के सन्दर्भ में चर्चा की जा चुकी है। मधुसूदन का अर्थ मधु (राक्षस) सूदन(हनन) अर्थात् भौंरा न लगकर मधु राक्षस को हनन करने वाला है, जो सामर्थ्य के कारण है।

(2) लक्षणामूलक शाब्दी व्यंजना :—

लक्षणामूलक व्यंजना वह है जिसके द्वारा उस प्रयोजन का प्रत्यायन करवाया जाया करता है, जिसकी दृष्टि से लाक्षणिक पद का प्रयोग हुआ करता है।[1]

(1) तुमही तात तुमही माता भ्रात वत्सल भक्त के।(अवधविलास,60)

यहाँ पर तात, मात से शुभ चिंतक एवं स्नेहमयी रक्षक अर्थ लक्षित है।

आर्थी व्यंजना :—

आर्थी व्यंजना अर्थ में रहती है। शब्द का पर्यायवाची रख देने पर भी यह वैशिष्ट्य बना रहता है। विश्वनाथ का मत है कि वक्ता, बोद्धव्य, वक्तव्य, प्रकरण, देश काल, काकु, वाच्य, अन्य सन्निधि, चेष्टा अन्यान्य[2] की विशेषतावशात् से व्यंग्यार्थ की प्रतीति कराने वाली आर्थी व्यंजना कहलाती है। अवधविलास में आर्थी व्यंजना के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(1) सीय कहै बल हरिहर चन्दै देईं। अस कछु भेद बढ़ावै रईं।(235)

यह सीता का विशिष्ट कथन है जिसमें राम के प्रति प्रगाढ़ अनुराग व्यंजित है।

(2) है कोउ ताहि जाइ समुझावै। मारे जाइ कि घर ले आवै।
तासि बैकुंठ मिले मोहि आई। के सनमुख होइ करै लराई।(वही,53)

उक्त व्यंजना वक्ति निषाद पात्र के कारण है अतः यहाँ वक्तृवैशिष्ट्योत्पन्न वाच्य सम्भवा व्यंजना है।

1- साहित्यदर्पण, 2/15 व्याख्या

2- वही, 2/16

(3) जे जे तुम कहिहौ कछु काजा। करि है हम सेवक तुम राजा।(वही,50)

इसका श्रोता रावण है। तात्पर्य यह है कि देवताओं को पराजित कर तथा अधिकृत की जायेगी। यदि भरत हो तो इस प्रकार किया जाता है कि राम जो कहेंगे भरत वही करेंगे। अतः यहाँ बोधव्य वैशिष्ट्य व्यंजना है।

(4) तिय को पिय पति की विधाता।(वही,पृ0 266)वाच्यार्थ है कि ब्रह्मा ने पति को पत्नी का प्राण बनाया है। इस वाच्यार्थ से व्यंग्यार्थ स्पष्ट हो रहा है कि अयोध्या में राम से अलग रहकर सीता का जीवन व्यर्थ है। वह मर जायेगी। यह वैशिष्ट्य वाक्य पर आधारित है। अतः यहाँ वाक्य(वक्तव्य) वैशिष्ट्योत्पन्न आर्थी व्यंजना है।

(5) फुलवा लेन कतहु नहि जाइब। याही ठौर प्रात पुनि आइब।(231)

हम प्रातःकाल इसी स्थान पर पुनः आयेंगे' इस वाच्यार्थ का व्यंग्यार्थ निकलता है कि सीता जी राम के दर्शन से अभी तृप्त नहीं हुई हैं। यह व्यंग्यार्थ काल सूचक शब्दों से व्यक्त होता है अतः यहाँ कालवैशिष्ट्योत्पन्न आर्थी व्यंजना है।

(6) तजे सिंह समरथ सरनाई। जंबुक के सरनहि रहे जाई।

पारस को तजि पकरै कंकर। पूजै प्रेत छाँड़ि हरि शंकर(वही,232)

उक्त वचन सीता के हैं। जो राम को ही वर रूप में ग्रहण करने का संकल्प कर चुकी हैं। अतः यहाँ काकु वक्रोक्ति के द्वारा उक्त व्यंग्यार्थ को प्रकट किया गया है। जंबुक कंकर, प्रेत अन्य राजाओं के लिए कहा गया है।

नवम अध्याय

अवधविलास में अलंकार एवं छन्द-योजना

नवम् अध्याय

अवध विलास में अलंकार एवं छन्द योजना

अवधविलास में अलंकार योजना :-

अलं + कृ के संयोग से अलंकार बना है, जिसकी व्युत्पत्ति दो प्रकार से की जाती है —'अलं करोति इति अलंकारः' और अलं क्रियते अनेन इति अलंकारः' आदिकाल से ही काव्य में अलंकारों का महत्वपूर्ण स्थान स्वीकार किया गया है। दण्डी काव्य शोभाकारक धर्मों को अलंकार कहते हैं।[1] वामन के अनुसार काव्यसौन्दर्य ही अलंकार है।[2] आचार्य विश्वनाथ की मान्यता है कि शब्दार्थ के शोभातिशायी धर्म ही अलंकार है।[3] वस्तुतः 'भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप-गुण और क्रिया का अधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी-कभी सहायक होने वाली युक्ति अलंकार है।[4] कहना नहीं होगा कि अलंकार काव्य को सौन्दर्य रस ही नहीं प्रदान करता अपितु वह उसके वर्ण भी करता है। इसीलिए समर्थ कवि अलंकारों का प्रयोग स्वाभाविक रूप में कर काव्य को अभिनव रूप देते हैं। लालदास सरल काव्य के पक्षधर हैं, अतः उसे सजाने, संवारने का विशेष प्रयास नहीं किया है फिर भी अवधविलास में प्रचलित सभी अलंकारों के दर्शन होते हैं —

शब्दालंकार

(1) अनुप्रास :-

वर्ण साम्य ही अनुप्रास है।[5] आचार्य विश्वनाथ ने अनुप्रास के पांच भेद स्वीकार किये हैं।[6] अवधविलास में पंचधा अनुप्रास स्थान-स्थान पर दिखायी देता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

---

1 2

<u>(क) छेकानुप्रास</u> :- जहाँ अनेक व्यंजनों की एक बार आवृत्ति हो।[1]

(1) कबहुँ गोप गोपिका नारी।(अवधविलास, पृ04)

(2) बहु बली रज रली, फिरति चपल छबि छली।(वही 156)

<u>(ख) वृत्यनुप्रास</u> :- जहाँ व्यंजन की अनेक बार आवृत्ति हो -

(1) सनक सनातन सनत कुमारा।(वही, पृ03)

(2) हेरहि दयाल दसौं दिगपाला।(वही, पृ04)

<u>(ग) श्रुत्यनुप्रास</u> :- एक ही स्थान से उच्चरित होने वाले व्यंजनों के सादृश्य को श्रुत्यनुप्रास कहते है।[2]

(1) बालक बात कहत तुतराई। मात पिता को लगत सुहाई।(पृ04)

(2) जहँ अस बरस बहुत सुख पाता(वही, पृ0 233)

(3) ताहि जपत तप करत बहुत दिन।(वही, पृ0 12)

<u>(घ) अन्त्यानुप्रास</u> :- यदि व्यंजन के साथ स्वर की आवृत्ति पदान्त हो, तो वह अन्त्यानुप्रास कहलाता है।[3]

(1) प्रथमहि गरु गनपति सिर नाऊँ। पुनि हरिहर सरस्वती मनाऊँ।

<u>यमक</u> :- सार्थक भिन्न अर्थ वाले स्वर व्यंजनों की क्रमशः आवृत्ति ही यमक अलंकार है।[4]

(1) नारी प्यारी जीव की न्यारी करी न जात।
नारी के न्यारे भये नारी छूटि हो जात।(अवधविलास, 86)

(2) चली कामिनी कामिनी करि करि साज समाज।
कोकर कोकिल गावती लै लै अपने साज।(वही, पृ0157)

1- साहित्यदर्पण, पृ0 10/3

2- वही, पृ0 10/5   3- वही, 10/6

4- वही, पृ0 10/8

(3) तीरथ अवधि ज्यौं अवध है राम अवधि अवतार।

त्यौ भाषा अवध अवधि विलास अपार।(अवधविलास, पृ03)

(4) छोड़ रघुवर वर रुचि अभिलाषत।(वही, पृ0 233)

यमकालंकार के भी अनेक उदाहरण अवधविलास में मिलते हैं —

(1) स्वारथ परमारथ सबै मानी तात प्रसंग।(पृ02)

(2) किते धावत किते पावत देत लेत न सुद्ध परे।(वही, 156)

(2) श्लेष :— जहाँ श्लिष्ट पदों द्वारा अनेक अर्थों के अभिधान दिये जाय, वहाँ श्लेष अलंकार होता है।[1]

(1) अनुपम है कल को राजत नम गुनधीर।(वही, पृ02)

(2) सेवक निर्मल मानसर कुमुद भाव लसति

जहाँ होहि तहाँ रवि ज्यौं हर्षत धावत संत।(वही, पृ013)

(3) देहु राम वर सैन किशोरी।(वही, पृ0 223)

वक्रोक्ति :— वक्रोक्ति वह शब्दालंकार है, जहाँ श्लेष अथवा काकु के कारण किसी के अन्यार्थक वाक्य को अन्य किसी अर्थ में लगा लिया जाय।[2] अवधविलास में राम के विरक्त होने पर दशरथ के कथन में काकु ध्वनि का अच्छा प्रयोग हुआ है —

(1) भल हमार सेवा सुत कीयेहु। कुछ भयो वन कों मन दीयेहु।

भल विवाह करि पूत मिलाये। करि हिम विजय राज्य सुख पाये।

भल अकतरी मोर सिरावा। भल पतोह को पथ बुझावा।(वही203)

वीप्सा :— मनोभावों की अभिव्यक्ति के लिए जहाँ एक शब्द की आवृत्ति हो —

(1) रच रच अहो देव अनन्ता।(वही, 64)

(2) भज भज सुर करहिं विचारे।(वही, 64)

(3) राखि राखि शरनागत त्राता।(वही, 68)

1- साहित्यदर्पण, 10/11
2- साहित्यदर्पण, 10/9

अर्थालंकार

(1) उपमा :— उपमा दो पदार्थों का वह वैधर्म्यरहित साम्य है जो कि एक वाक्य प्रतिपाद्य होता है।[1] इसके चार अंग होते हैं उपमेय, उपमान, वाचक और साधारण धर्म। जहाँ चारों अंग होते हैं वहाँ पूर्णोपमा होती है —

(1) धन जोबन जीवन तन तेते। दामिनि सम चंचल सब तेते। (201)

(2) फैलति दुति चमकति चपला सी। (वही, 187)

(3) कोमल पद कर कंज समाना। (वही, 111)

लुप्तोपमा —

(1) उपमेय लुप्तोपमा — श्वेत बदन पर चन्द्र सम। (वही, 1)

(2) धर्म लुप्तोपमा — कुटिल कुमति दूषक अभिमानी। स्वान समान तिरछोह करि जानी। (4)

वाचक लुप्तोपमा — स्याम शरीर केस सिर ठाढ़े। (वही, 81)

रूपक — जहाँ अपन्हुत उपमेय पर उपमान का अभेद आरोप हो, वहाँ रूपक होता है।[2] इसके तीन भेद होते हैं —(1) निरंग (2) सांग एवं (3) परम्परित।

(1) निरंग — चरन कमल पनहीं अति लावें। (पृ0 183)

(2) सांग — अपथविलास सकुच है साधु साधु तट जाहि।

रतन कथा रघुवीर की लाल बहुत ना बीहि। (वही, 1)

ग्रीवा आंगनि रन वेदी थापब। राका मुखमल मुहि खापब।

ध्वजा दंड नीव धर्म गड़ाइब। आवाहन सुर सूर बुलाइब। (वही, 46)

(3) परम्परित : जोग जहाजबार संसारा। केवट गुरु उतारे पारा। (वही, 211)

सन्देह :— प्रकृत में अप्रकृत का कवि प्रतिभोत्थापित संशय सन्देह कहलाता है।[3]

1- साहित्य दर्पण, पृ0 10/14 2- वही, 10/28 3- वही, 10/35

(1) किधौं हरिहर पै कोउ छबीला। निकसे आइ करत कछु लीला।

किधौं तुम कछु तप बल करि आने। किधौं बीर बल देखत आने।

किधौं माया तन धरे अनूपा। मोहत फिरत मोहिनी रूपा। (अ०वि० 160)

<u>भ्रान्तिमान :-</u> सादृश्य के कारण जहाँ एक वस्तु में दूसरी वस्तु का अनुभव हो, वहाँ भ्रान्तिमान होता है।[1]

(1) कोमल वचन मधुर सुखदाई। कोकिल रीझि सुनत मन लाई।

बैठति आइ नडलि पर नितही। चितवत हिय तन बोलत नहिं तही।

<u>उल्लेख :-</u> जहाँ एक वस्तु का उल्लेख अनेक प्रकार से हो, वहाँ उल्लेख अलंकार होता है।[2]

अवध विलास में ज्ञातृभेद का उदाहरण सीता स्वयंवर के समय मिलता है, जहाँ राम के सुदर्शन सौन्दर्य का अनेक लोग वर्णन करते हैं—

जाके जौन भावना आई। ताको तस प्रभु देखि सिहाई।

पशु पंछी नर नारि निहारो। देखि देखि रहे रीझि बिचारी।

भाई ए कौन कहाँ के बासी। देखहु पूछ रूप की राशी।

है कोउ राजसुत के जाये। हम नहिं जानत कहाँ ते आये। (वही, 270)

अन्तर्यामी निर्गुण कहैं वासुदेव कहैं भक्त।

लाल गोपी मोही कहैं काम रूप समता। (वही, 233)

<u>(2) विषयभेद :-</u>

नमोराम रघुवंश कुल धर कमल चरन अवतार भू भार हर।

दशरथ भक्त के सब्य पूरन करन धर्म के सेतु संहार धार।

नमो नाथ रघुनाथ संकट हरन मुनिराज के काज धनुबान धार।

ताड़िका मारिके असुर संहार करि के मुनि वधू तारि के। (वही, 258)

<u>अपन्हुति :-</u> जहाँ उपमेय का निषेधकर उपमान का आरोपण किया जाय, वहाँ अपन्हुति अलंकार होता है।[3]

1- साहित्यदर्पण, 10/36   2- वही, 10/37   3- वही 10/38

कोउ कह सुनु भया बात हमारी। मानुष न होहि अहै अवतारी।236

भ्रान्त्यापन्हुति के अनेक उदाहरण अवधविलास में मिलते हैं। शृंगी ऋषि एवं वेश्याओं के प्रसंग में कवि द्वारा वर्णित उनके मुनि रूप में इस अलंकार की छटा दर्शनीय है —

सुन्दर वेनी बना रसाला। ताहि कहै इक जटा विसाला।
महा अमोल जराय को टीका। ताहि कहै दीये तिलक सुनीका।
केसरि चंदन अंग लगाये। ताहि कहै तन भस्म चढ़ाये।
कंचन चूरी मुदरी राजै। अद्भुत कुश मुनि हाथ विराजै।(110)

उत्प्रेक्षा :— उपमेय में उपमान की सम्भावना को उत्प्रेक्षा कहते हैं।[1] लालदास ने उत्प्रेक्षा का अधिक प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं —

(1) भ्रातहि मिले भरत जब आई। मानहुँ रंक महानिधि पाई।(13)
(2) रसनिधान महाकामन्त। मनहुँ काम मूरति बपु धुरवंत(47)
(3) गात छिये अति होय हुलासा। जनु रवि देखि कमल परगासा।(194)

अतिशयोक्ति :— आचार्य भामह के अनुसार लोकातिक्रान्त गोचर वचन[2] एवं साहित्यदर्पणकार[3] के मत से अध्यवसाय के सिद्ध होने पर अतिशयोक्ति होती है —

कछु के बात कछू मन आवै। सो कहि देत कहा नहिं पावै।(145)

प्रतिवस्तूपमा :— जहाँ सादृश्य की अभिव्यंजना से युक्त दो वाक्यों में एक ही साधारण धर्म पृथक्-पृथक् शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाय, वहाँ प्रतिवस्तूपमा होती है।[4]

तेल बूँद जल माहि जिमि परत करत विस्तार।
तैसे अवनी पर अवध परत ही भई अपार।(वही, 19)

1- साहित्यदर्पण, 10/40
2- काव्यालंकार, 2/81
3- साहित्यदर्पण, 10/46
4- वही, 10/49

दीपक :— प्रस्तुत और अप्रस्तुत पदार्थों में एक धर्म सम्बन्ध अथवा अनेक क्रियाओं के एक कारक रहने में दीपक अलंकार माना गया है।[1]

गुन कों निदै निर्गुनी लोगहि कुमती जाति।

पूत को निदै कुपिया चोर चांदनी रात।(अवधविलास, पृ05)

दृष्टान्त :— समानधर्म युक्त उपमेय एवं उपमान वाक्य के बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव को दृष्टान्त कहते हैं।[2] लालदास का ज्ञान विस्तृत है, अतः दृष्टान्त से अनेक स्थलों से अपने काव्य को सँवारा है —

(1)कहे सुने फ टि जात है चित्त को लाल सुभाव।

रस गोरस संग घात के बिगरै लगे कसाव।(वही, 262)

(2)बालक बात कहत तुतराई। मातपिता कों लगत सुहाई।

तैसे ज्ञान हीन मम बानी। सुनि रीझहिंगे पंडित ज्ञानी।(वही, 4)

निदर्शना :— आचार्य विश्वनाथ के अनुसार 'वस्तुओं का परस्पर संबंध सम्भव अथवा असम्भव होकर आपस में बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव का बोध न करे वही निदर्शना अलंकार होता है'—

(1)तिनहि कह्यो चाहत हों ऐसे। पंग गह्यो चह जैसे।(7)

(2)कहँ यह धनुष कठोर अभंग। कह ए बालक कोमल अंग।

केउ कहे भानु भये तनु छोटे। चाहिय पराक्रम के गुन मोटे।(234)

व्यतिरेक :— व्यतिरेक के मूल में अतिरेक है जिसका शब्दार्थ है, बढ़ा-चढ़ा होना। अलंकार की दृष्टि से किसे बढ़ा चढ़ा कर कहा जाय इसमें पर्याप्त मतभेद है। भामह मम्मट पंडितराज इत्यादि उपमेय के उत्कर्ष की बात कहते हैं तो रुय्यक, विश्वनाथ, आदि दोनों के उत्कर्ष को मान्यता देते हैं।

1- साहित्यदर्पण, पृ0 10/48

(1) मोर मुग पछु सिखि अस कीना। दीपक पवन लगत मलीना।(182)

(2) सोभा अस लावनि रूपमाहीं। अस छवि कोटि काम में नाहीं।(236)

<u>विनोक्ति</u> :— यदि कोई वस्तु दूसरी वस्तु के बिना अशोभन या शोभन वर्णित हो तो विनोक्ति अलंकार होता है।[1]

(1) केतो करहु सयानप कोई। बिनु उपदेश ज्ञान नहिं होई।(10)

(2) बिन दीपक ज्यों गृह अंधियारा। धर्म बिना निर्धन औ तारा।

नीर बिना जैसे जड़ न होई। वेद बिना जैसे विप्र न कोई।(99)

(3) मर्यादा बिनु धर्म न कोई। धर्म बिना परलोक न होई।(160)

<u>परिकर</u> :— काव्य में विशेषण का साभिप्राय प्रयोग परिकर अलंकार कहलाता है।[2]

गुनाकार माया मय भाषी। ज्यों हार हरे सबै केउ रखी।(वही, 257)

<u>अर्थान्तरन्यास</u> :— आचार्य विश्वनाथ के अनुसार अर्थान्तरन्यास वह अलंकार है जिसे साधर्म्य अथवा वैधर्म्य के द्वारा सामान्य का विशेष से, विशेष का सामान्य से कार्य का कारण से और कारण का कार्य से समर्थन किया गया है।[3]

(1) कवि जाने कवि की कठिनाई। ब्यावरि पीर बांझ नहिं पाई।(5)

(2) का भोगी जोगी जती देव असुर सुर नारि।

जा घट बिरह न संचरे सो नहिं सबै सम्हारि।(88)

विरोधाभास :— वस्तुतः विरोध के रहने पर भी विरोध का वर्णन विरोधाभास अलंकार कहलाता है।[4]

(1) पंगु चरन गूं मे वचन नैन अंधा लहे लाल।

वंध्यासुत बांधे भुवन जो हरि होंहि दयाल।(वही, पृ0 1)

1- साहित्यदर्पण, 10/55

2- साहित्यदर्पण, 10/57/काव्यप्रकाश, 10/183

3- साहित्यदर्पण, 10/61

4- काव्यप्रकाश, 10/110

(2) प्रद्युम्न रूद्र से पुत्र तुम्हारे। ते कत होतहिं पुत्र हमारे।(154)

विभावना :— जहाँ कारणाभाव में कार्योत्पत्ति वर्णित हो, वहाँ विभावना अलंकार माना गया है।[1]

(1) बिनु बादर घहरान अकासा। बिजुरी तरकि परी चहुँ पासा।

तारक जल जहँ तहँहि झुराने। ठौर ठौर केवल महराने।(48)

काव्यलिंग :— जहाँ अर्थ के उपपादन के लिए वाक्यार्थ या पदार्थ को कारण स्वरूप प्रस्तुत किया जाय, वहाँ काव्यलिंग अलंकार होता है।[2] लालदास कहते हैं कि सीता के नख-शिख की अनुपम शोभा कहते नहीं बनती है क्योंकि माँ के रूप का वर्णन पुत्र के लिए अनुचित है —

नख शिख शोभा देह की तात अनूपम जाहि।

सीता माता जगत की कैसे बरनऊँ ताहि।(अवधविलास, पृ० 183)

प्रतीप :— जहाँ उपमेयरूप में प्रसिद्ध उपमान की कल्पना या निष्फलता का प्रतिपादन हो वहाँ प्रतीप अलंकार होता है।[3]

जो सुख सतसंगति से होई। सो सुख स्वर्ग मुक्ति नहिं कोई।(वही, 13)

तद्गुण — अपने गुण को छोड़कर अत्यन्त उत्कृष्ट गुणवाली दूसरी वस्तु के गुण का ग्रहण तद्गुण अलंकार है।[4]

पारस छुवत ताँब भये कंचन। पलटत वेर भई कछु रंचन।

चंदन के संगति वन माँही। नींब पलास भेद रहे नाहीं।

जैसे तेल भये गुन पाये। फुलाहिं संग फुलेल कहाये।(वही 12)

1- साहित्यदर्पण, 10/66

2- वही, पृ० 10/62

3- वही, 10/87 4- वही, 10/

छन्द विधान

छन्द शब्द छद् धातु में असुन् प्रत्यय जोड़ने से बना है। यास्क ने (निरुक्त 7/11) छन्दांसि, छादनात लिखकर छद धातु की ओर संकेत किया है। छद् का अर्थ है प्रसन्न करना, फुसलाना, आच्छादन करना, बाँधना, चाहना और आह्लादित करना है।

सृजन कामना के मूल में छन्द है। इच्छा या केवल रचनात्मक रूप छंद है जो इच्छा मन के सृजनात्मक रूप का सम्प्रेषण करती है वह अर्थ या स्थिति की ओर अधिक झुकी होती है। छन्द का सहारा पाकर ही सृजना रचना बनती है। छादन करने के कारण ही छन्द कहलाता है – छादनात् छन्दांसि।[1]

श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु ने छन्द की निम्न परिभाषा दी है। जिस कविता में मात्राओं और वर्णों के क्रम गति और यति के नियम तथा चरणान्त की समता पायी जाती है। उसे छन्द बद्ध कविता के नाम से पुकारा जा सकता है।

'मत्त वरण गति यति नियम अन्तहि समता बन्द।
जा पद रचना में मिले भानु भनत सुइ छन्द।'[2]

वस्तुतः साहित्य सर्जना के कोमल एवं भावुक क्षणों में उत्पन्न होने वाली भावधारा स्वाभाविक होते हुए भी अनुशासन विहीन अच्छी नहीं लगती है। मनुष्य के भावावेग छन्दबद्ध रूप में उत्पन्न होते रहे हैं। छन्द से कविता में गत्यात्मकता संवेदनशीलता, प्रभविष्णुता और प्रेषणीयता का संचार होता है। छन्द का संगीत से अटूट सम्बन्ध है। संगीत लय ताल पर आधारित होता है और छन्द की आत्मा लय है। लय गति और यति के आधार से निष्पन्न होती है। छन्दों के उच्चारण में जहाँ जहाँ पाठक

1- आलोचना हजारी प्रसाद द्विवेदी। पृ0 411-13

2- छन्द प्रभाकर, पृ0

को विराम लेना पड़ता है उन्हीं स्थलों को यति कहते हैं। चरणान्त में यति सर्वत्र सुलभ है।

हिन्दी का छन्द शास्त्र संस्कृत पर आधारित होते हुए परिवर्तित पद्धति पर विकसित हुआ है। वैदिक छन्द स्वर तत्व प्रधान संस्कृत के छन्द ध्वनि तत्व प्रधान तथा हिन्दी के छन्द काल तत्व प्रधान हैं। हिन्दी में वर्णिक और मात्रिक दोनों प्रकार के छन्दों का प्रयोग हुआ है। किन्तु उसकी प्रकृति मात्रिक छन्दों के अनुकूल है। लालदास के छन्द विधान पर दृष्टि डालने के पूर्व छन्द रचना सम्बन्धी कवि के विचारों का जानना आवश्यक प्रतीत होता है।

लालदास काव्यशास्त्र का पंडित है उसने विनम्रतावश काव्य सम्बन्धी ज्ञान के प्रति अपनी अनभिज्ञता प्रकट की है —

दूषन भूषन काव्य के गन औ अगन अनेक।
लघु दीरघ गुरुता अगुरु मैं नहिं जानत एक।[1]

छन्दों के विषय में भी कवि कहता है —

छन्द कहा कछु भेद न जानी।[2]

जहाँ जहाँ कवि ने छन्दों का परिचय दिया है वहाँ उसकी विद्वता स्पष्ट परिलक्षित होती है। कवि ने भगण, नगण, मगण, यगण, रगण, जगण, तगण और सगण इत्यादि आठ गणों की मात्रायें उनके देवता एवं प्रयोक्ता को प्राप्त होने वाले फलों का विस्तृत वर्णन किया है। इसी प्रकार दग्धाक्षरों का सूक्ष्म निरूपण भी किया है।

त्रिगुन गन अरु अगन विवेका। गुरु लघु के कहे भेद अनेका।
आदि त्रिगुरु ताहि मगन बखाना। तीन आदि लघु नगनहिं जाना।

1- अवधविलास, पृ० 5

2- वही, पृ० 8

भगन आदि गुरु एकहि होई। जगन एक लघु आदिहि सोई।

रगन मध्य लघु होइ सुजानिय। मध्य गुरु ताहि जगनहि मानिय।

सगन भगन और यगन नगन सुभफल लाल विचार।

रगन जगन और सगन मन तगनहु अफल निवार।

मगन देवता भूमि भनीजै। फल श्री संपति अवलहि दीजै।

भगन चन्द्र का देत बड़ाई। यगन देव जल वृद्धि कराई।

रगन अगनि भय करै सुमरना। जगन देव रवि रोगहि करना।

सगन वायु परदेश बढ़ावै। नाक नगन सुख भोग करावै।

तगन व्योम निष्फल करि राखै। गन फल लाल सुपिंगल भाखै।

दै करै हानि कुबुद्धि करावै। नासै नारि व आयु बढ़ावै।

चक्र उन धीरज र करै रोगी। अनभल होइ भय करै जोगी।

दस प्रकार कवि अठ विचारै। गीत कवित्त भुप रहहि न धारै।

संयोगी के आदि जो सुत विसर्ग अनुस्वार।

दीरघ/ एक गुरु कहत कवि वरन अंत गुरु धार।

कबहिं दो अक्षर तीन लघु नव अक्षर गुरु जानि।

लघु के आगे होइ गुरु लघुहु की गुरु मानि।[1]

एक अन्य स्थल पर लालदास ने सुगीत, रमणक, हीरा, सोमराज, मधु, छन्द, अभीर, मरहठा, कुण्डलियाँ, गाथा, प्रिया, सोरठा, दोहा, छप्पय, नगस्वरूपिणी, रोला, पद्मावती, नाराच, तरंगम, षटपद, घत्ता, तोमर, मुलक, स्वागता, गोपवी, अरिल्ल, मोदक, मोरठा, कलिका, हरित, दोधक, चतुष्पदी, दण्डक, मोटक,

---

1. अवधविलास, पृ० 8

चन्द्रवर्त्म, चामर, तोटक, सिंहावलोकन, चन्द्रकला, तुरंगम, हंस, मनोरमा, अमृतगति, तारक, पंकज वाटिका, प्रमिताक्षरा, मधुभार, मदिरा, सवैया, कुसुम विचित्रा, इन्द्रवज्रा, चंचरीक, शशिवदना, शार्दूल विक्रीडित, चचरी विमोहा, संयुत मोदक, त्रिभंगी, भुजंगप्रयात, द्रुतविलम्बित, वसंततिलका, सवैया, मालती, मल्लिका, हरलीला, मोतीदाम, कुसुमविचित्रा, सुन्दरीवृत्त, निशिपालिका, विजयक, चंचला, हरिप्रिया, झूलना, जगती, रुपमाला, प्रमाणिका, बृहती एवं अनुष्टुप छन्दों का उल्लेख किया है।[1]

तात्पर्य यह है कि लालदास को वैदिक संस्कृत और मध्ययुगीन हिन्दी के प्रचलित छन्दों का ज्ञान था। अवधविलास में कवि ने कुछ विशिष्ट छन्दों का ही प्रयोग किया है जो निम्न लिखित हैं —

<u>(1) अनुष्टुप :—</u> प्रति चरण में आठ अक्षर —

मधु मासे सिते पक्षे नवम्यां कर्कटे शुभे।
पुनर्वस्वृक्षे सहिते उच्चस्थे ग्रह पंचके।
मेषं पूषनि सम्प्राप्ते पुष्पवृष्टि समाकुले।
आविरासीज्जगन्नाथ परमात्मा सनातन।[2]

<u>(2) दोहा</u> —(13, 11, 13, 11 मात्रायें)

पंगु चरन गूंगे बचन नैन अंध लहै लाल।
बंध्या सुत पाइहै बचन, जो हरि होहि दयाल।[3]

<u>(3) सोरठा</u> (11, 13, 11, 13 मात्रायें)

कीन्हो हरि अवतार, भक्त काज जे वपु धरे।
दूरि कियो भुभार, असुर मारि सुर सुख दये।([4]

1- अवधविलास, पृ० 121-22 2- वही, पृ० 150

3- वही, पृ० । 4 वही, पृ० ।

(4) चौपाई :— (16 मात्रायें, अन्त में गुरु लघु शु नहीं।)

प्रथमहिं गुरु गनपति सिर नाऊँ। पुनि हरि हर सरस्वती मनाऊँ।

जो ए कृपा कटाछिन्ह हेरे। तो कछु ज्ञान होइ जिय मेरे।[1]

(5) अरिल्ल :-

सारंग मध्यम सद्य मलारहि कीजिये।

कारे ह बेलहि राग मिलावता लीजिये।[2]

चौपय्या :-

गरुड़गामी अन्तरजामी दीन वचन सुनि लीजिये।

सबके स्वामि हे बहुनामी रक्षा जन की कीजए।

दीन दयाला भक्त कृपाला विरद तुम्हारा गाइये।

गज उधारन द्विज भय टारन पतित उधारन ध्याइये।[3]

मनहरण घनाक्षरी :—(3) वर्ण, 16, 15 यति)

मज्जन वसन अरु अंजन तिलक चारु चंदन पुष्पमाल हारु हीये आनिये।

कुंडल कपोल नक बेसरि बिराजमान अंगिया अनूप कर कंकनहि जानिये।

पै हरि जराय कटि किंकिनी नूपुर धुनि बनी औ विशाल बीरा दयत जैसी जानिये।

तरुनी के तन मन मोहिबे को मोहन के सोरह सिंगार लाल रूपे सो बखानिये।[4]

(8) गीतिका —

बने दुलहा होइ आगे पीछे सोहति कामिनी।

चले हरषत रस बरषत मनहु घन संग दामिनी।

जाइ मंडिवर द्वार जब सखीरजान पधारहीं।

करें अनेक विनोद बनिता गीत मंगलचारहीं।[5]

---

1 से 5 तक — अष्टयामसाख, पृ० सं० क्रमशः— 3, 30, 60, 136, तथा

247

(9) भुजंगप्रयात :—

कहीं कक्क औं अगारे नु स्याठे
उरु बाक ठेमैं सुने तमु बाँके।
करे दण्ड पेला उठावे तबेला,
धरें कंठ हत्था सरौं ब्याल सत्था। (अवधविलास, 191)

(10) दोहरा :—

दश कै कन्या सहित रोह और और दई दीन्ह।
लाल सृष्टि के करने तेरह कश्यप लीन्ह।[1]

(11) त्रिभंगी —

एहि भाँति डरौ धरि ध्यान अरे, छल सौं बल सौं बलत कुद करौ।
अटकैं झटकै तटकै पग हाथ धरें अटकैं पटकै फटकैं न डरें।[2]

(12) रुचिरा :—

पान पके मगही बिचरे पुनि लौंग कपूर मिले बिचरे।
मल डब्ब सुरंग जराय जरे, सुका आगे अवालन आनि धरे।[3]

(13) दण्डक :—

आछे आछे फूलन के आछे आछे हार लाल,
दौरि दौरि माली भला पहिरावहीं।
लसे लसे लालन मासे मासे हाथिन पीछे,
चढ़ि चढ़ि रथनि योगानन्द दरसावहीं।[4]

(14) शोकहरण —

सज्जन आये जे मन भये बोलि पठाये हित करना।
दोपहरवारे पैस पसारे बजी अरे दुख हरना।[5]

---

1 से 5 तक अवधविलास, पृष्ठसंख्या — 179, 192, 193, 193, 193

(15) मोती दाम :—

धनुष देखि डोला। जनक राज बोला।

उधारे पधारी। सुधारी सुधारी।[1]

(16) सुजवा :—

मोतियन चौक सुदेश पुरोहित पूरही।

नाऊ परछन डाल, चढ़ावा कूरही।[2]

(17) गोपी :—

बधे मनि नग नेका। बधे मोती रत्न अनेका।

बधे गहना बहुत जराऊ। बधे हीरा बेड़ बनाऊ।[3]

(18) तिलोकी :—

आये राम विवाह आइ आरति करैं।

बधि अक्षत सुभ वार वार डारनि धरैं।[4]

(19) पादाकुलक :—

उनके आगे अटराव चले। गुरि के गुरिये तर डारि चलीं।

उलटे पलटे झपटें वर सों। नहि जान परैं निकरें कर सों।[5]

---

1 से 5 तक अवधविलास, पृ०सं०क्रमशः— 237, 243, 248, 250,

दशम अध्याय

अवधविलास में भक्ति एवं अवतार-भावना

भक्तिभावना एवं अवतारवाद

(1) भक्तिभावना :-

मनुष्य के कार्यों का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना कहा गया है। इस हेतु ज्ञान, योग, कर्म और भक्ति मार्गों का विधान है। अत्यधिक सूक्ष्म होने के कारण ज्ञान मार्ग सबके लिए अगम्य है। प्राणसाधना, षट् चक्र भेदन एवं क्लिष्ट यौगिक क्रिया प्रधान योग मार्ग सर्वजन सुकर नहीं है। यज्ञादि आनुष्ठानिक जटिल क्रियाओं के कारण कर्ममार्ग भी सुगम नहीं है जबकि भक्ति मार्ग सरल एवं सर्वसुलभ है।

भक्ति शब्द संस्कृत के 'भज सेवायाम्' धातु में क्तिन् प्रत्यय लगने से बना है जिसका व्युत्पत्तिपरक अर्थ है — सेवा करना। यह जीव की क्षमता से परे है कि वह सर्वव्यापी ईश्वर की सेवा कर सके। इसीलिए शाण्डिल्य और नारद प्रकृष्ट अनुराग[1] एवं भगवत्प्रीति[2] को ही भक्ति बताते हैं। श्री मधुसूदन सरस्वती के अनुसार 'भागवत धर्म सेवन से द्रवीभूत चित्त की सर्वेश्वर के प्रति जो अविच्छिन्न वृत्ति है वही भक्ति है।[3] इस प्रकार भक्ति भगवान के प्रति अनुरक्त पुरुषों की प्रवृत्ति[4] अनन्य भाव से परमात्मा की सेवा[5] स्वरूपानुसन्धान[6] एवं भगवान् के प्रति माहात्म्य ज्ञान युक्त सुदृढ़ स्नेह[7] है।

भक्ति के दो भेद होते हैं — साधन भक्ति या गौणी भक्ति तथा साध्य भक्ति अथवा प्रेमा भक्ति। गौणी भक्ति — आर्त, जिज्ञासा, अर्थार्थिता,[8] तामसी, राजसी एवं सात्विकी[9] इत्यादि रूपों वाली बतायी गयी है।

1- भक्तिसूत्र (शाण्डिल्य) 2 — 2- नारद भक्तिसूत्र —2
3- भक्तिरसायन 1/3 — 4- भागवत 3/25/32-33
5- वैष्णव मताब्ज भास्कर 63 — 6- विवेकचूडामणि शंकर/32
7- तत्वदीप निबन्ध-वल्लभाचार्य-42 — 8- शाण्डिल्यभक्तिसूत्र, -72
9- भागवत, 3/29/8-10

हमारी पुण्यभूमि भारत में सदा सर्वदा से भगवद् भक्ति की सरित अप्रतिहत गति से प्रवाहित होती रही है। वेद, उपनिषद, भागवत, धर्म, पुराण इत्यादि प्राचीन साहित्य भक्ति भावना से पुष्पित हैं। विचारपूर्वक देखें तो दिखायी देगा कि भक्ति के दो रूपों में विभाजित हुई है —(1) वैदिकी भक्ति — वेदों उपनिषदों पर आधारित है (2) आगम अथवा स्मृति ग्रन्थों पर आधारित भक्ति। वैदिकी भक्ति स्तुति प्रार्थना और उपासना के रूप में प्रकट हुई है। आगम शास्त्रों में मंत्र बीज, यंत्र मुद्रा, न्यास, कुण्डलिनी योगसाधना, उपास्य देव की श्रेष्ठता, संसार की उत्पत्ति, भाव भक्ति के प्रति निष्ठा वर्णित है।

आगम शास्त्र, वैष्णव, शैव और शाक्त — तीन भागों में विभक्त है। वैष्णव आगम का साहित्य पांचरात्र और वैखानस संहिताओं के रूप में मिलता है। पांचरात्र मत के उपासकों को भागवत कहते हैं। गुप्त सम्राटों ने इसे प्रश्रय दिया है। इस समय तक भक्ति कई सोपानों से गुजर चुकी है। प्रारम्भिक युग में ज्ञान ध्यान से विकसित होती हुई भक्ति भावना में क्रमशः आंशिक यज्ञ का प्राधान्य, अवतारवाद की प्रतिष्ठा एवं सर्वधार्मान् परित्यज्य वाली अनन्य निष्ठा का समन्वय हुआ। आगे चलकर मंदिरों का निर्माण देव मूर्तियों की स्थापना विपुल शृंगार सज्जा, षोडशोपचार में कला शंख, घण्टी, पुष्प, दीप, आवाहन, आसन, अर्घ्य, पाद्य, आचमन, स्नान, चंदन, नैवेद्य, ताम्बूल, आरती, परिक्रमा इत्यादि कृत्य सम्मिलित हुए।[1]

गुप्त सम्राटों के पतन के बाद यह भक्ति दक्षिण में पल्लवित हुई जहाँ आलवारों ने इसे आकर्षक रूप दिया। आत्म समर्पण भाव, नारायण के प्रति अनन्य निष्ठा, अत्यन्त सरल जीवन यापन सांसारिक वैभवों के प्रति विरक्ति, भगवान का लीलागान इनकी भक्ति साधना है। 'इनकी भक्ति भावना उस पावन सलिला सरिता की नैसर्गिक धारा के समान है जो स्वयं उद्वेलित होकर प्रखर गति से बहती जाती है

1-

और जो कुछ सामने आता है, उसे तुरन्त बहाकर अलग फेंक देती है। कालक्रम से यही भक्ति उत्तर की ओर प्रवाहित हुई। इसे शास्त्रीय रूप देने एवं शंकराचार्य के माया विशिष्ट अद्वैतवाद के विरोध में वेदान्त, ब्रह्मसूत्र एवं श्रीमद्भागवत का सहारा लेकर अनेक आचार्य उठ खड़े हुए। रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, विष्णुस्वामी और निम्बार्काचार्य के क्रमशः विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद और द्वैताद्वैतवाद बहुत प्रसिद्ध हुए। साध्य, साधक एवं साधना पद्धति में अन्तर होने के कारण देश भर में अनेक उप सम्प्रदाय बनाये गये। इस युग में राम और कृष्ण भक्ति की शाखाएँ महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं।

विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में अनेक देवताओं का वर्णन है। जिसमें एक विष्णु हैं। इनके द्वारा अपने चरणों से ब्रह्माण्ड को छिपा लेने एवं परिक्रमा करने की बात कही गयी है। उन्हें संसार का रक्षक बतलाया गया है। अवतारवाद की भावनाओं के विकसित होने पर विष्णु की अपेक्षा अवतारों की कल्पना की जाने लगी। आगे चलकर भारतीय लोक-हृदय विष्णु की अपेक्षा राम में अधिक रमा क्योंकि विपन्नावस्था में राम ही सहायक होते हैं; राम में ही उनकी एक मात्र निष्ठा केन्द्रित हो गयी। इससे राम की भक्ति भावना उनकी अर्चना, उपासना का विकास हुआ।

वैदिक साहित्य में राम का उल्लेख अवश्य हुआ है किन्तु उनकी भक्ति से सम्बन्धित सूक्तों का सर्वथा अभाव है। वाल्मीकि रामायण में कुछ स्थलों को छोड़कर भक्ति-भावना के दर्शन नहीं होते जो स्थल उपलब्ध होते हैं उनमें से अधिकांश प्रथम या सप्तम काण्ड के ही हैं जिन्हें प्रक्षिप्त बताया गया है। डा० रामनिरंजन पाण्डेय ने इन स्थलों की भक्तिपरक अभिव्यक्ति से आकृष्ट होकर इस भावना का मूलस्रोत रामायण को ही सिद्ध किया है।[1]

1- रामभक्ति शाखा-पृ० 23 से 38 तक

प्राचीन पुराणों में कहीं भी राम भक्ति के प्रसंग नहीं आये। पहिले कहा जा चुका है कि ई०पू० प्रथम शताब्दी के आसपास राम विष्णु के अवतार के रूप में स्वीकृत होने लगे किन्तु शताब्दियों तक राम भक्ति का निर्देश नहीं मिलता। सम्भवतः भागवतों द्वारा कृष्ण भक्ति को प्रमुखता देने एवं गुप्त सम्राटों द्वारा राज्याश्रय देने के कारण राम भक्ति को विशेष प्रोत्साहन नहीं मिल सका। इसीलिए डा० रामगोपाल भण्डारकर का कथन है कि भक्ति के क्षेत्र में राम की प्रतिष्ठा ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग से प्रारम्भ हुई।[1] यह मत बहुत ठीक नहीं है। क्योंकि 5 वीं शताब्दी के लगभग राम मूर्तियों का निर्माण प्रारम्भ हो गया था। विष्णुधर्मोत्तर पुराण(3/85/62) एवं वाराहमिहिर की बृहत संहिता (58/30) में इस प्रकार के नियम मिलते हैं। इसी तरह गुप्त युगीन निर्मित शिल्पकलाओं में राम भक्ति भावना से सम्बन्धित दृश्य उत्कीर्ण हैं।[2] वाकाटक महारानी का राम गिरि स्वामिन की उपासिका बनना उक्त तथ्य की ही ओर संकेत करता है। एक बात और महत्वपूर्ण है कि वाल्मीकि रामायण में भक्ति से सम्बन्धित जो स्थल दिखायी देते हैं उनका रचनाकाल भी गुप्तकाल के आसपास रहा होगा। क्योंकि बाद में प्रबल रूप से प्रवाहित भक्तिधारा में रचनाकार का आकण्ठ डूबना असंगत नहीं होता। प्रक्षिप्त एवं परवर्ती होते हुए भी ये स्थल भक्ति के बीज सिद्ध हो सकते हैं। हनुमान द्वारा रामचरणों में अनन्य भक्ति की आकांक्षा[3] तथा 'सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम' (वा०रा०6/18/33) ऐसे वाक्य भक्ति के बीज माने जा सकते हैं।

बहुत सम्भव है इस प्रकार की भक्ति का विकास आगे चलकर किसी प्रमुख भक्तिग्रन्थ में हुआ हो, किन्तु राज्याश्रय अप्राप्त होने एवं बौद्धधर्म के प्रचार के कारण

1- वैष्णविज्म, शैविज्म पृ० 47
2- द्रष्टव्य — मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ में भास्करनाथ मिश्र का लेख-देवगढ़ और एलोरा के रामायण सम्बन्धी दृश्य, पृ० 806
3- वाल्मीकीय रामायण उत्तरकाण्ड, 40/15

जन सामान्य को आकृष्ट करने में वह अक्षम सिद्ध हुआ है और आज वह विलुप्त हो गया। कुछ भी हो यह भक्तिभावना दक्षिण के आऴ्वार संतों में ही दिखायी देती है। शठकोप का 'दशरथस्य सुतं तं विना अन्य शरणवान् नास्मि' कहना एवं केरल के राजा कुलशेखर का राम खर दूषण युद्ध वर्णन सुनकर अपनी सेना भेजने पर तत्पर होना इनमें राम भक्ति भावना के स्पष्ट उल्लेख हैं। हो सकता है इन भावनाओं का आधार वाल्मीकि रामायण ही हो।

आगे चलकर राम भक्ति तथा राम पूजा का शास्त्रीय प्रतिपादन किया गया जिसमें उपनिषद् संहितायें प्रमुख हैं। रामभक्ति सम्बन्धी तीन उपनिषद् प्रसिद्ध हैं। रामपूर्वतापनीय, रामोत्तरतापनीय तथा रामरहस्योपनिषद्, जिनमें राम शब्द की व्याख्या, पूजा मंत्रों का उल्लेख है।

रामपूर्वतापनीय उपनिषद् में राम नाम की व्युत्पत्ति बताते हुए लिखा है 'राति राजते वा मही स्थितः सन् इति रामः' अर्थात् जो महीतल पर स्थित होकर भक्तों के मनोरथों को पूरा करते और राजा के रूप में सुशोभित होते हैं, वे राम हैं राक्षसों के 'रा' और 'मरण' के 'म' से भी यह उपनिषद् राम शब्द की व्युत्पत्ति बताता है। राज्य पाने वाले राजाओं को आदर्श व्यक्ति बनाने हेतु राज्य से 'रा' तथा महीपाल से 'म' लेकर राम शब्द की योजना की गयी है। आगे कहा गया है कि परम चैतन्यमय, अद्वितीय, प्राकृत, अवयवरहित होते हुए भी भक्तों की इच्छा पूर्ति के लिए वह चैतन्यमय नराकार शरीर धारण करता है। राम स्वयम्भू हैं, आनन्दमय हैं ज्योतिर्मय हैं, रूप के रहने पर सान्त होते हुए भी देशकाल और वस्तुओं को अतिक्रान्त करके अनन्त रहते हैं। 'रामाय नमः' इस मंत्र में जीवात्मा और परमात्मा के अभेदत्व का बोध कराया गया है। यह मंत्र ब्रह्मा से लेकर वृक्ष तक समस्त जड़ चेतन में व्याप्त है। राम की सगुण निर्गुण उपासना भी बताई गयी है। सीता राम की प्रकृति और उनकी ह्लादिनी शक्ति है। राम पूजा मंत्र पर सम्पूर्ण विश्व शक्तियों की अंगोपासना होती है।

पांचरात्र के चतुर्व्यूह उनकी शक्तियाँ, अपर लोकपाल, दस दिक्पाल उनके आयुध प्रमुख वानर, अष्ट वसु, ग्यारह रुद्र बारह सूर्य और ब्रह्मा(वषट्कार) की स्थापना एवं उनकी पूजा राम मंत्र में होती है।[1] परमात्मा की सगुण-निर्गुण उपासना के भीतर सगुण रूप का निर्देश करने वाले मंत्रों के अक्षरों की शक्तियों के द्वारा उपनिषदों ने तांत्रिक पद्धति से मंत्रों के द्वारा निर्गुण अनन्त शक्ति की भी सिद्धि की है। तंत्रों ने अक्षरों की जिन मूलभूत शक्तियों का निर्धारण कर लिया है, उनके आधार पर सगुण,साधक उपासना मंत्र भी निर्गुण का बोध कराने लगे हैं।[2]

रामोत्तरतापनीय उपनिषद् के अनुसार रां रामाय नमः रामचन्द्राय नमः और रामभद्राय नमः तारक मंत्र के तीन स्वरूप हैं, जिनके निरन्तर उपासना और पवित्र चिन्तन के कारण व्यक्ति पवित्र होकर अपनी पवित्रता को प्रसारित करता है। व्यूहोपासना से सम्बन्धित चतुर्व्यूह रामभक्ति से सम्बन्धित किये गये हैं — लक्ष्मण,संकर्षण शत्रुघ्न प्रद्युम्न भरत अनिरुद्ध तथा वासुदेव हैं।

सीतोपनिषद् में सीता को सर्वदेवमयी, सर्ववेदमयी, सर्वलोकमयी,सबकी आधारभूता तथा सृष्टि की उत्पत्ति कारिणी बताया गया है। सीता ईंकार से उत्पन्न हुई ब्रह्म की शक्ति और प्रकृति स्वरूपा हैं। वे शक्तिरूपिणी होकर इच्छा शक्ति, क्रिया-शक्ति और साक्षात् शक्ति के रूप में प्रकट होती हैं।[3]

इस प्रकार इन उपनिषदों में राम को ब्रह्म, जगत नियन्ता, सर्वपूजित साक्षात् ब्रह्म के रूप में उपस्थित किया गया है। माया, ह्लादिनी,शक्ति रूप में सीता की प्रतिष्ठा की गयी है। साधन के रूप में नामोपासना एवं तांत्रिक पद्धति पर पूजा का विधि-विधान स्वीकृत है। आगे चलकर साम्प्रदायिक रूप में राम की प्रतिष्ठा होने पर

1- रामपूर्वतापनीय खण्ड 8 श्लोक 1 से 6 तक

2- रामभक्ति शाखा, डा0रामनिरंजन पाण्डेय, पृ0 7

3- सीतोपनिषद, 7/8/11

इन उपनिषदों का भक्तिभावना की दृष्टि से विशेष महत्त्व सिद्ध हुआ। रामभक्ति के विकास के साथ साथ रामकथा को भी इसी सांचे में ढाला गया परिणामस्वरूप अनेक साम्प्रदायिक रामायणों का निर्माण हुआ।[1] इन रामायणों में वेदान्त तथा भक्ति का समन्वय किया गया है। विशेषरूप में अध्यात्मरामायण में शंकराचार्य के वेदान्त के आधार राम भक्ति का प्रतिपादन किया गया है।

यद्यपि वैष्णव सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य रामानुज ने नारायण की भक्ति का प्रचार किया तथापि उन्होंने अपने गद्यात्मक स्तोत्रों में काकुत्स्थ नाम राम की स्तुति की है। इसके बाद 14 वीं शताब्दी में वेदान्त देशिक हुए जिन्होंने उपासना के क्षेत्र में गुरु के महत्त्व का प्रतिपादन राम कथा के परिप्रेक्ष्य में किया है। जानकी जीव, हनुमान, गुरु, लंका शरीर, राक्षस दस इन्द्रियाँ, समुद्र भवसिन्धु राम परमात्मा हैं, इसका उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है कि हनुमान रूपी गुरु जब जानकी रूपी जीव को परमात्मा राम का संदेश देता है तब जीव के मन का भार हल्का हो जाता है। उसकी भव पीड़ा कम हो जाती है और गुरु की बतायी हुई साधना के द्वारा अपने हृदय पर भगवान् की मुद्रा लगाकर जीव वह प्राप्त कर लेता है।[2]

जन साधारण में राम भक्ति की अद्वितीय लोकप्रियता का श्रेय रामानन्द को है जिन्होंने 'जाति पांति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई' कहकर भक्ति का द्वार जन सामान्य के लिए उन्मुक्त कर दिया। पौराणिक भक्ति पर विश्वास रखते हुए भी इन्होंने अद्वय परमात्मा तथा सगुण ईश्वर राम पर विश्वास किया है। इस सम्प्रदाय के भीतर अद्वैत और विशिष्टाद्वैत दोनों साधनाओं का समन्वय किया है। चित् अचित् और ईश्वर का वर्णन करते हुए लक्ष्मण को चित् जीव सीता को अचित् प्रकृति और राम को व्यक्त ईश्वर बताया है 'ओं म् रामाय नमः'

1- प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रथम अध्याय में इस प्रकार के ग्रन्थों की चर्चा की गयी है।

2- भागवत सम्प्रदाय, डा0 बलदेव उपाध्याय, पृ0 219

'श्रीमद्रामचन्द्र चरणौ शरणं प्रपद्ये। श्रीमते रामचन्द्राय नमः' एवं शरणागति का श्रेष्ठ मंत्र 'सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतंमम' इस सम्प्रदाय में उपासना मंत्र के रूप में स्वीकृत हैं। परम अनुराग के साथ श्री रामचन्द्र का सतत स्मरण भक्ति है जो विवेक, विमोक, अभ्यास, क्रिया कल्याण अनवसाद और अनुद्धर्ष से उत्पन्न होती है। इन्होंने श्री सम्प्रदाय के विशिष्टाद्वैतवाद और प्रपत्ति सिद्धान्त को लेकर रामावत सम्प्रदाय का गठन किया जिसमें तत्युगीन साम्प्रदायिक सामाजिक आदि परिस्थितियों के अनुकूल विचारों का समावेश कर रामोपासना को युगीन सन्दर्भानुकूल बनाया। वैष्णवों के नारायण मंत्र के स्थान पर राम तारक मंत्र को दीक्षा मंत्र मानना, बाह्याचार के बदले आन्तरिक भाव की शुद्धता पर बल देना, उपासना के क्षेत्र में जाति-पाँति के भेदभाव की अमान्यता, दास्य एवं प्रेमभक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध करना, संस्कृत के बदले जनभाषा को प्राधान्य देना स्वामी रामानन्द के साम्प्रदायिक भक्ति भावना के विचारों का द्योतन है।

स्वामी रामानन्द के साथ राम भक्ति की गंगा देश के एक कोने से दूसरे कोने तक प्रवाहित होने लगी और पूर्णावतार का जो पद भगवान् कृष्ण को प्राप्त था, वही पद मर्यादा पुरुषोत्तम राम को भी प्राप्त हो गया। वासुदेव कृष्ण जिन्हें साक्षात् भगवान घोषित किया गया था एक प्रदेश तक सीमित रह गये परन्तु राम जो केवल अंशावेश अवतार की अपेक्षाकृत हीन कोटि में रखे गये थे, जन-जन के मानस में प्रतिष्ठित हो गये।[1]

आगे चलकर स्वामि रामानन्द द्वारा प्रसारित रामोपासना निराकार एवं साकार अवतारी दाशरथि राम के भेद से दो धाराओं में विभाजित हो गयी जिनका प्रतिनिधित्व क्रमशः कबीर एवं तुलसी के द्वारा किया गया। स्वामि रामानन्द

1- भक्ति का विकास, डा० मुंशीराम शर्मा, पृ० 352

ने रामभक्ति में माधुर्य का समावेश देख रसिक सम्प्रदाय का सूत्रपात किया तथा कील्ह दास ने रामभक्ति के साथ योगाभ्यास की ओर ध्यान दिया जिनकी एक शाखा तपसी शाखा प्रसिद्ध हुई।

कबीर के समय अनेकानेक सम्प्रदाय एवं उपसम्प्रदाय बन चुके थे, जिनमें विरोध की पराकाष्ठा थी। इसीलिए साम्प्रदायिक संकीर्णता एवं अन्धविश्वासों का खण्डन कर सात्विक जीवन को ही उन्होंने स्वीकार किया है। कबीर के[1] केशव, गोपाल, माधव प्रभु, गोविन्द, गोसाईं, सभी नाम प्रिय हैं किन्तु उन्होंने राम और रामभक्ति को सर्वाधिक महत्त्व दिया है। वे कहते हैं कि राम के बिना नर और नारियों का जीवन व्यर्थ है।(126) जीवन के साफल्य के लिए राम से प्रीति एवं रामभक्ति श्रेष्ठ है(127)। अतः वे काजी-मुल्ला, ब्राह्मण से राम जपने(39,59,60) का आग्रह करते हैं। उनके राम का कोई रूप और आकार नहीं है, न तो वह अवतारी है, न उसने रावण का वध किया। इस राम नाम का वास्तविक अर्थ तो कोई विरला साधक ही समझ सकता है। इस निर्गुण राम (49) का जाप करने का परामर्श कबीर ने अनेक स्थानों में दिया है। भक्त ने अपने आराध्य से चार सम्बन्ध जोड़े हैं — पति-पत्नी, का (पद 1) पिता-पुत्र का (111,357) स्वामी-सेवक का(393) एवं भगवान और भक्त का। उनके भीतर ही राम का निवास है। सारांश यह है कि कबीर का राम श्रेष्ठ है, साधक की गति है। ऐसे श्रेष्ठ साध्य का साधक अत्यन्त लघु, दीन, महापातकी और मूढ़ है।[2] माया संलिप्त होकर संसार में सो रहा है। जागरण के लिए हृदय में राम को बसाना राम का दास बनना, उसकी शरण में जाना कबीर की भक्ति के अनिवार्य अंग एवं पहली शर्त है।

1- कोष्ठक की संख्या कबीर ग्रंथावली— श्यामसुन्दरदास की है।

रैदास को रामानन्द का शिष्य कहा गया है। उन्होंने राम, गोविन्द वासुदेव, हरि, विष्णु प्रभु, कृष्ण, केशव, कमलापति, माधव, गोपाल, निरंजन रघुनाथ इत्यादि नामों में राम की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। 'राम कहत सब जगत भुलाना सो यह राम न होई' (पद 75) कह सम्पूर्ण गर्वों एवं कल्पनाओं के प्रतीक रूप में राम के सत्य का रूप सिद्ध किया है। संसार की नश्वरता उन्हें राम की ओर अभिमुख कराती है। साधना में आभ्यन्तरिक साधना चिन्तन एवं भक्ति की आन्तरिक भावुकता पर उन्होंने बल दिया है। कर्मकाण्ड (पद96) वेष-भूषा तीर्थयात्रा(78) तितिक्षा-प्रधान धर्म, कष्टप्रद साधनाएँ दिखावा है(धर्म के वास्तविक स्वरूप को पहिचानने के लिए उन्होंने आग्रह किया है। भक्ति को उन्होंने सर्वश्रेष्ठ एवं सरलतम मार्ग बताया है। उनकी भक्ति भावना में शास्त्रीय भक्ति के लक्षण ढूंढे जा सकते हैं 'कह मन राम नाम संभारि'[1] 'नित सुमरन करौ'[2] करौं अबीत चरन पखारों'[3] 'तु न बिसारिये राम जन मैं तेरा'[4] में कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन दास्य को माना जा सकता है। इसी प्रकार षट् प्रपत्ति, एकादश आसक्ति के रूप उल्लिखित किये जा सकते हैं। इन सबके अलग दैन्य की अनुभूति, एकान्तिक समर्पण, सदाचार, सत्यानुभूति उनकी उपासना के प्रमुख अंग हैं।

रामभक्ति की सगुण शाखा में राम भक्ति को शास्त्रीय रूप देकर उसे जन जन के हृदय में प्रविष्ट कराकर लोक संरक्षण का कार्य तुलसी ने किया है। 'यदि रामावत सम्प्रदाय के प्रवर्तन का श्रेय स्वामि रामानन्द को हो तो जन-जन तक उनका सन्देश पहुँचा कर लोक मानस में राम की भक्ति की प्रतिष्ठा और रामचरित्र के प्रति श्रद्धा का भाव जागरित करना, तुलसी का ही काम था। उनके मानस में जो रस लहरी, उठी उसने शताब्दियों से राजनीतिक उत्पीड़न सामाजिक अनाचार और धार्मिक

1- संत रैदास, डा0योगेन्द्र सिंह)नामक ग्रन्थ के अन्त में रैदासबानी'नामक संग्रह पद संख्या 22

2- वही, पद 32 3- वही, पद 9 4- वही, पद 25

अव्यवस्था से संतप्त राष्ट्र-हृदय तृप्त हो गया।[1] तुलसी की व्यापक, उदात्त एवं श्रेष्ठ भक्ति-भावना के कारण उन्हें इस साधना का आदि कवि कहा गया है किन्तु उनकी इस दास्य भक्ति के पल्लवन में ईश्वरदास एवं सूरदास को विस्मृत नहीं किया जा सकता है। ईश्वरदास के भरत विलाप में दास्य भावना का बड़ा ही मार्मिक रूप देखने में आता है।'राम कथा विषयक रचना भरत-विलाप में भरत की जिस दास्य भक्ति की अभिव्यक्ति हुई है, वह रामचरित मानस की पूर्व पीठिका के रूप में दिखाई देती है। मानस में इसी दास्य भक्ति का विशद् स्वरूप उपलब्ध होता है।[2]

राम एवं कृष्ण में अभेदोपासना का विद्यमान व्यावहारिक रूप में सूर सागर में दिखायी देता है। जय-विजय के उद्धार के लिए अवतार लेने वाले राम का 'पतित उधारन बिरद' तो विश्वविश्रुत है। अहल्या का उद्धार उनके लिए सुगम है। (सूरसागर पद 466)।

चरणों की आराधना से भगवान् का मिलन अति सुगम हो जाता है। त्रिजटा-प्रबोधन के समय राम पर ऐकान्तिक निष्ठा एवं दास्य भावना का मुखरण किया गया है।(पदसंख्या 525)। राम के चरणों के प्रताप से लंका नष्ट हुई, हनुमान सीता-शोध में समर्थ हो सके। उनके चरणों का यशोगान देवता करते हैं। शरणागत रक्षक रूप का उद्घाटन लक्ष्मण-शक्ति-प्रसंग में हुआ है।

भक्ति में समन्वयात्मकता एवं लोक संग्राहिका वृत्ति का समन्वय कर उसके उदात्त स्वरूप का दिग्दर्शन तुलसी की भक्ति भावना की मौलिक विशेषता है। 'उन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम के अनन्त तेजोमय, बलिदानसिक्त जीवन का अंकन करके हृदय-हृदय में राम को आलोकित करना चाहा है। विमल सन्तोष, विमल ज्ञान-वैराग्य विशुद्ध सन्तोष, विमल ज्ञान, विमल विज्ञान तथा अन्तिम अविरल हरिभक्ति के इन सात

1- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० 66

2- तुलसीपूर्व रामसाहित्य , डॉ० अमरपाल सिंह, पृ० 166

सोपानों की ऊँचाई पर मानव मन को ले जाने का स्तुत्य और सफल प्रयास तुलसी ने किया है।[1]

अवतारवाद के प्रसंग में हमने देखा है कि तुलसी ने राम को अनीह, अरूप, अनाम, अज, सच्चिदानन्द, व्यापक सगुण एवं निर्गुण रूप का उल्लेख करते हुए उन्हें परम ब्रह्म का पूर्ण अवतार बताया है। उनके शक्ति शील एवं सौन्दर्य की भक्ति परक चर्चा उन्होंने की है। कर्मफलदाता, करुणानिधान, भक्त वत्सल, आरत शरण, पतित पावन, अनेक गुणों से राम को समन्वित किया है। सृष्टि-नियामक, कर्ता, पालक संहर्ता सभी कुछ है। राम वज्र से भी कठोर एवं फूल से भी कोमल(7/18) हैं। गौ ब्राह्मण, ऋषि-मुनियों पर अत्याचार करने वाले राक्षसों पर क्रोध प्रकट करते हैं। पृथ्वी को राक्षस-रहित करने के लिए भुजा उठाकर प्रतिज्ञा करते हैं। राम की विभिन्न अवतारों (विनय० पद 52) में दिखायी देते हैं। करोड़ों काम देव से भी सुन्दर हैं। उनके शील के उदाहरण विनयपत्रिका(पद 100) में दिये गये हैं। ऐसे सेव्य का सेवक विनय पत्रिका के अनुसार कामी (पद 143/286,125,187)क्रोधी पद 142,143)लोभी पद 89',91)मलिन(पद 99,114)निर्लज्ज (पद 252) दीन(पद 114,143) हीन(पद114/1)आलसी(पद 250)क्रूर(पद 150/3)कुटिल (पद 97,211)चंचल (पद 170) ईर्ष्यालु(पद 186) द्वेषी(पद 205/2)निष्ठुर अहंकारी,वंचक कायर, कृपण, खोटा, विषयलीन, अयोग्य, कपूत, खल, शठ,जड पामर है। जो राम के अतिरिक्त कहीं जाने के लिए (पद 101)स्थान नहीं है। इतना निम्न साधक भी जब प्रभु पर अनुरक्त होगा तभी साधक भक्त पद अधिकारी हो सकेगा।'पुरुष, नपुंसक नारि'(मानस 7/87) कोई भी राम का प्रिय हो सकता है। राम कथा श्रवण की निरन्तर वासना रखना, दर्शन के लिए लालायित होना, शरीर के प्रत्येक अंग से भगवान की सेवा में तत्पर रखना, राम नाम मंत्र का जाप

1- रामभक्ति शाखा- डा० रामनिरंजन पाण्डेय,पृ० 2

काम, क्रोध मद मान, मोह, लोभ, क्षोभ, राग, द्वेष, कपट दम्भ और माया से रहित होना, सुख-दुख, निन्दा-स्तुति को समान समझना, परदारा को मातृ एवं परधन को विष मान कर त्यागना, भगवान से सांसारिक सम्बन्ध स्थापित करना, सद्गुणों का ग्रहण अपने गुणों को भगवान का एवं दोषों को अपना बताना, सांसारिक सम्बन्ध त्याग कर राम में तल्लीन होना, 'मनसा वाचा कर्मणा' राम की सेवा करना, अनासक्त भाव से कर्म करना मानस में (2/128-131) भक्ति के अधिकारियों के लक्षण बताये गये हैं।

भक्ति के साधनों की विशद चर्चा विनय पत्रिका एवं मानस में की गयी है। विप्र सेवा श्रुत्यनुसार स्वधर्म पालन, सन्त चरणों में प्रेम, भगवत्भजन में दृढ़, भगवान में सम्बन्धों का आरोपण, गद्गद कण्ठ से भगवान का गुण कीर्तन, कामादि से दूर रहना, सर्वथा निष्काम भाव से भगवान का शरणागत होकर भजन करना साथ ही श्रीमद्भागवत के अनुसार श्रवण (मानस1/112/2) कीर्तन(विनयपद 193) स्मरण(मा03/10/21) सख्य(मा0(7/7/7)पादसेवन(मा06/10/7) अर्चन(मा02/12/2)वन्दन(1/112/3) दास्य(मा0(3/10/21)एवं आत्मनिवेदन(विनय0पद 141) का शास्त्रीय पद्धति पर उल्लेख किया गया है किन्तु शबरी प्रसंग(मा0(   ) में वर्णित नवधाभक्ति भागवतोक्त भक्ति से भिन्न है। वहाँ सत्संग, भगवत्कथा में प्रेम अभिमान रहित गुरु चरणों की सेवा, निष्कपट भाव से भगवत्गुणगान, मंत्र जाप, दृढ़ विश्वास, इन्द्रियनिग्रह, समस्त संसार को राममय मानना, सन्तोष, छल रहित व्यवहार को प्राथमिकता दी गयी है। विनय पत्रिका में भक्त के सप्त सोपानों में से दीनता(पद158) मानमर्षता(114) भयदर्शन(198) भर्त्सना(90) आश्वासन(163) मनोराज्य(172)एवं विचारणा भक्ति साधन माने गये हैं।

तुलसी के भक्तिमार्ग की विशेषता है — उपासक के उदात्त आचार, व्यवहार का सन्निवेश। इसी कारण 'रघुपति भगति करत कठिनाई' (वि0167)कहा है। भक्ति का आधार भाव वश मन ही है। यह भगवान में लीन रहे यही भक्त की चाह है जिसके लिए मन शीतल, गतमान, ज्ञान रत विषय उदास(वि0203)होना

पड़ेगा। तुलसी प्रतिपादित हरि भक्ति के पथिक भक्त में इन लक्षणों को अनिवार्य माना गया है। 'भाव कुभाव' किसी से भी राम नाम का जाप अनिवार्य है।

तुलसी के भक्त भवन के प्रधानस्तम्भ विरति एवं विवेक है। विषयों से विरत होने, गृह-वनिता-सुत की आसक्ति त्यागने का उपदेश बारम्बार विनय पत्रिका में किया है —

जौं मन भज्यो चहै हरि सुरतरु

तौ तजि विषय विकार, सार भजु अजहूँ जो मैं कहौं सोइ करु। (पद205)

सुत वनितादि जानि स्वारथ रत न करु नेह सब ही ते। (पद198)

मन-मीन विषयवारि से अलग रह ही नहीं पाता। इससे अलग करने के लिए विवेक अत्यधिक आवश्यकता प्रतीत होती है।

साधन करिय बिचारहीन मन सुद्ध होइ नहिं तैसे। (विनय 115/3)

यद्यपि ज्ञान एवं योग मार्ग की उपेक्षा मध्यकाल के सगुण साहित्य में हुई है तथापि तुलसी ने ज्ञान-वैराग्य युक्त (मानस 1/44) भक्ति का प्रतिपादन किया। संत समाज रूपी प्रयाग (मा01/1/89) के वर्णन में भक्ति की गंगा, ज्ञान की सरस्वती और कर्म की यमुना का उल्लेख किया है। व्यावहारिक ज्ञान की सार्थकता उन्हें स्वीकार है किन्तु कोरा शाब्दिक ज्ञान उन्हें प्रश्रय नहीं दे सका है।

वाक्य ज्ञान अत्यन्त निपुन भव पार न पावै कोई

निसि गृह मध्य दीप की बातन्ह, तम निवृत्त नहिं होई। (वि0123)

इसी प्रकार ज्ञान-दीपक प्रसंग में ज्ञान की निस्सारता एवं भक्ति की श्रेष्ठता उल्लिखित है। ज्ञान, योग, कर्म एवं भक्ति का समन्वय करते हुए तुलसीदास ने तद्युगीन प्रचलित सभी सम्प्रदायों के इष्ट देवों की वन्दना की है। 'एक भरोसो, एक बल एक आस विश्वास' वाली भक्ति में 'गाइये गनपति जगबन्दन' दीन दयालु दिवाकर देवा' या 'शंकर भजन बिना नर भक्ति न पावै मोर' का भी स्थान है किन्तु सभी से दीनता पूर्वक 'तुलसी रामभक्ति वर माँगि' की अनन्य निष्ठा व्यक्त की गयी है। यहाँ भी

इस समन्वित भक्ति में जप, तप, साधुसेवा, वर्णाश्रम धर्म, अवतारवाद, भाग्यवाद, जन्मान्तरवाद, तीर्थाटन, परोपकार के कृत्य, महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

सारांश यह है कि 'श्रुति सम्मत हरि भक्ति पथ संयुत विरति विवेक' वाली भक्ति में अनन्यनिष्ठा, विभिन्न उपास्य देवों का सामंजस्य, साम्प्रदायिक संकीर्णता का अभाव एवं जीवन के बहुविध पक्षों का सन्तुलन है जिससे आत्म कल्याण के साधक आत्मोन्नति मार्ग के लिए पाथेय, समाज के कर्णधार व्यष्टि एवं समष्टि की दृष्टि से श्रेष्ठ आदर्श, भावुकभक्त एवं काव्यरसिक, ब्रह्मानन्द एवं काव्यानन्द और भग्न हृदय आत्म-बल समानरूप से प्राप्त कर रहा है।

अवधविलास में भक्ति-भावना

भक्त कवि लालदास भगवान की कृपा का आकांक्षी है, जिसके कारण उसकी रामकथा सज्जन मनरंजन हो जायेगी —

लाल भक्त भगवंत की कृपा कछु जो होय।
सज्जन मन रंजन कथा कहै सुनै सब कोय।[1]

कवि ने वन्दना प्रसंग में गुरु, गणपति, गौरादि सभी देवता गन्धर्व, ऋषि मुनियों की वन्दना की है।

प्रनवौं गुरु गनपति सिर नाऊँ। पुनि हरि हर सरस्वती मनाऊँ[2]

कवि ने भक्ति का लक्ष्य मोक्ष को ही कहा है। जो भक्तों का काम्य है। इसी सन्दर्भ में चतुर्विध मोक्ष रूपों का शास्त्रोक्त ढंग से वर्णन किया है।

वन्दउँ चारि मुक्ति है सोई। पावत भक्त और नहिं कोई।
एक सालोक सामीप सुहाई। सारूपा सायुज्य कहाई।[3]

1- अवधविलास, पृ0 1

2- वही, पृ0 3

3- वही, पृ0 4

मोक्ष प्राप्त करने के लिए भक्त लालदास ने भागवतोक्त नवधा भक्ति को साधनरूप में स्वीकार किया है। श्रवण, कीर्तन, स्मरण, चरणसेवा, अर्चना, वन्दना दास्य, सख्य, तथा आत्म समर्पण इत्यादि के आधार पर भक्ति को भी नौ रूपों में विभक्त किया है।

श्रवन कीर्तन विष्णु को सुमिरन सेवन चरनि।
अर्चन वन्दन दासि सखि आत्म समर्पन करनि।
नवधा भक्ति के नौ हैं प्रकारा। जाके करत मिटत संसारा।'[1]

कवि के अनुसार भक्ति आचरण करने से संसार के प्रति अनुरक्ति नष्ट हो जाती है। हरि के जन्म, कर्म, कथा एवं पुराण सुनना प्रभु गुणों का कीर्तन इष्टदेव के विग्रह को मन में धारण करना प्रभु चरणों की नित्य कैंकर्य प्रतिमापूजन मन्दिर की रचना प्रभु को बारम्बार प्रणाम करना, मथुरादिक धामों का दास्य भाव से दर्शन करना, प्रभु सेवा उनके साथ निरन्तर रहना और प्रभु के समक्ष अपना तन मन धन का समर्पण करना ही तो भक्ति है -

जनम कर्म हरि जु के नाना। श्रवन सुनै नित कथा पुराना।
कीर्तन गुन की रीति भाषै। सुमिरन हरि मूरति मन रोपै।
सेवन चरन करै नित पूजा। प्रतिमा राखहिं भेद न दूजा।
अर्चन मन्दिर रचना करई। बेगारि वंदन हरि कहँ भरई।
वंदन भक्ति जाहि को नामा। बार बार जु करै प्रनामा।
मथुरा आदि धाम हैं जेते। दासि भक्ति देखै जा तेते।
हरि के काज टहल करै जोई। दासा तन कहियत है सोई।
प्रभु के संग निरन्तर रहिये। सखा भक्ति ताही सो कहिये।
तन मन धन हरि जु को देई। भक्ति निवेदन कहियतु एई।[2]

1- अवधविलास, पृ० 5

2- वही, पृ० 6

अर्थात् कवि ने अन्तः एवं बाह्य शुद्धि हेतु साधन भूत कर्मों की आवश्यकता पर बल दिया है। इसके साथ ही भक्ति में निज भावुकता मस्त गलदश्रु प्रपत्ति एवं प्रभु के समक्ष हृदय की मर्मन्तुद वेदना व्यक्त करने वाली साध्य भक्ति के लिए आवश्यक प्रेमा भक्ति का भी उल्लेख किया है। जिसका शास्त्रीय एवं व्यावहारिक रूप श्रीमद्भागवत में वर्णित है।

ये नौ भक्ति नेम महि राखा। दसई भक्ति प्रेम सुख भाखा।[1]

लालदास ने भक्ति को दर्शन का आवरण देने वाले चार सम्प्रदायों का भी विवरण उपस्थित किया है।

माधव रामानुज अचारज। विष्णु स्वामि निम्बारक आरज।
चारि सम्प्रदा के जिते भक्त जगत महि होय।
ते यु लाल गरीब पर कृपा करहु सब कोय।[2]

उक्त नवधा भक्ति करते ही भगवान से मिलन होता है। इस सन्दर्भ में कवि ने गोवत्स का उदाहरण प्रस्तुत किया है।

नवधा करत मिलत भगवाना। ब्रह्मज्ञान इन्ह मर्म समाना।
जैसे कामधेनु कुल भुलाना। बछड़ा दूध, पीय संग आवा।
तैसे हृदय भक्ति जब आई। मुक्ति आन बैठे सब धाई।[3]

योग यज्ञ, तीर्थ व्रत दानादि साधनों से भगवान वशीभूत नहीं होते। प्रेम सहित उनकी कथा स्मरण करते ही वह सहज ही भक्त के पास रहने लगते हैं।

जोग जग्य तीरथ व्रत दाना। इनके बस नाहिन भगवाना।
प्रेम सहित भजे नर जोई। ताके राम सहज बस होई।[4]

भक्ति विस्तार प्रभु का लक्ष्य है जाति वर्ण की उच्चावच्चावस्था उसमें बाधक नहीं है। हरिभक्त स्वयमेव वर्णों से ऊंचा बन जाता है।

---

1 से 4 तक - अवधविलास, पृष्ठ 6

जुग जुग सदा भक्ति विस्तारा। चारि बरन सबको अधिकारा।
ऊँच नीच अन्तर नहिं कोई। हरि कहुँ भजत हरिहि सम होई।[1]

भक्ति मार्ग के अतिरिक्त मोक्ष प्राप्त करने के लिए ज्ञान कर्म और योगमार्ग की चर्चा सर्वत्र की गयी है। भक्त लालदास की धारणा है कि योग मार्ग जटिल ज्ञान मार्ग कठिन और कर्ममार्ग श्रम साध्य है जबकि भक्तिमार्ग सहज, सरल एवं सुगम है। इसीलिए लालदास ने भवपारा करने हेतु भक्ति को उपयुक्त बताया है —

जोग जग्य तप अति कठिनाई। भक्ति करत कछु जानि न जाई।
ताते सबहि छाड़िये आसा। भक्ति बिना भव कहुँ न पारा।[2]

भक्ति की श्रेष्ठता के लिए लालदास ने अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। ज्ञान, दीपक एवं भक्ति मणि के समान है दीपक विषय वायु से बुझ जाता है जबकि मन को किसी प्रकार का भय नहीं है। ज्ञान पुरुष है भक्ति स्त्री। यह माया नर्तकी पुरुष को ही चंचल बनाती है।

ज्ञान दीप है भक्ति मनि उभय प्रकाश कराहि।
विषय पवन दीपक बुझै मनि को कछु भय नाहि।
ज्ञान पुरुष और भक्ति तिय, माया नर्तिका भाय।
तिय को तिय मोहै कहा पुरुषन देय डिगाय।[3]

इस प्रकार लालदास ने भक्ति के स्वरूप में उसके लक्ष्य उसका वर्गीकरण और उसके माहात्म्य का विस्तृत वर्णन किया है। भक्ति के शास्त्रीय सिद्धान्त के साथ ही साथ उसके व्यावहारिक रूप का निदर्शन अवध विलास में हुआ है। भक्ति के साधनों का लालदास ने विस्तृत निरूपण किया है जिसमें नाम स्मरण सबसे प्रमुख है।

नामस्मरण :— वेदों पुराणों में नामी से नाम को अधिक महत्व दिया गया है। योग, ज्ञान, ध्यान से हरि मिलते हैं। बाद में मुक्ति प्राप्त होती है किन्तु नाम स्मरण से साक्षात् मुक्ति प्राप्त है।

---

1 व 2- अवधविलास, पृष्ठ 6

वेद पुरान स्मृति असि भखा। नाम अधिक नामी ते राखा।

ज्ञान, ध्यान करि जोगहि कोई। जब हरि मिले मुक्ति तब होई।

नाम जो अन्तकाल कहि आवै। तबही त छिन मुक्तिहि पावै।[1]

हरि नाम लिखने से ही सेतु बन्ध के समय पर्वत अपनी गरिमा छोड़ जल में तिरने लगे थे। प्रभु नाम कामधेनु एवं चिन्तामणि के समान फलप्रद है। शेषनाग अनादिकाल से राम नाम माहात्म्य का गान कर रहे हैं। किन्तु अभी तक उसका अन्त नहीं पा सके। हरि तो नाम के अधीन ही रहते हैं। भूतकाल में प्रह्लाद, गज इत्यादि का नाम स्मरण से उद्धार हुआ है। इसीलिए लालदास ने अहर्निशि नाम स्मरण की बात कही है।

नाम निरन्तर जप करि जापै। त्रिविध ताप नहिं ताप बियापै।

जानि अजानि नाम जिमि लीन्हो। त कह विष्णु अभय पद दीन्हो।

ताते नाम निरन्तर लीजै। विधि निषेध मन कछु नहि दीजै।[2]

माला लेकर नाम का स्मरण करने वाला स्वर्ग नरक से परे रहता है —

नाम लेइ अरु फेरै माला। स्वर्ग नर्क ते रहै निराला।[3]

मधुसूदन, वासुदेव, इत्यादि नामों का स्मरण करते रहना चाहिए।

राम कृष्ण गोविन्द गोपाला। निशि दिन जपत रहत लिये माला।

माधव मधुसूदन जो मुरारी। सीतापत रघुवर अवतारी।[4]

अनन्यता :— आराध्य का अनन्यभाव से स्मरण कर भक्त वैकुण्ठ लोक प्राप्त कर सकता है —

एक भाव करि हरि भजे, छाड़ि और सब आस।

अनायास वैकुण्ठ महि, लाल होत है वास।[5]

---

1 अवधविलास, पृ० 9
2- अवधविलास, पृ० 10
3- वही, पृ० 10
4- वही, पृ० 14
5- वही, पृ० 10

साधक को सांसारिक सम्बन्धों का परित्याग कर राम से ही स्नेह बन्धन करना चाहिए। सांसारिक ममत्व राम पर अवलम्बित हो।

मात पिता पुत्र सब त्यागै। एक राम के पीछे लागै।
रामहि पिता राम ही भ्राता। रामहि मात राम ही ताता।
रामहि पितर राम कुल देवा। भक्तन के रामहि की सेवा।
रामहि तीरथ रामहि जाती। रामहि पूजा रामहि पाती।
केवल एक राम ही जानै। राम बिना कछु और न मानै।[1]

जप तप हरि स्मरण बाह्य रस है। मुख्य तो भाव है अनन्य भाव से आराध्य की उपासना करना ही भक्ति है।

जप तप हरि सुमिरन करि जागै। ताको कछु नहि बाधा लागै।
भाव अनन्य भजै हरि कोई। ताको कछु बाधा नह होई।[2]

<u>सत्संगति</u> :— राम नाम का माहात्म्य अनन्त है। राम की भक्ति के लिए साधक को ज्ञान ध्यान जप योग की आवश्यकता नहीं है। राम भक्ति तो सत्संगति से प्राप्त होती है जो अनेक धर्मों की जननी है।

ऐसो है नाम राम को भाई। सत संगति बिनु ताहि न पाई।
बिनु सत्संगति होय न ग्याना। उद्धव सो भाख्यो भगवाना।[3]

राजा जनक जड़ भरत, प्रह्लाद, विभीषण, नारद, शिव, कपिल, व्यास, शुकदेव काकभुशुण्डि, युधिष्ठिर, ध्रुव, परीक्षित, सभी ऋषि मुनि नृप नर देवता सभी सत संगति से ही श्रेष्ठ बने हैं। सत्संगति के दुर्ग में यमदूत का भी प्रवेश नहीं। पारस के स्पर्श से जिस प्रकार लोहा कंचन बन जाता है। चन्दन के सामीप्य से विष चन्दन हो जाता है मिश्री के साथ विष भी बिक जाता है, उसी प्रकार साधक सत्संगति से श्रेष्ठ बन जाता है।

1- अघविनाश, पृ०सं० 13
2- वही, पृ०सं० 117
3- वही, पृ०सं० 10

निकट कोटि सतसंगत पाई। जेहि जमदूत सकहि नहि पाई।

सत्संगति के गुन होहि विशेषा। औरेउ बात जगत महि देषा।

पारस छुअत ताम भयो कंचन। पलटत बेरि भयो कछु रंचन।

होतेतेल भले गुन पाये। फुलाई संग फुलेल कहाये।

और अनेक साधु क संगत। उपजी सुमति भयी सबकी गति।

आगे मुक्त भये हैं जेते। जानहु सत्संगति ते तेते।

याते साधु संग नित करिये। जाते जगत सिन्धु महि तरिये।[1]

कवि की सुविचारित धारणा है कि सत्संगति से ही ज्ञान तदनन्तर भक्ति एवं क्रमशः भगवान मिलते हैं —

करि सत्संग ज्ञान उपजाऊँ। ज्ञान उपाय भक्ति पुन पाऊँ।

भक्ति भये मिलिहै भगवाना। जनम मरन मिटिहै तब नाना।[2]

समर्पण :— भक्ति में समर्पण को अधिक महत्व दिया गया है इससे उसका मन निरहंकारी बन जाता है। जो

जो कछु ज्ञान ध्यान मन भावे। जप तप दान होम होइ आवे।

सो सब मोहि समर्पन करई। अहंकार मन महि नहि धरई।

सुभ अरु असुभ कर्म फल त्यागै। ताके कर्म कछू नहिं लागै।[3]

सर्व धर्म परित्याग कर गीतोक्त स्थिति का वर्णन लालदास ने भक्तों के लिए अनिवार्य कहा है — सर्व धर्म परित्याग करि एक मोहि जे लेत।

ताको मैं सब पाप ते तात मुक्ति कर देत।[4]

प्रतिमापूजन :— प्रतिमाभक्ति का मूल आधार है। विग्रह की स्थापना कर आवाहन, आसन अर्घ्य, पाद्य, मधुपर्क, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य प्रदक्षिणा एवं विसर्जन इत्यादि षोडशोपचार विधि विहित रूप से करना चाहिए।

---

1 अवधविलास, पृ०सं० 13
2- अवधविलास, पृ०सं० 148
3- अवधविलास, पृ०सं० 16
4- वही, पृ० 56

पूजा करि षोडश उपचारा। सन्ध्या तर्पण विधि व्योहारा।
आवाहन आसन जो वरना। अर्घ्य पाद्य मधुपर्क आचमना।
पुनि स्नान बसन पहिरावन। यज्ञोपवीत गन्ध पुहुप चढ़ावन।
धूप दीप नैवेद्य प्रदक्षिन। स्तुति विसर्जन षोडश रचन।[1]

इसके बाद ही भक्त को नित्यप्रति अपने आराध्य विग्रह का दर्शन करना चाहिए।

मम दरसन निसि दिन अनुरागे। चातक ज्यों आशा रट लागे।[2]

उसका मन सदैव अपने आराध्य विग्रह पर लगा रहता है। बिना विग्रह को स्नान कराये भक्त कभी कुछ स्वयं नहीं ग्रहण कर सकता।

जो बिन भक्त कछु नहिं खाहीं। ठाकुर अबहीं नहवाये नाहीं।
प्यासे मरे प्रीति असि ठानी। मोहि पिआये पिये तब पानी।[3]

कुअवसर और कुस्थान में यदि भक्त को रहना पड़ा तो वह भगवान को स्थापित कर प्राप्य भोजन को उन्हें समर्पित करता है। तदनन्तर प्रसाद रूप में भोजन ग्रहण करता है।

जाही ठौर होय कछु खाही। तहँ पै भक्त मोहि ले जावे।
हा रतन तपत सुखद घर धरहीं। समय जान सेवा सब करहीं।
शीत घाम कृत प्यास अघोही। भक्त भाव कर ध्यावत मोही।
वासन वस्तु कछु मम होई। ठाकुर के कछु बहुविधि होई।[4]

आत्म निवेदन :— भक्ति के क्षेत्र में आत्म निवेदन की बड़ी महत्ता है क्योंकि जब तक भक्त प्रभु के समक्ष अपना मन्तव्य नहीं निवेदन करेगा तब तक भगवान उस पर कृपा नहीं करते। स्वार्थवश अथवा अहंकार वश जीव परमात्मा को विस्मृत कर देता है किन्तु जैसे ही भक्त अपना आत्म निवेदन प्रकट करता है उसका इष्टदेव तत्काल ही उसका मन्तव्य पूरा

1- ध्यानविलास, पृ०सं० 206
2- वही, पृ०सं० 58
3- वही, पृ० 58
4- वही, पृ०सं० 59

कर देता है। राम जन्म के समय दशरथ कहते हैं —

भक्ति भये मिलिहै भगवाना। जनम मरन मिटिहै तब नाना।
करत पुकार महा दुख पाई। तब हरि दरस देत है आई।
बहुत बेर मैं तोहि बिसारा। अब ते सदा करौं सम्हारा।
तुम कछ दोष कछु नाहि दीजै। सेवा सदा तुम्हारी कीजै।[1]

इस आत्म निवेदन का सार तत्व है कि जहां लौकिक क्षेत्र में व्यक्ति अपने गुणों का ही वर्णन करता है किन्तु प्रभु के समक्ष वह अपने दोषों को विस्तृत रूप में उपस्थित करता है। विगलित अहंकार उसे प्रभु के समक्ष उसे नम्र होने की भावना उत्पन्न करता है और वह आतर वाणी से अपना दैन्य प्रकट करता है।

मैं मतिहीन अधम अपराधी। एकउ जन्म भक्ति नहीं साधी।
तुम समरथ सब उद्धारन नाथा। मैं हौं दीन गरीब अनाथा।[2]

लालदास ने उपास्य स्वरूप की चर्चा अनेक स्थानों पर की है। कवि की निश्चित धारणा यह है कि वेदों में उसे आरत शरण दीनबन्धु कहा गया है। वह अज, अविनाशी दीन-दयाल है।

आरत सरन अनाथन नाथा। बन्धु दीन वेद कह गाथा।
दीन दयाला भक्त कृपाला बिरद तुम्हारा गाइये।[3]

ऐसे आराध्य देव के प्रति भक्त नित्य वैचर्य द्वारा अपना सम्बन्ध जोड़ता है जो सांसारिक सम्बन्धों पर आधारित है।

तुमही तात तुमही माता, दाता वत्सल भक्त के।[4]   अज

<u>उत्सव</u> :— भक्त अपने आराध्य के अवतार दिवस को उत्सव के रूप में मनाता है। रामोपासक भक्त राम और सीता के जन्म दिनों में व्रत कर प्रेम सहित प्रभु का गुणगान करता है। ऐसा भक्त अपने साथ दूसरे को भी उद्धार करने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है।

1- अवधविलास, पृ0 पृ0 149
2- वही, पृ0148   3- वही, पृ060   4- वही, पृ060

जेहि जेहि दिवस लीन अवतारा। साधे जन्म कर्म व्यवहारा।

प्रेम सहित प्रभु के गुन गावै। सो भक्त पुनि गर्भ न आवै।

गावै प्रेम सहित मन धारे। आपु तरन औरहि सोइ तारे।[1]

इसी प्रकार राम भक्त वैसाख मास के शुक्ल पक्ष के नवमी तिथि को सीता जन्मोत्सव का आयोजन करता है। ऐसे समय विविध पकवान बनाकर सम्मानपूर्वक ब्राह्मण को खिलाना चाहिए।

तिथि नवमी और मास बैसाखा। शुक्ल पक्ष सिय जन्म सुभाखा।

करै कीर्तन कथा सुनाई। दिन मध्यान्ह समय जब आई।

सीता दिवस जन्म भयो जाने। ता दिन उत्सव मंगल ठाने।

भोजन विविध करै पकवाना। पूजै भक्त विप्र सन्माना।[2]

तीर्थाटन :- भक्त समझता है कि यह जीवन अल्प है। देह क्षणभंगुर है अतः मुक्ति हेतु साधनों का उपाय करना चाहिए। सुत वनिता सुख इन्द्रियों के अवलम्ब विषय हैं। मूढ़ मनुष्य इन्हीं में अपनी आयु नष्ट कर देता है। सतदास ने इसके लिए गुरु सेवा सत्संग, देव पूजन, तप, व्रत दान के साथ तीर्थाटन का उल्लेख किया है।

जीवन अल्प देह छिन भंगी। मिथ्या सब झूठे धन संगी।

नरतन पाय विलम्ब न कीजै। मुक्ति हेतु साधन करि लीजै।

नहिं हरि भजन न गुरु की सेवा। नहिं सत्संग न पूजहि देवा।

× × × × ×

नहिं तप तीरथ नहिं कछु दाना।

तीरथ अटन करत सब कोई। साधन प्रथम भूमिका होई।

बिनु तीरथ पातक नहिं जाही। अन्तःकरण शुद्ध होई नाहीं।

बिना शुद्ध भये अन्तःकरना। उपजे ज्ञान न छूटे मरना।[3]

1- अवधविलास, पृ०सं० 163

2- वही, पृ० 181

3- वही, पृ० 202

इसके साथ ही लालदास ने भक्त में निहित अनेक गुणों की आवश्यकता पर बल दिया है। जैसे –

(1) भक्तप्रेम – लालदास ने राम भक्ति के साथ ही रामभक्तों पर प्रेम करने की बात कही है। भक्त के मिलने से राम मिलन के आनन्द की अनुभूति अत्यावश्यक है।

भक्ताई मिले भक्त जब आई। मानहु रंक महानिधि पाई।
जाति अजाति भेद नहिं आने। तिन्ह कहँ राम रूप करि माने।
भक्त भक्त कै आवै धामा। मानहु आपुहि आये रामा।[1]

माला तिलक से युक्त भक्त को देखकर उसका सम्मान करना चाहिए।

समधी सगे नहीं तस भाये। जैसो हर्ष भक्त के आये।
माला तिलक देखि सन्माने। होय कोइ अपनायित जाने।
ताको आदर मान बढ़ावै। मेरे जान तिन्है चित लावै।[2]

लालदास ने भक्ति की दिनचर्या को भक्ति शास्त्रों द्वारा अनुमोदित रूप में प्रस्तुत किया है। जिसमें जप, होम, श्रद्धा सहित अतिथि सेवा व सन्तोषयुक्त जीवन उपकार, सरलता, अस्तेय, अपरिग्रह इत्यादि का उल्लेख है।

(1) जप अरु होम वेद विधि वाले। श्रद्धा सहित अतिथि प्रतिपाले।[3]

(2) उपकारी सन्तोष अभेवा। तीरथ अटन करे गुरु सेवा।

(2) अमानि अदंभ अहिंसा शान्ती। सौचा चार्ज उपासन शान्ती।
स्थैर्य आरजौ आत्मनिग्रह। इन्द्रियार्थ विराग अपरिग्रह।
जन्म मरन रोग अरु हानि। अन अहंकार विषय नहिं परसन।
पुत्र दार गृह आदि असक्तिहि। इष्ट अनिष्ट समान जो चित्तहि।
रहे विरक्त जनभीर निवारे। नित्य अध्यात्म ध्यान विस्तारे।[4]

1- अवधविलास, पृ० 13   2- अवधविलास, पृ०सं० 58
3- वही, पृ० 206   4- वही, पृ०सं० 101

ऐसे भक्तों की परीक्षा भगवान लेते हैं। भगवान जिसे अपना भक्त मान लेते हैं उसे अनेक संकटों की अग्नि में डाल कर भक्ति स्वर्ण को खरा सिद्ध करते हैं।

लरिका भूख मरत घर माहीं। मूठी भरे चबेना नाहीं।
बैठी तिया रहति मन मारे। धरे चीर शरीर उघारे।
घर नहिं सूत कपास न बासन। गिरे परे घर रहत उपासन।
जापर प्रभु कृपा करउँ ताइ देउ दुख।
सम्पति हरौं करौं मम सम्मुख।
ऐसे कष्ट परे कठिनाई। छाड़हिं नहीं धर्म भलाई।[1]

वैष्णवों की मान्यता यह है कि भक्त को शास्त्रीय ग्रन्थों में उल्लिखित मुद्रा को धारण करना चाहिए। क्योंकि दास्य भक्ति के लिए छाप का महत्व अत्यधिक है।

चाकर होन चहै कोउ आवै। दाग द्वारिका जाय दगावै।
जब लग छाप दाग नहिं साँचा। तब लगि भक्ति सिपाही कांचा।[2]

भक्ति साधनों के अनेक सोपानों की चर्चा यत्र तत्र अवधविलास में है। साधना प्रक्रिया का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूप का वर्णन इस ग्रन्थ में है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन, श्रद्धा युक्त जिज्ञासा से ही क्रमशः ईश्वर के दर्शन होते हैं।

प्रथम श्रवण पुनि मनन करि तब निदिध्यासन ठान।
जिज्ञासु श्रद्धा सहित तब लाल होहि साक्षात्।[3]

लालदास की भक्ति सम्बन्धी मान्यता तद्युगीन धार्मिक मान्यताओं से बनी है। आस्तिक भक्त को धर्म की अनेक मान्यताओं का पालन करना अनिवार्य कहा गया है। देवपूजा, हवन जप श्राद्ध मात पिता की सेवा शौच स्वाध्याय, इन्द्रीनिग्रह, तीर्थाटन, व्रत, तप,

---

1- अवधविलास, पृ0 58
2- वही, पृ0 198
3- वही, पृ0 102

कार्तिक, मार्गशीर्ष, माघ एवं वैशाख स्नान, तुलसी को दीपदान, पीपल को पानी देना शरणागत की रक्षा, आतिथ्य सत्कार, सत्यव्रती, दया, शील, सन्तोष, गुरु विप्र, तपस्वी की सेवा, वाद विवाद रहित कुटिलता का परित्याग अमानवत्व एवं दम्भ रहित इत्यादि गुणों को आचरण में लाना वाला व्यक्ति स्वर्ग प्राप्त करता है।

पूजा देव होम जप श्राधा। काहू कह कटु करै न बाधा।
माता पिता देव सुखकारी। वेदाध्ययन करै अधिकारी।
इन्द्रिय जीत दोष नहिं गहै। तीरथ व्रत तप धर्म निबाहै।
कातिक अगहन माघ वैसाखा। करै स्नान महा फल राखा।
दीप दान तुलसी कहँ देई। पीपर कहँ पानी करि सेई।
राखै जो सरनागत आई। आवै अतिथ विमुख नहिं जाई।
रितु काल तिय भार्या होई। सुर कृतज्ञ क्षमा मेई होई।
सत्यवादी निंदा नहिं ठानै। दया शील संतोषहि आनै।
गुरु विप्र तपस्वी कहु देखै। करै प्रनाम दास जेहि लेखै।
वाद विवाद तजै कटिलाई। अमानित नहि दंभ बड़ाई।
हरि के चरन हृदय महि राखै। धर्म करै मुख ते नहिं भाखै।
जो अस मनुष लाल जग माहीं। जम सो तासों भेंटत नाहीं।
ए साधन है धर्म के भाषत वेद पुरान।'[1]

लालदास की रसिक भक्तभावना

रामभक्ति में कान्ताभाव परक मधुर रस साधना का सूत्रपात कब और कैसे हुआ यह निश्चिततम से नहीं कहा जा सकता है। इस सम्बन्ध में डा० राम स्वार्थ चौधरी का अभिमत है कि मधुर रस साधना के विकास की दृष्टि से 11 शताब्दी से लेकर 16 वीं

1- अवधविलास, पृ०सं० 103

सदी तक की समस्त मध्यकालीन धर्म साधनाओं की माधुर्य भक्ति में भागवत पुराण में वर्णित भगवान की मधुर प्रेम लीलाओं का प्रचुर प्रभाव देखा जा सकता है। अतएव श्रीमद्भागवत में भगवान की जिस माधुर्य विभूति की भूरिशः उद्भावनाएँ की गयीं, उनके तथा उससे प्रभावित समसामयिक राधाकृष्ण भक्ति सम्प्रदायों की मधुरोपासना के कारण कालान्तर में विधि-निषेध और मर्यादावादी दो कठिन कगारों के मध्य प्रवाहित होने वाली राम भक्ति धारा में भी मधुरा रति या मधुर उपासना के कमनीय कमल खिलने लग गये। मर्यादा पुरुषोत्तम राम की माधुर्य विभूति, उनकी ह्लादिनी आत्मशक्ति सीता की केलि क्रीड़ाओं की शतशः अभिव्यंजना की जाने लगी और उनके समर्थन में प्रचुर साहित्य की सृष्टि होने लगी।[1]

लालदास के युग तक राम की मर्यादावादी धारा क्षीण होने लगी थी। तथा गुप्त गोदावरी के समान प्रवाहित होने वाली रसिक धारा अब प्रगट होकर लोकानुरंजित करने लगी जिसका बहुत कुछ श्रेय रीतिकालिक परिस्थितियाँ एवं कृष्ण भक्ति के विविध सम्प्रदायों में राधा कृष्ण के विहार का वर्णन है। लालदास ने लिखा है —

कृष्ण जथा ब्रज माहिं सदा करत विहार प्रकास।
तैसे सीता राम को नित ही अवध विलास।[2]

लालदास का अवध विलास रसिक साधना का सैद्धान्तिक ग्रन्थ नहीं है। यत्र तत्र कवि ने इस परम गोपनीय भाव साधना का वर्णन किया है।

रसिक सम्प्रदाय के भक्तों की मान्यता है कि राम परब्रह्म है। वे दिव्य साकेत में सरयू के किनारे रत्नमण्डप में विराजमान हैं। वहीं उनकी लीलाएँ चलती रहती हैं। वन गमन रावण वध तो माया की बातें हैं —

1- मधुर रस (भाग-2) पृ0 183

2- अवधविलास, पृ0सं0 1

सदा राम सीता सहित रहत हैं अवधहिं माहिं।
लाल लंक बन बंकमाहिं आये गये कहुँ नाहिं।[1]

सम्प्रदाय दीक्षित भक्तों के ध्यान हेतु राम के सौन्दर्य की रस-पेशल झाँकी का चित्रण अनेक संहिताओं में हुआ है। लालदास ने अगस्त्य संहिता के अनुसार सरयू के किनारे एक योजन कनक भूमि में चार द्वारों वाले रत्नसिंहासन पर राम को विराजमान बताया है —

योजन एक कनक मय धरनी। सरजू निकट बहति अघहरनी।
नाना द्रुम पुष्पित फल तीरा। सीतल मंद सुगन्ध समीरा।
हंस कमल अलि पिक सुखदाई। षटरितु सदा रहति छबि छाई।
वेदी एक रत्नमय बना। साठि धनुष चहुँ दिसि पैम बखाना।
षोड़ धनुष की रचित ऊँचाई। तापर मंडप है सुखदाई।
षोरह खंभ विचित्र विराजा। चारि चारि चहुँ ओर है छाजा।
हीरा लाल अनेक विसाला। झूलत चहुँ ओर मनि माला।
× × × ×
एक मँदार द्वार तरु अहई। मंडप के पूरब दिसि अहई।
पश्चिम पारजात द्रुम बढ़ा। पुनि संतान दक्खिन दिसि ठढ़ा।
उत्तर हरि चंदन के गोभा। वेदी बीच कल्प तरु सोभा।
ता तरु तर मंडप छबि छाई। बैठे राम लाल सुख दाई।[2]

इसके बाद कवि ने जिस ऐश्वर्यपरक राम सौन्दर्य का वर्णन किया है, उसके अनुसार वे नित्य किशोर कमनीय और हृदयावर्जक हैं —

आभा इन्द्रनील मनि को है। कोमल ललित गात मन मोहै।
चरन अरुन पैंजनि जुत नूपुर रत्न जटित किंकिनि कटि ऊपर।

1- अवधविलास, पृष्ठ 18।
2- वही, पृष्ठ 16।

अँगुली ग्राहक तड़ित दुतिहारी। अल्प उदर परहार बिहारी।
बघ नख हिये की छवि बाला। मोती रतन मनिन्ह की माला।
कुंदन कल करधनी निसेषू। मनहुँ कसौटी कंचन रेखा।
लघु लघु हाथ ललित रतनारे। पहुँची बलय मुद्रिका धारे।
कठुला कंठ धरे छवि झूले। बानन्ह नागफनी रवि भूले।
सुंदर बदन कमल की शोभा। कुंचित केस भ्रमर जनु लोभा।
लोल बिसाल रसाल सुलोचन। चितवत चित चोरत दुख मोचन।
उर भृगु लता वत्स की जोड़े। अंग ही लगे रंग के तोड़े।
केसरि चंदन मृगमद लाये। और सुगंध अनेक सुहाये।[1]

इसके बाद लालदास ने बतलाया है कि साधक यम नियम आसन इत्यादि से पूत होकर आराध्य देव में ध्यान लगाता है। माधुर्य मूलक उपासना में साधक अपनी धारणा शक्ति का विकास कर मन में प्रभु की कमनीय मूर्ति की स्थापना कर मानसिक भक्ति या भाव भक्ति की ओर अग्रसर होता है जिसमें भगवान के चरण चिह्न से लेकर मधुर बंकिम प्रेमिल कटाक्ष तक का एक साथ ध्यान किया जाता है। कवि लिखता है —

देखे प्रथम चरन जुग रेखा। अंकुश कमलध्वजादि विसेषा।
पुनि निहारि देखै नख पाँती। रवि समान मनि गन की कांती।
देखै पाद पृष्ठ सुख मूलनि। अर्चित केसरि चंदन फूलनि।
देखै गुलफ गोल ता ऊपर। कनक रतन जुत पैंजनि नूपुर।
पिंडुरी पुष्ट सुघट की सोभा। देखे जनु सुषमा के गोभा।
जाँघ नील मनि खंभ सुहाये। पीतांबर छादित मन भाये।
कटि किंकिनि कटि ऊपर राजै। मनि गन रतन हेम मय भ्राजै।

1 अवधविलास, पृ०सं० 168

2 वही, पृ० 210-11।

उदर अलप त्रिबली जुत देखा। मध्य रोमराजी की रेखा।
ललित नाभि गंभीर सुहानी। मानहु रूप रतन की खानी।
बक्षस्थल अपूर बिसाला। मुक्ता पुहुप तुलसिका माला।
लंबी भुजा ललित मन हरनी। आयुध चारि जुत बरनी।
अंगद बलय मुद्रिका बाना। केयूर चंदन लगे सुहाना।
जग्योपवीत बिराजित काँधि। सोभा सिंधु पालि जनु बाँधि।
श्रीवत्स लच्छन भृगुपद हीये। कंठ कौस्तुभ मनि हैं लीये।
देखै चिबुक चारु सुखकारी। अधर दंत नासा मनि हारी।
कल कपोल कुंडल जुत स्रवना। कुटिल केस अलिगन जनु रचना।
आछे बडे नैन रस भरे। बरुनी पलित ललित रतनारे।
बांकि भौंह धनुष समाना। तिलक काम जनु बान संधाना।
ललित ललाट बिसाल बिराजै। तापर मुकुट जटित नग छाजै।
ऐसे अंग अंग मन धारै। नख-सिख बारंबार निहारै।
मूरति अलप किसोर बनावै। लखनि रूप माधुरी ल्यावै।
चितवनि हसनि हिये मांझ आनै। अंग चपल चेतन गति जानै।
देखै दरस परसपर ऐसे। छलत चलत मडवुवाँइ जैसे।[1]

अंत तक आते आते लाल कवि ने कान्त भाव की उपासना का संकेत किया है, जिसकी भाव साधना का साम्प्रदायिक विकास परवर्ती साहित्य में विस्तृत रूप से हुआ है।

अवतारवाद एवं रामावतार भावना

अवतार शब्द 'अव' उपसर्ग पूर्वक 'तृ' प्लवनतरणयोः' धातु से घ प्रत्यय के संयोग से बना है, जिसका धातुगत अर्थ है – उतर कर नीचे आना, किन्तु वैदिक साहित्य से लेकर परवर्ती सभी साहित्य में इसका प्रयोग विभिन्न अर्थों में हुआ है। अवतारवाद का प्रारम्भ

1- अवधविलास, पृ० 210-11।

कब से हुआ इसमें विवाद है। कुछ अधिकांश विद्वान् इस भावना को बहुत परवर्ती सिद्ध करते हैं।

अवतारी और अवतार शब्द का प्रयोग वैदिक साहित्य में है। ऋग्वेद (6/25/2) एवं तैत्तरीय ब्राह्मण (2/8/3/3) में अवतारी, अथर्व (18/3/5) एवं शुक्ल यजुर्वेद (17/6) में अवतार प्रयुक्त हुआ है। शतपथ ब्राह्मण (9/1/2/27) यजुर्वेदीय मैत्रायणी संहिता (2/10/1) वाल्मीकि रामायण, महाभारत में इस शब्द का या इसके समानार्थी शब्दों का प्रयोग हुआ है। पुराण, बौद्ध-साहित्य, जैन साहित्य, नाथपंथ सगुण साहित्य में यह शब्द दिखायी देता है। उक्त सभी स्थलों को देखकर यह प्रतीत होता है कि प्रारम्भ में अवतार का प्रयोग उतरने के अर्थ में होता था। कालान्तर में विष्णु के जन्म प्रादुर्भाव एवं आविर्भाव से इसका सम्बन्ध हुआ। अवतार विरोधी सम्प्रदाय में अवतार शब्द का तात्पर्य पौराणिक अवतारों के अनन्तर या मनुष्य के सामान्य जन्म के अर्थ में प्रचलित हुआ। अवतारवाद से सम्बन्धित इसके पर्याय के रूप में प्रादुर्भाव, निर्माण सृजन सगुणरूप, कायधारण, नररूप धारण और प्राकट्य तिरोधान से प्रचलित हुए।[1]

विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में अनेक देवताओं की स्तुतियाँ हैं, जिनमें एक विष्णु भी हैं। उन्होंने तीन पग से सम्पूर्ण जगत की परिक्रमा की है, जिससे सारा जगत उनके पैरों की धूलि से छिप जाता है। उन्हें संसार का रक्षक बताया गया है, वे धर्मों को धारण करने वाले हैं।[2] इस प्रकार वे बल-विक्रम से युक्त, मनुष्य के हितैषी पृथ्वी को जीतने वाले कहे गये हैं। इसी तरह यजुर्वेद (12/5) अथर्व (5/26/7) ब्राह्मणों, उपनिषदों, महाकाव्यों एवं पौराणिक ग्रन्थों में उनकी महत्ता एवं श्रेष्ठताओं का उल्लेख है। अवतार वाद की भावना के विकास के कारण उनके अनेक अवतारों की कल्पना की गयी है।

1- मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद, डॉ० कपिल देव पाण्डेय, पृ० 11

2- ऋग्वेद 1/22/16-18

भगवान के अवतारों की संख्या अनेक है किन्तु दो मुख्य परम्परा प्रचलित हैं — प्रथम दशावतार और द्वितीय चौबीस अवतार की। महाभारत, हरि-वंश, वायु, वराह- अग्नि, नृसिंह इत्यादि पुराणों में दशावतारों का उल्लेख किया गया है, जिनमें वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण और कल्कि इन सात अव-तारों का समानरूप से उल्लेख है। शेष नामों में साम्य नहीं — कहीं बुद्ध, हंस, कहीं मत्स्य, पौष्कर, दत्तात्रेय नामों का प्रयोग है। श्रीमद्भागवत में कहीं बाइस(1/3) कहीं चौबीस (2/7) और कहीं सोलह(11/4) अवतारों का उल्लेख है।

अवतारों का वर्गीकरण प्रमुख रूप से पांचरात्र साहित्य और श्रीमद्भाग-वत से अधिक प्रभावित है। पांचरात्रों में पर वासुदेव के व्यक्त जिन व्यूह, विभव, अन्तर्यामी और अर्चा रूप का वर्णन हुआ है, उनमें लीला या चरित प्रधान तत्वों की अपेक्षा उपास्य तत्वों का ही अधिक प्राधान्य है, जबकि भागवत पुराण में निर्गुण ब्रह्म से उद्भूत क्रमशः पुरुषावतार, गुणावतार और लीलावतारों के चरितों या लीलाओं का पर्याप्त परिचय दिया गया है।[1] श्रीमद्भागवत में अवतारों का वर्गीकरण स्थानगत, काल गत तथा कार्यगत तीन भागों में विभाजित किया गया है। स्थानगत का वर्गीकरण स्थान गत पृथ्वी को द्वीपों में विभक्त कर प्रत्येक द्वीप में एक एक अवतार की चर्चा की गयी है।[2] इसी तरह कालगत में कालावतार, कल्पावतार, मन्वन्तरावतार एवं युगा-वतार तथा कार्यगत में पूर्ण, अंश, कला, विभूति, पुरुषावतार और गुणावतार की चर्चा की गयी है। आवेश, व्यूहरूप लीलारूप, युगलरूप और रसरूपों की भी कल्पना करके प्रायः उनके अनुरूप अवतारों की चर्चा अन्यान्य धार्मिक ग्रन्थोंमें की गयी है।[3]

वैदिक साहित्य में जिन रामों का उल्लेख हुआ है, वे रामकथा के ही नायक हैं। इसमें पर्याप्त विवाद है अतः वैदिक साहित्य में रामावतार भावना के दर्शन

1- मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद-डा0कपिलदेव पाण्डेय, पृ0 306

2- भागवत 5/17-19 तक

3- द्रष्टव्य है - मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद, पृ0 306 से 403 तक

का प्रश्न छोड़कर वाल्मीकि रामायण को ही इस भावना का स्रोत माना गया है। यद्यपि वाल्मीकि रामायण(1/1/18) में विष्णुना सदृशो वीर्ये' कहकर विष्णु के अवतारी रूप का निषेध किया गया है किन्तु अन्य स्थल(1/15/31) में विष्णु के रामावतार की बात कही गयी है। रामायण के प्रथम और अन्तिम काण्ड में रामावतार का अधिक उल्लेख है रावणवध ही विष्णु के राम रूप में प्रकट होने का उद्देश्य कहा गया है।[1] फर्कुहर महोदय का मत है कि रामायण में अवतारवाद की भावना नहीं है। राम मानव हैं, महापुरुष नायक ही हैं। देव देवत्व उनमें कहीं नहीं है।[2]

राम और विष्णु का सम्बन्ध परस्पर कब जुड़ा यह विवाद एवं कल्पना का विषय है। सम्भवतः बौद्ध धर्म का आधिकारिक प्रसार देखकर ब्राह्मणों ने जिस समय भागवतों के कृष्ण को विष्णु नारायण के अवतार के रूप में स्वीकृत कर लिया था, उसी के बाद महापुरुष राम में ईश्वरत्व की प्रतिष्ठा करने के लिए उन्हें विष्णु से सम्बन्धित कर लिया गया है। यद्यपि निश्चयपूर्वक कहना कठिन है फिर भी पहली शताब्दी ई0पू0 रामावतार भावना के दर्शन होने लगते हैं।

महाभारत के नारायणोपाख्यान में अवतारों की छः और दस दोनों सूचियों में राम का नाम आया है।[3] साथ ही विष्णु के रूप में रामावतार का वर्णन कई स्थलों में हुआ है।[4] आगे चलकर संस्कृत के अगाध एवं विपुल साहित्य में रामावतार का बड़ी गहराई, मार्मिकता विशदता के साथ वर्णन हुआ है। हरिवंश(2/41/122) में राम, लक्ष्मण, भरत, एवं शत्रुघ्न में विष्णु के चार रूपों की कल्पना की गयी है। आगे चलकर पांचरात्र के चतुर्व्यूह सिद्धान्त का सहारा लेकर विष्णु धर्मोत्तर पुराण(

1- वाल्मीकि रामायण, 1/16/2

2- एन आउट लाइन आफ रेलिजस लिटरेचर, पृ0 47

3- महाभारत नारायणोपाख्यान 12/326/72-92, 337/36

4- वही, आरण्यक, 3/147/222, 3/299/18

(अध्याय 212) एवं नारद पुराण (अध्याय 75) में राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न को क्रमशः वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, तथा अनिरुद्ध कहा गया है। भागवत(9/10-10) में सीता को लक्ष्मी का अवतार बताया गया है। उक्त रचनाओं के अध्ययन करने से एक बात का पता लगा कि प्रारम्भिक रूप में रामादिक चारों भाइयों को अंशावतार के रूप में ही प्रतिष्ठित किया गया है। कहीं वे विष्णु के चतुरंश के रूप में या कहीं चतुर्व्यूह सिद्धान्त के रूप में स्वीकृत हैं किन्तु आगे चलकर राम को पूर्णावतार मानकर परब्रह्म का स्थान दिया गया है।[1] पद्मपुराण (अध्याय 269) में राम और सीता क्रमशः विष्णु और लक्ष्मी के पूर्णावतार लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न क्रमशः अनन्त, सुदर्शन और पाञ्चजन्य के अंशावतार एवं नृसिंह पुराण (अध्याय 47) में राम को नारायण के पूर्ण एवं लक्ष्मण को शेष का अवतार बताया गया है। राम के पूर्णावतार के रूप में प्रतिष्ठित हो जाने पर भरत और शत्रुघ्न को क्रमशः पाञ्चजन्य शंख तथा सुदर्शन चक्र के अंशावतार के रूप में माना गया है। अध्यात्मरामायण में राम, सीता और लक्ष्मण को परब्रह्म, मूल प्रकृति, योगमाया तथा शेष के अवतार का उल्लेख है एवं अन्य भाइयों को अध्यात्म रामायण (1/4/18) आनन्दरामायण(9/6/16), पद्मपुराण उत्तरखण्ड (269/93-95) सत्योपाख्यान(2/4-5) तत्त्वसंग्रह रामायण (1/14) में पाञ्चजन्य एवं सुदर्शन के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।

राम के अवतारों का प्रयोजन जानना कम सुखद नहीं है। भट्टिकाव्य (1/1) में भुवन हितकृत, रघुवंश (10/31) में लोकानुग्रह, रामायणमंजरी(बाल/69) में त्रैलोक्य संकटनाश, हनुमन्नाटक (1/5) में भूमिभारहरण, रामचरित(9/8) में विश्वार्ति, राघवीय(1/44) में रावण वध, उदारराघव(3/20) में जगदुपप्लव, रामाभ्युदय(5/61) में त्रिभुवन रक्षा विधान, भागवत (10/33/27) में धर्मसंस्थापन, ब्रह्मपुराण(213/126, 181/1-6) में लोक प्रसादन, राक्षस निग्रह तथा धर्म वृद्धि, पद्मपुराण(उत्तर-

---

1- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय सम्बन्धी सभी साहित्य में राम परब्रह्म रूप में स्वीकृत हैं।

242/7) में साधु परित्राण, दुष्कृत विनाश तथा धर्म संस्थापन के साथ ही अनेक शाप एवं वरों की कल्पना की गयी है।

यद्यपि जैन धर्म में अवतारवाद का अभाव है, इसीलिए पउम चरिउ में इसका वर्णन नहीं है, फिर भी परम्परित उपादान अनेक प्रसंगों में उपस्थित हो गये हैं। इस महाकाव्य में लक्ष्मण और राम को हरि-हलधर का अवतार बतलाया गया है। उन्हें क्रमशः वासुदेव और बलदेव से अभिहित किया गया है।[1] इसी तरह सीतास्वयंवर में इन्हें लक्ष्मण और राम के स्थान पर 'हरि बलएव' कहा गया है।[2] जैन साहित्य में नौ वासुदेव, नौ बलदेव माने जाते हैं जिनमें राम और लक्ष्मण आठवें बलदेव और आठवें वासुदेव के अवतार रूप में उल्लिखित हुए हैं। लक्ष्मण के लिए हरि(21/13/2) विष्णु (37/12/4) केशव(32/2/11) जनार्दन(24/10/1)श्रीकान्त(44/11/5) शब्द प्रयुक्त हुए हैं। नारद मुनि का मनोरथपूर्ण करने वाले एवं असुर संहार[3] के साथ ही साथ जैन धर्म का प्रचार इन अवतारों के प्रयोजन माने जा सकते हैं।

संत साहित्य में जिस राम का उल्लेख है वे रामानन्द की परम्परा से संतों द्वारा गृहीत माने जाते हैं। इन संतों ने राम के अवतारी रूप की अपेक्षा निर्गुण राम की स्थापना की है। इनके राम सगुण विष्णु के अवतार न होकर निर्गुण, निराकार ब्रह्म के एक भिन्न रूप में प्रचलित पर्यायमात्र हैं।

अवतारवाद के विकास में गो0 तुलसीदास का नाम अविस्मरणीय है। जो भगवान्, अनीह, अरूप, अनाम, अज, सच्चिदानन्द, परधाम, व्यापक एवं विश्वरूप है,[4] वही ब्रह्म भक्तों के हित के लिए अवतरित हुआ है। वह चिन्मय, अविनाशी ब्रह्म से परे होते हुए भी सबके हृदय में निवास करता है, अपने अंशों के सहित अवि

1- पउमचरिउ 21/1/2
2- वही, 21/13/2
3- वही, 26/6/1-2 तथा 31/15/6-7
4- मानस, 1/13/3-4

शक्ति माया के साथ अवतार लेते है। व्यापक, अज, निर्गुण नाम एवं रूप रहित होकर कौशल्या की गोद में खेलता है।[1] जो अपने अन्दर कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड समाहित किये हुए है।[2] मधु कैटभ, महावीर, दिति सुत सहस्त्राबाहु को संहार करने वाले[3] ने पूर्वकाल में मीन, कमठ, शूकर, नृसिंह, वामन, परशुराम का रूप धारण किया था,[4] वही ब्रह्म राम के रूप में अवतरित हुआ है। वह ब्रह्म कौन है? तुलसी के राम किसके अवतार हैं? वे ब्रह्मपुरूष या विष्णु के अवतार हैं कि स्वयं परात्पर ब्रह्म? यह जानने के लिए हमें उनके अवतार प्रयोजन पर दृष्टि पात करना होगा। अखिल भुवन पति ने विश्व उद्धार हेतु धर्म की हानि एवं आसुरी वृत्ति बढ़ने पर सुर, पृथ्वी, गो और द्विज के लिए मानव शरीर धारण किया है। इसके अतिरिक्त कुछ शापों का उल्लेख भी शिव-पार्वती संवाद में किया गया है, जिसमें विष्णु भगवान के द्वारपाल जय और विजय को तीन जन्मों तक राक्षस शरीर से मुक्ति दिलाने के लिए जालन्धर पत्नी के सतीत्व नष्ट करने से मिले हुए शाप एवं नारद शाप के फलस्वरूप विष्णु को मनुष्य शरीर धारण करना पड़ा।

अतः स्पष्ट है कि राम विष्णु के अवतार हैं। स्वयं तुलसी ने अनेक स्थलों पर इसकी चर्चा की है। तुलसी ने राम के लिए विष्णु से सम्बन्धित विशेषणों का प्रयोग किया है – जैसे रमानिवास(मानस 6/113/16-17),7/28/10,7/83(क)), रमेश(मा07/13/16,7/14/2), रमानाथ(7/29)श्रीपति इत्यादि कहीं विष्णु को सुर हित नर तनु धारी। सोउ सर्बग्य जथा त्रिपुरारी(मा01/62/4) एवं 'भुवनकोस विरच विलय तुम्ह नाहिआ। धारिहहि विष्णु मनुज तनु ताहिआ'(मा01/146/6)कहा गया है, कहीं कहीं पर विष्णु के द्वारा किये गये कार्यों का कर्ता राम को ही कहा गया है।[5] इसी तरह राम के रूप वर्णन करते समय विष्णु के शरीर में विराजमान आभूषणों एवं चिन्हों का उल्लेख किया है।[6] नारद मोह, कौशल्या को चतुर्भुज रूप में दर्शन देना, सुतीक्ष्ण

---

1 से 6 तक – मानस- क्रमशः पृ0सं0 1/198, 1/201, 6/6/7-8, 6/110/5-8,

प्रसंग, रावण वध पश्चात् अनेक देवताओं की प्रार्थनाओं से अवतमत की पुष्टि होती है। लेकिन एक प्रश्न उठता है कि राम विष्णु के अवतार होने पर मानस में वर्णित 'बिधि हरि संभु नचावन हारे' एवं संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहिं जासु अंस ते नाना' की संगति कैसे बैठेगी? तुलसी एक स्थान पर तो राम को कर्ता-धर्ता आदि कहते हैं जिनको अपने कार्य में किसी अन्य की सहायता अपेक्षित नहीं होती और दूसरे स्थान पर उन्हें इन कार्यों से विरत दिखाकर उनके भृकुटि-विलास मात्र से ब्रह्मा विष्णु, महेश को उत्पन्न कर उनके सृष्टा, पालक और संहर्ता का कार्य कराते हैं। कभी वे राम को विष्णु का अवतार, सीता को रमा और राम को हरि कहते हैं और कभी इसके विपरीत हरि अर्थात् विष्णु और रमा को सीता तथा राम के स्वयंवर में दर्शक रूप में भेज देते हैं। क्या इन उक्तियों में कोई संगति है?[1]

यथार्थ में परब्रह्म के दो रूप निर्गुण और सगुण माने गये हैं। ब्रह्म के किसी न किसी प्राणी के रूप में अवतीर्ण होने की कल्पना हिन्दू धर्म शास्त्रों में अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है। अवतार सगुण ब्रह्म का ही होता है, निर्गुण का नहीं। तुलसी ने राम को सगुण एवं निर्गुण दोनों ही कहा है, अतः यदि तुलसीदास राम अर्थात् ब्रह्म के निर्गुण और सगुण दोनों रूपों को ध्यान में रखकर बिना किसी की सहायता के अकेले ही उन्हें समग्र ब्रह्माण्ड का कर्ता धर्ता आदि कहते हैं और कहीं ब्रह्म के सगुण स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश को उत्पन्न करने वाला और उनके द्वारा ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन और संहार कराने वाला कहते हैं तो इसमें असंगति क्या है? सर्व व्यापक और निर्गुण होते हुए राम अपनी योगमाया के बल पर अनेक रूप धारण कर सकते हैं। 'अमित रूप प्रकटे तेहि काला। जथा जोग मिले सबहिं कृपाला(7/6/5) वास्तव में वैदिक विष्णु और तुलसी के राम में कोई अन्तर नहीं है। शंका व्यर्थ ही है।

1- भक्ति का विकास, डा० मुंशीराम शर्मा, पृ० 700-701।

2- रामचरित मानस में भक्ति, डा० सत्यनारायण शर्मा, पृ० 134

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि अवतार रूप में राम विष्णु के अवतार हैं और उपास्य रूप में वे अवतारी ब्रह्म हैं अतएव गो० तुलसीदास ने एक ओर तो राम के अवतार चरित का प्रतिपादन किया है और दूसरी ओर उनके ब्रह्मत्व को स्थापित किया है।

लालदास ने अवधविलास में अवतारवाद को एक नया आयाम दिया है। अभी तक राम और उनके सहायक परिकरों अथवा विरोधियों को अवतार वाद की सीमा में लिया गया था। लालदास ने इस सीमा का विस्तार कर स्थान को भी समेटने का प्रयास किया है। उन्होंने अंशावतारी लीलाओं का उल्लेख अवध विलास के कई स्थानों में किया है जिसका स्वरूप इस प्रकार है —

ग्रन्थारम्भ में लालदास ने भगवान के अवतार एवं उनके कारणों की सूचना देते हुए कहा है कि भक्त कार्य, भूभारहरण एवं असुर विनाश तथा देवताओं के सुख के लिए भगवान ने अवतार लिया है —

बन्दउँ हरि अवतार, भक्ति काज जे वपु धरे।
दूरि कियो भूभार असुर मारि सुर सुख दये।[1]

कवि ने पुराणोक्त दशावतार के रूप में मत्स्य, कच्छप, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, बलराम, कृष्ण, बुद्ध एवं कल्कि का उल्लेख कर उनके विभुत कार्यों का संक्षेप में वर्णन किया है —

दश अवतार धरौं मन माहीं। सुमिरत विघन विलय होइ जाहीं।
मछ रूप धरि बेद उधारा। कूरम होइ रतन विस्तारा।
सागर मथत धरा जब काँपी। अपनी कठिन पीठ पर राखी।
अद्भुत रूप बराह बनाये। बूड़त धरनि दंत धरि ल्याये।

१- अवधविलास, पृ०

होइ नृसिंह जु असुर संहारा। काटि कपट प्रह्लाद उबारा।

बावन रूप अनूप बनावा। छल करि बलि पाताल पठावा।

परसराम क्षत्री नहिं राखा। माता मारि पिता मन राखा।

राम चढ़ि रावन वध कीना। इन्द्रा विभीषन अभय पद दीना।

हलधर कृष्ण कला अधिकारा। कंस केशि चानूर संघारा।

बौध रूप प्रभु जब जग छिड़ाये। जैन अहिंसा धर्म सिखाये।

कलकि रूप कलयुग के अंता। जग रक्षा करिहैं भगवंता।[1]

लालदास ने युगावतारों के रूप वर्ण का उल्लेख करते हुए कहा है कि सतयुग, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग में क्रमशः श्वेत, अरुण, पीत तथा कृष्ण वर्ण के अवतार होते हैं।

सतयुग श्वेत बरण अवतारा। त्रेता अरुन रंग तन धारा।

द्वापर पीत वपुष हरि सोहैं। कलियुग श्याम बरन मन मोहैं।[2]

सतयुग में मत्स्य, कच्छप, सूकर, वामन, नृसिंह, त्रेता में परशुराम, राम, द्वापर में कृष्ण कलयुग में बुद्ध एवं कल्कि अवतार होते हैं जो युग युग से इसी अनुक्रम में अवतरित होते रहते हैं।

सतयुग मच्छ कच्छ अरु सूकर। बावन सिंह रूप भये तिनकर

त्रेता परसराम श्री रामा। द्वापर कृष्ण एक सुखधारा।

कलियुग बुद्ध कलकि है सोई। युग युग रहि अनुक्रम या होई।[3]

रसिक सम्प्रदायानुसार राम की दिव्य लीलाओं के साथ ही उनकी कार्यस्थल को भी स्थूल तथा सूक्ष्म बतलाकर अवतारवाद के नये अध्याय की सूचना कवि ने दी है। लालदास का मन्तव्य है कि स्थूल अयोध्या के साथ सूक्ष्म अयोध्या में प्रभु की अखण्ड लीलायें होती रहती हैं-

---

1- अवधविलास, पृष्ठ 5,

2- वही, पृ05

3- वही, पृ0 5

सोइ देह है अवध के सूक्ष्म रूप प्रकाश।

धाम एक स्थूल है सूक्ष्म अवधविलास।[1]

दिव्य अयोध्या के इस पृथ्वी पर प्रादुर्भाव की अनेक घटनायें अवध विलास में विन्यस्त हैं –

पुरी अयोध्या कहूँ बखानी। जाविधि भूमण्डल भर आनी।[2]

× × × ×

पुरी अयोध्या सम पुर नाहीं। रहति सदा बैकुण्ठहि माहीं।

सोइ तह दीन्ह प्रभु मन भाइ। स्वायम्भू तह सीस चढ़ाई।[3]

द्वितीय कल्प की अयोध्या का वर्णन कवि ने चक्रतीर्थ की कथा उल्लिखित की है –

अवध पुरी त्रैलोक्य विख्याता। अपने कर करि रची विधाता।

× × ×

नहिं आकाश अयोध्या भूपर। रहत है चक्र सुदर्शन ऊपर।[4]

दिव्य अयोध्या के वैभव का विस्तृत वर्णन अवधविलास में है –

या विधि अवधपुरी परकासा। मानहु बने बैकुण्ठ निवासा।

कनक कोट चहुँ ओर विराजै। ता ऊपर मनि कंगुरे भ्राजै।[5]

अवतारवाद की पूर्ण प्रतिष्ठा के लिए कवि ने सरयू की उत्पत्ति का भी विस्तृत वर्णन किया है।(पृ025 से 27)

रामावतार के अनेक कारणों को कवि ने अवधविलास में विस्तार से निरूपित किया है। इनमें वरदान एवं शाप की अक्षुण्ण परम्परा का पालन किया गया है।

कारन सुनहु राम अवतारा। जेहि विधि श्री मनुज तन धारा।[6]

वरदान के लिए कवि ने कश्यप ऋषि की तपस्या का उल्लेख कर विष्णु के रामावतार का विवरण उपस्थित किया है –

तुम समान तुम ही से बालक। पुत्र होहु हमरे प्रतिपालक।

× × ×

वरदे हरि गये अपने धामा। अन्तर्यामी सबके रामा।[7]

---

1 से 7 तक – अवधविलास, पृ0सं0क्रमशः – 3, 15, 18, 19, 20, 40 41

इसी प्रकार लाल कवि ने जय-विजय के शाप को नष्ट करने के लिए विष्णु के अवतार का उल्लेख किया है। सनकादि द्वारा शापित जय-विजय नामक द्वारपालों की रक्षा के लिए वे कहते हैं —

जन की रक्षा न करो बैठि रहौ धरि मौन।
जन्म कर्म अवतार बिनु तो मोहि जाने कौन।[1]

इस प्रकार हिरण्याक्ष, हिरण्यकश्यप एवं अधुकैटभ को मारने वाले भगवान विष्णु ने रावण, कुम्भकरण का वध करने के लिए अवतार लिया था।

एक जनम भये अति अघ धामा। हिरणकश्यप हिरणाकुश नामा।
होई बराह हते हिरण्याक्ष। हिरन कश्यप नरहरि होइ नासा।[2]

रावण के अत्याचारों से त्रस्त भूमि, पृथ्वी, चन्द्र, सूर्य, इत्यादिक देवताओं के साथ क्षीर सागर में जाकर अपनी अन्तःस्थ वेदना व्यक्त करती है। तब भगवान अपने अवतार लेने का आश्वासन देते हैं।

हरि बोले तब दीन दयाला। धरि अवतार करब प्रतिपाला।
रचो असुर राखिहौ नाहीं। कछु दय जिनि आनो मन माहीं।[3]

लालदास ने दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ के परिणाम स्वरूप आगत ऋषि भगवान की स्तुति में उनके स्वरूप एवं अवतार प्रयोजनों की व्यापक चर्चा की है। वे नारायण, स्वामी आदि पुरुष अन्तर्यामी अज अविनाशी, विकाररहित, व्यापक, चराचर निराकार साकार अनन्त एवं अपार रूप वाले हैं। भक्त कार्य पूर्ण करने के साथ भूभार हरण हेतु हरि ने वपुधारण किया है —

नमो नमो नारायण स्वामि। आदि पुरुष प्रभु अन्तरजामी।
×   ×   ×   ×
अज अविनासी रहित विकारा। कीन्हे को है जन्म तुम्हारा।

1,2 व 3 अवधविलास, पृ०सं०क्रमशः— 43,43,55

जाके उदर मध्य ब्रह्माण्डा। सात समुद्र पृथ्वी नव खण्डा।

रूप अनन्त अपार बखाने। अज अवत बस गर्भ समाने।

भक्त काज भूभार उतारन। सगुण स्वरूप धरत भव तारन।[1]

विकार रहित स्वेच्छा अवतार धारण करते हैं—

हरि अवतार स्वेच्छया धारी। रहित विकार दिव्य तनु धारी।[2]

इस प्रकार अगुण-सगुण दो भेद हरि के हैं जिसका रहस्य भक्त ही जान सकता है।

अगुण सगुण दो रूप हैं हरि के भाषत वेद

लाल और पावे न हो, बिना भक्त छह भेद।[3]

अल्पज्ञ लोग इस मायाजाल में ही उलझ कर रह जाते हैं। वे राम कृष्ण को लीलावतारी न मानकर मनुष्य रूप में ही देखते हैं—

अल्प ज्ञान नर भेद न पावे। ब्रह्म होई सोइ गर्भ न आवे।

राम कृष्ण लीला अवतारी। तिन्ह को कहे मनुष्य तन धारी।[4]

अवतारवाद के स्वरूप एवं उसके युग में निर्धारण में पुत्रेष्टि यज्ञ से प्राप्त पायस विभाजन का महत्वपूर्ण स्थान है। कौशल्या एवं कैकेयी से प्राप्त अंश के कारण ही सुमित्रा के दो पुत्र हुए और क्रमशः राम एवं भरत के अनुगामी बने इस प्रकार एक ही ईश्वर चार रूपों में प्रगट बताया गया है।

ये दोउ भाग सुमित्रा पाया। ताते दो द्व पुत्र तिन्ह पाया।

जानहु उहै अंश के रीती। दोउ भाइन्ह मँह निबही प्रीती।

तहीं छिन हरि गर्भहिं आये। रहे एक वपु चार कहाये।[5]

जन्म के समय नारायण रूप में चतुर्भुज धारी ईश्वर का अवतरण हुआ और उन्होंने पूर्व जन्म में प्रदत्त वरदान का स्मरण कराया।

---

1 से 5 तक अवधविलास, पृ०सं०क्रमशः— 144, 145, 145, 149, 143

रूप चतुर्भुज जबहि दिखावा। मातु देखि परम सुख पावा।

बरनि करत अन अधिकाई। पूरब जन्म रहे सुधि पाई।[1]

और कौशल्या यह अनुभव करती है कि ब्रह्मा एवं रुद्रादिक देवताओं को पुत्र रूप में उत्पन्न करने वाला ब्रह्म भला कहीं किसी का पुत्र हो सकता है।

ब्रह्म रुद्र से पुत्र तुम्हारे। ते कस होत है पुत्र हमारे।

नारायण परब्रह्म जो आही। कौशल्या सुत माने ताही।[2]

नामकरण संस्कार के समय लालदास ने राम को औपनिषदिक ब्रह्म ही कहा है जो सर्वत्र रमण करता है, वह राम ही तो है।

सबमें राम रमावे जोई। ताको नाम राम अस होई।[3]

लालदास ने चतुर्व्यूह सिद्धान्त के आधार पर भी रामावतार का स्वरूप इस प्रकार स्पष्ट किया है। राम साक्षात् नारायण, लक्ष्मण शेष, भरत शंख एवं शत्रुघ्न सुदर्शनचक्र के अवतार हैं। लक्ष्मी सीता रूप में अवतरित हुई हैं

नारायण होई राम कहाये। लछिमन होई शेष है आये

शंख भरत है चक्र शत्रुघन। लक्ष्मी आई धरेउ सीता तन।[4]

उपर्युक्त ब्रह्म के साथ उनके परिकरों की परिधि भी विस्तृत की गयी है। देव, वनचर, बन्दर, भालू बने हैं।

देव भये वन चरे अपारन। राम काज रावण संघारन।[5]

लालदास ने राम के विराट रूप का वर्णन इस प्रकार किया है कि उसमें औपनिषदिक ब्रह्म की पूर्ण झलक दिखाई पड़ती है। उस ब्रह्म के पैर पाताल में हैं तो सिर आकाश में है चन्द्र और सूर्य उसके दो नेत्र हैं।

---

1 से 5 तक अवधविलास, पृष्ठक्रमशः — 154, 20, 40, 41, 43

पाय पताल सीस असमाना। उदर अथाह नहीं परमाना।

चंद सूर दोउ नयन बिराजे। धरि भुजा बहु बिधि सोई साजे।[1]

भक्त कवि ने रामावतार की विभूति का वर्णन गीतोक्त पद्धति पर किया है –

सुनहु स्वरूप विभूत विसेसा। कहियत कछुक सबहि नहि लेसा।[2]

अनेकस्थानों में रामावतारों में समता स्थापित की है।

मत्स कछ नरसिंह बराहा। बामन परसराम सिव नाहा।

कृष्ण बुद्ध और कलंक बखाने। सबको भक्त एक कर माने।[3]

वामनावतार कथा प्रसंग में राम ने ही पूर्वकाल में वामन अवतार धारण किया था।

उह प्रसंग में ही तई होई। नृप जानत रहयो औरहि कोई।[4]

और प्रमाणस्वरूप उन्होंने दशरथ को विश्वरूप के दर्शन कराये हैं –

दुर्वासा आगमन के समय उत्सुक पिता दशरथ ने अपने पुत्रों का भविष्य पूछा। ऋषि ने उनके रामत्व की भविष्यवाणी कर अवतार धारण का उल्लेख किया है –

सुनु राजन यह पुत्र तुम्हारा। मनुष्य न होइ राम अवतारा।[5]

अवतार कारणों में देवासुर संग्राम के समय पराजित राक्षसों द्वारा भृगु पत्नी से शरण मांगना कुपित हरि का सुदर्शन चक्र से भृगु पत्नी के असुरों का संहार एवं भृगु द्वारा पत्नी वियोग का शाप उल्लिखित है।

तजि वैकुण्ठ शाप मम पाई। होइ मनुष जगनाह अब आई।

प्रिया वियोग कियो जस मोही। होतहि कुवा होइ तस तोही।

× × ×

विप्र बचन सत करन मुरारी। भये आई मानुष तनधारी।[6]

'ऐसे वासिष्ठा पुत्रः रामस्तु भगवान स्वयं' के लिए लालदास ने दिव्य सरयू के किनारे स्थित स्वर्ण सिंहासन में विराजमान कमनीय किशोर, माधुर्य भक्ति के आलम्बन रूप राम

---

1 से 6 तक – अवधविलास, क्रमशः पृष्ठ 160, 163, 166, 167, 167, 169

की दिव्य झाँकी अलंकृत की है जिनकी ऐकान्तिक लीलायें भक्तों को मधुर रस से आप्लावित रखती हैं। महामुनि कागभुसुण्ड के संदेह में भी रामावतार भावना का स्पष्ट रूप मिलता है। सर्वव्यापी, पूर्णब्रह्म ही राम रूप में अवतरित हैं या कोई अन्य।

काक महामुनि कीनि विचारा। सुनियत राम भये अवतारा।

पूरन सब घट व्यापक सोई। उनकी राम किधौं और है कोई।[1]

इसी प्रकार रमाकी लक्ष्मी की उत्कंठा एवं देवों के परामर्श से सीता रूप में अवतरित होने का भी उल्लेख है। विष्णु का राम रूप में अवतरित होने पर वैकुण्ठ लोक के रिक्त होने की घटना का उल्लेख करते हुए विष्णु के पूर्वावतार की अद्भुत कल्पना कवि ने की है। लक्ष्मी सोचती है –

लागत सून भवन बिनु साईं। भोग सुगन्ध कछु न सुहाईं।

तुमहु जाइ करहु विनिवारा। छिति महि जाय धरहु अवतारा

सीता जाइ धरावहु नामा। वै भगवान भये उहँ रामा।[2]

विवाह योग्य सीता को देख चिन्तित जनक को नारद समझाते हैं –

राजन सीय लक्ष्मी सम होई। नारायण वर और कोई।[3]

राम के साथ शक्ति के भी चतुर्विध अवतरी रूपों का लालदास ने उल्लेख किया है।

उहाँ श्रीपति भये चारि प्रकारा। इहाँ भी चारि रूप तन धारा।[4]

रामादिक भाइयों की बालपौगण्ड लीलाओं में भी भक्त लालदास को उनकी ब्रह्मत्व का विस्मरण नहीं हुआ है। राम पूर्ण ब्रह्म अविनाशी, नित्यानन्द एवं सहज सुखराशि है। भक्त अपनी भावनाओं की तृप्ति हेतु उनके शुभ प्यास की कल्पना करता है।

पूरन ब्रह्म राम अविनाशी। नित्यानन्द परम सुखरासी।[5]

राम के अद्भुत एवं दिव्य ऐश्वर्य का वर्णन कर लालदास उन्हें मानव मानने से अस्वीकार करता है –

---

1 से 5 तक – अवधविलास पृष्ठक्रमशः – 169, 173, 184, 181, 185

कोटि कोटि ब्रह्माण्ड है रोम रोम मिति नाहिं।
ऐसे रामहिं जे अधम नर करि मानत आहिं।[1]

आसीन राम की वाणी सुनकर वशिष्ठ उन्हें धर्म मर्यादा रक्षक मानते हैं। अवतरित राम के कार्यों का सांसारी जीव विस्तार मात्र ही करते हैं।

सुनी वशिष्ठ राम की बानी। जग उपकार काज मन आनी।
ये ईश्वर इन्ह तो को चाहि। धर्म प्रजादा बाँधत आहीं।
ये अवतार होइ हरि बनी है। लोकलोक कर्म जीव बिस्तरिहै।[2]

इसी प्रकार विश्वामित्र द्वारा राम लक्ष्मण की याचना पर चिन्ताकुलावस्थ दशरथ को राम जन्म के कारणों का स्मरण दिलाया गया है। जिसमें भक्त कार्य, एवं भूभार उद्धार का उल्लेख है - भक्त काज भूभार उतारन। इन्ह के जन्म आहि यहि कारन।[3]

वनवास के पूर्व नारद ने राम को अवतार धारण का स्मरण कराया था -

नमो राम रघुवंश कुल सर कमल चरन अवतार भूभार हरनम्।
दशकन्धर भक्त को सत्यपूरन करन धर्म के शत्रु संहार कारनम्।[4]

तात्पर्य यह है कि भूभार हरण एवं धर्म रक्षा के साथ शत्रु संहार उनके अवतार धारण के मुख्य प्रयोजन हैं। लालदास ने दार्शनिक दृष्टिकोण से भी रामावतार भावना का विश्लेषण किया है। राम ब्रह्म सीता माया लक्ष्मण जीव बताये गये हैं।

5 सीता लखन राम है कोई। माया जीव ब्रह्म ये होई।
ईश्वर राम सेव्य हैं आही। जहाँ स्वामि तहाँ सेवक चाही।[5]

काव्य में [redacted] अद्वैतवेदान्त के अनुसार उपमान रूप में राम लक्ष्मण, सीता को ब्रह्म जीव माया कहा है -

ब्रह्म जीव माया बहुरंगा। इनको सदा अनादि है संगा।
ब्रह्म जीव जिमि माया जैसे। राम लखन मधि जानकि तैसे।[6]

---

1 से 6 तक अवधविलास, पृ०सं० क्रमशः - 200, 202, 226, 258, 267, 269

कवि ने अवतारवाद का चरम उत्कर्ष दिखाने के लिए राम वनगमन एवं आगे की घटनाओं को मायामय बताया है। इस प्रकार लालदास की अवतार भावना पर विहंगम दृष्टिपात करते हुए यह कहा जा सकता है कि कवि ने युगानुरूप अवतारों के स्वरूप और उनके कार्यों का विस्तृत वर्णन कर दशावतार की मान्यता स्वीकार की है। उनके राम एक और विष्णु के अंशावतार हैं जिनसे कवि की चतुर्व्यूह विषयक सिद्धान्त की मान्यता दृष्टिगोचर होती है तो दूसरी तरफ एक भक्ति की भावना भी दिखाई देती है जिसके अनुसार उनका आराध्य परब्रह्म है। वह अज, अमर, अविनाशी, चिन्मय, सच्चिदानन्द और कण-कण में व्याप्त विराट पुरुष है जिसके भृकुटि विक्षेप मात्र से सृष्टि का लय हो जाता है। अवतार कारणों में लालदास ने मुख्य रूप से जय-विजय की शाप से मुक्ति, कश्यप अदिति को प्रदत्त वरदान, भूभार हरण, भक्त रक्षा अधर्म का नाश इत्यादि प्रयोजन उल्लिखित हैं। इसके साथ माधुर्य परक साधना पद्धति के अनुरूप कवि ने आनन्द-कन्द कमनीय किशोर की हृदयावर्जक झाँकी अंकित कर उन्हें परब्रह्म रूप में प्रतिष्ठित किया है। जिसमें अयोध्या को दिव्य साकेत का प्रतिरूप बताकर परिजनों को पार्षद कहा है। इस प्रकार अवतारवाद की दृष्टि से यह कवि की मौलिक भावना का परिचायक है। उसने अंश कला, विभूति एवं आवेशावतार के सैद्धान्तिक पक्ष को राम की लीलाओं में दिखाया है। कहना नहीं होगा कि मर्यादावादी एवं शैव परक कथाओं में अवतारभावना के माध्यम से कवि ने समन्वय किया है। यही कवि का मौलिक प्रदेय है।

एकादश अध्याय

अवधविलास में तद्युगीन समाज की अभिव्यक्ति

'अवधविलास में तद्युगीन समाज की अभिव्यक्ति'

किसी भी देश अथवा समाज के जीवन के रहन - सहन आचार-व्यवहार दर्शन साहित्य, रीति, रिवाज, वेशभूषा, आमोद-प्रमोद, नृत्य-गीत, मनोरंजन के साधन शिक्षा-दीक्षा-पद्धति से उसके विकास की स्थिति का आकलन किया जा सकता है। किसी काव्य विशेष के सामाजिक अध्ययन का तात्पर्य है कि उसके रचनाकालिक समाज का वास्तविक रूप-निदर्शन है। इससे जहाँ एक ओर तद्युगीन राजनीतिक सामाजिक आर्थिक, धार्मिक और कलात्मक परिस्थितियों का ज्ञान होता है, वहीं दूसरी ओर उस समय के समाज के संस्कार और आदर्शों का परिचय भी मिलता है क्योंकि राजनीतिक परिवर्तन होने पर भी पारम्परिक संस्कार रीति,-रिवाज, आदर्श शीघ्र परिवर्तित नहीं होते हैं। युगीन परिस्थितियों के अनुरूप संस्कारों के बदलने में पर्याप्त समय लगता है।

अवधविलास का समय हिन्दी-साहित्य के भक्ति-रीति संधि का काल है, जिसमें एक ओर भक्तिकालिक प्रवृत्तियों की प्रखर वेगवती धारा क्रमशः क्षीण हो रही थी तो दूसरी ओर रीतियुगीन प्रवृत्तियाँ अपना आकार धारण करती जा रही थीं। राजनीतिक दृष्टि से मुगल शासकों का साम्राज्य विस्तार हो रहा था जिसमें विलासिता अकर्मण्य अपनी चरम सीमा पर था। अतः ऐसे संधिकालिक काव्य का सामाजिक अध्ययन नये आयामों का विस्तार ही करेगा।

सामाजिक वर्ग :-

भारतीय जाति व्यवस्था का मूलाधार वर्ण-व्यवस्था है। यह वर्ण व्यवस्था की उत्पत्ति विभिन्न स्रोतों से मानी गयी है। पुरुषसूक्त के अनुसार ही लालदास इनकी उत्पत्ति का वर्णन करते हैं -

मुख तें विप्र बाहु तें राजा। हृदय वैस्य पग सूद्रहि साजा।[1]

1- अवधविलास, पृ०१६

कवि ने चारों वर्णों के कार्यों का भी उल्लेख किया है। शम, दम, तप शौच, शान्ति अहिंसा, तेज, आर्जव, ज्ञान, विज्ञान, आस्तिकता, ब्राह्मण के गुण हैं। क्षत्रिय के गुणों में शौर्य पराक्रम, तेज, धृति, दान, युद्ध, ईश्वरविश्वास, प्रमुख हैं। कृषि गोरक्षा व्यापार वैश्य के कर्म हैं। उक्त तीनों वर्णों की सेवा करना शूद्रों का कार्य है — चारि बरन के कर्म हैं भाये। भिन्न-भिन्न तिनके कहि राखे।

सम दम तप और सौच विसेषी। क्षांति अहिंसा आर्जव देखी।

ग्यान बिग्यान औ आस्तिक भाऊ। ए ब्राह्मण के सहज सुभाऊ।

सौरज तेज धृत्यरु दक्षाई। जुद्ध विषय अपलाय न भाखई।

दान जु ईश्वरता लीये रहई। क्षत्री कर्म स्वभाविक कहई।

कृषि गोरक्षा बनिज ही करना। वैश्य कर्म स्वाभाविक बरना।

तीन बरन सेवा करि लेई। शूद्र कर्म स्वाभाविक ए ई।[1]

कवि की मान्यता यह है कि वर्णानुसार कर्म करने पर ही हरि दयालु होते हैं। ब्राह्मण सर्व श्रेष्ठ वर्ण है। उसे वेदपाठ, जप, तप, पूजा, हवन, नियमानुसार करना चाहिए।

बिप्र वेद नहीं पढहि पुराना। जप तप पूजा होम बिधाना।[2]

वर्णों के व्यवस्थानुसार अयोध्या में निवास स्थान निश्चित थे।

चारि बरन के रचे ठिकाना। उत्तम मध्यम को सयाना।

पकरम अरु पाँच सय श्रेणी। तामें उत्तम द्विज घर जेती।

ए ते बिप्र वृत्ति अधिकारी। अब दिषय कहौं सुनो ब्रह्मचारी।[3]

लालदास ने ब्रह्मचर्य, ग्रहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास आश्रम की भी चर्चा की है —

वानप्रस्थ ब्रह्मचर्य सन्यासी। ते तहाँ भये अवधपुर वासी।[4]

1- अवधविलास, पृ0 16 2- वही, पृ0 163, 3- वही, पृ0 19

4- वही, पृ0 20

ब्रह्मचर्य आश्रम में गुरु के समीप रहकर वर्णानुसार अध्ययन करना पड़ता था। ब्राह्मण श्रुति, स्मृति एवं पुराणादि तथा क्षत्रिय यंत्र मंत्र आयुध -भेदों का ज्ञान प्राप्त करते थे।

श्रुति स्मृति व्याकरन पुराना। विप्र पढ़त दस कर्म बखाना।
यंत्र मंत्र आयुध के भेदा। क्षत्री पढ़त धनुष के वेदा।
बालक ब्रह्मचारि व्रत साधे। नित अध्ययन गुरु आराधे।[1]

युवावस्था आने पर वह प्रबन्ध धर्म में प्रविष्ट होता है। इस समय देव, अतिथि, आने पर वह प्रबन्ध धर्म के अनुसार पितृसेवा एवं कुटुम्ब का भरण पोषण उसके कर्तव्य हैं —

जुवा भये ब्याहे नरनारी। सुत हित लागि होई घरबारी।
देव अतिथि व्रत पितृ सजाती। कुल कुटुम्ब पोषे बहुभाँति।[2]

वृद्धावस्था आते ही उसे वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करना पड़ता था तथा बाद में सब कुछ परित्याग कर सन्यासी बन जाता था

वृद्ध भये गृह तजि बनवासी। वानप्रस्थ होइ पुनि सन्यासी।[3]

लालदास ने सन्यासी के वस्त्र, जीवन यापन तथा उसके लिए आवश्यक गुणों का भी वर्णन किया है —

डोर कोपीन और मृगछाला। दंड कमंडल मुद्रा माला।
मुनि वृति करन ग्रहन रतनोई। देह निरबाह मात्र इतनोई।[4]
अमानि अदंभ अहिंसा छाती। शौचाचार्य उपासन दाती।
स्थैर्य आर्जव आत्मनिग्रह। इन्द्रियार्थ विराग अपरिग्रह।
जन्म मरन रोग अनुदरसन। अन अहंकार विषय नहि परसन।
पुत्र दार गृह आदि असक्ताह। इष्ट अनिष्ट समान अवस्थिता।
रहै विविक्त जन भीर बिहारे। नित्य अध्यात्म ध्यान बिचारै।[5]

1- से 5 तक अवधविलास, पृ०सं०क्रमशः — 97-98, 98, 98, 269, 18।

लालदास ने व्यवसाय की दृष्टि से अनेक जातियों का उल्लेख किया है। जैसे — किसान, व्यापारी, पसारी, जौहरी, महाजन, जुलाहा, तमोली, हलवाई ठठेर चूड़ीवाला, तेली, लुहार, दरजी, बजाज, बरई, रंगरेज, एवं श्रमजीवी जातियों में से नाई, कहार, धरौंदी, माली, कुम्हार, रजक मोची —

हंकारे पसारी सुपारी सुपारी। हेरे कहूं नाऊ। बुलाइ लै आऊ।
बुलाये कहारा। बढ़ाये पहारा। सराफ्फ सयाने। जे परखें खजाने।
बुलाये बजाजा। लै बनिया घेरा। सीधा करो डेरा।
लिये हलवाई। बनावो मिठाई। कहाँ रे अहीरा। करो दही छीरा।
कसेरे ठठेरे। चलो बेगि धेरे। भरो पान डोली। जे बरई तंबोली।
रूई वाल बनिया। बुलाये जु धुनिया। कहाँ रंगरेजे रंगे कपड़े जे।
चलो मोचि आने। सब जीन साजें। चलो पाटवाला। गुहै हारमाला।
चलो चूरी वारे। कहाँ सूत हारे। कहाँ राज थवई। बने महल अवई।
कहोरे कुम्हारा। होइ भांड सवारा। तेली कहाँ तेला। बुलाये लुहारा।
अरु दौरि दरजी औ बागे बनावै। लगे बेलदारा। बगइचे सुधारा।[1]

इसके अतिरिक्त चोर, चाकर, मेवास धीमर चिड़ीमार, गाड़ीवान, पनिहारा, पीलवान बढ़ई, बनजारा, ठग, जाति का वर्णन किया है —

चाकर चोर मेवास कसाई। तिन्हके दया कहाँ कहाँ पाई।
धीमर चिरीमार अरु दासी। इन्हके हृदय न दया प्रकासी।
गड़ीवान ऊंट पनिहारा। फीलवान बढ़ई बनजारा।
ठग सुनार दासी होइ कोई। इन्ह के दया मया नहिं होई।[2]

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न सम्राट, सामंत एवं जागीरदारों के सामाजिक स्तर का वर्णन लालदास ने किया है। राम के ऐश्वर्य का वर्णन करते समय तत्युगीन मुगलबादशाह को

1- अवधविलास, पृ0 23   2- वही, पृ0 175

ध्यान में रखा गया है जिसमें किला, चाकर, दीवान, फौजदार, शिकदार, कोतवाल अमीन, कानूनगो, मुतसद्दी, मुशरिफ, कोषखाना, तहसीलदार, कारकून, वकी, बख्शी पेशदस्त का उल्लेख है, इसी प्रकार दशरथ के राज्य का वर्णन, उनकी क्रियाओं में सम्राट की झलक मिलती है। रोमपाद का शासन अन्तःपुर एवं विलासिता वर्णन में तत्युगीन जागीरदार का चित्रण किया गया है।

<u>संस्कार वर्णन</u> :—

भारतीय जीवन में संस्कारों का प्रवेश जन्म से ही हो जाता है। कुछ संस्कार जन्म से पूर्व भी बताये गये हैं। लालदास संस्कारों को कर्म कहते हैं। संस्कारों की संख्या के सम्बन्ध में काफी विवाद है। कवि ने दस कर्म के अन्तर्गत गर्भाधान, पुंसवन, सीमंतोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, व्रतबन्ध, वेदारम्भ, विवाह इत्यादि संस्कारों का उल्लेख किया है। अन्यत्र षोडश संस्कारों की भी चर्चा की है। कवि की मान्यता है कि जन्म के समय बालक शूद्र होता है। संस्कार उसे द्विज बनाते हैं। अवधविलास में रामादिक भाइयों के जन्म के समय से लेकर विवाह तक अनेक संस्कारों का वर्णन हुआ है। दशरथ ने जातकर्म, स्नान, नांदीमुख, श्राद्ध, देव-पितृ पूजा तथा दान किया—

पुत्र जातविधि कीन्ह सनाना। तब नंदीमुख श्राद्ध ठाना।
जातकर्म विधिवत सब कीने। देव पितृ पूजा करि लीने।
दीने दान गनै को लेखा। कहियत कछुक देत जिन्ह देखा।[1]

छठे दिन कुलाचार लौकिक रीति से किया गया —

छठीपूजि गृह पूजि द्विजाती। कुलाचार सब कीन्ह सुभाती।[2]

नामकरण के समय ब्राह्मण बुलाये गये। मोतियों से चौक बनाकर बालकों के नाम करण किये गये।

एक दिवस राजा मन भावा। नामकरन को विप्र बुलावा।
बैठे राज महल अंगनाई। ले ले पुत्र मात सब आई।
मोतिन्ह चौक चारु करावे। तापर बैठे बाल विराजे।[3]

वशिष्ठ गुरु ने गुणानुसार चारों बालकों का नामकरण किया — पौगण्डावस्था में रामादिक बालकों का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ।

करि ब्रत बन्ध जनेऊ दीना। विद्या वेद पढ़ावन लीना।[1]

चारों भाइयों एवं जनकपुरी में सीता के वेदाध्ययन का वर्णन लालदास ने किया है भरत शत्रुघ्न ननिहाल जाकर शिक्षा ग्रहण करते हैं। राम सीता विवाह के अवसर पर लालदास ने विवाह संस्कार का विस्तृत वर्णन किया है। शास्त्रोक्त अष्ट विवाहों का उल्लेख इस प्रकार किया गया है —

ब्राह्म देव आरष असुर प्राजापति गंधर्व।
राक्षस पुनि पैशाच इक अष्ट ब्याह हैं सर्व।[2]

विवाह संस्कार का वर्णन लालदास ने तीन भागों में बाँट कर किया है। विवाह से पूर्व, विवाह सम्बन्धी कृत्य तथा विवाह के बाद। लग्न, तिलक, मण्डपछादन, नहछु चढ़ाव, लहकौर, वैवाहिक कृत्य, कन्यादान, भाँवरि, कोहबर, भोजन, दैयमौतुक, विदा गृहप्रवेश, गाँठ खोलना, मौर सिराना इत्यादि कृत्यों का विस्तृत वर्णन है।

<u>अन्धविश्वास :—</u>

अन्धविश्वास समाज के सांस्कृतिक अध्ययन में महत्वपूर्ण होते हैं। देशकाल एवं युगीन परिस्थितियों के अनुसार प्रत्येक समाज में अन्धविश्वास प्रचलित हो जाते हैं। इनका हटाना बड़ा ही दुष्कर प्रतीत होता है। लालदास ने अनेक अन्धविश्वासों का उल्लेख किया है —

<u>(1)शकुन :—</u> किसी कार्य करते समय शकुन शुभप्रद माने गये हैं। शकुन के अन्तर्गत पशु पक्षी मनुष्य सभी आते हैं। दशरथ के प्रयाग गमन के सन्दर्भ में कवि ने शकुन का वर्णन किया है —

भये सगुन सुभ करत पयाना। राजा काज होत मन माना।
विप्र तिलक जुत माड़ सचक्का। लोवा   दही सुभ मक्का।
विषम संख भेरी धुनि होई। मगरव स्वेत अव मल सोई।

[redacted] पूरन कुंभ फूल फल देखी। मंगल गवत त्रिया बिसेषी।

दीप अन्न गनिका सुभ जानी। स्वस्त परस्पर प्रिय सुनै बानी।

मल्लिका बास जंबु सरवर सपना। करवट एक वृषभ दोउ सपना।

पीत बसन अहिवातिनि नारी। छेमकरी दरसन सुभकारी।

चंदन स्वेत लेप जुत अंगा। मृगा तमोल मातु सुत संगा।

कन्या दरसन भेंटत मित्ता। कारज होइ करब नहिं चिंता।

बायें खर होइ दाहिने कागा। मलिन बसन मिले रजक सभागा।

सारस मोर सोर भल बाढ़ी। आउ आउ कहि टेरत काढ़ी।

तीतर मृग दाहिने सुखदाई2 बायें कहत सियार भलाई।

खंजन तीन दिसा सुखदैना। पूरब पश्चिम उत्तर सैना।

पंछी नील दरस धन पावै। सनमुख दाहिने लाभ बनावै।

बायें भ्रमर फूल पर गुंजै। दाहिने बुलबुल आशा पूजै।

बक इक पग दाहिने रहै ठाढ़ा। लाभ हर्ष दोउ कहै बाढ़ा।

चील्ह स्वान लीपे मल मुख मांही। लाभ होइ सोचब कछु नाहिं।

धुनि होइ बेद मृदंग नगारा। उज्वल बसन मिलै ।[1]

कवि की धारणा है कि कार्य करते समय मन में उत्पन्न उत्साह ही अच्छा शकुन होता है। उपर्युक्त शकुन तो नक्षत्र के अनुसार ही प्राप्त होते हैं।

(2) छींक :—

छींक शुभाशुभ कही गयी है। धनुष भंग प्रकरण में रानी सुनयना की निराशा भरी वाणी को सुनकर तुरन्त कहीं छींक हुई, जिसे सुनकर उनकी चिन्ता समाप्त हो गयी —

रानी जबहिं देखि पछितानी। सीता रही कुमारी जानी।

भइ पट छींक सुखेलहि बांही। भेइ काज चिंता कछु नाहीं।[2]

1- अवधविलास, पृ0 105,   2- वही, पृ0 236

(3) अन्नपान :—

भोजन जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। लालदास ने अनेक अवसरों पर अन्न पान का विस्तृत विवरण उपस्थित किया है। रामादिक भाइयों के भोजन के समय विभिन्न खाद्यान्नों से निर्मित षटरस भोजन का वर्णन प्राप्त होता है। प्रातराश के रूप में फल मेवा का उपयोग किया जाता था —

किसमिस गरी बदाम छिंधारे। दाख मखान चिरौंजी धारे।
मेवा और खंड मिलि मिसरी।[1]

फेनी दूध खंड जुत मेवा। अपने कर मुख देति कलेवा।[2]

दशरथ सहित चारों भाइ हाथ पैर धोकर पीढ़ा में बैठकर भोजन करते हैं माता ने चार प्रकार के भोजन को अनेक रूपों में उपस्थित किया है —

कंचन थार धराइ मुख आगे। विंजन थान परोसन लागे।
भुगि ले चारिउ भाँति अहारा। तिन्ह माँहि होहि अनेक प्रकारा।
तिन्ह के चारिउ भाँति अहारा। तिन्ह माँहि होहि अनेक प्रकारा
रस षट् मधुर कसाई खटाई। कटुक तिक्त, अरु लवन बनाई।
छप्पन भोग छत्तीस हैं सालन। रानिन्ह के घर होहि सुचालन।[3]

लालदास ने सत, रज, तम आदि गुणों के आधार पर भोजन [का] वर्णन किया है। इसके साथ ही कवि ने खाजा, घेवर, बूँदी, मोतीचूर, गुझिया, पुआ, गुलगुला, खीर, मोहन भोग इत्यादि व्यंजनों का वर्णन इस प्रकार किया है —

खाजा घेवर फेनि केर अमृती औ गुझिया।
मोती चूर पिराक छिकले लोहार भूमि मेथिया।
पूवा पेठा पाक चूवा, पुड़े पेरा तिन गिनी।
गुलगुला पुनि गोल पापरी मठी जलेबी अति बनी।
पटकारी बावर पिनी पापर मला खुरमा गुलचुप।

---

1 से 3 तक — अवधविलास, पृ०सं०क्रमशः — 158, 187, 194

मठा मटका खेड़ बाने को बताये अतिरस।।
खीर रू री सिखुर पूरी कंद फरमा अति बने।
भोग मोहन बने मोहन और घृत मधु भो गने।
खाँड चीनी मिश्री लीनी खडल खीरा खोहई।
बरा अष्ट प्रकार के कार दधि कचौरी मीठई।
खोवा साढ़ी दूध बाढ़ी भात उज्वल रावई।
बढ़ी सिखरनि रस बोरनि बटी रोटी पाउँती।
ले पकोरी दधि अकोरी देखि रू चि उपजाउँती।
पिटोर पिंडरा हुमकि चुरता रसाप कुरकुर कीजिए।
रिकोंछ ईंडहर केरा कटहर मुंगौरि मिथौरी लीजिए।
सेव सिंघई खीचरी और परामठे उड़ दखा।
भंटा करेला पोह बिबिध औ कचोरा ढींडसा।
चूक चाप बथुआ परवर सोवा पालक मुरूसुले।
लवकि कुंदरू मेथि सूरन अरू ई कुंदरू बने भले।[1]

अचार के बिना भोजन स्वादहीन कहा गया है। लालदास ने निम्न अचार की तालिका प्रस्तुत की है —

अचि बेल करौंद अंदरू नीबु बा नु सहीजना।
आम कमरख आंवली औ बने सधाने रू चि धना।[2]

भोजनोपरान्त विश्राम के समय फ.ल मेवा खाने की परम्परा अति प्राचीन है। लालदास ने अनेक फ.लों व मेवा का उपयोग होते हुए बतलाया है —

किसमिस भरी बदाम छुहारा। अखरोट अरू दाख अनारा।
अनानास पिस्ता अखरोटा। सेव सिंघारे कमल के गोटा।
चिरौंजी चिरौंजी कटहर जाना। आलतुल खीरी छिरवाना।

1- अवधविलास, पृ0 194-95 2- वही, पृ0 195

खुबानी खरबूजा केरा। अंब अंजीर बेर बहुतेरा।
खीरकेंदु करौंदी करना। पौंडा रूप फेनारि जु सरसा।
करहरी बड़हर पीलु जुआरी। नारंगी नीबू बिज पूरी।
बिलगोजा सफ्तालु बखाना। जरदालु अंगूर बखाना।[1]

अन्य स्थानों में मेवा पकवान लड्डू खाजा पूरी पुवा गुझिया बखाना। पेड़ा बड़ा मोदक बूँदी मटकीमोरा, फेनी जलेबी इत्यादि का वर्णन है।

वस्त्र :-

सामाजिक जीवन के अध्ययन में मानवीय सम्बन्धों के साथ ही साथ उपयोगितावादी दृष्टि का भी महत्वपूर्ण स्थान है। वस्त्र या वेशभूषा उपयोगितावादी दृष्टि है जो उपयोगिता तथा वैभव प्रदर्शन की दृष्टि से प्रचलित होते हैं। अवधविलास में वर्णित वस्त्रों पर मुस्लिम प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। उत्तरीय तथा अधोवस्त्रों के साथ ही कवि ने बालकों के वस्त्रों में झिंगुली, पुरुषों के पटुका, पाग, शाल तथा स्त्रियों के वस्त्रों में लहंगा, कंचुकी, अंगिया तारकशी रत्न जड़े, रेशमी साड़ी, मखमली वस्त्र, पशमीना, गुजराती कश्मीरी शाल लोई का वर्णन किया है।

(1) कबहुँ कुलही कबहुँ पटुका, कबहुँ बांधत पागरी।[2]
(2) झिंगुली ललक ललित दुतिकारी।[3]
(3) पटुका पाग चोलना राजे।[4]
(4) धरे गहना चीर लहँगा बहुत कलेवरा रचि मुये।[5]
(5) सीता अंग कंचुकी सीया।[6]
(7) पहिरे चीर सुरंग निहारे। अतिविचित्र वल्कल तन धारे।[7]
(8) अरुण चीर अंगिया कुच धरया।[8]

आभूषण :-

आभूषण शरीर सज्जा का आवश्यक अंग है। इनसे शरीर की शोभा कान्ति समनुभूषित होती है। आभूषण नारी की कमजोरी भी है। लालदास ने कवों

1 से 8 तक अवधविलास, पृ0सं0क्रमशः— 195-96, 162, 168, 186, 157,

पुरुषों तथा स्त्रियों के उपयोग में आने वाले आभूषणों की चर्चा की है।

1- सीस मुकुट शुभ कुंडल कानन।(अवधविलास, पृ0 40

2- सोहत गल मुक्ता मणिमाला।(वही, पृ040)

3- पाइ पैजनी बजे घुंघुर, ठनक किंकिनि कटि धुनी।(वही, पृ0162)

4- चरन अरुन पैजनि जुत नूपुर।रत्नजटित किंकिनि कटि ऊपर(वही, 168)

5- बघ नख ग्रीवे बने छवि बाला।मोती रत्न मणिन्ह की माला।

6- कुंदन कल करधनी विशेषा। पहुंची वलय मुद्रिका धारे।(वही, 168)

कठुला कंठ भरे छवि झूले।कानन नागफनी रवि भूले।(वही, 168)

6-मयूराकृत कुंडल अति लोला।(वही, 186)

कंचन माल रत्न मनि माला।मुक्ता माल विशाल रसाला।

सोहत बघनखा मान मन मिलत। कटि किंकिनि पैजनियाँ राजे।(वही, 186)

तात्पर्य यह है कि बच्चों के आभूषणों में कठुला, बघनखा, करधनी नूपुर, पैंजनी तथा मुकुट, कुण्डल, हार, वलय, मोतीमाला पुरुषों के प्रमुख आभूषण हैं। इसी प्रकार स्त्रियों के आभूषणों में टीका बेंदा, मकराकृत कुंडल नथ, कंठमाला, मुक्ताहार, कंकन पहुंची, बाजूबन्द, कंकना, किंकिनी, करधनी, पायल, नूपुर, बिछिया, पैजनी, जेहरी, मुंदरी घुंघुरु, छुद्र घंटिका, आरसी, अंगूठा, पछेलिया, टाड, चन्द्रहार, चम्पकली, चौकी, ढोलना, कर्णफूल, शीशफूल, कनियाँ, कुंडला प्रमुख हैं —

1-नूपुर कंकन किंकिनी आभूषण अपार(अवधवि0 44)

2- कंकन चूरी मुंदरी राजे।(वही, 110)

3- मोती मणि देखि कंठ बंध।(वही, 111)

4- बेनी फूल सीस फुल सोहे।(वही, 132)

5-बेनी फूल सीस फुल सोहे।(वही, 132)

6-कानन वीर जराउ छबीली।(वही, 132)

7-नथ नकबेसरि नासिका सोही।(वही, 132)

8-बाजूबन्द भुज टाडन बेली।कंकन पहुंची चुरी सहेली।(वही, 132)

9-कटि तटि छुद्र घंटिका बीना।(वही, पृ0 132)

10- हार माला पहिरि बाला कंठ रत्न विराजहीं।
बीर अनन्ह पान आनन नागवेली लाजहीं।
भय चूरी रंग पूरी टाड कंचन सोहई।
पहिरि कुरी वली सुंदरि घुंघुरू मन मोहई।(अवधविलास, पृ0 157)

11- पायल वे हरि गुजरी औ घुंघुरू बनाइए।
छद्र घंटिका कुंदरी लोलोती पुहाइए।
मुक्ता जाकी जूही के नंदलाल सुधारसी।
छल्ला छाँव के पहिरि अंगुरा आरसी।
ककना मनरा पहुँच सलोनि पछेलिया।
छनटाड बाजूबंद बाहें विराजई।
चढ़ हार धुकधुकी छिप पर राजई।
कंठमाल कमरखी औ चोंपी ढोलना।
तेली औ कलि वप छरा छवि झोलना।
करन फूल विच कनियाँ झुटला बनाय के।
सोहत श्रवन सुदेसेजो बीर जराय के।
टीका बेंदी सीसफूल बेंदी बनी।
बेनी फूल और मांग मौक्तिक सोभधनी।
चोटी झालरि लाल रत्न हीरान्ह की
गठियाँ बला पुर पहिरि विराजित जानकी।(वही, पृ0 244)

<u>प्रसाधन</u> — सोलह श्रृंगारों को प्रसाधन वर्ग के अन्तर्गत माना जाता है। यह परम्परा संस्कृत साहित्य में नहीं है। रीतिकाल तक आते आते यह प्रसाधन परम्परा श्रृंगार के लिए रूढ़ हो गयी। लालकवि ने षोडश श्रृंगार की चर्चा इस प्रकार की है —

मज्जन वसन अरू अंजन तिलक चारू चंदन पुहपमाल हारू हिये मानिये
कुंडल तमोल नकबेसरि विराजमान अंगिया अनूपकर कंकनादि मानिये।
बेहरि वलय कटि किंकिनी नूपुर धुनिबेनी औ विसाल सीस ब्याल जैसी ठानिये
तरुनी के तन मन मोहिबे को मोहन को सोरह सिंगार लाल इह भाँ मानिये

उक्त प्रसाधन उच्चवर्गीय परिवारों में ही प्रचलित थे। लालदास ने टीका, बिन्दी, अंजन, मेंहदी-महावर, अंगराग, चंदन, इत्र, तिल, गोदना इत्यादि प्रसाधनों का विशेष उल्लेख किया है।

मनोरंजन के साधन :—

भक्तिकाल में हरिगुण कथन, भजन, कीर्तन, इष्टदेव का मानसिक चिन्तन ध्यान, विश्राम की वेला के कार्य थे। किन्तु रीतिकालिक विलासिता के कारण विश्राम के क्षणों का उपयोग ऐहिक परक साधनों से किया गया। फलतः अनेकानेक साधनों का आविर्भाव हो गया। अवधविलास में राजसिक व्यक्तियों के मनोरंजन, अन्तःपुर के मनोरंजन तथा राजाओं के मनोरंजन के सन्दर्भ में इनका विस्तृत उल्लेख है। लालदास ने शतरंज, चौपड़ः गंजीफा, कुश्ती, अश्वारोहण-क्रीड़ा, जलसंतरण, घुड़सवारी, पशु-युद्ध, संगीत, कहानी कथा कवित्त, वाग्विलास, जुआ, पतंगबाजी, गिल्ली डण्डा, लट्टुवारना नृत्य, अभिनय, भांड-तमाशा, चौगाना, जलविहार का उल्लेख किया है। दशरथ लोमपाद राजा के यहाँ अतिथि बने। उस समय उनका मनोरंजन इस प्रकार किया गया —

कबहुँक अश्व देखै दौराई। कबहुँक गज की होत लराई।
कबहुँक देखै मल्ल अखारा। कबहुँ कि मुष्टीका कर मारा।
कबहुँक बननि खान चलाई। कबहुँक नाच होत मन भाई।
कबहुँक नट विट भाँड तमासा। देखैं तास छाँडि रस आसा।
कबहुँक खेले चढ़ि चौगाना। कबहुँक करहिं सिकार सयाना।
कबहुँक जल अरु बाग विहारा। कबहुँक सरों करै मलयारा।
कबहुँक चौपर औ सतरंजा। कबहुँक जूआ अई मन रंजा।
कबहुँक बैठ करहिं कविताई। गीत छंद महा मन भाई।[1]

इसके साथ ही पिंगल, लोकनाट्य की चर्चा, भी मनोरंजन में सम्मिलित की गयी है। इसी प्रकार अन्तःपुर में गीत, विनोद, हास्य भरी बातें, शृंगार करना मनोरंजन के

1- अवधविलास, पृ0 12।

साधन बताये गये हैं। लड़कियों के खेल में गुड्डा- गुड़िया, आँखमिचौली, खेल का उल्लेख है —

गुड्डा-गुड़िया करत सब लीला। रामकृत्य स्वकृत्य गुन सीला।

बैठति नैन मूँदावति बाला। कन्या दुरत सदन अवकासा।

पकरति ढूँढि ढूँढि दौरि कुमारी।'[1]

रामादिक भाइयों की पौगण्ड किशोर लीलाओं में अनेक खेलों का वर्णन है —

हाट बाट चौहट कहुं डोलें। मैना कोकिल मोर से बोलें।

मृगछौना छिगरा सिसु स्वाना। खेलत फिरत ख्याल करि नाना।

छुटे छुटे गृह बाल सुकुमारी। दौरावत खचित असवारी।

× × × ×

चकरी चलित जराय छबीली। फेरत ललितन्ह हाथ रंगीली।

भंवरा लट्टू घुमाइ नचावत। कबहुंक गेन्दिन्ह खेल मचावत।

गुल्ली डण्डा खेलि चौगाना। बाल संग लीये फिरि राउ खिलौना।

कबहुंक फूल गेंद कर धारे। मारि परस्पर करहिं दुलारे।

रतन जटित झबन्ह लटकाती। फेरत दुति चमकत चपला सी।

रंग अनेकन्ह पंग बनाई। स्याम पीत केतिन्ह छबि छाई।[2]

बड़े होने पर राम के खेल बदल गये —

धरहिं कुम्हार चाक पर घोड़ी। देत उड़ाइ बैठि कर गोड़ी।

राखत साल कुंभ तिरछौंहे। एक बान निकरावत जो है।

रोपि धनुष शाठ भाँति चलावैं। बानहिं बान अकास तरावैं।

काकहु पात देत उतिराई। उड़त पवन अति भारत नाई।

डारहिं खेल कुंआ के मांहीं। बान बान सों खैंचत जाहीं।

× × × ×

1- अवधविलास, पृ० 182   2- वही, पृ० 186-87

खेलत चपल चतुर चौगाना। फेरत घोर करत गति नाना।

धावत तुरग चपल असवारी। गिरे बान तरवारि कटारी।

तब ताहि लेत उठाइ चलाईं। अरु कछु लाघव ताहि पढ़ेईं।

फिरै चक्र दण्ड जनु चाक बँडा करै व्याम भारी अखारे भारी।[1]

सतरंज गंजा खेलत रंजा हसि हसि पंजा गाड़ मारे।

पासा सारी मारामारी दाव हमारी भुजगारे।

पुतरे आने अर्ध बखाने गाढ़ा ठाने चतुराई।

बाग बिलासा करै तमासा गीत कहानी कवितार्ई।[2]

कबहु सरजू पारकर लीने। नीर तीर लीला कछु कीने।

कबहु कि बालू कोट बनावहिं। करि करि फौजन्हि चढ़ि चढ़ि धावहिं।[3]

जुआ स्त्रियों तक ही प्रचलित था —

खेलि जुआ दरब छुवा नारि नाचे रसभरी।[4]

<u>धार्मिक स्थिति</u> :—

अवध विलास में तत्कालीन धार्मिक दशा के निरूपण के लिए लालदास को अनेक अवसर मिले हैं —

(1) दशरथ पुत्रप्राप्ति परामर्श हेतु वशिष्ठाश्रम जाते हैं। इस अवसर पर लालदास ने तत्कालीन धार्मिक सम्प्रदायों का विवरण दिया है —

सरजू निकट बिटपतर बसहीं। जप तप करि करि तन मन कसहीं।

गनपति रवि शिव सक्तिन्हि जपहीं। पंचाग्नि आदि तप तपहीं।

कहुँ इक चरन बाँधि ऊपरहीं। धूमपान करत सिर तरहीं।

1- से 4 तक अवधविलास, पृ० सं० क्रमशः— 190-91, 193-94, 196

कहुँ इक जटा जूट नख बाढ़े। कहुँ इक एक पाइ रहँ ठाढ़े।

कहुँ इक नग्न मौन व्रतधारी। कहुँ इक जल माँहि बैठि रहाये।

कहुँ इक तपत बालुका लेटे। कहुँ इक दूब रंग रहे घोटे।

केउ इक सूरज अभिमुख जोवै। केउ इक राति दृष्टेह नहिं सोवै।

केउ इक तपा मास उपवासी। केउ इक नीर पान पर नासी।

केउ इक कंद मूल फल भोजी। केउ इक द्वितीय तृतीय दिन भोजी।

केउ इक विप्र रहै कन बीना। केउ इक दंत उलूखल बीना।

कहुँ कि अयाचन याचत नाहीं। कहुँ कि शुल्क वृत्ति द्विज घर आहीं।

केउ इक कृच्छ करत चन्द्रायन। केउ इक पवन भखत मन भायन।

केउ कहुँ श्रवण करहि जलतीरा। पितु मख अति ही मत धीरा।[1]

(2) इसी प्रकार रावण द्वारा दण्डक ऋषियों मुनियों से राजस्व रक्त में धन ग्रहण करते समय अपने अनुचरों ने हास्यपरक शब्दों से तद्युगीन धार्मिक स्थिति का विवरण इस प्रकार किया है –

चौपाई   बकत परसपर सोरम्मचावत। इव ऊँच कहि हाथ नचावत

प्रात सांझ दुपहर को जाई। परत है पानी मांहि अरराई।

ठाढे होइ रहत जल मांही। पानी फेर फेर ऊपराहीं।

सिर पर हाथ घुमावत कबहीं। नाक पकरि कछु गनत हैं तबहीं।

परि परि उठि उठि फिरि फिरि गावत। सूरज को कछु अधिक रिझावत।

पोंछि पोंछि हाथनि सब लीया। फेरत हैं आडे के बीया।

1- अवधविलास, पृ0 100।

धरत है छोकि छोकि मठिया सौं। बड़ी बेर देखत है तासौं।

सबहीं अंग लगावत माटी। सब यौं करत बनावत पाटी।

पानी लाक लेत कर मांडी। पढ़ि पढ़ि मंत्र ताहि पिय जाड़ी।

कबहुंक आंखि मूंद नहिं बोलौं। बैठे गूंग होइ नहिं बोलै।

मादिन्ह के बिलना से लगावत। गाल बजाइ अरु मूंड नवावत।

वृथोवहिं क्रिया करावत बोधा। धूनी देत जगावत धोखा।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि लालदास ने तत्युगीन वर्णव्यवस्था उनके कर्म, आर्थिक दृष्टि से उच्च, मध्यम एवं निम्नवर्गों की स्थिति, संस्कार, रीति-रिवाज, खान-पान छींक, शकुन, अपशकुन, वस्त्राभूषण मनोरंजन के साधन तथा धार्मिक स्थिति का यथावत् चित्रण किया है।

उ प सं हा र

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि बरेली निवासी लालदास भक्ति-रीति के संधिकाल के कवि हैं, जिनका जन्म लगभग सं0 1650 के आस-पास हुआ था। बाल्यकाल में ही राग के कारण उनका चित्त विक्षिप्त हो गया था, जिसकी शान्ति तीर्थाटन से हुई। कवि ने अयोध्यावास के समय स्वाध्याय से ज्ञान अर्जित किया। उसने सं0 1690 में भरत की बारहमासी एवं सं0 1700 में अवधविलास की रचना की थी। अयोध्या में राम भक्ति की रसिकोपासना की धारा उस समय प्रकट रूप में दिखायी देने लगी थी, अतः यह असम्भव नहीं कहा जा सकता है कि लालदास उसमें दीक्षित हो गये थे तथा उन्हें उसकी साम्प्रदायिक दीक्षा-पद्धति एवं उसमें मान्य साम्प्रदायिक साहित्य के अवलोकन का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ होगा।

वाल्मीकि रामायण, महाभारत, अध्यात्म रामायण तथा राम कथा संबंधी साम्प्रदायिक संहिताओं से रामकथा का आधार लेकर लालदास ने ऐश्वर्यपरक तथा मर्यादावादी रामकाव्य – अवधविलास की रचना की है। यह काव्य 20 विश्राम (अध्याय) युक्त है। मंगलाचरण, प्रस्तावना, रामावतार हेतु अनेक शापवरों युक्त हेतु कथाओं की विस्तृत अवतारणा के बाद दशरथ का पुत्राभाव, यज्ञ, रामादिक भाइयों का जन्म, बाल-पोषण, लीलाएँ, सीताजन्म, बाल्यकाल, शिक्षा, राम का निर्वेद, तीर्थाटन, रामसीता का पूर्वानुराग, संकल्प, विवाह, वनगमन, के कारणों की खोज, एवं कैकेयी की स्वीकृति, विस्तृत रूप में तथा वनगमन से लेकर सीताहरण एवं रावणवध की घटनाएँ संक्षिप्त रूप में वर्णित हैं। मूलकथा का प्रारम्भ बड़े ही रोचक एवं कल्पनात्मक ढंग से हुआ है, किन्तु कथा का सम्यक् निर्वाह आद्यन्त नहीं हो पाया। भविष्य कथन की शैली के साथ विवरणात्मक ढंग से कथा कही गयी है।

रामादिक भाइयों का सौन्दर्य, लीलाएँ, तद्युगीन सम्राटों के कुमारों के अनुकरण पर की गयी है। राम श्रेष्ठ धनुर्धर, आज्ञाकारी, एवं पूर्ण ब्रह्म रूप में चित्रित हैं। कवि ने तद्युगीन परिवार एवं विभिन्न जातियों के गुणों का

अंकन प्रतिनिधि पात्रों से किया है।

अवधविलास अद्भुत रस का कोष है, जिसमें अनेक रसों, भावों, रसाभासों एवं भाव-संधियों के विपुल आयाम हैं। प्रकृति के परम्परागत रूप-चित्रण के साथ ही देश, नगर, द्वीप, काल, ज्ञान, भक्ति, योग, धर्म,दर्शन, प्राकृतिक तत्व, नायिका - भेद, ज्योतिष आयुर्वेद, पाप-पुण्य, एवं सौन्दर्य के शास्त्रीय मापदण्डों की विस्तृत व्याख्या है।

कवि ने काव्य-समीक्षा के अनेक आधारों की परीक्षाकर सरलता को श्रेष्ठ कसौटी बताया है। उसे संस्कृत का विशेष ज्ञान था। बहुज्ञता प्रदर्शन हेतु गण-विचार, रस, देवता, त्रिविध, छन्द, अलंकार, नायिका-भेद की यत्रतत्र चर्चा की है।

मोक्ष को चरम पुरुषार्थ मानकर ज्ञान, योग, कर्म मार्ग के साथ ही भक्ति मार्ग का वैशिष्ट्य उसके भेद, प्रेमाभक्ति की महत्ता, दैनन्दिन जीवन यापन में सद्विचार, सत्संगति, सदाचार, स्वाध्याय, इत्यादि को महत्व देकर प्रतिमा पूजना, व्रत, तीर्थाटन एवं तद्युगीन समाज में प्रचलित धार्मिक क्रियाओं पर अपना विश्वास प्रगट किया है। लालदास का महत्व इस दृष्टि से अक्षुण्ण है कि उसने रसिकोपासना के स्वरूप की सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक व्याख्या की है। अवतारवाद के क्षेत्र में 'श्वान' के अवतार की प्रतिष्ठा कर उसे एक नया आयाम दिया है।

अवधविलास पढ़कर यह सहज रूप में कहा जा सकता है कि इस काव्य में भक्तिकाल एवं रीतिकाल की प्रवृत्तियाँ किस प्रकार प्रस्फुटित हो रही थीं। समाज की राजनीतिक अवस्थाबिन्दुओं के पराभव तथा उसके स्थायीकरण हेतु ऐसे सम्राट की कल्पना की गयी है, जिसका वैभव अनन्त है तथा जो सबके सुख-दुख में सह-भागी होता है। जाति-उपजातियों का जन्म, कर्मानुसार उनकी श्रेष्ठता, नारियों की स्थिति, शिक्षा- रूढ़ि, अन्धविश्वास, शकुन-अपशकुन, खान-पान, आभूषण, मनोरंजन के साथ आर्थिक स्थिति, धार्मिक मान्यताओं का जीवन्त अंकन इसमें है।

अवध विलास की भाषा अवधी है जो अयोध्या के आस-पास बोली जाती थी। स्तोत्र, संवादात्मक, भविष्य-कथन, विवरणात्मक, एवं आलंकारिक शैलियों के अनेक प्रयोग अवधविलास में है।

कहना नहीं होगा कि घटना, इ,कथा व्यापारहीन ऐश्वर्यपरक कथावर्णन के लिए लालदास ने ऐसी मर्यादावादी कथा का चयन किया है जो गो0तुलसीदास के बाद अवरुद्ध-सी हो गयी थी। यद्यपि इस कथानिबन्धन में समानुपातिक दृष्टि का अभाव है, तथापि विस्तृत एवं संक्षिप्त प्रासंगिक हेतु कथाओं के साथ ही आकर्षक प्रबन्ध, उदात्त मूलकथा का वर्णन, मार्मिक स्थलों की पहचान, स्वाभाविक धरातल पर अवस्थित पात्र, जातिगत एवं पारिवारिक विश्लेषण, शृंगाररस के रूप में अद्भुत रस का सफल सन्निवेश, वीर-रौद्र, रसों की आकर्षक, युति, रसाभास से पाठकों को चमत्कृत करना, प्रकृति के आलंबन, उद्दीपन रूपों के साथ बहुलता प्रदर्शन हेतु ग्राम नगर, देश, काल, धर्म, दर्शन, अष्टांग योग, प्राकृतिक तत्व, अभिनय, संगीत, तीर्थ, वर्णन, तत्सम, तद्भव, विदेशज, मुहावरों एवं शब्द शक्तियों के बहुविध प्रयोग, रीति, गुण, अलंकारों के मणि-कुट्टिम संयोग के लिए अनेक छन्दों का व्यवहार तथा रामावतार भावना को नया आयाम देकर मर्यादावादी भक्ति के साथही माधुर्यपरक भक्ति की रस-पेशल एवं हृदयावर्जक व्याख्या और तद्युगीन समाज की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, एवं धार्मिक अवस्थाओं का यथातथ्य आकलन की दृष्टि से यह काव्य निश्चित ही उपादेय है। तुलसी के बाद रामकथा को नयारूप लालदास ने दिया है। महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों का इसमें पूर्ण निर्वाह है। कवि के शब्दों में —

बरनत कहै है भक्ति शांति रामचन्द्र कौं रस रूप।

सुनी को है आनन्द, अवधविलास अनूप।।

सहायक सामग्री

संस्कृत :—

(1)ऋग्वेद – सायण भाष्य, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।

(2)अथर्ववेद – संस्कृत संस्थान बरेली।

(3)कृष्णयजुर्वेद मैत्रायणी संहिता – श्रोडर द्वारा सम्पादित।

(4)शुक्ल यजुर्वेद – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1971।

(5)तैत्तरीय ब्राह्मण –सायणभाष्य, राजेन्द्रलाल मित्र कलकत्ता।

(6)तैत्तरीय आरण्यक- सायणभाष्य, राजेन्द्रलाल मित्र, कलकत्ता।

(7)ऐतरेय ब्राह्मण- सायण भाष्य, काशीनाथ शास्त्री आनन्द आश्रम पूना, 1931।

(8)शतपथ ब्राह्मण – सम्पा0 वेबर, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।

(9)जैमनीय उपनिषद् ब्राह्मण – रघुवीर तथा लोकेश चन्द्र 1954

(10)महाभारत – गीता प्रेस गोरखपुर।

(11)अष्टाध्यायी – पाणिनि।

(12)दशरूपक – धनंजय, सम्पा0 हजारीप्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन। 1963

(13)साहित्य दर्पण –विश्वनाथ, मोतीलाल बनारसीदास, 1956

(14)नाट्यशास्त्र, भरत, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, सं0 2028

(15)काव्यप्रकाश- मम्मट, राजकमल वाराणसी, सं0 2017

(16)वाल्मीकि रामायण – गीताप्रेस, गोरखपुर।

(17)भक्तिसूत्र- शाण्डिल्य, गीताप्रेस गोरखपुर।

(18)भक्तिसूत्र – नारद, गीताप्रेस, गोरखपुर।

(19)भक्तिरसायन, मधुसूदन सरस्वती: ग्रन्थमाला काशी, 1984

(20)श्रीमद्भागवत- गीताप्रेस, गोरखपुर।

(21)वैष्णवमताब्ज भास्कर-रामानन्द, सं0 पं0 रामटहलदास, सरयूभवन अयोध्या।

(22)विवेक चूड़ामणि – शंकराचार्य, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2010

(23)तत्त्वार्थदीप निबन्ध, वल्लभाचार्य, भारती विद्या प्रकाशन वाराणसी।

(24) रामपूर्व — 108 उपनिषद्-श्री राम शर्मा, संस्कृत संस्थान वाराणसी

(25) सीतोप 108 उपनिषद्, श्रीराम शर्मा, संस्कृत संस्थान वाराणसी।

(26) काव्यालंकार — वामन, सं० नगेन्द्र।

(27) रस गंगाधर जगन्नाथ, चिन्मय माहेश्वरी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ एकादमी जयपुर, 1974

(28) काव्यालंकार, सम्पा० देवेन्द्रनाथ शर्मा, राष्ट्रभाषा परिषद पटना 1925

(29) रामतापनीय उपनिषद्, 108 उपनिषद्-श्रीराम शर्मा, संस्कृत संस्थान बरेली।

हिन्दी काव्य

(1) रामचरितमानस — तुलसी, गीताप्रेस गोरखपुर

(2) कवितावली, गीताप्रेस।

(3) जानकी तुलसी, गीताप्रेस।

(4) गीतावली, गीताप्रेस।

(5) बरवै, तुलसी, गीताप्रेस।

(6) विनय, तुलसी, गीताप्रेस।

(7) अवधविलास, हस्तलिखित प्रति।

(8) कबीरावली — सम्पादक श्याम सुन्दर दास चतुर्थ संस्करण।

(9) संत — सम्पादक — योगेन्द्र सिंह

(10) बृहद् हिन्दी कोश — श्री कालिका प्रसाद, ज्ञानमण्डल वाराणसी।

(11) छन्दप्रभाकर — श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु, वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई, सं० 1966

हिन्दी आलोचनात्मक ग्रन्थ :—

(1) राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय — डा० भगवती प्रसाद सिंह, अवध साहित्य मंदिर, बलरामपुर

(2) राम के नाम — डा०म० रामूरकर, ग्रन्थम कानपुर, 1972

(3) तुलसी पूर्व राम साहित्य, डा० अमरपाल सिंह, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1978

(4) तुलसीतर रामकाव्य परम्परा — डा० वेद प्रकाश द्विवेदी (टंकित प्रति)

(5) रामकथा उत्पत्ति और विकास — डा० कामिल बुल्के — हिन्दी परिषद, इलाहाबाद, 1962

(6) रामकथा का विशिष्ट अध्ययन, डा० [illegible] गुप्त, भारतीय साहित्य मंदिर दिल्ली

(7) रस सिद्धान्त का स्वरूप विश्लेषण —डा० आनन्द प्रकाश दीक्षित-राजकमल प्रकाशन
1960

(8) साहित्यालोचन-डा० श्याम सुंदर दास, इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद,

(9) हिन्दी साहित्य का इतिहास, डा० रसाल-रामनारायण बेनीलाल, इलाहाबाद।

(10) हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल और रीतिकाल संधिकालीन प्रवृत्तियाँ, डा० विष्णुसरन, विभुप्रकाशन साहिबाबाद 1975

(11) तुलसी आधुनिक वातायन से—डा० रमेश कुन्तल मेघ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन वाराणसी, 1967

(12) वाल्मीकि और तुलसी : साहित्यिक मूल्यांकन, डा० रामप्रकाश अग्रवाल, प्रकाश प्रतिष्ठान मेरठ, 1966

(13) भक्तिकालीन राम तथा कृष्णकाव्य में नारी भावना, डा० श्याम कला गोयल, विभु प्रकाशन साहिबाबाद।

(14) वेदों में रामकथा —डा० रामकुमारदास,

(15) अकबरी दरबार के हिन्दी कवि-डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय

(16) मुगलकालीन भारत, डा० आशीर्वादी लाल —प्रथम संस्करण

(17) काव्यदर्पण, श्री रामदहिन मिश्र, ग्रन्थमाला कार्यालय पटना,

(18) भागवत सम्प्रदाय, डा० बलदेव उपाध्याय, ना० प्र० सभा काशी, प्रथम संस्करण।

(19) भक्ति का विकास, डा० मुंशीराम शर्मा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1958

(20) मधुररस, डा० राम स्वार्थ चौधरी, राजकमल प्रकाश, 1981

(21) मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद, डा० कपिलदेव पाण्डेय, चौ० विद्याभवन 1963

(22) रामचरित मानस में भक्ति, डा० सत्यनारायण शर्मा, सरस्वती पुस्तकसदन, आगरा,

(23) हिन्दुत्व—श्री रामदास गौड़ — काशी सं० 1995

(24) राम भक्ति शाखा — राम निरंजन पाण्डेय, नवहिन्द पब्लिकेशन्स, हैदराबाद 1960

(25) मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ, कलकत्ता 1957

(26) भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, डा० नगेन्द्र, ओरियन्टल बुक डिपो दिल्ली, 1955

(27) रीतिकाव्य की भूमिका, डा० नगेन्द्र, गौतम बुकडिपो दिल्ली, 1949

(28) हिन्दी साहित्य का इति० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, ना० प्र० सभा काशी, सं० 2009

(29) भक्ति साहित्य, सम्पा0 प्रतापचन्द्र जायसवाल,

(30) शिव सिंह सरोज, सम्पा0 किशोरीलाल गुप्त हिन्दी साहित्य संस्थान, 1970

(31) सरोज सर्वेक्षण, डा0 किशोरी लाल गुप्त हिन्दुस्तानी एकेडमी, इला0 1967

(32) हिन्दी साहित्य का आलो0 इति0, डा0 रामकुमार वर्मा, रामनारायण बेनीलाल, इलाहाबाद, 1954

(33) हिन्दी भाग एक- सम्पा0 धीरेन्द्र वर्मा, भारती हिन्दी परिषद प्रयाग 1962

(34) हिन्दुई साहित्य का इति0 अनु0 डा0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिन्दुस्तानी एकेडमी,

(35) मिश्रबन्धु विनोद, मिश्रबन्धु, गंगापुस्तक माला लखनऊ 72

(36) रस मीमांसा- आ0 रामचन्द्र शुक्ल, नागरीप्रचारिणी सभा काशी, सं0 2006

(37) हिन्दी काव्य में मानव तथा प्रकृति डा0 लालताप्रसाद सक्सेना, हिन्दीसाहित्यभंडार लखनऊ

(38) हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों का त्रैवार्षिक विवरण, अनु0 डा0 बटेकृष्ण (1926-28)

(39) सभा खोज रिपोर्ट- यथोपरि त्रैवार्षिक

(40) हिन्दी साहित्य का वृहद् इति0 भाग-5 नागरीप्रचारिणी काशी।

अंग्रेजी :-

(1) ए हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरे0 - विन्टरनित्स, कलकत्ता, 1927

(2) वैष्णविज्म शैविज्म, आर0 जी0 भण्डारकर, स्ट्रासबर्ग, 1913

(3) एन आउट लाइन आव रैलिजस लिटरेचर, जे0 एन0 फर्कुहर।

पत्रिकाएँ :-

(1) नागरी प्रचारिणी पत्रिका

(2) राष्ट्र भारती

(3) अनेकान्त

(4) आलोचना।